"ग्रामीण निर्धनता, खाद्य समस्या तथा पोषण स्तर"

(जनपद इटावा, उ० प्र० के विशेष सन्दर्भ में)

अर्थशास्त्र विषय में

पी-एच०डी० उपाधि हेतु प्रस्तुत

शोध प्रबन्ध

शोधार्थिनी

श्रीमती शालिनी

अध्यापक आवास, अजीतमल, औरैया

पर्यवेक्षक

डॉ० विजय सिंह चौहान

रीडर, अर्थशास्त्र विभाग,

पं० जे० एल० एन० कालेज, बाँदा

t1066
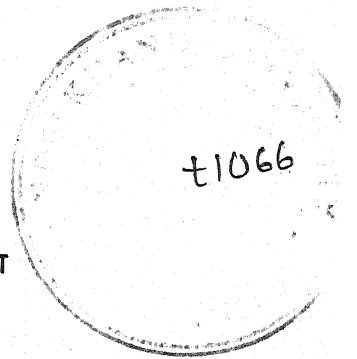
बुन्देलखण्ड विश्वविद्यालय, झाँसी

2002

डॉ० विजय सिंह चौहान
एम०ए०, पी–एच०डी०

अर्थशास्त्र विभाग
पं० जे० एल० एन० कालेज
बांदा

प्रमाण पत्र

प्रमाणित किया जाता है कि श्रीमती शालिनी ने मेरे निर्देशन में "ग्रामीण निर्धनता, खाद्य समस्या तथा पोषण स्तर" (जनपद इटावा के विशेष सन्दर्भ में) शीर्षक पर पी–एच० डी० उपाधि हेतु शोध कार्य किया है। श्रीमती शालिनी ने अभीष्ट समायावधि तक उपस्थिति के उपरान्त शोध ग्रन्थ स्वयं सम्पन्न किया है और यह इनकी मौलिक कृति है।

मैं श्रीमती शालिनी के उज्जवल भविष्य की कामना करता हूँ।

V.S. Chauhan

(डा0 विजय सिंह चौहान)
रीडर, अर्थशास्त्र विभाग,
पं० जे० एल० एन० कालेज,बांदा

आभार

प्रस्तुत शोध कार्य *"ग्रामीण निर्धनता, खाद्य समस्या तथा पोषण स्तर "* मूल रुप से पिछड़े एवं ग्रामीण अंचल की ज्वलंत समस्याओं को रेखाकिंत करने की दिशा में किया गया अकिंचन प्रयास है। प्रस्तुत शोध प्रबन्ध के पर्यवेक्षक डा० विजय सिंह चौहान, रीडर, अर्थशास्त्र विभाग, पं० जे० एल० एन० कालेज बांदा का आभार शब्दों में व्यक्त करना मेरे लिये असम्भव सा है । उनके अनवरत प्रोत्साहन , सुस्पष्ठ मार्गदर्शन, शोध सम्बन्धी जटिलताओं का सूक्ष्म विश्लेषण एवं सम्यक निराकरण आदि के अभाव में यह कार्य पूर्णता को प्राप्त न कर पाती। मैं श्रद्धेय डा० चौहान का ह्दय से आभार व्यक्त करती हूँ।

शोध प्रबन्ध के प्रेरणाश्रोत डा० आर० वी० एस० भदौरिया, रीडर ,अर्थशास्त्र विभाग जनतां महाविद्यालय अजीतमल, (औरैया) की विशेष रुप से आभारी हूँ। जिन्होने शोध कार्य में अत्यन्त महत्वपूर्ण शोध सामग्री के संकलन में अपना अमूल्य सहयोग प्रदान किया। समय—समय पर उनसे हुये गवेषणात्मक विमर्श, शोध के निष्कर्षो को खोजने में बहुत उपयोगी सिद्ध हुये हैं तथा मैं डा० भदौरिया के सहयोग एवं प्रोत्साहन से इस शोध कार्य को सम्पन्न करनें सफल हुयी । मैं डा० बी० आर०एस० चौहान, प्राचार्य, जनता महाविद्यालय अजीतमल, औरैया, डा० एल० एस० चौहान, अध्यक्ष, कृषि अर्थशास्त्र विभाग जनता महाविद्यालय अजीतमल ,औरैया, श्री राहुल चौहान ,जनता इण्टर कालेज, अजीतमल की भी आभारी हूँ जिनका मुझे समय—समय पर सहयोग मिलता रहा ।

मैं अपनी छोटी बहिनों श्रीमती प्रीति, कु०कीर्ति, कु० दीपा, कु० शीलू का भी उल्लेख करना आवश्यक समझती हूँ जिन्होंने अपने अथक परिश्रम द्वारा टंकड़ आदि की व्यवस्था में सहयोग कर मुझे इस कार्य के सम्पादन में पूर्ण सहयोग दिया। इसके अतिरिक्त मैं अपने श्रद्धेय श्वसुर श्री राजेन्द्र सिंह चौहान , सास श्रीमती कुसुम चौहान, पति श्री कौशलेन्द्र कुमार चौहान की भी विशेष रूप से आभारी हूँ जिन्होनें पारिवारिक दायित्वों से पूर्णतया मुक्त रखा तथा इस कार्य को सफलतापूर्वक आगे बढ़ाने के लिऐ हमेशा मुझे प्रोत्साहान देते रहे। इसके साथ ही मैं अपने देवर डा० धर्मेन्द्र सिंह की बहुत आभारी हूं जिसने मुझे हमेशा इस कार्य को आगे बढ़ाने में हर सम्भव सहयोग प्रदान किया। मैं अपने पापा डॉ० के० एस० भदौरिया,

माँ श्रीमती कमला भदौरिया का भी यहां उल्लेख करना चाहती हूं, जिनकी अवरल प्रेरणा एवं सतत आशीर्वाद के द्वारा ही प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से मेरे मस्तिष्क में शोध अभिरुचियों का अंकुरण सम्भव हुआ और प्रस्तुत शोध प्रबन्ध उन्हीं अभिरुचियों का स्वाभाविक परिणाम है।

इसके अतिरिक्त इस कार्य को सम्पन्न करने में शोधार्थिनी को जिन विविध श्रोतों से सहयोग प्राप्त हुआ, ऐसे सभी प्रशासकीय विभागों से सम्बन्धित अधिकारियों एवं कर्मचारियों का हृदय से धन्यवाद ज्ञापित करती हूं। विशेष रूप से सांख्याधिकारी जनपद इटावा एवं सभी विकासखण्ड अधिकारी तथा चयनित ग्रामों के पंचायत प्रधानों का आभार व्यक्त करती हूं जिन्होनें विषय वस्तु सम्बन्धी आकड़े एवं सूचनायें एकत्र करने में अपना अमूल्य सहयोग प्रदान किया।

अन्त में शोध प्रबन्ध के आकर्षक एवं सुस्पष्ट टंकण हेतु मैं श्री हिमाँशु प्रताप सिंह, प्रबन्धक, एक्सीलेण्ट कम्प्यूटर प्वाइण्ट, बकेवर (इटावा) का भी आभार व्यक्त करती हूं, जिन्होनें समय पर तथा सुस्पष्ट टंकण कार्य करते हुये शोध ग्रन्थ को सुसज्जित करने में अपना अमूल्य योगदान दिया।

शालिनी

(श्रीमती शालिनी)

टीचर्स कालोनी, अजीतमल

(औरैया)

विषय सूची

प्रस्तावना

प्रस्तावना

भारत जैसे कृषि प्रधान देश के लिए कृषि का विशेष महत्व है। यह मनुष्य का अति प्राचीन व्यवसाय है। यद्यपि इसका ढंग और इसकी प्रणालियाँ समय-समय पर बदलती रही हैं। कृषि का उपयोग मानव के लिए खाद्य, वस्त्र तथा गृह निर्माण का साधन मात्र ही नहीं प्रदान करता अपितु यह आवासीय विकास, उद्योग और व्यापार का भी उद्‌बोधक है। पृथ्वी की सतह कृषि एवं खाद्यान्न उत्पादन का प्रमुख स्थल है। जिसपर मानव का भरण पोषण निर्भर करता है। इसलिए मनुष्य अनादिकाल से धरती की पूजा करता आ रहा है। वास्तव में यह मनुष्य के आर्थिक विकास की पृष्ठभूमि प्रस्तुत करती है। यह उसके सामाजिक, सांस्कृतिक, एवं सर्वांगीण विकास की जननी है।

पृथ्वी का सम्पूर्ण धरातल कृषि योग्य नहीं है और न सम्पूर्ण धरातल को कृषि योग्य बनाया ही जा सकता है। क्योंकि इसका एक बड़ा भाग समुद्र जल, जलाशय, पर्वत, पठार, मरुभूमि, दलदल तथा जंगल आदि से आच्छादित है। कृषि के लिये धरातल का केवल वही भाग उपयोगी है जो किसी न किसी रूप में उपजाऊ है। मानवीय प्रयासों ने अयोग्य भूमि का एक भाग कृषि योग्य बनाया भी है। परन्तु अभी भी उसका अधिकांश भाग कृषि की दृष्टि से अनुपयुक्त ही है। अतः मनुष्य की सीमित कृषि योग्य भूमि से ही अपने भरण पोषण के लिए पर्याप्त साधन जुटाना पड़ता है। यही उसके अनेक उद्यमों का श्रोत भी है। इन उद्‌देश्यों की सफलता भूमि के समुचित उपयोग, उसकी उत्पादन क्षमता, उससे प्राप्त उपलब्धियों तथा अन्य लाभों पर निर्भर है। तात्पर्य यह है कि भूमि संसाधनों के यथासम्भव अधिकतम उपोग तथा उनके नियोजन द्वारा ही मानवीय आवश्यकताओं की पूर्ति सम्भव है।[1] यद्यपि भूमि संसाधन में भारत एक समृद्ध देश है। तथापि उसे विकसित करने की अब भी आवश्यकता है। इसीलिए भूमि उपयोग की योजनाओं को अधिक महत्व देना आवश्यक हो गया है।

वास्तव में कृषि भूमि अनेक देशों के आर्थिक विकास का प्रमुख आधार है। परन्तु जब कहीं भी कृषि भूमि अधिक है वहां तो इसका महत्व और भी बढ़ जाता है। भारत एक ऐसा ही देश है परन्तु आश्चर्य तो यह है कि भारत जैसे कृषि प्रधान देश को भी कभी-कभी खाद्यान्न संकट का

सामना करना पड़ता है। भारत सरकार द्वारा आमन्त्रित फोर्ड फाउण्डेशन कृषि उत्पादन दल ने सन् 1959 में अपने अन्तिम प्रतिवेदन में जो उसने सम्पूर्ण देश का भ्रमण करने के पश्चात तैयार किया था उसने उसमें कृषि भूमि उपयोग के ह्रास को भारतीय संकट का प्रमुख कारण बताया था।[2] तीव्र गति से बढ़ती हुई जनसंख्या जीवन स्तर का क्रमिक उत्थान आवश्यकताओं का बदलता हुआ स्वरूप, पौधों और जैविक पदार्थो के औद्योगिक उपयोग में अप्रत्याशित वृद्धि, खाद्यान्न तथा अन्य कृषि उपजों के बीच भूमि उपयोग में उत्पन्न होनेवाली प्रतिस्पर्धा नागरिक एवं औद्योगिक विकास में प्रगति तथा यातायात मार्गो का विस्तार आदि कृषि भूमि का अभाव उत्पन्न करते जा रहे हैं। किन्तु तकनीकि परिवर्तन से उत्पादन में वृद्धि की जा रही है। अतः जनसंख्या में निरन्तर वृद्धि होने के बाद भी खाद्यान्न के अभाव को कुछ हद तक रोका जा सका है। किन्तु वास्तविकता यह है कि भोजन, कपड़ा, गृह और ईंधन जैसी समस्यायें सर्वथा विद्यमान रहेगीं क्योंकि जनसंख्या की अनियन्त्रित एवं अप्रत्याशित वृद्धि को देखते हुए, कृषि साधनों के विकास से इन समस्याओं का आंशिक समाधान ही सम्भव है। किन्तु इसके लिए हमें प्रयत्नशील रहना अत्यन्त आवश्यक है।

भारत जैसे विशाल भू-भाग वाले देश में कृषि भूमि के समुचित उपयोग से ही राष्ट्रीय समृद्धि तथा व्यक्तिगत विकास सम्भव है। इन उद्देश्यों की पूर्ति हेतु भूमि की क्षमता, उर्वरता तथा उसके समुचित उपयोग का अध्ययन अत्यन्त आवश्यक है क्योंकि ऐसे अध्ययनों से ही भूमि उपयोग सम्बन्धी तथ्यों का ज्ञान प्राप्त होता है जिनके आधार पर कृषि भूमि नियोजन सम्बन्धी योजनायें बनाई जा सकती हैं। हमारे देश में कृषि भूमि से सम्बन्धित जो भी तथ्यात्मक ज्ञान अभी तक प्राप्त हुआ है वह राष्ट्रीय कृषि नीति निर्धारण में अपूर्ण एवं अपर्याप्त सिद्ध हुआ है। प्रथम पंचवर्षीय योजना में यह स्पष्ट रूप से कहा गया था कि ' भूमि उपयोग और वर्तमान फसल उत्पादनों में सुधार के विस्तृत उद्देश्यों के लिए देश में मृदा एवं भूमि उपयोग सर्वेक्षण सर्वाधिक आवश्यक हैं'[3]। फिर भी इस योजना ने इस सम्बन्ध में न तो कोई कार्य विधि प्रस्तुत की और न किसी प्रयोगिक स्वरूप का ही विश्लेषण किया। दूसरी योजना के अन्तर्गत मार्च 1958 में केन्द्रीय मृदा सर्वेक्षण परिषद ने भारत में मृदा और भूमि उपयोग सर्वेक्षण हेतु एक योजना प्रारम्भ की जिसके संचालन हेतु नागपुर, कलकत्ता, बंगलौर और दिल्ली में

क्षेत्रीय केन्द्र स्थापित किए गए जो मृदा सर्वेक्षण अधिकारियों के देख-रेख में कार्य करने लगे। 1960-61 में 120 लाख एकड़ भूमि का सर्वेक्षण भी किया गया था वह मुख्यतः भूमि उपयोग के दोषपूर्ण समायोजनों के निर्धारण और निराकरण की दिशा में ही किया गया जिसमें 20 लाख एकड़ भूमि नदी घाटी योजनाओं के क्षेत्र में थी। द्वितीय योजना के अन्त तक इस प्रकार के सर्वेक्षणों के अन्तर्गत क्षेत्रफल बढ़कर 2 हजार लाख एकड़ हो गया। तृतीय पंचवर्षीय योजना की रचना के समय भूमि उपयोग की जिस योजना का विश्लेषण किया गया था वह मुख्यतः भूमि उपयोग के दोषपूर्ण समायोजनों के निर्धारण और निराकरण की दिशा में ही किया गया जिसमें कृषित भूमि, जंगल और चारागाह ही सम्मिलित थे। परन्तु सर्वेक्षण पर आधारित विस्तृत आंकड़ों के अभाव में यह केवल भूमि उपयोग के असन्तुलन के कुछ वृहद क्षेत्रों का ही निर्धारण एवं निराकरण इंगित कर सकता था। चतुर्थ पंचवर्षीय योजना की अवधि में 390 लाख एकड़ भूमि को खाद्यान्नों की अधिक उपजाऊ किस्म के बीजों द्वारा बोने का और 250 लाख एकड़ भूमि को बहुफसली योजना के अन्तर्गत लाने का लक्ष्य प्रस्तावित किया गया था जिसमें पर्याप्त सफलता भी मिली। पाचवीं योजना में 131 लाख हेक्टेअर अतिरिक्त भूमि को सिंचाई के आधीन लाने का प्रस्ताव किया गया था जिसमें इस लक्ष्य की अधिकांश पूर्ति की गई। सन् 1980 तक भूमि सुधार के रूप में लगभग 4.5 लाख हेक्टेयर भूमि की चकबन्दी भी की गई। पांचवीं योजना की तुलना में छठी योजना में कृषि एवं सम्बन्धित कार्यक्रमों में 2.5 गुना और सिंचाई तथा बाढ़ नियन्त्रण पर लगभग 3.5 गुना व्यय बढ़ाने का प्रस्ताव किया गया।

छठीं योजना के अन्तर्गत सरकार ने बढ़ती हुई जंनसंख्या के भरण-पोषण के लिये सघन कृषि हेतु अधिक उपज देने वाली किस्मों तथा नवीनतम उत्पादन तकनीकों की जानकारी के लिए अनेक प्रोग्राम संचालित किये गये जिनमें मृदा संरक्षण की व्यवस्था, उर्वरक की प्रचुरता, उत्तम बीजों की उपलब्धि, कृषक सेवा समस्याओं की वृद्धि, कृषि अनुसंधान शालाओं एवं शिक्षण प्रशिक्षण समस्याओं की स्थापना आदि प्रमुख हैं।

सातवीं योजना में कृषि विकास के लिए अधिक तीव्र दर का लक्ष्य रखा गया ताकि बढ़े हुए उपभोग स्तर पर खाद्यान्न और खाद्य तेलों की मांग

पूरी की जा सके और इनमें आत्म निर्भरता प्राप्त कर ली जाये। अब कृषि नीति सामाजिक न्याय के साथ उत्पादन बढ़ाने के अतिरिक्त पर्यावरण संरक्षण के प्रति भी सजग हो गई क्योंकि भूमि और जल संसाधन को प्रदूषण से बचाना आवश्यक हो गया है। सातवीं योजना में कृषि विकास नीति में निम्नलिखित प्रमुख तथ्य रहे हैं।

1. हरितक्रान्ति का नवीन क्षेत्रों में प्रसार तथा पूर्वी क्षेत्र में धान उत्पादन एवं शुष्क कृषि क्षेत्रों में कृषि के सुधार के विशेष प्रयास करना।

2. जोत सीमाबन्दी कानूनों को अधिक तत्परता से लागू करना तथा नवीन सिंचित क्षेत्र में तत्परता से और अधिक वृद्धि करना।

3. शुष्क कृषि क्षेत्रों में उत्पादकता बढ़ाने तथा लघु एवं सीमान्त कृषकों को दलहन और तिलहन उत्पादन के लिए प्रोत्साहित करना।

4. अधिक उपजाऊ किस्मों के अन्तर्गत क्षेत्र बढ़ाना, रासायनिक उर्वरकों के प्रयोग में वृद्धि, फसलों की बीमारियों की रोकथाम तथा कृषि प्रसार कार्यक्रम को बढ़ावा देना।

5. सिंचाई सुविधा के प्रसार पर जोर तथा पहले से चल रही सिंचाई योजनाओं को वरीयता के आधार पर पूरा करना।

जुलाई 1991 में नई औद्योगिक नीति की घोषणा के बाद कृषि जैसे विशाल क्षेत्र के लिए कोई राष्ट्रीय नीति न हो तो अर्थव्यवस्था में भारी शून्यता का अनुभव होता है क्योंकि कृषि राष्ट्र का गौरव ही नहीं बल्कि सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था की प्राणवायु भी है। इसी को मद्देनजर कर कृषि मन्त्री बलराम जाखड़ ने राष्ट्रीय कृषि नीति का मसौदा तैयार किया जिसे कुछ संशोधन के बाद केन्द्रीय मन्त्रिमण्डल ने स्वीकृत दे दी। इस मसौदे में दीर्घकालीन प्ररिप्रेक्ष्य में कृषि क्षेत्र के लिए नीतिगत प्रयासों की रूपरेखा प्रस्तुत की गई इसमें इस बात के संकेंत हैं कि यह नीति सैद्धान्तिक आदर्शों के बजाय वास्तविकताओं पर आधारित है। कृषि नीति में कुल 14 मसौदे हैं। ये मसौदे कृषि के विभिन्न अवयवों से सम्बन्धित हैं। जैसे- भू-स्वामित्व विपणन, भण्डारण, कृषि में निवेश उत्पादन और उत्पादकता, उन्नति बीज सहकारी समस्याओं को पुर्नजीवित करना कृषि अनुसंधान, कृषि मशीनरी

फसल बीमा उत्पादों का प्रसंस्करण कृषि का औद्योगीकरण, जल संसाधन तथा कृषि का विविधीकरण आदि। जिन मसौदों से कृषि तथा कृषि लाभान्वित होगी उनमें दो अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं। प्रथम मसौदे का सम्बन्ध फसल तथा पशुधन बीमा योजना से और दूसरे का सम्बन्ध कृषि को उद्योग का दर्जा देने से है। उक्त दोनों मसौदों के अतिरिक्त नई कृषि नीति में दो विन्दुओं पर विशेष ध्यान दिया गया है।

1. बढ़ती हुई आबादी के लिए खाद्य सुरक्षा सुनिश्चित करने हेतु कृषि उत्पादन और उत्पादकता में वृद्धि करना।
2. उन क्षेत्रों का विकास करना जिनकी क्षमता का दोहन अभी तक नहीं किया जा सका है।

स्वतन्त्रता के बाद खाद्यान्नों के उत्पादन ने सराहनीय प्रगति के बावजूद भी भारत में प्रति व्यक्ति दैनिक उपलब्धता 445 ग्राम ही थी। जबकि 600 ग्राम पौष्टिकता का माप चलाऊ स्तर पर माना जाता है। यदि पिछले 20 वर्षो का औसत देखें तो प्रति व्यक्ति खाद्यानों की उपलब्धता लगभग 450 ग्राम है। यदि हम हर भारतीय को औसत 500 ग्राम खाद्यान्न ही न दे सके तो कृषि क्षेत्र में हमारी उपलब्धि का कोई अर्थ नहीं है। 1980-81 और 1988-89 के मध्य कृषि में प्रयुक्त आदान की उत्पादकता के सूचकांक में 1.6 प्रतिशत का ह्रास हुआ है। राष्ट्रीय कृषि आयोग ने अनुमान लगाया है कि वर्ष 2000 ई0 तक खाद्यानों की मांग 22 करोड़ 50 लाख टन होगी। यदि खाद्यान्नों की उत्पादकता इसी तरह घटती रही और बीच में कमी , बाढ़ या सूखा आ गया तो देशवासियों की खाद्यान्न की न्यूनतम आवश्यकता की पूर्ति कठिन हो जायेगी ऐसी स्थिति में न फसल बीमा योजना कार्य करेगी और न कृषि को उद्योग की नीति। हमें उन क्षेत्रों का विकास करना चाहिए जिनकी क्षमता का अभी तक पूर्णतः दोहन नहीं हुआ है। अनुमान है कि भारत में कृषि क्षमता का 40 प्रतिशत से अधिक का प्रयोग नहीं हो पाया है। लगभग 10 करोड़ हेक्टेअर भूमि गैर बंजर भूमि है इसका प्रयोग करना आवश्यक है।[4]

कृषि भूमि उपयोग को अधिक लाभप्रद बनाने के लिए शोधार्थी के दृष्टिकोण से निम्नलिखित कार्यक्रमों को प्रोत्साहित करना ही नहीं वास्तविकता का जामा पहनाना होगा।

1. मृदा सर्वेक्षण तथा मृदा संरक्षण।
2. अधिकाधिक कृषकों को खेती की नई तकनीकि का ज्ञान कराकर लाभान्वित कराना।
3. भूमिगत जल के वैज्ञानिक प्रयोग को बढ़ावा देना।
4. जल संसाधन के दुरूपयोग को रोकना।
5. कृषकों को समुचित प्रशिक्षण प्रदान करना।
6. मोटे अनाजों के क्षेत्रफल में विस्तार करना।
7. दलहनी तथा तिलहनी फसलों का अधिक उत्पादन।
8. मुद्रादायिनी फसलों का परम्परागत फसलों के साथ समायोजन।
9. नहरों की सुरक्षा एवं उनके उचित प्रबन्ध की व्यवस्था करना।
10. जैविक उर्वरकों के प्रयोग को प्रोत्साहन देना।
11. पशुओं की नस्लों में सुधार करना।
12. पशुओं के चारे के लिए फसलों के उत्पादन को प्रोत्साहन करना।

1. अध्ययन की आवश्यकता:

भारत की अर्थव्यवस्था की बुनियादी समस्या, आर्थिक विकास की आवश्यकता है। आर्थिक विकास से तात्पर्य है कि सर्वजन को उनकी न्यूनतम आवश्यकताओं को पूरा करने के साधन उपलब्ध कराना। भारत एक कृषि प्रधान देश है जहां पर जनसंख्या के एक बड़े भाग की आवश्यकताओं को पूरा करने का दायित्व भूमि संसाधन पर निर्भर है। जनसंख्या की उत्तरोत्तर वृद्धि के फलस्वरूप प्रति व्यक्ति भू क्षेत्र में निरन्तर ह्रास होता जा रहा है। दूसरी तरफ निर्धनता व निम्न जीवन स्तर के फलस्वरूप जनसंख्या के एक बड़े भाग का पोषण स्तर अति निम्न है। एक अनुमान के अनुसार लगभग 45 प्रतिशत जनसंख्या भूख और कुपोषण जैसी समस्याओं का शिकार है और लगभग 30 प्रतिशत जनसंख्या के पास पर्याप्त भोजन नहीं हैं। कतिपय क्षेत्रों में उक्त समस्यायें अधिक उग्र रूप धारण कर चुकी है। कृषि भूमि भू-क्षरण, खारीपन, बीहड़ों का निर्माण आदि अनेक समस्याओं से ग्रसित हैं। किसी देश की जनसंख्या तभी प्रगतिशील होती है जब उसका भरपूर पोषण होता है। अतः पोषण स्तर में सुधार लाने हेतु कृषि उत्पादन में वृद्धि करना आवश्यक हो जाता है जो दो विधियों के द्वारा सम्भव है।

(क) कृषिगत क्षेत्रों में वृद्धि करके।

(ख) वर्तमान कृषिगत क्षेत्र की उत्पादकता में वृद्धि करके।

इनमें से किसी भी विधि को अपनाने के लिए भूमि उपयोग का गहन अध्ययन आवश्यक हो जाता है, साथ ही जनसंख्या के सह सम्बन्ध के सन्दर्भ में भूमि उपयोग का अध्ययन करके भूमि संसाधन पर जनसंख्या भार का मूल्यांकन करना आवश्यक हो जाता है तभी कृषि विकास की ठोस योजना तैयार किया जाना सम्भव है।

सामान्यतः यह देखा गया है कि विकसित देशों में शहरी क्षेत्र का प्रभुत्व बना रहता है जबकि आर्थिक दृष्टि से पिछड़े देशों में ग्रामीण क्षेत्र प्रधान होता है। भारत जैसी विकासशील अर्थव्यवस्था की बागडोर ग्रामीण क्षेत्र को ही सम्भालनी होती है, इसी क्षेत्र में उन सब परिस्थितियों का निर्माण होता है जो सम्पूर्ण अर्थव्यवस्था को आगे बढ़ाने में समर्थ होती हैं। इस पृष्ठभूमि में अगर देखा जाये तो अध्ययन क्षेत्र जनपद इटावा की अर्थव्यवस्था में ग्रामीण क्षेत्र की प्रधानता स्पष्ट होती है। अध्ययन क्षेत्र ग्रामीण समुदाय की प्रभुत्व की जानकारी तालिका 1 में दिये गए तथ्यों से स्पष्ट होती है।

तालिका 1: अध्ययन क्षेत्र में ग्रामीण समुदाय की प्रधानता

संकेतक	कुल	ग्रामीण	शहरी	ग्रामीण क्षेत्र की कुल में प्रतिशत भागेदारी
1. जनसंख्या	2124655	1790954	333701	84.29
2. कृषि कर्मकार	447381	430406	16975	96.21
3. अन्य कर्मकार	133560	65794	67766	49.26
4. कुल श्रमशक्ति	580941	496200	84741	85.41
5. कुल शुद्ध उत्पाद(करोड़ रू0) (1980-81 के भावों पर)	171.67	अनुपलब्ध	अनुपलब्ध	--
6. कुल शुद्ध उतपाद(करोड़ रू0) (प्रचलित भावों पर)	318.15	298.91	22.24	93.95

स्रोतः- सांख्यिकी पत्रिका, जनपद इटावा, 1992 तथा 1993.

तालिका 1 से अध्ययन क्षेत्र में ग्रामीण क्षेत्र के प्रभुत्व का आभास मिलता है जहाँ पर अभी भी 84 प्रतिशत से अधिक जनसंख्या ग्रामीण है तथा श्रमशक्ति का 85 प्रतिशत से अधिक भाग ग्रामीण क्षेत्र से प्राप्त होता है। अध्ययन क्षेत्र की गग्रमीण अर्थव्यवस्था को दो उप क्षेत्रों में बाँटा जा सकता है।

(क) कृषि क्षेत्र

(ख) गैर कृषि क्षेत्र

कृषि क्षेत्र में वे सभी लोग शामिल किए जाते हैं जिनके जीवन निर्वाह का साधन कृषि पर निर्भर है व गैर कृषि क्षेत्र में अन्य सभी ग्रामीण समुदाय को शामिल किया जाता है। अध्ययन क्षेत्र के इस ग्रामीण स्वरूप को तालिका 2 के माध्यम से स्पष्ट किया जा रहा है।

तालिका 2: ग्रामीण समाज का स्वरूप और उनकी साधन उपलब्धि

(क) कृषि क्षेत्र	भूमि श्रम अनुपात	रोजगार का स्वरूप
1. बड़े कृषक	भूमि > श्रम	प्रमुखतः नियोजक
2. मध्यम कृषक	भूमि > श्रम	अनियमित नियोजक
3. लघु कृषक	भूमि = श्रम	अनियमित श्रमिक
4. सीमान्त कृषक	भूमि < श्रम	प्रमुखतः श्रमिक
5. भूमिहीन श्रमिक	मात्र < श्रम	पूर्णतः श्रमिक

(ख) गैर कृषि श्रेत्र

1. व्यापरी वर्ग
   - (अ) सामान्य वस्तुओं का व्यापार करने वाले
   - (ब) कृषि आदानों का व्यापार करने वाले
2. दशतकार
   - (अ) सामान्य सुविधायें उपलब्ध करवाने वाले
   - (ब) कृषि क्षेत्र की आवश्यकतायें पूरी करने वाले

तालिका 2 से स्पष्ट है कि ग्रामीण समुदाय में अनेक तरह के कार्य जुड़ें हैं इनमें उत्पादन साधन के रूप में प्रधान साधन भूमि ही है। जिससे ग्रामीण समुदाय की न केवल उदर पूर्ति ही होती है बल्कि अनेंक अन्य आधुनिक आवश्यकताओं की पूर्ति भी होती है।

परम्परागत ग्रामीण समुदाय आत्म सम्पन्न और आत्म निर्भर रहे हैं, एक गांव या आसपास के कुछ गांव एक आर्थिक इकाई के रूप में रहते थे जिनका उस इकाई के बाहर किसी तरह का लेन-देन नहीं होता था। जहाँ इस पिछड़ेपन के कुछ लाभ भी थे तो कुछ नुकसान भी थे। गांव आर्थिक पिछड़ेपन तथा जड़ता में धंसते जा रहे थे। पंचवर्षीय योजनाओं के माध्यम से इस स्थिति को बदलने के प्रयास किए गए है। इन प्रयासों के परिणामस्वरूप भारत की ग्रामीण अर्थव्यवस्था में अनेक प्रकार के परिवर्तन प्रकाश में आयें हैं। ये परिवर्तन ग्रामीण जीवन के अनेक पहलुओं से सम्बन्धित हैं जैसे भू-सुधार, कृषि, पशुपालन, वित्त विपणन सेवायें, ग्रामीण उद्योग, कल्याणकारी सेवायें, ग्रामीण नेतृत्व तथा ग्रामीण प्रशासन आदि। नये स्कूलों का खोला जाना, परिवार कल्याण एवं नियोजन सेवाओं का विस्तार, प्राथमिक चिकित्सा केन्द्रों की स्थापना, बहुउद्देशीय स्वास्थ्य कर्मचारियों की बड़े पैमाने पर नियुक्ति और इनसे बढ़कर परिवहन, संचार व आकाशवाणी तथा दूरदर्शन का विस्तार आदि अनेक ऐसी बाते हैं जिनसें ग्रामीण जीवन में भी क्रान्तिकारी परिवर्तन आये हैं। इन सबके प्रभाव से ग्रामीण समुदाय का जो चित्र उभरकर सामने आया है उसकी विशेषतायें निम्नलिखित हैं।

अ. कृषि का व्यवसायीकरण:

खेती-बाड़ी अथवा कृषि जो ग्रामीण समुदाय का प्रमुख व्यसाय है अब मात्र जीवन निर्वाह का साधन नहीं रह गया है वल्कि इसे लाभ कमाने के साधन के रूप में देखा जा रहा है। इस क्रम को व्यवसायीकरण का नाम दिया जा रहा है। कृषि का व्यवसायीकरण कृषि के बदलते हुये स्वरूप तथा इस क्षेत्र में हुए विकास का भी परिचायक है। व्यवसायीकरण के लिये जिम्मेदार प्रमुख कारण निम्नलिखित हैं-

(क) पिछले 40 वर्षों से कृषि के उत्पादन के तरीकों में महत्वपूर्ण सुधार हुये हैं । परिणामस्वरूप कृषि उत्पादकता पहले की तुलना में बहुत

अधिक बढ़ चुकी है। अतः किसान भूमि को मात्र निर्वाह का साधन न मान उससे अधिक से अधिक आय प्राप्त करना चाहता है।

(ख) कृषि उत्पादन में सुधार के लिए उन्नति कृषि तकनीकी जिम्मेदार है जिनमें उन्नत किस्म के बीज, रासायनिक उर्वरक, कीटनाशक दवाइयाँ, सिंचन सुविधायें प्रमुख हैं। इस तकनीकी के प्रयोग के कारण फसलों की पकने की अवधि कम हो गई है साथ ही उन्नत कृषि आदानों को क्रय करने के लिये कृषक को नकद मुद्रा की आवश्यकता होती है। अतः आजकल कृषक जल्दी से जल्दी फसल को बाजार में बेंचने को तैयार रहता है।

(ग) सड़कों और यातायात के साधनों के विकास के कारण गांवों से दूर स्थित नगरीय मण्डियों में जाना भी सम्भव हो गया है।

(घ) नियन्त्रित मण्डियों, सहकारिता तथा वाणिज्य बैंकों और अन्य सामाजिक संस्थाओं के विकास से यह भी सम्भव हो पाया है कि कृषक अपने आपको ग्रामीण साहूकारों की जंजीरों से कुछ हद तक मुक्त करवा सकें हैं। इस मुक्त वातावरण में वह बाजार के लिए अधिक उत्पादन करने के लिए प्रेरित होता है।

(ङ) कृषि के व्यवसायीकरण का वित्तीय संस्थाओं पर भी प्रभाव पड़ा है जहाँ एक ओर उनकी जिम्मेदार बढ़ी है वहीं दूसरी ओर उन्हें आगे बढ़ने और अपने कार्यक्षेत्र में विस्तार करने का अवसर मिला है। व्यवसायीकरण और वित्तीय संस्थाओं के विकास में एक सीधा प्रत्यक्ष सम्बन्ध होता है, एक के विकास के साथ दूसरे का विस्तार जुड़ा है, एक की भी शिथिलता दूसरे के लिए घातक सिद्ध हो सकती है।

ब. ग्रामीण शहरीवाद:

पिछले चार दशक के दौरान गांवों में शहरी जीवन और शहरी तौर तरीकों की घुसपैठ होती रही है। जिससे ग्रामीण जीवन प्रभावित हुए बगैर नहीं रह सका है। विजातीयता, व्यक्तित्वहीन सम्बन्ध, व्यक्तिगत स्वार्थ, विषय परकता, व्यवहारिकता आदि से कुछ समय पहले तक ग्रामीण जीवन इन सब बातों से अलग और दूर था किन्तु इनका रंग ग्रामीण जीवन पर धीरे-धीरे चढ़ता जा रहा है, इस नये मिश्रण को हम ग्रामीण शहरीवाद का

नाम दे सकते हैं। ग्रामीण शहरीवाद से जुड़ी आधुनिकता ने ग्रामीण समुदाय के सामाजिक व्यवहार, जीवन दर्शन और उनकी इच्छाओं एंव मांग के स्वरूप में आमूल चूल परिवर्तन कर दिया है। ग्रामीण शहरीवाद के कारण जाति प्रथा धीरे-धीरे समाप्त होती जा रही है। जाति प्रथा के ह्रास ने श्रम की गतिशीलता बढ़ी है, पैतृक धन्धों का स्वरूप बदला है।

आधुनिकीकरण का एक दूसरा पहलू ग्रामीण जन द्वारा उपभोग की जाने वाली वस्तुओं का स्वरूप है। परम्परागत ग्रामीण जीवन स्थानीय निर्मित वस्तुओं से ही जुड़ा रहता था। उद्योगों द्वारा निर्मित कुछ गिनी चुनी वस्तुयें जैसे साबुन, माचिस, नमक आदि ही ग्रामीण जीवन का अंश थीं। परन्तु पिछले चार दशकों से स्थिति पूर्णतया परिवर्तित सी प्रतीत होने लगी है। आकाशवाणी और दूरदर्शन व अन्य माध्यमों से उद्योगों द्वारा निर्मित उपभोक्ता वस्तुओं के बारे में जानकारी दूर-दराज के ग्रामीण क्षेत्रों में भी अब पहुंच चुकी है जिसके परिणामस्वरूप ऐसी वस्तुओं की मांग ग्रामीण क्षेत्रों में निरन्तर बढ़ती जा रही है। ये वस्तुयें ग्रामीण जीवन की अभिन्न अंग बनती जा रही हैं। आधुनिकता के इस पहलू का परिणाम यह हुआ है कि आज उपभोक्ता वस्तुंओं के निर्माताओं द्वारा ग्रामीण बाजारों में अपना सामान बेचनें की होड़ सी लग गई है।

स्वतन्त्रता के बाद से ही सरकार ने गांवों के पुर्ननिर्माण और विकास की सारी जिम्मेदारी अपने ऊपर ले ली है। सरकार ने अनेक ऐसे कदम उठायें हैं जिनसे ग्रामीण जीवन के विभिन्न पहलू अछूते और अप्रभावित नहीं रहे हैं। सर्वप्रथम सरकार ने भू सम्बन्धों में सुधार के लिए आवश्यक कानून बनाये। इन कानूनों का सम्बन्ध विचौलियों का उन्मूलन, काश्तकारी की सुरक्षा, जोतों की उच्चतम सीमा का निर्धारण आदि से है। कानून बनाने के अलावा सरकार ने अनेक ऐसी संस्थाओं की स्थापना की है जो ऐसा वातावरण बनाने में अपना योगदान दे रही है, जो कि ग्रामीण विकास के अनुकूल हैं। इन संस्थाओं में सहकारी समितियां, वेयर हाउसिंग कारपोरेशन, क्षेत्रीय ग्रामीण बैंक, व्यवसायिक बैंकों का विस्तार आदि उल्लेखनीय है। इसके अतिरिक्त सरकार ने ग्रामीण उत्थान के कई कार्यक्रम बनाए हैं, इन्हें दो वर्गो में विभाजित किया जा सकता है।

(1) क्षेत्र लक्ष्य प्रधान कार्यक्रम

(2) वर्ग लक्ष्य प्रधान कार्यक्रम।

इन विभिन्न विकास कार्यक्रमों का ही योगदान है कि ग्रामीण जीवन में आधुनिकता का बोलबाला होता जा रहा है।

संक्षेप में पिछले पांच दशकों के दौरान भारत की ग्रामीण अर्थव्यवस्था में अनेक परिवर्तन देखने को आये हैं, निसन्देह यह परिवर्तन विकास के परिचायक हैं, किन्तु इनके पीछे छिपी हुई गम्भीर समस्याओं की ओर भी हमें अपना ध्यान आकर्षित करना होगा अन्यथा भविष्य में यह विकास के मार्ग में गम्भीर बाधा सिद्ध हो सकती है। ये समस्यायें निम्नलिखित हैं।

1. बढ़ती हुई जनसंख्या के परिणामस्वरूप भूमि पर दबाव बढ़ता जा रहा है। परम्परागत ग्रामीण अर्थव्यस्था में संयुक्त परिवार प्रणाली बढ़ती जनसंख्या का भार सहन करने में समर्थ थी। व्यवसायीकरण के परिणामस्वरूप संयुक्त परिवार प्रणाली का ह्रास हुआ है। संयुक्त परिवार के टूटने के साथ ही भूमि के खण्डन और उप विभाजन की क्रिया बढ़ती जा रही है जिससे जोतों की इकाई छोटी होती जा रही है यह उन्नत कृषि के अनुकूल नहीं है।

2. कृषक की निर्भरता बाजार शक्ति पर बढ़ती जा रही है, परम्परागत व्यवस्था में कृषक पूरी तरह स्वतन्त्र और आत्मनिर्भर होता था। अनुभव यह बताता है कि परम्परा वाली निर्भरता जोखिमपूर्ण होती है और हमारा परम्परावादी कृषक समुदाय इन जोखिमों से संघर्ष करने में समर्थ नहीं हो पाया है। परिणामस्वरूप बाजार की शक्तियां उसके शोषण का माध्यम बनती जा रही हैं।

3. कृषि में नई तकनीकी प्रयोग से कृषि की आय में उल्लेखनीय वृद्धि हुई है, परन्तु इस आय का बड़ा भाग ग्रामीण समुदाय की उन्नति और समृद्धि वर्ग के हाथों ही केन्द्रित हुआ है। गरीब और निर्धन वर्ग को इस नई तकनीकी के कोई लाभ प्राप्त नहीं हुए हैं। परिणामस्वरूप ग्रामीण जीवन में आर्थिक विषमतायें पहले से कहीं ज्यादा बढ़ गयी है। जहां एक ओर ग्रामीण समुदाय की औसत आय तेजी से बढ़ी है वहीं दूसरी ओर गरीबी की रेखा से नीचे रहने वाले व्यक्तियों की संख्या भी बढ़ती जा रही है।

4. शहरीपन ग्रामीण समाज पर पूरी तरह छाया है। परिणामस्वरूप ग्रामीण समुदाय और तौर-तरीकों में परम्परागत सादगी समाप्त होती जा रही है। यह परिस्थितियां निर्बल वर्ग के लिए किसी तरह अनुकूल नहीं हैं।

5. ग्रामीण रोजगार की स्थिति क्रमशः बिगड़ती जा रही है। जहां एक ओर काम मांगने वालों की संख्या बढ़ती जा रही है वहीं गैर कृषि क्षेत्रों में रोजगार के नए अवसरों के निर्माण की गति बहुत धीमी है अतः भूमिहीन तथा सीमान्त कृषक गरीबी में और अधिक धंसते जा रहे हैं।

संक्षेप में पिछले पांच दशकों के दौरान निसन्देह ग्रामीण समाज में महत्वपूर्ण परिवर्तन हुए हैं। कृषि उत्पादन की मात्रा और प्रति हेक्टेअर उत्पादकता में भी उल्लेखनीय वृद्धि हुई है किन्तु इन सबका लाभ सम्पन्न वर्ग को ही अधिक प्राप्त हुआ है। साधनविहीन तथा निर्बल वर्ग की स्थिति शोचनीय तथा पहले से अधिक खराब हुई है।

ऐसी स्थिति में जनपद इटावा जो उत्तर प्रदेश के दक्षिण मध्य में स्थित है, जिसका कुल क्षेत्र 436727 हेक्टेअर है, जिसमें कुल कृषि के लिए उपलब्ध भूमि केवल 66.33 प्रतिशत है और प्रति व्यक्ति कृषि की उपलब्धता मात्रा 0.14 हेक्टेअर है। यह आवश्यक अनुभव किया गया है कि कृषि भूमि का उपभोग सर्वात्तम विधि से किया जाना चाहिये जिससे बढ़ती हुई जनसंख्या की न केवल उदरपूर्ति की जा सके बल्कि वर्तमान भौतिक तथा आर्थिक युग में व्यक्तियों की अधिक से अधिक उपयोग आवश्यकताओं को संतुष्ट किया जा सके। अतः आवश्यकता इस बात की महसूस की गई कि कृषि भूमि उपयोग से सम्बन्धित अध्ययन क्षेत्र का एक व्यापक सर्वेक्षण करके कृषि भूमि की उपलब्धता, उसकी उर्वरा शक्ति प्रति व्यक्ति खाद्यान्न उपलब्धता तथा प्रति व्यक्ति उपभोग की मात्रा आदि तथ्यों का ज्ञान प्राप्त किया जाये, बिना इन तथ्यों की जानकारी किए कृषि भूमि नियोजन सम्बन्धी योजनायें बना भले ही ली जायें परन्तु उनकी सफलता संदिग्ध होगी। वर्तमान समय में इस लघु क्षेत्र की जनसंख्या तथा कृषि सम्बन्धी समस्याओं के अध्ययन की नितान्त आवश्यकता है जिससे इन समस्याओं के हल के लिए कृषि एवं मानव संसाधन विकास की योजनायें बनाई जा सकें। प्रस्तावित अध्ययन द्वारा जनपद इटावा की कृषि जनसंख्या का पोषण स्तर तथा मानव स्वास्थ्य सम्बन्धी समस्याओं का विश्लेषण किया जायेगा।

2. अध्ययन का महत्वः

किसी देश का कुल क्षेत्रफल उस सीमा को निर्धारित करता है जहां तक विकास प्रक्रिया के दौरान उत्पत्ति के साधन के रूप में भूमि का समतल विस्तार सम्भव होता है। जैसे- जैसे विकास प्रक्रिया आगे बढ़ती है और नए मोड़ लेती है, समतल भूमि की मांग बढ़ती है। नये कार्यों एवं उद्योगों के लिए भूमि की आवश्यकता होती है वह परम्परागत उपयोगों में अधिक मात्रा में भूमि की मांग की जाती है। सामान्यतः इन नए उपयोगों तथा परम्परागत उपयोगों ने बढ़ती हुई भूमि की मांग की आपूर्ति के लिए कृषि के अन्तर्गत भूमि को काटना पड़ता है और प्रकार से भूमि कृषि उपयोग से गैर कृषि कार्यों में प्रयुक्त होने लगती है। एक विकासशील अर्थव्यस्था के लिए जिसकी मुख्य विशेषातायें श्रम अतिरेक व कृषि उत्पादों के अभाव की स्थिति का बना रहना हो वहां कृषि उपयोग से गैर कृषि उपयोगों में भूमि का चला जाना गम्भीर समस्या का रूप धारण कर सकता है। जहां इस प्रक्रिया से एक ओर सामान्य कृषक के निर्वाह श्रोत का विनाश होता है दूसरी ओर समग्र अर्थव्यस्था की दृष्टि से कृषि पदार्थों की मांग पूर्ति में गम्भीर असंतुलन उत्पन्न हो सकते हैं। कृषि पदार्थों की कमी अर्थव्यवस्था में अन्य अनेक समस्याओं को जन्म दे सकती हैं। इसलिए यह आवश्यक समझा जाता है कि विकास प्रक्रिया के दौरान जैसे-जैसे समतल भूमि की मांग बढ़ती है। उसी के साथ बंजर, परती तथा बेकार पड़ी भूमि को कृषि अथवा गैर कृषि कार्यों के योग्य बनाने के लिए प्रयास करने चाहिये। कोशिश यह होनी चाहिये कि खेती-बाड़ी के लिए उपलब्ध भूमि के क्षेत्र में किसी प्रकार की कमी न आये वरन जहां तक सम्भव हो कृषि योग्य परती भूमि में सुधार करें। खेती-बाड़ी के लिए उपलब्ध भूमि क्षेत्र में वृद्धि ही करनी चाहिये।

किसी क्षेत्र में उपलब्ध भूमि को इसके विभिन्न उपयोगों के आधार पर दो भागों में बांटा जा सकता है।

क. कृषि भूमि

ख. गैर कृषि भूमि

क. कृषि भूमिः

कृषि भूमि में हम निवल जोते गये क्षेत्र वर्तमान परती क्षेत्र तथा वृक्षों, उपवनों के अन्तर्गत क्षेत्र को शामिल करते हैं। इस दृष्टि से देखें तो भारत

का कुल भौगोलिक क्षेत्र 32.88 करोड़ हेक्टेअर है। जिसमें से लगभग 30.41 करोड़ हेक्टेअर भूमि उपयोग का सूचित क्षेत्र है। इस सूचित क्षेत्र का लगभग 50 प्रतिशत भाग कृषि भूमि वर्ग के अन्तर्गत आता है। दूसरे बड़े आकार अथवा मध्य आकार वाले देशों की तुलना में यह अनुपात सर्वाधिक है। अमेरिका में यह अनुपात 40 प्रतिशत, सोवियत संघ में 27 प्रतिशत और ब्राजील में लगभग 16 प्रतिशत है। यदि सारे विश्व के हिसाब से आकलन किया जाये तो इस कोटि में आनेवाली भूमि 32 प्रतिशत के लगभग होगी।[5]

कुल क्षेत्रफल में कृषि योग्य भूमि का ऊँचा अनुपात कुछ महत्वपूर्ण बातों का संकेत देते हैं। जैसे-

(क) भौतिक तत्व विकास के अनुकूल हैं। इन तत्वों में (1) विस्तृत क्षेत्र (2) मैदानी क्षेत्र का विस्तृत आकार तथा (3) अनुर्वर भूमि का सीमित क्षेत्र आदि प्रमुख हैं।

(ख) कृषि योग्य भूमि के बड़े हिस्से पर कृषि कार्य किया जाना सम्भव होना। यह सच है कि कृषि भूमि का कुल क्षेत्रफल में अनुपात काफी ऊँचा है। किन्तु यदि बढ़ती हुई जनसंख्या के सन्दर्भ में इस तथ्य पर गौर किया जाये तो हम पाते हैं कि उपलब्ध प्रति व्यक्ति कृषि योग्य भूमि केवल 0.25 हेक्टेयर ही है, जो विश्व के बाकी सब विकसित तथा विकासशील देशों की तुलना में बहुत ही कम है। देश में कुल जोती गई भूमि के लगभग 15 प्रतिशत भाग पर एक से अधिक फसलें बोई जाती हैं जबकि लगभग 40 प्रतिशत भूमि पर सिंचाई की सुविधायें उपलब्ध हैं। सिंचाई के आधीन भूमि कम होने के कारण कृषि गत क्षेत्र का अधिकांश भाग प्राकृतिक वर्षा पर निर्भर करता है। भारत में पानी के इस साधन पर भरोसा नहीं किया जा सकता है। समय, स्थान, मात्रा आदि हर दृष्टि से वर्षा बहुत अनिश्चित और अनियमित है। इसके सहारे खेती के पानी की आवश्यकता भली प्रकार पूरी नहीं की जा सकती है।

ख. गैर कृषि भूमि:

इस वर्ग में उस भूमि को सम्मिलित किया जाता है। जहां खेती-बाड़ी नहीं की जा सकती जैसे-जंगल, वन तथा स्थायी चारागाह एवं अनेक गैर

कृषि कार्यों जैसे शहर, गांव, सड़क, रेल, इमारत, मकान आदि में उपयोग की जानेवाली भूमि।

वर्तमान शताब्दी के पांचवे दशक के दौरान जब देश से जमींदारी और जागीरदारी की प्रथा समाप्त की गई। बंजर क्षेत्रों और परती भूमि पर सुधार के बड़े विस्तृत कार्यक्रम अमल में लाये गये। जमीदारों के पास निजी खेती के लिए छोड़ी गई भूमि में जो बंजर भूमि थी, उस पर उनके द्वारा सुधार के सभी प्रयास किए गए। इसी प्रकार पुराने काश्तकारों जिनको बंजर और परती भूमि पर नए अधिकार प्राप्त हुए थे, इस प्रकार की भूमि को सुधारने के लिये उत्सुक थे। अतः देश में पहली बार बंजर भूमि और परती भूमि को सुधारने का कार्य विशाल स्तर पर किया गया। इस कार्य में सरकार ने भी अनुदान और ऋण के माध्यम से आवश्यक योगदान दिया, किन्तु इसके बाद इस कार्य की गति बहुत धीमी पड़ गयी है बल्कि अब वस्तु स्थिति यह है कि–

(क) जनसंख्या बढ़ने तथा बढ़ते हुए औद्योगीकरण व अन्य विकास कार्यक्रमों में भूमि की मांग निरन्तर बढ़ती जा रही है।

(ख) निवल जोते गए क्षेत्र में किसी प्रकार की वृद्धि होना लगभग असम्भव सा प्रतीत होता है। इसके साथ ही एक से अधिक बार जोते गए क्षेत्र की भी वृद्धि दर अब धीमी पड़ती जा रही है। जिससे इतने विशाल आकार वाले देश में भी भूमि तत्व विकास प्रक्रिया में अंकुश बनता नजर आ रहा है।

उपरोक्त सन्दर्भ में भूमि उपयोग के ढांचे का अध्ययन महत्वपूर्ण हो जाता हैं भू उपयोग के ढांचे से सम्बद्ध आंकड़ों का अध्ययन कर हम यह जान सकते हैं कि भावी विकास प्रक्रिया में भूमि तत्व की क्या भूमिका हो सकती है, कितनी अतिरिक्त भूमि किसी क्षेत्र और कहां से प्राप्त करवाई जा सकती है।

3.अध्ययन का उद्देश्य:

भूमि समस्त गतिविधियों का आधार है। इस पर ही समस्त गतिविधियां और आर्थिक क्रियाओं का सृजन और विकास होता है। यह आवासीय, औद्योगिक और परिवहन व्यवस्था का आधार होने के साथ–साथ खनिजों का स्रोत फसल एवं वनोपज का आधार और उनमें विविधता का पोषक है। इस बहुमूल्य संसाधन के समुचित उपयोग और प्रबन्ध की आवश्यकता है। समुचित भूमि उपयोग द्वारा क्षेत्रीय आवश्यकताओं को पूरा करते हुये तथा उसके गुण धर्म को अक्षुण्ण रखते हुये इसे अगली पीढ़ी को

हस्तान्तरित किया जा सकता है। समुचित भूमि उपयोग और प्रबन्ध इसलिए भी आवश्यक हैं क्योंकि बढ़ती हुई जनसंख्या के कारण प्रति व्यक्ति भौगोलिक क्षेत्रफल कम होता जा रहा है।

भूमि उपयोग का अध्ययन विद्यमान भूमि क्षेत्र का प्रयोगवार विवरण प्रस्तुत करता है और यह स्पष्ट करता है कि किसी भू-खण्ड को सक्षमतापूर्वक कैसे कृषि योग्य व उपजाऊ बनाया जा सकता है। भूमि उपयोग का अध्ययन इस तथ्य की ओर ध्यान आकर्षित करता है, कि किसी क्षेत्र की भूमि की प्रकृति कृषित भूमि की ओर बढ़ने की है अथवा चारागाह या वनों के अन्तर्गत बढ़ने की है। उपर्युक्त तथ्यों को ध्यान में रखते हुए प्रस्तुत शोध अध्ययन का मुख्य उद्देश्य कृषि प्रधान एवं पूर्णरूपेण ग्रामीण जनपद इटावा के भूमि उपयोग की समुचित व्याख्या प्रस्तुत करना है। जिससे भौतिक एवं मानवीय कारकों के सन्दर्भ में वर्तमान भूमि उपयोग एवं उसकी सम्भावित क्षमता का मूल्यांकन किया जा सके। साथ ही जनपदवासियों की आवश्यकताओं एवं उनके आर्थिक एवं पोषण स्तर को ऊँचा उठाने हेतु भूमि उपयोग के सम्भावित वैज्ञानिक कार्यक्रम प्रस्तावित किए जा सकें। इस शोध अध्ययन में उक्त मुख्य उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए निम्नलिखित उपलक्ष्य निर्धारित किए गए हैं।

1. सामान्य भूमि उपयोग तथा कृषि भूमि उपयोग का अध्ययन करना।
2. कृषि भूमि उपयोग में प्रचलित नवीन प्राविधिकों का उपयोग तथा वर्तमान प्रचलित शस्य प्रतिरूप का अध्ययन करना।
3. उपलब्ध कृषि भूमि पर जनसंख्या के अधिभार का मापन करना।
4. जनसंख्या के पोषण स्तर का निर्धारण करना तथा मानव स्वास्थ्य के मध्य सम्बन्ध स्थापित करना।
5. अल्प पोषण तथा कुपोषण से उत्पन्न बीमारियों का विश्लेषण करना।
6. भूमि उपयोग तथा जनसंख्या की पोषण सम्बन्धी समस्याओं के

समाधान हेतु सुझाव प्रस्तुत करना।

उपर्युक्त लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु शोधार्थी ने निम्न परिकल्पनाओं को आधार बनाया है।

1. भूमि सम्पदा से सम्पन्न होते भी अध्ययन क्षेत्र आर्थिक दृष्टि से राज्य का एक पिछड़ा हुआ क्षेत्र है। जहां की भूमि उपयोग में पारम्परिक पद्धतियों की प्रधानता है।

2. अध्ययन क्षेत्र में कृषि भूमि उपयोग में खाद्य फसलों की प्रधानता है और व्यवसायिक फसलों का नितान्त अभाव है।

3. खाद्य फसलों के उत्पादन में भी वैज्ञानिक कृषि पद्धति, रासायनिक उर्वरकों, कीटनाशक औषधियों तथा उन्नतिशील बीजों का प्रयोग अत्यन्त सीमित क्षेत्रों में किया जाता है।

4. यद्यपि सिंचाई साधनों के विकास के कारण सकल कृषि क्षेत्र तथा शस्य गहनता में वृद्धि हुई है परन्तु बढ़ती हुई जनसंख्या के कारण आवासीय तथा परिवहन सुविधाओं में वृद्धि के कारण शुद्ध बोया गया क्षेत्र घट रहा है।

5. परिवहन तथा बाजार सुविधाओं में विस्तार के कारण कृषि के व्यवसायीकरण को प्रोत्साहन मिल रहा है तथा नई कृषि पद्धतियों में मुद्रादायिनी फसलों के उत्पादन पर बल दिया जा रहा है।

6. अध्ययन क्षेत्र में कृषि भूमि उपयोग में आवश्यक सुधार कर लिया तो प्रति व्यक्ति कृषि भूमि उपलब्धता को बढ़ाया जा सकता है अथवा प्रति हेक्टेअर उत्पादन में वृद्धि करके क्षेत्रवासियों के आर्थिक स्तर को उठाया जा सकता है।

7. क्षेत्रवासियों के सामान्य प्रचलित आहार में खाद्यान्न की प्रधानता पायी जाती है। जिसके कारण अधिकांश लोगों के भोजन में शरीर की सामान्य आवश्यकता के पोषक तत्वों का अभाव रहता है।

8. अधिकांश लोग संतुलित भोजन में आवश्यक पोषक तत्वों की कमी के कारण कुपोषण जनित बीमारियों के शिकार हो जाते हैं।

9. यदि लोगों को संतुलित भोजन में शरीर के लिए आवश्यक पोषक तत्वों का ज्ञान तथा ग्रामीण क्षेत्रों में सरलता से सुलभ विभिन्न खाद्य

पदार्थों में उपलब्ध पोषक तत्वों की जानकारी कराई जाये तो लोगों को प्रचलित आहार स्वरूप में मात्रात्मक एवं गुणात्मक समन्वय स्थापित करने के लिये प्रेरित किया जा सकता है।

10. भोजन में मात्रात्मक तथा गुणात्मक समन्वय स्थापित करके कुपोषण जनित बीमारियों से बचा जा सकता है।

11. कुपोषण जनित बीमारियों की चिकित्सा पर होने वाले व्यय को बचाकर और बचने वाले धन को अन्यत्र व्यय करके उपभोग स्तर में वृद्धि की जा सकती है।

4. कार्य संगठन:

प्रस्तुत शोध का प्रमुख उद्देश्य उन आधारभूत तथ्यों की व्याख्या करना है जो किसी देश अथवा क्षेत्र की आर्थिक स्थिरता के लिए उत्तरदायी हैं। हमारे योजना निर्माता यह आरोप लगाते हैं कि हमारी तीव्र गति से बढ़ती हुई जनसंख्या हमारे सामाजिक, आर्थिक विकास में एक बड़ा अवरोध उत्पन्न कर रही हैं। परन्तु यदि हमारा पड़ोसी देश चीन यदि अपनी जनसंख्या वृद्धि दर को 1.4 प्रतिशत तक घटा सकता है तो भारतवर्ष के लिए क्या यह सम्भव नहीं है? क्या भारतीय कृषक अपने पड़ोसी चीन की भांति चावल तथा गेहूं उत्पन्न नहीं कर सकता है? क्यों हमारा सार्वजनिक क्षेत्र सफल घरेलू उत्पादन को बढ़ाने में सहायक न होकर अधिकांश हानि की स्थिति ही प्रदर्शित करते रहते हैं। स्वतन्त्रता के पश्चात धनी और निर्धन के बीच की खाई क्यों और अधिक चौड़ी होती जा रही है? भारत में निर्धनता तथा भ्रष्टाचार का क्यों बोलबाला दिखाई देता है? अध्ययन क्षेत्र जनपद इटावा के माध्यम से शोधार्थी द्वारा ऐसे प्रश्नों के उत्तर खोजने का प्रयास किया गया है।

प्रस्तुत शोध ग्रन्थ अध्ययन को सरल बनाने के लिए नौ भागों में विभक्त है, जिसकी प्रस्तावना में प्रस्तुत अध्ययन की आवश्यकता, अध्ययन का महत्व, अध्ययन के उद्देश्य आदि का विवरण प्रस्तुत किया गया है। अध्याय प्रथम संकल्पनात्मक पृष्ठभूमि तथा शोध विधि से सम्बन्धित है, जिसमें निर्धनता, ग्रामीण निर्धनता के कारण, ग्रामीण निर्धनता के परिणाम, निर्धनता कम करने के उपाय, खाद्य एवं पोषण, कुपोषण तथा शोध विधि का विवरण प्रस्तुत किया गया है।

अध्याय द्वितीय अध्ययन क्षेत्र की स्थिति जिसमें भौगोलिक स्थिति, आर्थिक स्थिति, सामाजिक स्थिति को प्रस्तुत किया गया है।

तृतीय अध्याय में भूमि उपयोग, अध्ययन क्षेत्र की वार्षिक फसलें, शस्य विभेदीकरण, शस्य संयोजन, कृषि में प्राविधिक प्रयोग का विवेचन किया गया है।

अध्याय चतुर्थ अध्ययन क्षेत्र में कृषि उत्पादकता के स्तर से सम्बन्धित है। इसमें कृषि उत्पादकता मापन विधियां, अध्ययन क्षेत्र में कृषि उत्पादकता के स्तर आदि का वर्णन है।

अध्याय पंचम कृषि भूमि पर जनसंख्या का भार, खाद्यान्न उत्पादन तथा जनसंख्या का विकास, खाद्यान्न उत्पादन तथा जनसंख्या संतुलन, प्रति व्यक्ति खाद्यान्न उपलब्धता से सम्बन्धित है।

अध्याय छः तथा अध्याय सात प्रतिचयित ग्रामों तथा प्रतिचयित कृषकों के कृषि भूमि उपयोग, उपभोग स्तर तथा कुपोषण जनित बीमारियों से सम्बन्धित है। प्रतिचयित ग्रामों के कृषकों के कृषि प्रारूप ,उनके भोजन सामग्री में खाद्य पदार्थों की मात्रा तथा खाद्य पदार्थों में पोषक तत्वों की मात्रा का आकलन किया गया है। अध्याय सात में प्रतिचयित कृषकों को चार वर्गों में विभाजित करके विभिन्न वर्गों द्वारा प्रतिदिन प्रति व्यक्ति उपभोग किए जाने वाले खाद्य पदार्थों में पोषक तत्वों की उपलब्ध मात्रा की गणना, प्रति व्यक्ति मानक पोषण स्तर से तुलना करके अल्प पोषण का आकलन किया गया है जिसमें लोगों की भोजन सामग्री में मानक स्तर से कम पोषक तत्वों के ग्रहण करते रहने से उत्पन्न बीमारियों का विश्लेषण किया गया है।

विभिन्न वर्गों के कृषक परिवारों में मानक स्तर से कम पोषक तत्वों के ग्रहण करने के कारण वे किन-किन कुपोषण जनित बीमारियों से ग्रसित हैं।

अध्याय अष्टम निर्धनता दूर करने के उपाय से सम्बन्धित है जिसमें पंचवर्षीय योजनाओं एवं सरकारी स्तर पर निर्धनता को दूर करने के उपाय, निर्धनता को कम करने के उपाय तथा भावी व्यूह रचना का वर्णन किया गया है।

अन्तिम अध्याय नवम् में अध्ययन के निष्कर्ष एवं सुझाव प्रस्तुत किए गए हैं। इन सभी अध्यायों में ग्रामीण निर्धनता, अध्ययन क्षेत्र के लोगों के पोषण स्तर तथा उनके स्वास्थ्य से सम्बन्धित तथ्यों की जानकारी देने का प्रयास किया गया है, साथ ही अध्ययन क्षेत्र के सन्तुलित विकास के लिए कुछ ऐसे आवश्यक सुझाव प्रस्तुत किए गए हैं जिसको ध्यान में रखते हुए यदि विकास की योजनाओं का क्रियान्वयन किया जाये तो अध्ययन क्षेत्र में निवास करने वाली जनसंख्या का मात्रात्मक एवं गुणात्मक दोनों ही दृष्टियों से सन्तुलित पोषण सम्भव बनाया जा सकता है।

सन्दर्भ ग्रन्थ

1. शर्मा एस. सी. (1966) लैण्ड यूटीलाइजेशन इन सादाबाद तहसील (मथुरा) यू. पी. इण्डिया अप्रकाशित शोध ग्रन्थ, आगरा विश्वविद्यालय पृष्ठ –2.

2. रिपोर्ट आन इण्डियाज फूड क्राइसिस एण्ड स्टेप्स टू मीट इट दि एग्रीकल्चरल प्रोडक्शन टीम स्पोन्सोर्ड वाई दि फूटु फाउण्डेशन दि गवर्नमेन्ट ऑफ इण्डिया 1959 पृष्ठ 1–22.

3. फर्स्ट फाइव इयर प्लान पृष्ठ – 301.

4. सिंह सुदामा (1994) भारतीय अर्थव्यवस्था समस्याओं एवं नीतियां, नील कमल प्रकाशन गोरखपुर पृष्ठ 269–70.

5. ईश्वर धींगरा (1991) 'ग्रामीण अर्थव्यवस्था' सुल्तान चन्द एण्ड सन्स नई दिल्ली पृष्ठ – 159.

अध्याय - प्रथम

अध्याय- प्रथम
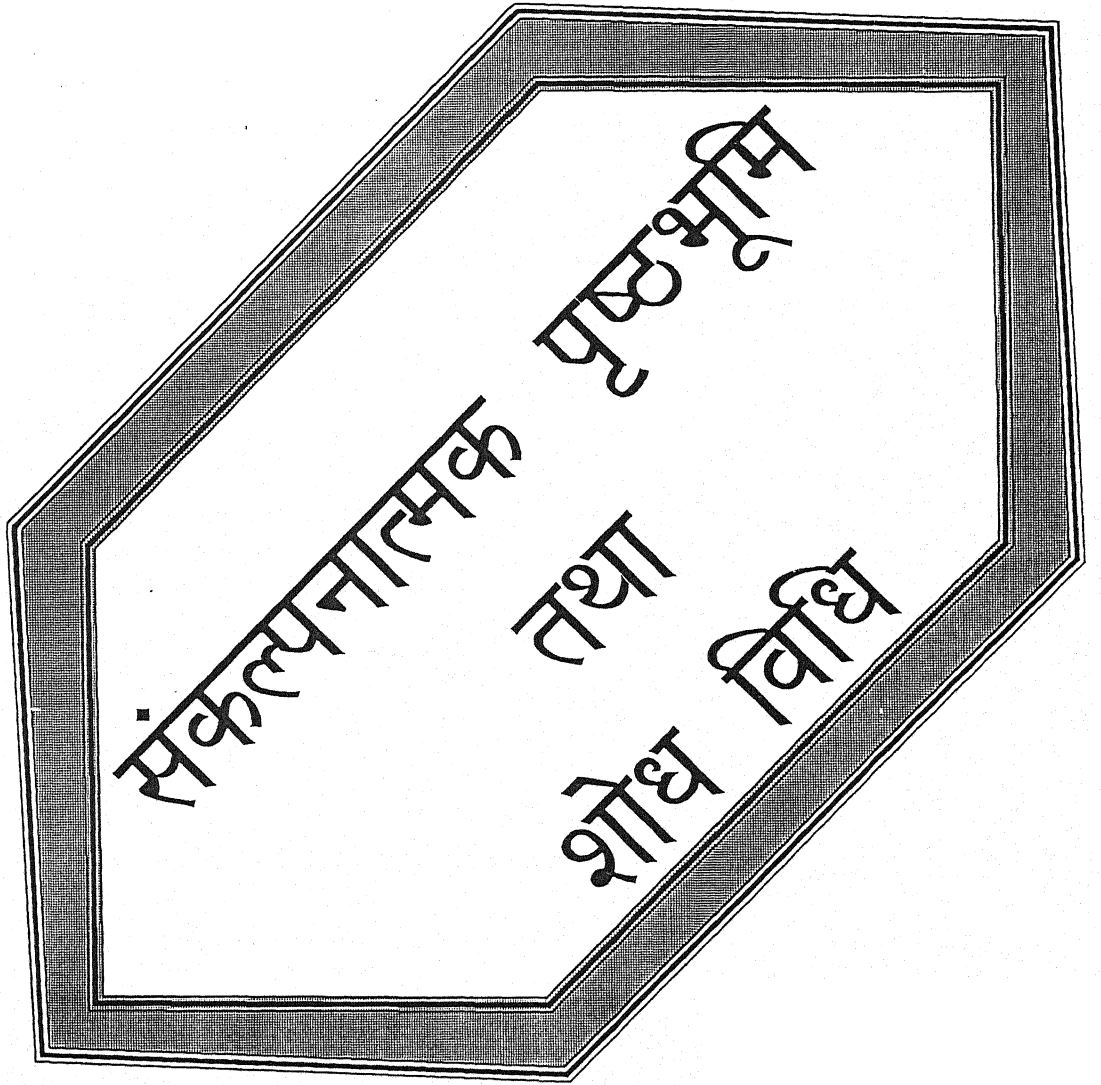
संकल्पनात्मक पृष्ठभूमि तथा शोध विधि

1. निर्धनता रेखा का निर्धारण:

स्वतन्त्रता प्राप्ति के समय हमारे देश का आर्थिक आधार एवं औद्योगिक अवस्थापना अत्यन्त कमजोर थी। अक्षम कृषि प्रणाली तथा भू-स्वामित्व प्रणाली के नीचे देश के करोड़ों कृषक पिस रहे थे। देश के विभाजन से करोड़ों लोग बेघर हो गए थे। आर्थिक क्रियाकलाप अस्त-व्यस्त हो गया था। ऐसी पृष्ठभूमि में अप्रैल, 1951 से देश मे नियोजित विकास की प्रक्रिया आरम्भ की गई ताकि अर्थव्यवस्था का विकास जनतांत्रिक विधि से समाजवादी समाज के अनुरूप हो सके योजनागत विकास प्रयासों के कारण गत 37 वर्षों की अवधि में अर्थव्यवस्था में कई क्रान्तिकारी सुधार हुए। उत्पादिता और उत्पादन का स्तर विविध उत्पादक क्षेत्रों में बढ़ा। राष्ट्रीय आय की औसत वृद्धि दर 3.6 प्रतिशत प्रतिवर्ष रही। अब दूरस्थ और पिछड़े क्षेत्रों में भी विकास के चिन्ह दृष्टिगोचर होते हैं। परन्तु योजनाकाल की इस सफलता और विकासगत नीतियों और कार्यक्रमों के बाद भी जन साधारण के जीवन स्तर में कोई उल्लेखनीय परिवर्तन नहीं हुआ। इसके परिणामस्वरूप ग्रामीण और नगरीय समाज का एक व्यापक जन समूह कष्टमय जीवनयापन कर रहा है। इसे गरीबी की समस्या कहा जाता है। इसी प्रकार आर्थिक विषमता की समस्या भी विभिन्न वर्गों के मध्य विद्यमान है। यहाँ गरीबी और विषमता की समस्या का पृथक-पृथक विश्लेषण किया गया है।

गरीबी की परिभाषा:

किसी भी अर्थव्यवस्था में गरीबी की पहिचान तो अत्यन्त सरल है परन्तु इसे परिभाषित करना उतना ही कठिन है। गरीबी का आशय उस सामाजिक अवस्था से है जिसमें समाज के एक वर्ग के लोग अपने जीवन की बुनियादी आवश्यकताओं को भी पूरा नहीं कर पाते हैं। गरीबी को कई दृष्टिकोणों से परिभाषित करने का प्रयास किया जाता है। एक दृष्टिकोण में गरीबी को आधारिक सुविधाओं यथा भोजन,आवास, शिक्षा और चिकित्सा

से सम्बद्ध कर परिभाषित करने का प्रयास किया गया है। आय स्तर पर विचार किए बिना यदि किसी परिवार में इन आधारिक सुविधाओं की कमी रहती है तो उसे गरीब माना जाता है। यह दृष्टिकोण इतना व्यापक है कि इसमें वे परिवार भी सम्मिलित हो जाते हैं, जिनकी आय अधिक है, परन्तु कंजूसी के कारण इन आवश्यक जरूरतों पर व्यय ही नहीं करते और दूसरी ओर वे परिवार सम्मिलित नहीं होते जिनकी आय तो नगण्य है परन्तु वे उधार, पूर्व बचत को कम कर या मित्रों और रिश्तेदारों की दया ये अपनी बुनियादी आवश्यकताओं को पूरा कर लेते हैं। दूसरे उपागम में एक परिवार की न्यूनतम आवश्यकताओं की पूर्ति और उसकी संतुष्टि करने की क्षमता के रूप में गरीबी को परिभाषित किया जाता है। इसमें न्यूनतम आवश्यकताओं का आकलन और फिर एक आधार वर्ष की कीमत के आधार पर आपेक्षित आय में रूपान्तरित कर दिया जाता है। भारत में निर्धनता की परिभाषा के लिए सामान्यतः इसी उपागम को स्वीकृत किया गया है। निर्धनता की यह परिभाषा उचित जीवन स्तर की अपेक्षा न्यूनतम जीवन स्तर की सुविधा भी उपलब्ध न होने का संकेत देती है।

गरीबी की माप (Measurment of Poverty):

गरीबी की समस्या के सम्यक निदान हेतु यह आवश्यक है कि उचित कार्यविधि एवं नीति अपनाई जाये। इसके लिए गरीबी की माप आवश्यक है। सामान्यतः गरीबी की माप करने के लिए निम्नलिखित दो प्रतिमानों का प्रयोग किया जाता है।

1. सापेक्षिक प्रतिमान (Relative Measure)
2. निरपेक्ष प्रतिमान (Absolute Measure)

1. सापेक्षिक प्रतिमान (Relative Measure):-

सापेक्षिक प्रतिमान के अन्तर्गत देश की जनसंख्या की आय स्तर के आधार पर क्रमिक वर्गों में विभक्त किया जाता है। उच्चतम आय वर्ग की तुलना निम्नतम आय वर्ग के साथ की जाती है और निर्धनता की कोटि में निम्न आय वर्ग को रखा जाता है। इस प्रतिमान के आधार पर यदि माप की जाये तो विश्व के अति विकसित देशों में भी जनसंख्या का एक भाग गरीबों की कोटि में सम्मिलित होगा। जबकि विकसित देशों के इन तथा

कथित गरीबों का आय स्तर और रहन-सहन स्तर अर्ध विकसित देशों के धनिकों से भी अधिक होगा। इसी कारण भारत और इसके समान इन विकासशील देशों में गरीबी को मापने के लिए इस प्रतिमान का प्रयोग नहीं किया जाता है।

2. *निरपेक्ष प्रतिमान* (Absolute Measure):

गरीबी मापन का निरपेक्ष प्रतिमान एक न्यूनतम आय अथवा उपभोग स्तर पर आधारित है। इस प्रतिमान का निर्धारण करते समय मनुष्य की पोषण आवश्यकताओं तथा अनिवार्यताओं के आधार पर आय तथा उपभोग व्यय के न्यूनतम स्तर को ज्ञात किया जाता है। इस न्यूनतम स्तर से कम आय प्राप्त करने वाला अथवा निर्धारित न्यूनतम स्तर से कम उपभोग व्यय करने वालों को गरीब वर्ग में रखा जाता है। इस प्रतिमान का सर्वप्रथम प्रयोग खाद्य एवं कृषि संगठन (Food and Agriculture Organisation) के प्रथम महानिदेशक व्याएड ऑर ने 1945 में किया था। इसके आधार पर उन्होनें गरीबी की माप करने के लिए सुधारेखा (Starvation Line) की संकल्पना का प्रतिपादन किया था। यह संकल्पना विश्व के अधिकांश देशों में किसी न किसी रूप में आज भी निर्धनता की माप करने में प्रयुक्त हो रही है।

भारत में निर्धनता की माप करने के लिए निरपेक्ष प्रतिमान प्रयोग किया जाता है। इसी प्रतिमान के आधार पर निर्धारित किए गए न्यूनतम उपभोग व्यय को निर्धनता रेखा कहा जाता है। इस न्यूनतम निर्धारित स्तर से कम व्यय करने वाले व्यक्तियों को गरीबी रेखा से नीचे रहने वाले अथवा गरीब कहा जाता है। इस विधि द्वारा निर्धनता की माप के विधि को ' हेड काउन्ट रेशियो' कहा जाता है। इस हेड काउन्ट रेशियो (H) के स्थान पर अमर्त्य सेन[1] ने निर्धनता सूचकांक (P) की संकल्पना प्रस्तुत की है।

गरीबी रेखा (Poverty Line):

भारत में गरीबी मापन हेतु गरीबी रेखा का प्रयोग प्रचलन में है। गरीबी रेखा की गणना का प्रथम प्रयास भारत सरकार द्वारा मनोनीत विशेषज्ञ अध्ययन दल द्वारा 1962 में किया गया। इस समिति ने 240 रूपये वार्षिक या 20 रूपये मासिक प्रति व्यक्ति उपभोग व्यय को

1960-61 की कीमतों पर गरीबी रेखा माना।[2] इस अध्ययन दल ने इस न्यूनतम आवश्यक व्यय में शिक्षा और स्वास्थ्य पर किए जाने वाले व्यय को सम्मिलित नहीं किया। यह मान्यता है कि इस पर सरकार द्वारा व्यय किया जाता है। बाद के वर्षो के लिए कीमत रेखा का अनुमान कीमत वृद्धि से उक्त राशि को समायोजित कर प्राप्त किया जा सकता है। इसी के आधार पर अर्थशास्त्रियों ने समय-समय पर निर्धनता रेखा और निर्धनता स्तर का अनुमान लगाया है। योजना आयोग ' प्रभावी उपभोग मांग और U; wre आवश्यकता' पर कार्यकारी दल[3] द्वारा 1973-74 की कीमतों पर ग्रामीण क्षेत्र में 2400 कैलोरी प्रति व्यक्ति प्रतिदिन और नगरीय क्षेत्र में 2100 कैलोरी प्रति व्यक्ति प्रतिदिन उपलब्धता को ध्यान में रखकर ग्रामीण क्षेत्र के लिए रूपये 49.09 और नगरीय क्षेत्र में 56.64 रूपये मासिक व्यय को गरीबी रेखा माना गया। इस कार्यकारी दल की रिपोर्ट के आधार पर हाल के वर्षो में गरीबी रेखा को अधिक आधुनिक बनाया गया है। इसके अनुसार 1984-85 की कीमतों पर ग्रामीण क्षेत्र में 107 रूपये और नगरीय क्षेत्र में 122 रूपये मासिक व्यय को गरीबी रेखा माना गया है। सातवीं पंचवर्षीय योजना मे इस गरीबी रेखा का ही प्रयोग किया गया है।

इस प्रकार यह स्पष्ट होता है कि भारतीय योजनाओं ने गरीबी की माप करने के लिए गरीबी रेखा का निर्धारण भौतिक अधिजीवन (Physical Survival) की संकल्पना के आधार पर किया है। गरीबी रेखा की इस अवधारणा को नकारते हुए सातवें वित्त आयोग ने वर्द्धित गरीबी रेखा की संकल्पना को प्रतिपादित किया है।[4] वर्द्धित गरीबी रेखा का निर्धारण करने के लिए सातवें वित्त आयोग ने मासिक वैयक्तिक उपभोग व्यय में राज्य सरकार द्वारा शिक्षा, स्वास्थ्य, परिवार कल्याण, समाज कल्याण आदि पर किए जाने वाले प्रति व्यक्ति मासिक व्यय की राशि जोड़ दी गई। इस प्रकार प्राप्त हुई धनराशि को वर्द्धित गरीबी रेखा कहा गया। स्पष्ट है कि वर्द्धित गरीबी रेखा पूरे देश के लिए समान नहीं होगी बल्कि इसका निर्धारण प्रत्येक राज्य के लिए अलग-अलग होगा। इस आधार पर कहा जा सकता है कि वर्द्धित गरीबी रेखा निर्धनता की माप करने का विशिष्ट प्रतिमान है।

भारत में गरीबी के अनुमान

(Estimates of Poverty in India)

भारत की गरीबी के सन्दर्भ में कई अर्थशास्त्रियों ने अपने-अपने अनुमान प्रस्तुत किये हैं, परन्तु प्रत्येक में अंगीकृत परिकल्पना और आधारिक आंकड़ों की विविधता के कारण इनके निष्कर्षों में विविधता उत्पन्न हो जाती है। भारत की गरीबी के सन्दर्भ में किए जाने वाले कुछ अनुमान यहां प्रस्तुत किए गए हैं।

पी.डी. ओझा[5] के अनुमान के अनुसार प्रत्येक दिन के भोजन जिसमें खाद्यान्न, फल, दूध और अण्डे आदि सम्मिलित हैं, से व्यक्ति को 2250 कैलोरी ऊर्जा की प्राप्ति होनी चाहिये। भोजन के इन विभिन्न तत्वों की लागत के अनुमान की असुविधा के कारण ओझा ने खाद्यान्नों की कैलोरी पर ही अपना विश्लेषण प्रस्तुत किया। ओझा के अनुसार ग्रामीण लोगों के लिए 1800 कैलोरी की प्राप्ति हेतु प्रतिदिन 518 ग्राम और नगरीय लोगों के लिए प्रतिदिन 1500 कैलोरी की प्राप्ति हेतु 432 ग्राम अनाज प्रति व्यक्ति के लिए आवश्यक है। इस अध्ययन के अनुसार वर्ष 1960-61 में ग्रामीण क्षेत्र के लिए रू0 16.50 और नगरीय क्षेत्र के लिए रू0 20.00 प्रतिमाह प्रति व्यक्ति आवश्यक था। इस अध्ययन के अनुसार वर्ष 1960-61 से देश में कुल 19 करोड़ व्यक्ति अथवा कुल जनसंख्या के 44 प्रतिशत लोग गरीबी रेखा के नीचे थे। इनमें से 18.4 करोड़ व्यक्ति ग्रामीण क्षेत्र में तथा 0.6 करोड़ लोग नगरीय क्षेत्र में गरीब थे। इस प्रकार ग्रामीण जनसंख्या का 51.8 प्रतिशत और नगरीय जनसंख्या का 7.9 प्रतिशत भाग गरीबी रेखा से नीचे था। 1967-1968 के लिए 40 रूपये मासिक उपयोग व्यय के आधार पर ओझा ने अनुमान लगाया है कि ग्रामीण क्षेत्र की 28.9 करोड़ जनसंख्या अथवा कुल ग्रामीण जनसंख्या की 70 प्रतिशत जनसंख्या गरीबी रेखा से नीचे थी। इस प्रकार ओझा के अनुमान के अनुसार 1960-61 से 1967-68 की अवधि में गरीबी बढ़ी है।

प्रो0 वी0 एम0 दण्डेकर और नीलकण्ठ रथ[6] ने भारत की गरीबी की समस्या का विस्तृत अध्ययन किया। पोषकर्ता को ध्यान में रखते हुए दण्डेकर और रथ ने 1960-61 की कीमतों पर ग्रामीण और नगरीय क्षेत्रों के लिए

पृथक-पृथक गरीबी रेखा का आकलन किया। इसके अनुमान के अनुसार वर्ष 1960-61 में देश की 41 प्रतिशत जनसंख्या गरीबी रेखा से नीचे थी, अर्थात कुल जनसंख्या में गरीब जनसंख्या का अनुपात इस अवधि में स्थिर रहा। यद्यपि गरीबी रेखा से नीचे रहने वाली जनसंख्या की कुल संख्या उक्त अवधि में 17.7 करोड़ से बढ़कर 21.5 करोड़ हो गई।

पी० के० बर्धन[7] ने देश में ग्रामीण समस्या का अध्ययन करने के लिए वर्ष 1960-61 की कीमतों पर 15.00 रू० प्रति व्यक्ति मासिक उपभोग व्यय माना है। राष्ट्रीय प्रतिदर्श सर्वेक्षण के आकड़ों के आधार पर बर्धन द्वारा निकाले गए निष्कर्ष यह प्रदर्शित करते हैं कि देश में 1960-61 से 1968-69 की अवधि में वृद्धि की प्रवृत्ति रही है। इनके अध्ययन के अनुसार ग्रामीण जनसंख्या में गरीबों का प्रतिशत 1960-61 में 38, 1964-65 में 45, 1967-68 में 53 और 1968-69 में 54 हो गया।

ए० वैद्यनाथन ने गरीबी समस्या का आकलन करने के लिए वर्ष 1960-61 की कीमतों पर 20.00 रूपये मासिक प्रति व्यक्ति उपभोग व्यय को गरीबी रेखा माना। राष्ट्रीय प्रतिदर्श सर्वेक्षण के आंकड़ों के आधार पर वैद्यनाथन ने अनुमान कियां कि वर्ष 1960-61 में ग्रामीण जनसंख्या का 59.5 प्रतिशत भाग गरीबी रेखा से नीचे था। गरीबी रेखा से नीचे रहने वाली इस जनसंख्या का प्रतिशत 1967-68 की अवधि में बढ़कर 67.8 प्रतिशत हो गया। अतः वैद्यनाथन ने अपने अध्ययन से यह निष्कर्ष प्रस्तुत किया कि 1960-61 से 1967-68 की अवधि में गरीबी में वृद्धि हुई है। उक्त सभी अध्ययनों से यह स्पष्ट है कि 1960-61 से 1968-69 की अवधि में भारत में गरीबों की संख्या बढ़ी है। अधिकांश अध्ययनों के अनुसार तो गरीबी जनसंख्या का प्रतिशत भी बढ़ा है।

उपर्युक्त अध्ययनों से पृथक श्री बी० एस० मिन्हास[8] ने अपने अध्ययन में यह निष्कर्ष निकाला कि 1960-61 से 1968-69 की अवधि में ग्रामीण गरीबों के प्रतिशत में कमी आयी है। प्रो० मिन्हास ने 240.00 रूपये प्रति व्यक्ति प्रति वर्ष न्यूनतम उपभोग व्यय को गरीबी रेखा का सूचक माना है। इस आधार पर मिन्हास ने 1956-57 से वर्ष 1967-68 तक की अवधि के लिए ग्रामीण गरीबी का अध्ययन किया और

गरीबी की समान प्रवृत्ति का अनुमान किया। मिन्हास के अध्ययन के अनुसार 1956-57 में कुल ग्रामीण जनसंख्या का 65 प्रतिशत भाग गरीबी रेखा से नीचे था। जो 1960-61 में घटकर 59.4 प्रतिशत, 1964-65 में घटकर 51.6 प्रतिशत और 1967-68 में घटकर 50.5 प्रतिशत हो गया। यदि देश की गरीबी प्रदर्शित करने के लिए ग्रामीण गरीबी जहां अधिकांश गरीब रहते हैं, पर ध्यान केन्द्रित किया जाये तो उपर्युक्त सभी अध्ययनों के निष्कर्षों को निम्नलिखित तालिका से दिखाया जा सकता है।

सारणी 1.1: ग्रामीण गरीबी की प्रवृत्ति

अनुमानकर्ता	गरीबी रेखा रू0 में (1960-61 की कीमतों पर)	गरीबी रेखा से नीचे रहने वाली जनसंख्या का प्रतिशत		
		1960-61	1967-68	1968-69
पी.डी.ओझा	16.50	51.8	53.0	54.0
दण्डेकर और रथ	14.77	41.0	--	41.0
पी.के.बर्धन	15.00	58.0	53.0	54.0
ए.वैद्यनाथन	20:00	59.5	--	67.8
बी.एस.मिन्हास	20.00	59.4	50.5	--

निष्कर्षगत विषमताओं के बाद भी पी0डी0 ओझा, दण्डेकर और रथ, पी0 के0 बर्धन, ए0 वैद्यनाथन और बी0एस0 मिन्हास के अध्ययनों से इस आशय की पुष्टि होती है कि 1968-69 में देश की लगभग आधी जनसंख्या गरीबी रेखा से नीचे थी। लगभग यही स्थिति बाद के वर्षों में भी बनी रही। यद्यपि गरीबी रेखा से नीचे रहने वाली जनसंख्या का प्रतिशत घटा है। छठीं पंचवर्षीय योजना की रिपोर्ट में यह उल्लेख किया गया है कि 1972-73 में ग्रामीण और नगरीय क्षेत्र की क्रमशः 54 और 41 प्रतिशत जनसंख्या गरीबी रेखा से नीचे थी।[9] राष्ट्रीय प्रतिदर्श सर्वेक्षण के 32वें दौर (जुलाई 1977 से जून 1978 तक) के आंकड़ों के आधार पर देश में गरीबी की समस्या का अनुमान लगाया है। ग्रामीण क्षेत्र में 2400 कैलोरी

और नगरीय क्षेत्र में 2100 कैलोरी का भोजन प्राप्त कराने के लिए 1977-78 की कीमतों पर ग्रामीण क्षेत्र के लिए 65 रूपये प्रति व्यक्ति प्रति माह और 75 रूपये प्रति व्यक्ति प्रति माह उपभोग व्यय को गरीबी रेखा मानकर यह निष्कर्ष निकाला गया कि 1977-78 में ग्रामीण और नगरीय क्षेत्र की क्रमशः 50.82 और 38.19 प्रतिशत जनसंख्या गरीबी रेखा से नीचे थी। देश की कुल जनसंख्या का 48.13 प्रतिशत भाग गरीबी रेखा से नीचे था।[10] यह गरीबी रेखा से नीचे रहने वाली जनसंख्या की स्थिति में सुधार का द्योतक है। छठीं योजना का निष्पादन स्तर घोषित लक्ष्य के अनुरूप रहा है। फलतः गरीबी की स्थिति में सुधार हुआ है। 1983-84 में गरीबी रेखा से नीचे रहने वाली जनसंख्या का प्रतिशत घटकर 37.4 और 1984-85 में 36.9 प्रतिशत हो गया।[11]

सारणी क्रमांक 1.2: गरीबी रेखा से नीचे की जनसंख्या (प्रतिशत में)

वर्ग	1977-78	1983-84	1984-85
ग्रामीण	51.2	40.4	39.9
नगरीय	38.2	28.1	27.7
योग	48.3	37.4	36.9

सातवीं योजना में यह अनुमान किया गया था कि 1989-90 तक गरीबी रेखा से नीचे रहने वाली जनसंख्या का प्रतिशत घटकर 25.8 हो जायेगा। सातवीं योजना में वास्तविक समृद्धि दर योजना में निर्धारित लक्ष्य तक रही है। अतः यह अनुमान किया जाता है कि गरीबी रेखा से नीचे रहने वाली जनसंख्या के प्रतिशत में अवश्य कमी आई है।

इस प्रकार यह आशा की गयी है कि 1984-85 में गरीबी रेखा से नीचे रहने वाली 28.3 करोड़ जनसंख्या, 1989-90 में घटकर 22.8 करोड़ हो गयी होगी। इस प्रकार सातवीं योजना अवधि में गरीबों की जनसंख्या में 6.2 करोड़ की कमी आयेगी। चतुर्थ पंचवर्षीय योजना के बाद के अनुमान यह स्पष्ट करते हैं कि गरीबी के प्रतिशत में कमी आयी है और छठीं योजना में तो गरीबी का प्रतिशत घटने

के साथ-साथ गरीबों की कुछ संख्या भी घटी है। यह एक उत्साहवर्धक प्रवृत्ति है।

गरीबी रेखा से नीचे रहने वाली जनसंख्या के प्रतिशत और उनकी निरपेक्ष संख्या में कमी के बाद भी आज देश की प्रमुख समस्या जनसंख्या के एक बहुत बढ़े भाग में व्याप्त गरीबी की है। व्यापक गरीबी समाज में कुपोषण, अल्प पोषण, आर्थिक विषमता और शोषण जैसे आर्थिक दोषों को जन्म देती है। इसके अतिरिक्त यह भ्रष्टाचार, नैतिक अवमूल्यन और भविष्य के प्रति आशंका जैसे सामाजिक अभिशापों को भी बढ़ा रही है। इन गरीबों की कोटि में लघु एवं सीमान्त कृषक, भूमिहीन कृषक, कृषि श्रमिक, परम्परागत सेवा कार्य करने वाले लोग, भ्रमणशील जन समुदाय, नगरों में झुग्गी झोपड़ियों और फुटपाथों पर रहने वाले लोग एवं कई स्वरोजगार वाले अनौपचारिक क्षेत्र के लोग सम्मिलित हैं। सामान्यतः आय का स्रजन रोजगार एवं उत्पादक परिसम्पत्ति से होता है। इन गरीबों के पास न तो कोई ठोस उत्पादक परिसम्पत्ति है और न ही सम्यक रोजगार है। इनके पास रोजगार प्राप्त करने की दृष्टि से विशिष्ट प्रतिभा और कौशल की भी कमी है। भारत में यद्यपि गरीबी की समस्या नगरीय और ग्रामीण दोनों क्षेत्रों में ही विद्यमान है, परन्तु इसकी व्यापकता और सघनता ग्रामीण क्षेत्र में ही अधिक है। वस्तुतः ग्रामीण निर्धनता ही नगरीय निर्धनता के मूल में हैं। नगरीय गरीबी की समस्या तो ग्रामीण गरीबी का आधिक्य मात्र है। आज नगरों में तीव्र गति से बढ़ती जनसंख्या इस तथ्य की सूचक है कि ग्रामीण क्षेत्र से नगरों की ओर जनसंख्या का तीव्र गति से स्थानान्तरण हो रहा है। जनसंख्या स्थानान्तरण के निम्नलिखित दो कारण हैं।

प्रथम, नगरीकरण के साथ-साथ औद्योगीकरण होता है जिससे नगरीय क्षेत्र में रोजगार सम्भावनायें बढ़ती हैं। नगरों के प्रति आकर्षण बढ़ता है। यह ग्रामीण जनसंख्या को अपनी ओर आकर्षित कर लेता है। नगरीय चकाचौंध और रंगीनियां इसे गति प्रदान करती हैं। इसे जनसंख्या स्थानान्तरण कर 'खिचखकारक' कहा जा सकता है जिससे जनसंख्या का गांवों से नगरों की ओर आगमन होता है।

द्वितीय, ग्रामीण गतिहीनता, बेरोजगारी और निर्धनता के कारण भी ग्रामीण जन समुदाय नगरों की ओर उमड़ पड़ते हैं। इन्हें जनसंख्या स्थानान्तरण का 'दबाव कारक' भी कहा जा सकता है। रोजगार व

आजीविका की खोज में आये इन ग्रामवासियों को अधिकांशतः अशिक्षित श्रमिक के रूप में कार्य करना पड़ता है और गन्दी बस्तियों की झुग्गी झोपड़ियों वाले सुविधारहित दमघोटूं वातावरण में जीवनयापन करना पड़ता है। नगरीय क्षेत्र की कई मलिन बस्तियों के सर्वेक्षणगत अध्ययनों से इस आशय की पुष्टि होती है कि ग्रामीण टूटन और गतिहीनता जन्म गरीबी ही मलिन बस्तियों के सृजन का एक अत्यन्त महत्वपूर्ण कारण है। इन दुर्दशामय बस्तियों में गांव से आई हुई जनसंख्या का बना रहना इस तथ्य का सूचक है कि वे अपनी वर्तमान स्थिति को गांव की जिन्दगी से बेहतर मानते हैं। सम्भवतः गांव में रहने पर उनको सूखी रोटी भी नहीं नसीब होती है। अतः पेट की आग बुझाने के लिए वे नगरों की दुर्दशामय जिन्दगी को श्रेष्ठकर मानते हैं। यदि गांवों में उन्हें इस प्रकार के जीवनयापन की सुविधा मिलती तो सम्भवतः वे नगरों की ओर न आते।

आर्थिक विषमतायें (Economic Inequalities):

संकल्पनात्मक आधार पर आर्थिक विकास की परिधि में संवृद्धि और विवरण की प्रक्रियायें निहित होती हैं। संवृद्धि क्रिया अर्थव्यस्था में कुल वस्तुओं और सेवाओं की उत्पादन वृद्धि में योगदान करती है और वितरण प्रक्रिया यह निर्धारित करती है कि उपलब्ध वस्तुओं और सेवाओं या उनकी वृद्धि का कितना अंश किस वर्ग को मिलता है। संवृद्धिगत आर्थिक नीति का लक्ष्य यह होना चाहिये कि अर्थव्यवस्था के समस्त क्षेत्र समान रूप से विकसित और परिवर्तित हों तथा वितरणात्मक न्याय यह निर्देश करता है कि संवृद्धिगत लाभों का अधिकांश भाग उन लोगों और क्षेत्रों को मिलना चाहिए जो अपेक्षाकृत अधिक गरीब और पिछड़े हों।

संवृद्धि और विवरणात्मक न्याय का पारस्परिक सम्बन्ध अर्थव्यवस्था को विकसित और सभी आय वर्ग व क्षेत्र के लोगों को खुशहाल बना सकता है इसलिए प्रत्येक कल्याणकारी राज्य का मुख्य उद्देश्य आर्थिक विकास की ऐसी प्रक्रिया प्रोत्साहित करना होता है जिससे सभी कमजोर क्षेत्रों और वर्गों के लोग अपेक्षाकृत अधिक लाभान्वित हो सकें। फलतः समाज में व्याप्त आर्थिक विषमता कम की जा सके।

विषमता निवारण के प्रति भारतीय जन मानस स्वतन्त्रता प्राप्ति के

बाद से ही सजग रहा है। इस दिशा में प्रयास भी किए गए परन्तु भारतीय संविधान की स्थापना में विषमता निवारण के लिए दिए जाने वाले वचनों, राज्य के नीति निदेशक तत्वों की सांत्वना और विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं में इसके लिए किए गए प्राविधानों के बावजूद आर्थिक विषमता बढ़ती जा रही है। गरीबों और अमीरों के बीच व्याप्त असमानता की खाई चौड़ी होती जा रही है। एक ओर चन्द श्रीमान लोग सुख सुविधाओं से युक्त विलासी जीवन् बिताने में व्यस्त हैं तो दूसरी ओर बहुसंख्यक व्यापक जनसंख्या अल्पपोषण और कुपोषण में त्रस्त है। कुछ लोग आराम और वैभव के साम्राज्य में हैं तो बहुसंख्यक के लिए आधुनिक विकास जन्य औद्योगिक उत्पादन, अचम्भे मात्र देखने और सुनने की चीजें बनी हैं न कि प्रयोग कर सकने की। समाज की आर्थिक विषमता की जानकारी के लिये विभिन्न वर्गों व क्षेत्रों के मध्य आय, सम्पत्ति व उपभोग स्तर को आधार मानकर उच्चतम 5 या 10 प्रतिशत निवासियों या परिवारों की आय, सम्पत्ति व उपभोग स्तरों से की जाती है।

ग्रामीण बनाम नगरीय विषमता (Rural Vs Urban Inequality)

आर्थिक विषमताओं का एक महत्वपूर्ण पहलू समष्टि रूप से ग्रामीण और नगरीय क्षेत्र के मध्य व्याप्त आर्थिक विषमता से है। अब तक की विकास प्रक्रिया के परिणाम स्वरूप ग्रामीण और नगरीय क्षेत्र के मध्य व्याप्त आर्थिक विषमता बढ़ती गई है। ग्रामीण क्षेत्र का विकास शहरों के तुल्य नहीं रहा है। देश ग्रामीण और नगरीय क्षेत्रों के मध्य विभक्त हो गया है। योजना आयोग ने यह अनुमान लगाया है कि 1977-78 में ग्रामीण क्षेत्र की 51.2 प्रतिशत जनसंख्या गरीबी रेखा से नीचे थी, जबकि नगरीय क्षेत्र की केवल 38.2 प्रतिशत गरीबी रेखा से नीचे रहने वाली जनसंख्या का प्रतिशत क्रमशः 39.9 और 27.7 था।[12] स्पष्टतः ग्रामीण क्षेत्र अधिक गरीब है।

ग्रामीण और नगरीय क्षेत्र के मध्य आर्थिक विषमता की जानकारी नेशनल काउन्सिल ऑफ एप्लाइड इकनोमिक रिसर्च के एक नवीनतम अध्ययन ' हाउसहोल्ड इनकम एण्ड इट्स डिस्पोजीशन' के आंकड़ों से होती है। यदि दोनों क्षेत्रों के मध्य आय, सम्पत्ति एवं उपभोग स्तरों की तुलना की जाये तो इनमें व्याप्त आर्थिक विषमता का स्पष्ट बोध होता है। इस अध्ययन के अनुसार ग्रामीण क्षेत्र के केवल 4.95 प्रतिशत परिवारों की औसत वार्षिक

आय 10 हजार रूपये या उससे अधिक है। जबकि क्षेत्रों के 17.61 प्रतिशत परिवारों की औसत वार्षिक आय 7,074 रूपये है। ग्रामीण परिवारों की औसत वार्षिक आय मात्र 3,390 रूपये या उससे अधिक है, जबकि ग्रामीण क्षेत्र के केवल 0.62 प्रतिशत परिवारों की आय 30,000 रूपये या उससे अधिक है। ग्रामीण और नगरीय क्षेत्र के मध्य सम्पत्ति वितरण में व्याप्त विषमतायें और भी अधिक सघन हैं। वर्ष 1979 में सम्पूर्ण ग्रामीण क्षेत्र में 16664 व्यक्ति सम्पत्ति कर के लिए चुने गए थे और उन पर लगाया गया कर 1,85,66,000 रूपये था। दूसरी ओर केवल दिल्ली शहर में गैर कृषि सम्पत्ति कर के लिये 19,149 व्यक्ति चुने गए थे और उन पर लगाया गया कर 3,48,25,000 रूपये था। लगभग यही प्रवृत्ति अन्य महानगरों में भी है।

ग्रामीण क्षेत्रों में प्रति व्यक्ति औसत बचत मात्रा 106 रूपये है, जबकि नगरीय क्षेत्र में प्रति व्यकिंत औसत बचत 272 रूपये है जो ग्रामीण क्षेत्र की बचत से ढाई गुना अधिक है। आवश्यक सामाजिक सेवाओं की जो अवस्थापना गांव में है उससे कई गुना अधिक शहरों में है। शहरों में बहुखण्डीय प्रसाद बने किन्तु गांव में कच्चे मकानों का आकार और आयतन कम होता गया। शहरों में आधुनिक उद्योग जन्य सुख सुविधायें लेने की होड़ लगी है किन्तु बहुसंख्यक गांव के लोग कड़ी मेहनत के बाद भी बेहद जरूरी चीजों से वंचित रहे हैं। इसी क्षेत्रीय असमानता के कारण शहर के वैभव की चकाचौंध से आकृष्ट तथा बेरोजगारी के मारे गांव के लोग शहरों की ओर पलायन करते हैं जहां उन्हें दिन भर की कड़ी मेहनत के बाद जो क्रयशक्ति प्राप्त होती है, वह उनकी जरूरतों को पूरा करने में अपर्याप्त होती है। आज गांव नगरों के मुखापेक्षी होते जा रहे हैं। खाद्यान्न उत्पादन के अतिरिक्त अन्य अधिकांश उत्पादन क्रियायें नगरों और बड़े औद्योगिक घरानों में केन्द्रित होती जा रही हैं। जो वस्तुयें पहले गांव में सुगमतापूर्वक बनाई जा सकती थीं वे अब यान्त्रिक और अवस्थापनागत सुविधाओं के कारण शहरों में कम लागत पर बनने लगी हैं। फलतः गांव के कारीगर और दस्तकार बेकारी की हालत में होते जा रहें हैं।[13] कृषि विकास के कारण छोटे-छोटे किसानों जिनकी संख्या बहुत ज्यादा है, को कुछ लाभ हुआ है। परन्तु कृषि आगतों की पूर्ति और दैनिक जरूरतों की चीजों को प्राप्त करने के लिए वह लाभ पुनः कपड़ा, तेल, साबुन, चीनी आदि के कारखानों के स्वामियों और बड़े

व्यापारियों के पास जा पहुंचता है। इससे ग्रामीण नगरीय क्षेत्र के मध्य विषमता उत्पन्न होना स्वाभाविक ही है।

नगरीय विषमतायें (Urban equalities):

नगरीय क्षेत्र में व्याप्त अन्तर्वर्गीय आर्थिक विषमताओं को सम्पत्ति, आय, उपभोग स्तर में व्याप्त विषमता के रूप में प्रदर्शित किया जा सकता है। जहां नगरों में एक ओर तीव्र औद्योगीकरण के कारण बड़े पूंजीपतियों के पास सम्पत्ति का संकेन्द्रण बढ़ता जा रहा है। आय, सम्पत्ति और उपभोग में भी एक छोटे से वर्ग का ही वर्चस्व बना है।[14] वहीं दूसरी ओर निर्धन व्यक्तियों का अंश घटता जा रहा है।

नगरीय क्षेत्र में सबसे ऊपर वाले 17.61 प्रतिशत परिवार नगरीय क्षेत्र की कुल आय के 46.10 प्रतिशत के स्वामी हैं जबकि दूसरी ओर 82.39 प्रतिशत परिवार कुल नगरीय आय के केवल 53.90 प्रतिशत भाग में ही अपना गुजर बसर करने को बाध्य हैं। नेशनल काउन्सिल ऑफ एप्लाइड इकनोमिक रिसर्च के अनुमान के अनुसार नगरीय क्षेत्र में वर्ष 1964-65 में उच्चतम 10 प्रतिशत निवासियों को कुल नगरीय आय का 39.88 प्रतिशत भाग प्राप्त था। जबकि निम्नतम 10 प्रतिशत निवासियों को कुल नगरीय आय में केवल 2.26 प्रतिशत अंश प्राप्त था। इसी संख्या को एक और अध्ययन के अनुसार वर्ष 1975-76 में नगरीय क्षेत्र के उच्चतम 10 प्रतिशत निवासियों को कुल नगरीय आय का 33.6 प्रतिशत अंश प्राप्त था। जबकि निम्नतम 10 प्रतिशत निवासी कुल नगरीय आय के 2.26 प्रतिशत भाग में ही जीवन यापन करने के लिए बाध्य थे। नगरीय क्षेत्र में सबसे अधिक सम्पत्ति 5 प्रतिशत परिवारों के पास कुल नगरीय सम्पत्ति का 46.29 प्रतिशत भाग है, जबकि निम्नतम 10 प्रतिशत परिवारों के पास कुल नगरीय सम्पत्ति का 46.29 प्रतिशत भाग है, जबकि मिन्मतम 10 प्रतिशत परिवारों के पास कुल नगरीय सम्पत्ति का मात्र 0.01 प्रतिशत भाग ही है। सबसे निचले 5 प्रतिशत नगरीय परिवारों के पास तो सम्पत्ति के नाम पर मात्र उनका शारीरिक श्रम, सड़क का किनारा और धर्मशालायें ही हैं। खास सुविधायें मूलतः उन्हें ही मिल सकी हैं जिनके पास पूर्वतः सम्पत्ति थी। समानान्तर प्रतिभूत के अभाव से निर्धन वर्ग को साख सुविधाओं के लाभ नहीं मिल सके हैं।

आय और सम्पत्ति विवरण की भांति उपभोग स्तर में गहन विषमतायें विद्यमान हैं। राष्ट्रीय प्रतिदर्श सर्वेक्षण के आंकड़ों के अनुसार वर्ष 1968-69 में कुल नगरीय जनसंख्या के कुल 20 प्रतिशत भाग का कुल उपभोग व्यय में 42.11 प्रतिशत अंश था, जबकि निम्नतम 20 प्रतिशत का अंश मात्र 6.89 प्रतिशत था। छठीं पंचवर्षीय योजना में किए गए एक अनुमान के अनुसार वर्ष 1977-78 में उच्चतम 20 प्रतिशत जनसंख्या का कुल उपभोग में 41.6 प्रतिशत अंश था, जबकि निम्नतम 20 प्रतिशत का अंश केवल 8.1 प्रतिशत था। इसका विवरण निम्नलिखित तालिका 1.3 में दिया गया है। इससे यह प्रतीत होता है कि 1968-69 की तुलना में वर्ष 1977-78 में नगरीय उपभोग विवरण संरचना में कुछ सुधार हुआ है। परन्तु समग्र रूप से यह स्थिति भी अत्यन्त भयावह है।

सारणी क्रमांक 1.3: कुल निजी उपभोग व्यय का 1977-78 में वितरण (प्रतिशत में)

जनसंख्या वर्ग	ग्रामीण	नगरीय
0-10	3.7	3.4
10-20	5.1	4.7
20-30	6.2	5.6
30-40	6.6	6.5
40-50	8.0	7.4
50-60	8.7	8.7
60-70	9.8	9.8
70-80	11.8	12.3
80-90	14.5	14.2
90-100	25.6	27.4
00-100	100.0	100.0

Source: Report Sixth Five Year Plan.

ग्रामीण विषमतायें (Rural Inequalities) :

नगरीय क्षेत्र की भांति ग्रामीण क्षेत्र में भी आय सम्पत्ति उपभोग स्तर में अत्याधिक विषमतायें व्याप्त हैं। वर्ष 1970–71 में ग्रामीण क्षेत्र के निम्नतम 20 प्रतिशत परिवारों के पास कुल ग्रामीण आय का केवल 10 प्रतिशत भाग था। आय वितरण के सन्दर्भ में महत्वपूर्ण आंकड़े आई० आर० के० शर्मा द्वारा नेशनल काउन्सिल ऑफ एप्लाइड इकनोमिक रिसर्च के एक सर्वेक्षण के अनुसार प्रस्तुत किये गए हैं जिनके अनुसार वर्ष 1975–76 में ग्रामीण क्षेत्र में उच्चतम 10 प्रतिशत निवासियों का कुल ग्रामीण आय में 33.6 प्रतिशत अंश था। जबकि निम्नतम 10 प्रतिशत निवासियों का ग्रामीण आय में अंश केवल 2.5 प्रतिशत था। नेशनल काउन्सिल ऑफ एप्लाइड इकनोमिक रिसर्च के नवीनतम अध्ययन ' हाउसहोल्ड इनकम एण्ड इट्स डिस्पोजीशन' के अनुसार ग्रामीण क्षेत्र में 4.95 प्रतिशत परिवारों की औसत वार्षिक आय 10,000 रूपये से अधिक है। इन परिवारों की आय कुल ग्रामीण आय का 20.7 प्रतिशत है। दूसरी ओर बहुसंख्यक ग्रामीण अल्प भाग में अपना जीवनयापन करते हैं।[15]

इसी प्रकार ग्रामीण क्षेत्र के निम्नतम 10 प्रतिशत परिवारों के पास कुल ग्रामीण परिसम्पत्ति का 1971 में 0.1 प्रतिशत भाग था, जबकि उच्चतम 10 प्रतिशत परिवारों के पास कुल ग्रामीण परिसम्पत्ति का 51.0 प्रतिशत भाग था। ग्रामीण परिसम्पत्ति में भूमि का स्थान सर्वाधिक महत्वपूर्ण होता है। जिसका असमान वितरण ग्रामीण सम्पत्ति वितरण में विषमता का मूल कारण है। 1971 की कृषि गणना के अनुसार कुल ग्रामीण जनसंख्या के 44 प्रतिशत भाग के पास कुल भूमि का केवल 9 प्रतिशत अंश था, जबकि केवल 4 प्रतिशत निवासी कुल भूमि के 31 प्रतिशत भाग के स्वामी थे। देश में लगभग 72 प्रतिशत कृषकों की जोत का आकार पांच एकड़ से कम है। जिनके पास कुल भूमि का केवल 23.5 प्रतिशत भाग है, जबकि 30 प्रतिशत बड़े कृषकों के पास कुल भूमि का 26.3 प्रतिशत भाग है।[16] ग्रामीण क्षेत्र में सम्पत्ति वितरण की स्थिति निम्नलिखित तालिका में दिखाई जा सकती है।

सारणी क्रमांक 1.4: ग्रामीण क्षेत्र में सम्पत्ति विवरण

	सम्पत्ति में प्रतिशत अंश	
	1961 में	1971 में
निम्नतम 10 प्रतिशत का	0.10	0.10
निम्न 30 प्रतिशत का	2.50	2.00
उच्च 30 प्रतिशत का	79.00	81.90
उच्चतम 10 प्रतिशत का	51.40	51.00

Source: Report Sixth Five Year Plan.

आय और सम्पत्ति विवरण की भांति ग्रामीण क्षेत्र में उपभोग स्तर में भी विषमतायें व्याप्त हैं। राष्ट्रीय प्रतिदर्श सर्वेक्षण के 32वीं आवृत्ति के आधार पर छठीं योजना में यह अनुमान किया गया कि 1977-78 में ग्रामीण क्षेत्र की सबसे निर्धन 20 प्रतिशत जनसंख्या का कुल उपभोग व्यय में अंश केवल 15.00 प्रतिशत था। जबकि उच्चतम 20 प्रतिशत जनसंख्या कुल ग्रामीण उपभोग के 40.10 प्रतिशत भाग का उपभोग करती थी।

उपभोग स्तर में व्याप्त विषमता की जानकारी इस बात से भी होती है कि ग्रामीण क्षेत्र के न्यूनतम 10 प्रतिशत परिवारों का औसत वार्षिक उपभोग व्यय केवल 634 रूपये है, जबकि उच्चतम 10 प्रतिशत परिवारों का औसत वार्षिक उपभोग व्यय 5895 रूपये है। इन तथ्यों से यह प्रतीत होता है कि ग्रामीण क्षेत्र में सघन आर्थिक विषमतायें विद्यमान हैं। सम्पन्न और विपन्न वर्ग के मध्य अत्यन्त चौड़ी खाई है। वस्तुतः हाल के वर्षो में कृषि क्षेत्र में होने वाले तकनीकी सुधारों में भूमिवान वर्ग और विशेषकर बड़े कृषक ही लाभान्वित हुये, क्योंकि कृषि की नवीन तकनीकी यद्यपि जोत आकार के प्रति तटस्थ हैं, परन्तु नवीन तकनीकी के आधार तत्व कृषि निवेशों की प्राप्ति मूलतः जोत आकार से ही सम्बद्ध है। सरकार द्वारा प्रदान की जानेवाली सुविधायें मूलतः बड़ें कृषकों के लाभार्थ ही रही हैं। कृषि विकास और कृषि साख की इस पृष्ठभूमि और सहायक व्यवसायों और ग्रामोद्योगों के व्यापक प्रयास के अभाव में ग्रामीण क्षेत्र में गरीब और अमीर

के बीच व्याप्त असमानता की खाई सतत् चौड़ी होती गई। ग्रामीण क्षेत्र शहरी क्षेत्र की तुलना में तो गरीब है ही, परन्तु इस प्रकार की अन्तर्वर्गीय विषमतायें गरीबी के मध्य गरीबी अत्यन्त दुर्भाग्यपूर्ण है।

2. ग्रामीण निर्धनता के कारण:

भारत में गरीबी उत्पन्न करने वाले कारणों को तीन वर्गो में बांटा जा सकता है।

1. आर्थिक कारक
2. सामाजिक कारक
3. राजनैतिक कारक

1. आर्थिक कारक (Economic Factors):

गरीबी का एक प्रमुख कारक बेरोजगारी है। देश में बेरोजगारी की समस्या कितनी वयापक और भीषण है। इसका अनुमान इसी से लगाया जा सकता है कि रोजगार कार्यालयों में पंजीकृत बेरोजगारों की संख्या एक करोड़ से अधिक है और इससे भी अधिक संख्या उन बेरोजगार लोगों की है जिनके नाम बेरोजगार कार्यालयों में दर्ज नहीं हैं और इनके बारे में अधिकृत आंकड़े उपलब्ध नहीं हैं। अनुमान है कि केवल ग्रामीण क्षेत्रों के पांच करोड़ से अधिक लोग बेरोजगारी या अर्द्धबेरोजगारी से जूझ रहे हैं।

बेरोजगारी का अर्थ है कि काम करने योग्य एवं इच्छुक लोगों के लिय काम का अभाव, अर्थात वह व्यक्ति बेरोजगार है जो शारीरिक एवं मानसिक दृष्टि से काम करने की क्षमता रखता है परन्तु उसे काम नहीं मिलता अथवा काम से अलग होने के लिए बाध्य किया जाता है। भारतीय स्थिति में बेरोजगारी के विभिन्न रूप हैं। कुछ ऐसे लोग जो हमेशा ही बेरोजगार रहते हैं और कुछ लोंग ऐसे हैं जिनको कुछ समय रोजगार मिल जाता है परन्तु बाकी समय नहीं मिल पाता। दोनों ही तरह की बेरोजगारी ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों में पाई जाती है। ग्रामीण श्रमिकों को पूर्ण रोजगार से कम रोजगार मिलने का प्रमुख कारण है, खेतों पर काम करने वाले श्रमिकों को मौसमी रोजगार मिलना और बहुत अधिक जनसंख्या वाले क्षेत्रों में भूमिहीन श्रमिकों को सतत अल्प रोजगार मिलना। इसके, अलावा आधुनिक उद्योगों की प्रतिस्पर्धा के कारण भी हस्तकार और कारीगर बेकार हो जाते हैं। इसी प्रकार शहरी बेरोजगारी में उद्योगों द्वारा छंटनी किए गए मजदूर, श्रमिकों के

वर्ग में सम्मिलित होने वाले नए लोग और आसपास के ग्रामीण क्षेत्र से आनेवाले मजदूर तो आते ही हैं, स्वरोजगार वाले व्यक्तियों और दैनिक मजदूरों की बहुत बड़ी संख्या भी आती है और जो बड़ी मुश्किल से अपना जीवन निर्वाह करती है। ग्रामीण गरीबी और शहरी गरीबी दोनों में ये बातें स्पष्ट दिखाई देती है कि कम उत्पादकता-कम मजदूरी- रोजगार तथा काम की सतत कमी।[17]

बेरोजगारी के अलावा गरीबी के लिए जिम्मेदार प्रमुख कारण निम्नलिखित हैं।

1. भारत में सामान्य कीमत स्तर बढ़ता रहा है। कीमतों में वृद्धि के परिणामस्वरूप मुद्रा की क्रय शक्ति कम हो जाने के कारण वास्तविक आय कम हो जाती है। यदि आय में कीमत वृद्धि के ही अनुपात में वृद्धि हो तो वास्तविक आय कम हो जाती है। यदि आय में कीमत वृद्धि के ही अनुपात में वृद्धि हो तो वास्तविक आय में परिवर्तन नहीं होगा। भारत में आय की वृद्धि दर कीमत वृद्धि की दर से कम रही है। अतः लोगों की क्रय शक्ति में गिरावट आई है।

2. भारत में जनसंख्या का भार बहुत अधिक है। पिछले 40 वर्षो में जनसंख्या 2.5 प्रतिशत वार्षिक दर से बढ़ती रही है। भारत औसतन अपनी जनसंख्या में प्रतिवर्ष 170 लाख व्यक्तियों की वृद्धि कर देता है। बढ़ती हुई जनसंख्या का अर्थ है वस्तुओं की मांग में अपार वृद्धि होना। देश की सम्पत्ति का एक बड़ा भाग अपनी जनसंख्या की परवरिश में समाप्त हो जाता है अतः विकास कार्यो के लिए पूंजी नहीं मिल पाती।

3. वैकल्पिक व्यवसायों के अभाव में बढ़ती हुई जनसंख्या का भार कृषि पर पड़ता है। खेतों का उपखण्डन और उप विभाजन आरम्भ हो जाता है। कृषि के लिए पुरानी और अप्रचलित विधियों का प्रयोग किया जाता है। इसके परिणामस्वरूप कृषि उत्पादकता घटती जाती है और आय का स्तर गिरने लगता है।

4. देश में प्राकृतिक साधनों की प्रचुरता है लेकिन पूंजी के अथवा उपक्रम की कमी तथा तकनीकी ज्ञान के उपलब्ध न होने के कारण देश के साधनों का पूर्ण उपयोग नही हो पाता। अतः उत्पादन का कुल स्तर कम रहता है।

5. उत्पादन के साधनों तथा आय का असमान वितरण भी गरीबी के लिए उत्तरदायी है। सम्पत्ति का चन्द हाथों में केंद्रीयकरण हो गया है। आर0 बी0 आई0 के तीन दशकों अर्थात 1961, 1971 और 1981 में ग्रामीण परिवारों के पास समपत्ति से सम्बन्धित सर्वेक्षणों में दर्शाया गया है कि जहां नीचे के 30 प्रतिशत ग्रामीण परिवारों के पास कुल सम्पत्ति लगभग केवल 4.5 प्रतिशत या उससे भी कम हिस्सा था, वहां ऊंपर के 30 प्रतिशत लोगों के पास कुल सम्पत्ति का लगभग 80 प्रतिशत हिस्सा था और यही नहीं पिछले 30 वर्षों में कम समपत्ति वालों की सम्पत्ति दिन व दिन कम होती जा रही है और अधिक सम्पत्ति वाले परिवारों की सम्पत्ति बढ़ रही है।[18] दस वर्षीय जनगणना से भी ज्ञात होता है कि भूमिहीन मजदूरों की संख्या जो 1961 में कुल श्रमशक्ति का 61.7 प्रतिशत थी। वह 1971 में बढ़कर 25.56 प्रतिशत और 1981 में 25.96 प्रतिशत हो गयी।

2. *सामाजिक कारक* (Social Factors):

भारत में सामाजिक ढांचा भी गरीबी का महत्वपूर्ण कारक है। देश में व्यापक अशिक्षा व्याप्त है, लोग अन्धविश्वासी, भाग्यवादी तथा प्राचीन दृष्टिकोण में आस्था रखते हैं। उनका परिश्रम की बजाय भाग्य में अधिक विश्वास है। लोग व्यर्थ के रीतिरिवाजों, जिस प्रकार मृत्युभोज, मुण्डन संस्कार में बड़ी मात्रा में धन खर्च करते हैं।

सामाजिक संस्थायें जिस प्रकार संयुक्त कुटुम्ब प्रणाली और जाति प्रथा भी आर्थिक विकास में बाधा डालती है और लोगों को गरीब बनाती है। इन सामाजिक प्रणालियों के कारण श्रमिक बेहद सुस्त हो जाता है, अनुउत्तरदायी हो जाता है तथा श्रम की गतिशीलता भी रुक जाती है। जाति प्रथा विभिन्न व्यवसायों के बीच चुनाव में बाधा डालती है।

3. *राजनैतिक कारक* (Political Factors):

विशेष रूप से बीसवीं सदी में अन्य कारकों की अपेक्षा राजनैतिक कारकों का महत्व काफी अधिक हो गया है। किसी भी व्यक्ति अथवा देश की राजनैतिक सत्ता हथियाने की इच्छा दूसरे व्यक्ति और देशों को निस्सहाय बना देती है। भारत एक लम्बे समय तक पराधीन रहा है। अंग्रेजों ने भारतीय

अर्थव्यवस्था को सबसे अधिक धक्का पहुंचाया। उन्होने भारत को एक बस्ती बना दिया। देश के साधनों का विकास अंग्रेजों के हाथ पहुंचाने की दृष्टि से किया गया है। अंग्रेजों ने आधारभूत उद्योगों कें विकास में कोई रुचि नहीं ली। वि–औद्योगीकरण (Deindustrilization) की नीति ने औद्योगिक आधार को कमजोर बना दिया। ब्रिटिश सरकार ने ऐसे भूमि कानून बनाये जिससे बड़े जमीदारों को जन्म मिला। इन जमीदारों ने कई वर्षों तक कृषकों का शोषण किया और अन्त में उनको खेतिहर मजदूर बना दिया। जमीदारों ने कृषि के सुधार और वैज्ञानिक यन्त्रीकरण की खेती अपनाने का कोई प्रयत्न नहीं किया। स्वतन्त्रता प्राप्ति के समय औद्योगिक और कृषि दोनों ही क्षेत्रों में लगे श्रमिक भी काफी गरीब थे। पिछले 40 वर्षो के दौरान हमने इस व्यवस्था में परिवर्तन लाने के भरकस प्रयास किए हैं। निसंन्देह अनेक क्षेत्रों में हमें अभूतपूर्व सफलता हासिल हुई है। परन्तु कुल मिलाकर हमारा आर्थिक ढांचा गरीबी की समस्या से निपटने में असमर्थ रहा।

उपरोक्त सभी कारकों का एक साथ अध्ययन करने पर यह बात स्पष्ट होती है कि ग्रामीण भारत में गरीबी का प्रमुख कारण उपयुक्त रोजगार के अवसरों का अभाव है जिसके परिणामस्वरूप ग्रामीणजन अपनी न्यूनतम आवश्यकताओं की पूर्ति के लिये साधन नहीं जुटा पाते।

ग्रामीण बेरोजगारी का स्वरूप (Nature of Rural Unemployment):

ग्रामीण क्षेत्र में बेराजगारी की प्रकृति शहरी क्षेत्र में पाई जानेवाली बेरोजगारी से भिन्न होती है। ग्रामीण क्षेत्र में प्रमुखतः दो रूप की बेराजगारी पाई जाती है। ये हैं– (अ)– मौसमी बेरोजगारी तथा (आ)– प्रच्छन्न अथवा छिपी हुई बेरोजगारी

अ. मौसमी बेरोजगारी (Seasonal Unemployment):

यह बेरोजगारी सामान्यतः प्राकृतिक कारणों के परिणामस्वरूप उत्पन्न होती है। कृषि तथा कृषि पर आधारित उद्योगों में मौसमी बेरोजगारी पाई जाती है। हम अपने सामान्य जीवन में देखते है कि जिस समय बीजों को रोपित करने के लिए खेत को तैयार करना होता है अथवा पकी हुई फसल काटना या साफ करना होता है, खेतिहर मजदूरों की मांग बढ़ जाती है, उन्हें

रोजगार मिल जाता है, लेकिन बाकी समय में उन्हें कोई कार्य नहीं मिल पाता। व्यस्तकाल में श्रमिक की मांग तथा गैर व्यस्तकाल में उनकी मांग में लगभग 75 प्रतिशत का अन्तर होता है। नई तकनीकों के प्रयोग जैसे दोहरी खेती, बहुफसल आदि की सहायता से मौसमी बेरोजगारी में कमी की जा सकती है। लेकिन अल्पविकसित देशों में कृषि में नई तकनीकी का प्रयोग न होने के कारण मौसमी बेरोजगारी का भार बहुत अधिक है।[19]

मौसमी बेरोजगारी के सम्बन्ध में यह जान लेना आवश्यक है कि स्पष्ट रूप से मौसमों के बीच इस प्रकार की विभाजन रेखा को खींचना कठिन है जिसमें उन्हें पूर्णकालिक रोजगार मिलता हो या रोजगार बिल्कुल ही न मिलता हो। गैर व्यस्त मौसम में भी कुछ श्रमिकों को रोजगार प्राप्त हो सकता है। इस विचारधारा द्वारा इस बात की जानकारी मिलती है कि ग्रामीण श्रम शक्ति को प्रायः किसी मौसम में ही रोजगार के अवसर उपलब्ध होते हैं। गैर व्यस्त मौसम में या तो उनकी आय कम हो जाती है अथवा उनको कोई रोजगार नहीं मिलता। ऐसे क्षेत्रों में जहां पर केवल एक ही फसल का उत्पादन किया जाता है। गैर व्यस्त मौसम का काल बहुत लम्बा होता है इसलिए ग्रामीण गृहस्थों की कुल वार्षिक आय का स्तर बहुत ही कम होता है।

आ. प्रच्छन्न बेरोजगारी (Disguised Unemployment):

प्रच्छन्न बेरोजगारी अदृश्य बेरोजगारी है। जिसे देखा नहीं जा सकता है। कई श्रमिक जो कि रोंजगार में संलग्न होते हैं वास्तव में उत्पादन में किसी प्रकार का योगदान नहीं देते। उदाहरण के लिए एक कृषक परिवार जिसमें 4 सदस्य हैं। एक हेक्टेयर भूमि पर खेती करके 100 कुन्तल धान का उत्पादन कर सकते हैं। मान लीजिये इसमें से एक सदस्य को कृषि कार्य से अलग कर दिया जाता है और इसके बाद भी शेष तीन सदस्य इस भूमि पर 100 कुन्तल धान का उत्पादन कर सकते हैं। इसका अभिप्राय यह हुआ कि एक सदस्य बिना वजह ही इस काम में जुटा है। अर्थात वह कृषि उत्पादन बढ़ाने में कोई योगदान नहीं दे रहा है। इस सदस्य को अदृश्य बेरोजगारी या प्रच्छन्न बेरोजगारी कहा जायेगा।

तकनीकी अर्थ में प्रच्छन्न बेरोजगार वे व्यक्ति हैं जो कि संसाधनों

की तुलना में अधिक होते हैं और इसलिए श्रमिकों की सीमान्त भौतिक उत्पादकता एक बड़े परास (Range) में यदि ऋणात्मक नहीं तो शून्य अवश्य होती है। इसका आशय यह है कि कृषि कला में कोई परिवर्तन किये बिना यदि कृषि में लगे हुए जनसंख्या के एक बड़े भाग को हटाया जाये तो कृषि उत्पादन में कोई कमी नहीं होती।[20]

प्रच्छन्न बेरोजगारी का विचार वेतनधारी श्रमिक पर लागू नहीं होता। इसका कारण यह है कि यदि उत्पादक को यह पता चल जाये कि श्रमिक की सीमान्त भौतिक उत्पादकता शून्य है तो वह उसे रोजगार नहीं देगा। इसलिए प्रच्छन्न बेरोजगारी प्रमुख रूप से कृषि क्षेत्र में दृष्टिगत होती है। जहां पारिवारिक श्रम या बिना किराये के श्रम की सहायता से कृषि उत्पादन किया जाता है।

एक परिवार द्वारा खेती की गई भूमि पर प्रच्छन्न बेरोजगारी इसलिए विद्यमान होती है क्योंकि समस्त परिवारों कोपूर्ण रोजगार प्रदान करने के लिए भूमि अपर्याप्त होती है। इसलिए परिवार के सदस्य सामूहिक रूप से उपलब्ध भूमि पर खेती का कार्य करने लगते हैं। ऐसी स्थिति में प्रत्येक सदस्य को सामान्य से कम कार्य मिल जाता है। यदि परिवार का कोई सदस्य भूमि से अलग हो जाता है तो इसका भूमि की उत्पादकता या कृषि के उत्पादन पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। इसका अर्थ यह हुआ कि अब शेष सदस्यों को अधिक कार्य मिलने लगता है।

प्रच्छन्न बेरोजगारी को दूर करने के लिए भूमि अपर्याप्त होती है। इसलिए परिवार के सदस्यों को सामूहिक रूप से उपलब्ध भूमि पर खेती का कार्य मिल जाता है। यदि परिवार का कोई सदस्य भूमि से अलग हो जाता है तो इसका भूमि की उत्पादकता या कृषि के उत्पादन पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। इसका अर्थ यह हुआ कि अब शेष सदस्यों को अधिक कार्य मिलने लगता है।

प्रच्छन्न बेरोजगारी को दूर करने के लिए अर्थव्यवस्था की उत्पादन क्षमता का विकास करना होता है जिससे कि काम करने के लिये तत्पर सभी लोगों को रोजगार के पर्याप्त अवसर उपलब्ध हो सकते हैं। दूसरे शब्दों में प्रच्छन्न बेरोजगारी को दूर करने के लिए अर्थव्यवस्था में संरचनात्मक परिवर्तन

करने की आवश्यकता पड़ती है। ये परिवर्तन किस प्रकार लाये जा सकते हैं । इसको समझने के लिए उन कारकों का अध्ययन करना होगा जो कि संरचनात्मक बेरोजगारी को जन्म देते हैं।

3. ग्रामीण निर्धनता के परिणाम (Extent of Rural Unemployment)

निर्धनता का अर्थ है सामान्य जन की आवश्यकतायें जुटाने के लिए साधनों का अभाव। निर्धनता की स्थिति का सही-सही अनुमान लगाना शायद सम्भव नहीं है। किन्तु समय-समय पर ऐसे प्रयत्न किए गए है जिनसे समस्या के उग्र स्वरूप का ज्ञान हो सकता है। विभिन्न प्रयासों में ' गरीबी की रेखा' निर्धारित करने के प्रयत्न शामिल हैं। इन प्रयत्नों के परिणामस्वरूप गरीबी की रेखा परिभाषित करने के लिए निम्न मापदण्डों का प्रयोग किया जा सकता है।

1. निर्वाह के लिए न्यूनतम पौष्टिकता का स्तर।
2. पौष्टिकता के स्तर को बनाये रखने के लिए न्यूनतम खुराक की लागत।
3. इस खुराक को प्राप्त करने के लिए न्यूनतम प्रति व्यक्ति आय।

उपरोक्त मापदण्डों के आधार पर अनेक विद्वानों जैसे- दाण्डेकर व रथ, बी. एस. मिन्हास, प्रणव वर्द्धन, सुखात्मे, आई. जेड. भट्टी, वैद्यनाथ, पी.डी. ओझा, आदि विद्वानों तथा योजना आयोग ने भारत में निर्धनता के सम्बन्ध में अनुमान प्रस्तुत किये हैं। सन 1977 में योजना आयोग द्वारा स्थापित ' न्यूनतम आवश्यकताओं व प्रभावपूर्ण उपभोग की मांग पर भावी अनुमानों के लिए कार्यकारी दल' ने निर्धनता की रेखा की परिभाषा में प्रति व्यक्ति उपभोग समूह का वह मध्य बिन्दु माना है जिसमें गामीण क्षेत्रों में प्रति व्यक्ति प्रतिदिन 2400 कैलोरी का उपभोग हो तथा शहरी क्षेत्रों में 2100 कैलोरी का हो। 1984-85 में यह मध्य बिन्दु ग्रामीण क्षेत्रों में प्रति व्यक्ति प्रति माह 107 रूपये तथा शहरी क्षेत्रों में 122 रूपये थे। इसके नीचे प्रति व्यक्ति प्रति माह का उपभोग करने वाले व्यक्ति निर्धन माने गए हैं। इसी प्रकार 5 सदस्यों वाले एक ऐसे ग्रामीण परिवार को गरीबी रेखा के परे माना गया है, जिसकी वार्षिक आय 6400 रूपये से कम थी। वह शहरी क्षेत्रों में यह आय 7200 रूपये निर्धारित की गयी। 1987-88 की कीमतों के आधार पर ग्रामीण क्षेत्रों के लिए यह राशि 7980 रूपये तथा

शहरी क्षेत्रों में 9120 रूपये निर्धारित की गई है। इस आधार पर देश की सातवीं योजना के आरम्भ में 272.7 मिलियन व्यक्ति गरीबी की रेखा के परे रहते हैं, जो कि कुल जनसंख्या का 36.9 प्रतिशत है। ग्रामीण क्षेत्रों में गरीबी का अनुपात 39.9 प्रतिशत था, जबकि शहरी क्षेत्रों में 27.7 प्रतिशत। ग्रामीण क्षेत्रों में इस प्रकार गरीबों की संख्या 222.2 मिलियन थी, जिनमें मुख्यतः भूमिहीन व छोटे किसान, दस्तकार, बंधुआ मजदूर व कृषि श्रमिक जुड़े थे।[21]

सातवीं योजना में अपनाये जाने वाले कार्यक्रमों के प्रभाव में यह अनुमान है कि वर्ष 1989-90 के अन्त में देश में गरीबी का अनुपात कम होकर 25.80 रह जायेगा। जबकि ग्रामीण क्षेत्रों में यह 28.2 प्रतिशत होगा। एन0एस0एस0 के 38 वें तथा 43 वें दौर में एकत्र किये गये आंकड़ों के आधार पर यह अनुमान लगाये गए है कि 1987-88 में ग़रीबी का अनुपात कम होकर 29.2 प्रतिशत रह गया है। यह भी अनुमान है कि सन 2000 तक यह अनुपात कम होकर 5 प्रतिशत रह जायेगा। जैसा कि तालिका 1.5 से से स्पष्ट है।

तालिका क्रमांक 1.5 : भारत में गरीबी का आकार

	गरीबी की रेखा से परे रहने वालों का प्रतिशत		
	1984-85	1989-90	1999-2000
ग्रामीण क्षेत्र	39.9	28.2	--
शहरी क्षेत्र	27.7	19.3	--
कुल	36.9	25.8	5.00

Source: Seventh Five Year Plan. 1985-90.

गरीबी की रेखा से परे रहने वाले वर्ग को हम पुनः निम्न चार आय वर्गों में बांट सकते हैं। तालिका से यह बात स्पष्ट होती है कि गरीब वर्ग में भी 5.5 प्रतिशत परिवार ऐसे हैं जिनकी वार्षिक आय 5000 रूपये से भी कम है।

तालिका 1.6 : गरीबी वर्ग का आय वितरण

वर्ग	आय वार्षिक (रू0)	प्रतिशत अनुपात
क. अतिदीन	2265 से कम	2.20
ख. बहुत अधिक गरीब	2265 - 3500	13.80
ग. बहुत गरीब	3501-5000	38.20
घ. गरीब	5001-6400	45.80
कुल	6400 तक	100.00

Source: Economic Affairs September,1987.

गरीबों का क्षेत्रीय वितरण (Regional Pattern of Poverty):

गरीबी का स्वरूप विभिन्न प्रदेशों में अलग-अलग है। उपलब्ध आंकड़ों के अनुसार 1983-84 में देश के 6 प्रदेशों में गरीबी का अनुपात राष्ट्रीय औसत से अधिक था। यह प्रदेश हैं- बिहार, मध्य प्रदेश, उड़ीसा, तमिलनाडु, उत्तर प्रदेश एवं पश्चिमी बंगाल। बिहार में गरीबी का स्तर सबसे अधिक पाया गया। यहां कुल जनसंख्या का 49.50 प्रतिशत भाग गरीबी रेखा के नीचे रह रहा था। दूसरी ओर मणिपुर में केवल 12.30 प्रतिशत और पंजाब में 13.80 प्रतिशत ही था।

गरीबी रेखा के नीचे रहने वालों की श्रेणी:

ग्रामीण क्षेत्रों में गरीबी रेखा के नीचे रहने वालों को तीन वर्गों में बांटा जा सकता है।

1. छोटी जोतों के स्वामी
2. कृषि श्रमिक
3. ऐसे ग्रामीण दस्तकार जो कि अपने परम्परागत कार्यों से अलग कर दिए गए हैं।

1. छोटी जोतों के स्वामी प्रायः परिवार के अन्य सदस्यों के साथ मिलकर अपने खेतों पर मात्र निर्वाह मूलक खेती करते हैं। अपनी खेती से पर्याप्त आय न

मिल पाने से यह परिवार अकसर साहूकार से ऋण लेते हैं और इस ऋण के बोझ में सदा ही दबे रहते हैं।

2. दूसरा बड़ा वर्ग भूमिहीन खेतिहर श्रमिकों का है। यह वर्ग दूसरे किसानों के खेतों पर मजदूरी के बदले कार्य करते हैं तथा बहुत ही दलित जीवन व्यतीत करने के आदी हो चुके हैं।

3. ग्रामीण दस्तकारों के लिए प्रायः दो जून की रोटी कमाना भी दुष्कर है। इस वर्ग में विशेष रूप से ऐसे दस्तकारों को शामिल किया जा सकता है जिनके परम्परागत शिल्प कला कारखानों में निर्मित वस्तुओं के सामने घुटने टेकने के लिए मजबूर हो चुकी है।

4. *निर्धनता कम करने के उपायः*

भारत के उपनिवेशी शासन से विरासत प्राप्त गरीबी की समस्या के समाधान के लिए भारतीय योजनाकार आरम्भ से ही चिन्तित रहे हैं। इसी कारण ग्रामीण जन समुदाय के जीवन स्तर में वांछित सुधार करना प्रत्येक पंचवर्षीय योजना के प्रमुख लक्ष्यों में से एक रहा है। गरीबी निवारण के लिए विभिन्न विशिष्ठ कार्यक्रम चलाए गए और आर्थिक प्रगति की दर भी तीव्र करने के लिए प्रयास किए गए तथा इस दिशा में सफलता भी मिली। अर्थव्यवस्था के विविध क्षेत्रों में उत्पादन और उत्पादकता बढ़ी। राष्ट्रीय आय की अपेक्षाकृत ऊँची वृद्धि दर प्राप्त कर ली गई। यद्यपि योजना काल में हाल के वर्षों तक एक अजीब स्थिति रही। एक ओर आर्थिक प्रगति के ऊँचे प्रतिमान प्राप्त किए जा सके हैं और दूसरी ओर गरीबों की निरपेक्ष संख्या भी बढ़ी है। यह एक विरोधाभासयुक्त स्थिति रही है।[22]

निर्धनता और विषमतायें धटाने के लिए दो प्रकार के उपायों पर विचार किया जा सकता है। निषेधात्मक उपाय और धनात्मक उपाय। निषेधात्मक उपाय के अन्तर्गत आय और सम्पत्ति का सम्पन्न क्षेत्र का विपन्न क्षेत्र वर्ग की ओर हस्तान्तरण लाभांश का परिसीमन, सम्पत्ति और सम्पत्ति वृद्धि पर भारी मात्रा में प्रत्यक्ष करारोपण आदि सम्मिलित हैं। निर्धनता और विषमता निवारण के लिए इस विधि का प्रयोग किया जाना चाहिये, परन्तु इस युक्ति की अपनी एक सीमा है। वास्तव में आय व सम्पत्ति का सम्पन्न क्षेत्र से हस्तानान्तरण उसी सीमा तक लाभदायक है जब तक यह उच्च वर्ग की काम करने की क्षमता और इच्छा पर विपरीत प्रभाव नहीं डालता।

निर्धनता और विषमता निवारण के लिए धनात्मक उपायों की प्रक्रिया में वे सभी उपाय समाहित हैं जो अपेक्षाकृत निर्धन और पिछड़े क्षेत्र के लोगों को उत्पादक बनाकार उन्हें अधिक आय अर्जन के योग्य बना देते हैं। इस प्रकार यह युक्ति सकारात्मक माध्यमों से निर्धनता की समस्या के समाधान का प्रयास करती है। धनात्मक उपायों के परिप्रेक्ष्य में हीं गरीबी के प्रमुख कारणों का विश्लेषण करते हुए गरीबी निवारण के लिए निम्नलिखित प्रमुख सुझाव दिए जा सकते हैं।

1. *सामाजिक न्याय के लिए विकासः*

भारत में योजना आरम्भ से कम से कम तृतीय योजना की समाप्ति तक आर्थिक विकास की उत्पादक प्रेरक पद्धति अपनाई गई थी। नियोजन की मूल संकल्पना में यह विचार था कि जब तक उत्पादन नहीं बढ़ता, विकास लक्ष्य प्राप्त नहीं किए जा सकते हैं। 'विकास के लिए विकास' की इस विचारधारा में यह स्वीकृत किया गया था कि तीव्र व आर्थिक प्रगति होने पर गरीब और अमीर दोनों को लाभ होगा। आर्थिक प्रगति कहीं से भी हो इसके लाभ दूर-दूर तक फैल जाते हैं। तीव्र आर्थिक प्रगति के लिए निवेश योग्य संसाधनों को सर्वाधिक लाभदायक और उत्पादक उद्यमों में लगाया जाना चाहिये और पूर्ण निवेश हेतु इन निवेशों से बचत प्राप्त की जानी चाहिये।

वर्तमान आर्थिक विचारधारा इस निष्कर्ष पर सहमत है कि गरीबी कम करने के लिए ऊँची संवृद्धि दर आवयश्यक तो है लेकिन पर्याप्त नहीं। विकास का मूल तत्व सामाजिक न्याय की प्राप्ति में निहित है। विकास प्रक्रिया में आंय वितरण को उत्पादन से पृथक नहीं किया जा सकता है। इस कारण आर्थिक विकास और सामाजिक न्याय में कोई अति विरोध नहीं है। विकास की यह विधि गरीबी समस्या के समाधान हेतु कुछ प्रत्यक्ष उपायों की पुष्टि करती है। अतः ऐसे कार्यक्रमों व नीतियों का निर्देश करती है जो गरीब जनसंख्या के रहन-सहन स्तर में सुधार कर सके। यह विधि उन वस्तुओं के बड़े पैमाने पर उत्पादन को प्रोत्साहित करती है जिनका उपयोग व्यापक जन समूह करता है और जिसके उत्पादन में बहुत से हाथों को काम मिलता है, न कि चन्द हाथों और स्वचालित मशीनों को। आज देश की विकास प्रक्रिया में प्रभावी रूप से इस विकास युक्ति के अनुकरण की आवश्यकता है। यद्यपि

चतुर्थ पंचवर्षीय योजना से ही सामाजिक न्याय के साथ विकास की युक्ति को विकास प्रक्रिया का मूल प्रेरक मान लिया गया है। परन्तु अब तो सामाजिक न्याय के लिए ही विकास की आवश्यकता है। उन परियोजनाओं पर भी विशेष ध्यान दिया जाना चाहिये जो गरीबों का अधिक हित साधन करें।[23]

2. *गरीब लोगों को अधिक सुविधा:*

यह विदित है कि अधिकांश गरीब ग्रामीण क्षेत्र में रहते हैं। वे स्वरोजगार वाले सीमान्त कृषक या कमजोर आर्थिक आधार वाले हैं। नगरीय गरीब भी स्वरोजगार वाले या वे सीमान्त श्रमिक हैं जो असंगठित क्षेत्रों में भी कार्य करते हैं। इन सबके पास किसी स्थाई सम्पत्ति की कमी या अभाव होता है। इस कारण समानान्तर प्रतिभूति के अभाव में वे विभिन्न साख संस्थाओं से सम्यक साख सुविधा नहीं प्राप्त कर पाते हैं। अतः आवश्यक है कि कृषि एवं अन्य व्यवसायों के लिए इन गरीबों को वरीयता के आधार पर साख तकनीकी और प्रशिक्षण सम्बन्धी सुविधायें प्रदान की जायें। गरीबों को सुविधा और उत्पादक आधार प्रदान करने की इच्छा से ही यह आवश्यक है कि भूमि सुधार कानूनों को कड़ाई के साथ लागू किया जाये। जोत सीमाबन्दी से प्राप्त भूमि इन गरीबों को वरीयता के आधार पर वितरित की जाये। यह सुनिश्चित है कि जोत सीमाबन्दी से प्राप्त अतिरिक्त भूमि के वितरण से यह भूमिहीन लोग छोटे और सीमान्त कृषकों की कोटि में आयेगें। इस सन्दर्भ में यह कहा जा सकता है कि उन्हें सहकारिता के आधार पर संगठित किया जाना चाहिये और सहकारी समितियों के माध्यम से सहायता दी जानी चाहिये। गरीबों को दी जानेवाली सहायता और दी गई सहायता के उत्पादक उपयोग में होने वाले किसी भी रिसाव को रोका जाना चाहिये। न्यूनतम मजदूरी अधिनियम को असंगठित क्षेत्र में भी प्रभावी रूप से लागू किया जाना चाहिये।

3. *स्फीतकारी प्रवृत्तियों पर नियन्त्रण:*

विभिन्न विकासशील अर्थव्यवस्था के अनुभव यह प्रदर्शित करते हैं कि स्फीतकारी दशाओं में धनी अधिक धनी और निर्धन अधिक निर्धन हो जाते हैं। छठीं पंचवर्षीय योजना में इस तथ्य को दोहराया गया है कि स्फीतकारी

दशाओं की पुनरावृत्ति आय वितरण स्तर में गिरावट लाती है। यह गरीबों की आय खींचकर उनकी आर्थिक दशा बिगाड़ती है। इस कारण किसी भी गरीबी निवारण कार्यक्रमों में कीमत स्थिरता को अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान दिया जाता है। इस सन्दर्भ में मौद्रिक और वित्तीय उपागमों की सहायता ली जानी चाहिये। मौद्रिक नीति के माध्यम से मुद्रा और साख आपूर्ति को नियन्त्रण किया जाना चाहिये। घाटे की वित्त व्यवस्था अत्यन्त नियन्त्रित और उत्पादक तथा कम परिपक्वता अवधि वाली परियोजनाओं के लिए की जानी चाहिये। कीमत स्थिरता के प्रति वित्तीय नीति की भी उपादेयता अत्यन्त महत्वपूर्ण है। करारोपण की अत्यन्त नीची और अत्यन्त ऊँची दरों पर सरकार को कम राजस्व मिल पाता है। भारत में यद्यपि अब व्यैक्तिक आयकर की अधिकतम सीमान्त दर 97.50 प्रतिशत थी, जिसपर बड़े पैमाने पर करवंचन होता था। इससे सरकार को विनियोग हेतु कम आय मिलती थी। राजकीय व्यय में उपभोग व्यय नियन्त्रित कर उत्पादक व्यय को प्रोत्साहन दिया जाना चाहिये।

4. *मानवीय पूँजी का विकासः*

गरीब जन सुमदाय की आर्थिक स्थिति में सुधार हेतु यह भी आवश्यक है कि मानवीय पूंजी में विनियोग बढ़ाया जाये। अब भी गरीब समुदाय के लोग ही अधिक संख्या में अशिक्षित और विभिन्न सामाजिक सेवाओं से वंचित हैं। विभिन्न बीमारियों और दैविक आपदाओं का प्रकोप गरीब जन समुदाय पर ही अधिक होता है। गरीब समुदाय में शिक्षण सुविधाओं के प्रसार से उनकी दक्षता बढ़ेगी। उससे उनकी आय अर्जन की सम्भावना बढ़ेगी। इसी प्रकार स्वस्थ एवं चिकित्सीय सुविधाओं के प्रसार से गरीब समुदाय की कार्यक्षमता बढ़ेगी।[24] इसी क्रम में यह कहा जा सकता है कि लोक सेवाओं तथा सार्वजनिक चिकित्सालय, सार्वजनिक विद्यालय, मोटर बस परिवहन, आवास आदि के विकास पर अधिक ध्यान केन्द्रित किया जाना चाहिये। इनका वितरण अधिक समानतापूर्वक किया जा सकता है जो कि इनके लाभ सबके लिए होगें न कि कुछ सम्पन्न लोगों के लिए। इस प्रकार उत्पादन और विकास की नीति जन सामान्य के लिए होगी।

5. माध्यमिक प्रौद्योगिकी:

आधारभूत उद्योगों और कुछ ऐसे उद्योगों जिनमें अधिक पूंजी निवेश आवश्यक हो जाता है। वहां पूंजी प्रधान नवीनतम प्रौद्योगिकी का प्रयोग किया जाना चाहिये। शेष उद्योगों में पूंजी प्रधान, श्रम बचत करने वाली, विलासिता मूलक प्रौद्योगिकी और उत्पादन को कम किया जाना चाहिये। इस सन्दर्भ में प्रो० ए० के० एन० रेड्डी के अध्ययन एवं निष्कर्ष एकदम व्यवहारिक हैं। प्रो० रेड्डी के अनुसार-

1. पूंजी प्रधान और श्रम बचत करने वाली प्रौद्योगिकी के स्थान पर पूंजी बचत करने वाले और रोजगार स्रजन करने वाले प्रौद्योगिकी को वरीयता।

2. बड़े आकार की प्रौद्योगिकी के स्थान पर छोटे और घरेलू आकार प्रौद्योगिकी को वरीयता।

3. आयातित और देश के दूरस्थ भागों से लाए गए कच्चे पदार्थों पर आधारित प्रौद्योगिकी के स्थान पर स्थानीय पदार्थों के प्रयोग करने वाली प्रौद्योगिकी को वरीयता।

4. ऊर्जा गहन प्रौद्योगिकी के स्थान पर उर्जा बचत करने वाली प्रौद्योगिकी को वरीयता।

5. ऊर्जा के स्थानीय और नवकरणीय स्रोतों तथा सूर्य, वायु और बायो गैस के प्रयोग को वरीयता।

6. कम दक्षता की अपेक्षा करने वाली प्रौद्योगिकी को वरीयता।

इस प्रकार माध्यमिक प्रौद्योगिकी के प्रयोग से अधिक हाथों को कार्य मिलेगा। उन वस्तुओं का बड़े पैमाने पर उत्पादन होगा जिनका प्रयोग अनिवार्यताओं और सामान्य आवश्यकताओं के लिए जन सामान्य करते हैं। आय वितरण की स्थिति में सुधार होगा। सम्पत्ति और आय का थोड़े से लोगों में संकेन्द्रण रूकेगा।

6. रोजगार अवसरों का प्रसार:

गरीबी और विषमता की समस्या का निवारण मुख्य रूप से रोजगार अवसरों के व्यापक प्रसार में निहित है। पांचवी पंचवर्षीय योजना में यह बात स्पष्ट रूप से कही गई कि रोजगार वह सबसे विश्वसनीय उपाय है जिसके द्वारा गरीबी रेखा से नीचे रहने वाले व्यक्तियों को ऊपर उठाया जा सकता है। आय पुनर्वितरण के राजकोषीय उपाय स्वयं इस समस्या पर महत्वपूर्ण

प्रभाव नहीं डाल सके हैं। अर्थव्यवस्था में विद्यमान परिस्थितियों के परिप्रेक्ष्य में यह आवश्यकता है कि रोजगार सृजन को विकास कार्यों के उपोत्पाद के रूप में नहीं, अपितु इसे योजना प्रक्रम का केन्द्र व सर्वप्रमुख लक्ष्य मानना चाहिये। रोजगार सृजन के लिए कृषि योग्य बेकार पड़ी परती भूमि को फसलों के अन्तर्गत लाना, बागानी खेती को बढ़ावा देना, सिंचित क्षेत्र को बढ़ाकर फसल सघनता को बढ़ाना एवं कृषि से सम्बद्ध क्रियाओं को सघन करना आवश्यक है। इसी प्रकार गैर कृषि क्षेत्र में लघु एवं कुटीर उद्योगों के प्रसार से रोजगार अवसरों का प्रसार किया जा सकता है।

5. खाद्य एवं पोषण:

स्वस्थ जीवन के लिए यह आवश्यक है कि व्यक्ति को ऐसा भोजन मिले जिसमें सभी पोषक तत्व उचित मात्रा में उपस्थित हों। ऐसा तभी सम्भव है जब उसको संतुलित भोजन प्राप्त हो, परन्तु हर एक व्यक्ति का संतुलित भोजन समान नहीं हो सकता, क्योंकि प्रत्येक व्यक्ति भिन्न-भिन्न प्रकार के कार्य सम्पन्न करता है। अतः कार्य में विभिन्नता के कारण उसे भिन्न-भिन्न प्रकार के भोजन की आवश्यकता होती है। अतः समझदार व्यक्ति को अपना भोजन ऐसा करना चाहिये जिसमें पर्याप्त मात्रा में पोषक तत्व उपस्थित हों। आयु, जलवायु, ऋतु, तथा लिंग आदि के अनुसार भी भोजन की आवश्यकताओं में अन्तर आता है। विशेष परिस्थिति जैसे गर्भवती स्त्री या स्तनपान कराने वाली स्त्री के आहार में साधारण स्त्री की अपेक्षा अधिक कैलोरी की आवश्यकता होती है। संतुलित आहार समस्त प्राणियों की एक प्रमुख आवश्यकता है, जिसे स्वास्थ्य रक्षा हेतु पूरा करना ही चाहिये। अतः संतुलित भोजन में समस्त तत्वों की उचित मात्रा का होना आवश्यक है।

संतुलित आहार की मात्रायें:

इण्डियन काउन्सिल ऑफ मेडिकल रिसर्च (I.C.M.R.), फूड एण्ड एग्रीकल्चर आग्रेनाइजेशन (F.A.O.) और वर्ल्ड हेल्थ आर्गेनाइजेशन (W.H.O.) ने इस क्षेत्र में काफी कार्य किया है। इण्डियन काउन्सिल ऑफ मेडिकल रिसर्च की पुस्तक 'दि न्यूट्रीशनल वैल्यू ऑफ इण्डियन फूड्स एण्ड दि प्लानिंग ऑफ सेटिस्फैक्ट्री डाइट्स' स्पेशल सीरीज संख्या 42 (1966) की तालिका II (पृष्ठ 28) और तालिका III पर आधारित प्रस्तावित आहार और सामान्य भारतीय आहार दर्शाया गया है।

सारणी क्रमांक 1.7 : सामान्य भारतीय दैनिक आहार

खाद्य पदार्थ	मात्रा जो ली जाती है (ग्रामों में)	आहार की पौष्टिकंता	
अनाज	471	2100 कैलोरी	
दालें	68	प्रोटीन	58 ग्राम
हरी पत्तेदार सब्जियां	20	वसा	29 ग्राम
अन्य सब्जियां	91	कार्बोहाइडेट्स	405 ग्राम
तेल, घी आदि	14	कैल्शियम	0.6 ग्राम
दूध तथा दूध से बननेवाले पदार्थ	80	फास्फोरस	1.3 ग्राम
चीनी तथा गुड़	57	लोहा	47 मि.ग्राम
मांस, मछली,अण्डा,	125	विटामिन ए	8400 अ.रा.इ.
फल आदि।	85	विटामिन बी1	2.1 मि.ग्रा.
		विटामिन बी2	1.8 मि.ग्रा.
		निकोटिनिक एसिड	22 मि.ग्रा.
		विटामिन सी	240 मि.ग्रा.

सारणी क्रमांक 1.8: प्रस्तावित दैनिक संतुलित आहार तालिका

खाद्य पदार्थ	मात्रा जो ली जानी चाहिये (ग्रामों में)	आहार की पौष्टिकता	
अनाज	400	3000 कैलोरी	
दालें और सूखे मेवे	85	प्रोटीन	90ग्राम
हरी पत्तेदार सब्जियां	114	कार्बोहाइडेट्स	450 ग्राम

अन्य सब्जियां	85	वसा	90 ग्राम
तेल, वनस्पति, घी	57	कैल्शियम	1.40 ग्राम
दूध और दूध से बने पदार्थ	284	फास्फोरस	2.00 ग्राम
चीनी व गुड़	57	लोहा	47.00 मि.ग्राम
मांस, मछली, अण्डा	125	विटामिन ए	8400 अ.रा.इ.
फल	85	विटामिन बी1	2.10 मि.ग्राम
		विटामिन बी2	1.80 मि.ग्राम
		निकोटिनिक एसिड	22.00 ग्राम
		विटामिन सी	280.00 ग्राम

उपरोक्त तालिकाओं के आंकड़ों की तुलना करने से स्पष्ट हो जाता है कि–

1. सामान्य भारतीय आहार में स्वस्थ्य तत्वों की मात्रा बहुत कम है, जबकि 'प्रस्तावित संतुलित आहार' में स्वास्थ्य रक्षक पदार्थ अधिक मात्रा में हैं।

2. प्रस्तावित संतुलित आहार में यद्यपि सामान्य भारतीय आहार की अपेक्षा अनाज की मात्रा कम है, फिर भी कैलोरी अधिक प्राप्त होती है। इसीलिए ऐसी मान्यता है कि खाद्यान्नों के चयन में प्रोटीन,खनिज लवण और विटामिन युक्त भोजन को अधिक महत्व देना चाहिये ताकि शरीर को अधिक कैलोरियां प्राप्त हो सकें। प्रस्तावित संतुलित आहार तालिका के अध्ययन से एक और बातस्पष्ट होती है, वह यह है कि हरी पत्तेदार सब्जियों और दूध की मात्रा आहार में अधिक होनी चाहिये।

परन्तु पोषण विज्ञान के विशेषज्ञ श्री सी० गोपालन तथा एम० सी० बालसुब्रामणियम के मत से प्रस्तावित संतुलित आहार सामान्य भारतीय के लिए अधिक व्ययप्रद और उनकी सामर्थ्य से अधिक है। उन्होनें उपर्युक्त तालिका के अनुसार सामान्य भारतीय आहार को बतलाया है। यद्यपि कैलोरी की दृष्टि से यह प्रस्तावित संतुलित आहार से कम कैलोरी प्रदान करता है। परन्तु सामान्य भारतीय आहार की अपेक्षा यह अधिक कैलोरी प्रदान करता है। जबकि व्यय मूल्य दोनों का लगभग समान है।

कुपोषण: -

सन्तुलित आहार ग्रहण करना पोषण या उचित पोषण कहलाता है। पोषण की असामान्य स्थिति को कुपोषण (Malnutrition) कहा जाता है। कुपोषण वास्तव में पोषण का उचित रूप है। कुपोषण की स्थिति में व्यक्ति का आहार उसकी आहार सम्बन्धी आवश्यकताओं के अनुरूप नहीं होता। कुपोषण की स्थिति में व्यक्ति को या तो उसकी आवश्यकता से कम मात्रा में आहार प्राप्त होता है अथवा आवश्यकता से अधिक या संतुलित आहार प्राप्त होता है। इस प्रकार अल्प पोषण तथा अति पोषण दोनों ही अवस्थायें कुपोषण हैं। भारत जैसे गरीब देशों में कुपोषण मुख्य रूप से अल्प पोषण एवं असंतुलित पोषण के ही रूप में पाया जाता है।

कुपोषण के लक्षण:

1. शीघ्र थकावट का अनुभव करना।
2. आयु व लम्बाई के अनुसार भार में कमी।
3. शरीर की सक्रियता में कमी।
4. शरीर व चेहरे पर पीलापन, आंखे निस्तेज व भीतर धंसी हुई।
5. विटामिन की क़मी के कारण होने वाले भिन्न-भिन्न रोगों का प्रकट होना।

जैसे-

1. विटामिन एः- इसको वृद्धि विटामिन कहते हैं। यह शरीर की वृद्धि के लिए परम आवश्यक है।

विटामिन ए के स्रोतः- मक्खन, दूध, टमाटर, पालक, गाजर, मछली के तेल, अण्डे के पीतक आदि से मिलता है।

विटामिन ए की कमी से हानियांः-

1. bldh deh lsjrkSkh (Nightblindness) रोग हो जाते हैं तथा दृष्टि कमजोर हो जाती है।
2. शरीर की वृद्धि एवं विकास में रूकावट आ जाती है।
3. त्वचा सूखी एवं खुरदरी पड़ जाती है।
4. नेत्रों के कार्निया में सफेद धब्बे पड़ जाते हैं।

विटामिन 'ए' की अधिकता से हानियांः-

1. कमजोरी आ जाती है और चर्मरोग हो जाता है।
2. गर्भ में शिशुओं की उपस्थिति में कुरूपता आ जाती है।

3. त्वचा पर झुर्रियां पड़ जाती हैं।

विटामिन 'बी' (B-Complex):-

विटामिन बी में 11 विटामिन B1, B2, B3.....................B12 आते हैं। अतः इसे बी काम्पलेक्स के नाम से जाना जाता है। यह शरीर की उपापचय क्रियाओं में महत्वपूर्ण भाग लेते हैं। नीचे कुछ प्रमुख एवं महत्वपूर्ण बी काम्पलेक्स के विटामिनों का विवरण दिया गया है।

विटामिन बी1:- विटामिन बी1 को थियामीन हाइड्रोक्लोराइड के नाम से जाना जाता है। यह जल में घुलनशील है तथा इसमें खमीर जैसी गन्ध आती है।

मुख्य स्रोतः- मटर, शुष्क खमीर (Yeast) , अण्डे के पीतक, यकृत, हृदय, सुअर का मांस, वृक्क, दूध और अनाज।

विटामिन बी1 की कमी से हानियां:

1. बेरी-बेरी रोग हो जाता है।
2. भूख कम लगती है।
3. (Nervous system) स्नायु तनत्र कमजोर पड़ जाता है।
4. चक्कर आने लगते हैं तथा आंखें के आगे अंधेरा छा जाता है।

विटामिन बी2:- इसे Revoflavin भी कहते हैं।

स्रोतः- दूध, पत्तेदार सब्जियां, फलों, अण्डा, मछली, मांस, जिगर और वृक्क।

विटामिन बी2 की कमी से हानिः-

1. ओठों में सूजन आ जाती है तथा उन पर पपड़ी लगने लगती है।
2. त्वचा शुष्क एवं दरारें पड़ जाती हैं।
3. बुढ़ापा जल्दी आ जाता है।

विटामिन बी3:- Also known as Panto thenic Acid.

स्रोतः- अण्डे के पीतक, गन्ने के शीरा, अनाज की भूसी आदि ।

विटामिन बी 3 की कमी से हानियांः-

1. पैरों में जलन (Burning feet syndrom).
2. शरीर में थकान

3. हाथ पैर सुन्न पड़ जाते हैं अथवा झनझनाहट महसूस होती है।

4. रक्त का संचार ठीक से नहीं होता है।

विटामिन बी6:- यह सफेद रंग का Crystal होता है।

स्रोत:- मटर तथा मटर कुल के पौधे, खमीर, मांस, मछली, अण्डे के पीतक, दूध।

विटामिन बी 6 की कमी से हानियां:-

1. Pellagra deasease हो जाती है।
2. Nervousness महसूस होती है।
3. स्वभाव में चिड़चिड़ापन आ जाता है।
4. पेट में दर्द, उल्टी आदि।

फोलिक अम्ल:- इसे विटामिन बी 10 भी बताया जाता है। यह विटामिन वृद्धि और विकास का Important growth factor है। यह स्वादहीन विटामिन है।

स्रोत:- अंकुरित होते गेहूं, मटर, सेम, पालक, मशरूम, खमीर, मुर्गी के बच्चे आदि।

कमी से हानियां:- R.Bcs. का औसत आकार बढ़ जाता है। जिसके फलस्वरूप रक्त अल्पता रोग हो जाता है।

विटामिन एच:- यह विटामिन मनुष्य की पोषण क्रियाओं में महत्वपूर्ण है।

स्रोत:- गेहूं, मटर, भुनी मूंगफली, फूलगोभी, लोबिया, चाकलेट, दूध, खमीर, अण्डे के पीतक आदि।

कमी से हानियां:-

1. शरीर में थकान।
2. पेशियों में दर्द।
3. हृदय रोग हो सकते हैं।
4. त्वचा एवं दांतों के रोग हो सकते हैं।

विटामिन बी 12:- यह लाल रंग का क्रिस्टलीय विटामिन है।

स्रोत:- दूध, दूध से बने पदार्थ, मांस, गाय का मांस, सुअर का मांस, अण्डे आदि।

कमी से हानियां:-

1. एनीमिया हो जाता है।
2. Blood Formation में रुकावट आती है।

विटामिन सी:- इसे Ascorbic Acid के नाम से जाना जाता है। यह हमें संतरे, नीबू, टमाटर, अंगूर, अनार, आंवला, हरे शाकों, अंकुरित दालों से प्रचुर मात्रा में मिलता है। यह रक्त को शुद्ध रखता है तथा अस्थियों एवं दांतों के निर्माण में और वृद्धि में सहायक होता है। इसकी कमी से स्कर्वी रोग हो जाता है। इस रोग से रक्त वाहिनियां दुर्बल हो जाती हैं, मसूढ़े फूल जाते हैं, मस्तिष्क कमजोर पड़ जाता है एवं शरीर में आलस्य तथा थकावट का अनुभव होने लगता है। सब्जियों में खाने का सोडा डालने से इसकी मात्रा कम हो जाती है।

इसकी अधिकता से गठिया रोग होने की सम्भावना बढ़ जाती है। पेट में कई प्रकार के रोग जैसे- अतिसार, पेट में दर्द, पाचन सम्बन्धी विकार हो जाते हैं।

विटामिन डी:- Also known as Calciferol कुछ लोग इसे Steroid के नाम से भी जानते हैं।

स्रोत:- सूर्य की किरणों में शरीर का खुला भाग स्वयं इसका निर्माण कर लेता है। अतः अनेक लोग प्रातः की ठंडी सूर्य की किरणों में स्नान करने हेतु रेत पर लेटे देखे जा सकते हैं। यह सामान्यतः ताजे फलों, सब्जियों, दूध, मक्खन, अण्डे, मछली के तेल से प्राप्त होती है।

कमी से हानियां:- विटामिन डी की कमी से कैल्सियम और फास्फोरस का सही मात्रा में उपापचय नहीं हो पाता। यह दोनों तत्व अस्थियों को स्वस्थ एवं सुडौल रखने के लिये परम आवश्यक हैं।

इसकी कमी से अस्थियां दुर्बल होकर मुड़ जाती हैं जिससे शरीर कुरूप हो जाता है। इस रोग को Rickets कहते हैं।

विटामिन ई:- Also known as Tocophesol.

स्रोत:- अनाजों, बिनौले और धान की भूसी के तेल, अण्डे के पीतक, मांस, हरी सब्जियों, घी, सरसों के तेल आदि।

कमी से हानियां:- यह नारियों में बंध्यता (Sterility) तथा पुरूषों में नपुंसकता (Impotency) का कारण होता है। इसकी कमी से शुक्राणु कम और दुर्बल हो जाते हैं। जिससे गर्भ नहीं ठहरता और इसकी अधिकता का सीधा प्रभाव (Gonads) जनन अंगों और तन्त्रिका पेशीय तन्त्र पर पड़ता है।

विटामिन के:- It is yellowish oily substance.

स्रोत:- दूध, हरी पत्तेवाली सब्जियों, टमाटर, कलेजी, अण्डे की जर्दी, पनीर आदि।

कमी से हानियांः- यह Blood clot मे सहायता करता है। इसकी कमी से Prothrombin नामक प्रोटीन की रूधिर में कमी हो जाती है जिसके कारण चोट लगने पर रक्त स्राव नहीं रूकता और रोगी की मृत्यु होने की आशंका पैदा हो जाती है।

6. लवणों की कमी से होने वाले विभिन्न रोग जैसे- लोहा की कमी से रूधिर की कमी, कैल्सियम की कमी से दांतों के रोग तथा हड्डियों का कमजोर होना आदि।

Protein Celoric Mal Nutrition:

कुपोषण विश्व के अनेक भागों में एक गम्भीर समस्या है। इसमें Protein celoric Malnutrition (P.C.M.) बहुत अधिक मात्रा में पाई जाती है। जो 3-4 वर्ष के बच्चों में अधिक पायी जाती है। Protein की कमी से Kwashiorkor तथा Marasmous नामक रोग हो जाते हैं। इसमें से प्रथम में पैरों में सूजन तथा चमक रहित मांसपेशियां ढीली , मस्तिष्क का विकास न होना, त्वचा कान्तिविहीन, यकृत का बढ़ना, रूधिर की कमी के लक्षण पैदा हो जाते हैं और Marasmous में शरीर बहुत कमजोर पड़ जाता है। त्वचा पर झुर्रियां, आंखे अन्दर धंसी हुई, गाल पिचक जाते हैं।

लोहे तथा अन्य खनिज पदार्थों की कमी से anemia हो जाता है। आयोडीन की कमी से घेंघा रोग हो जाता है। विटामिन्स की कमी से अनेक रोग हो जाते हैं। जैसे- रतौंधी, स्कर्वी, बेरी-बेरी, रिकेट्स आदि।

अतः कुपोषण से शरीर में भिन्न प्रकार के रोग उत्पन्न हो जाते हैं। इस कमी को पूरा करने के लिए आवश्यक पोषक तत्वों वाले संतुलित भोजन का प्रयोग करना चाहिये।

7. शोध विधिः

प्रस्तुत शोध अध्ययन का क्षेत्र उत्तर प्रदेश के दक्षिण मध्य में गंगा यमुना के दोआब में स्थित जनपद इटावा है जो भौगोलिक दृष्टि से गंगा यमुना के मध्य स्थित मैदान का अभिन्न भाग है। इस जनपद के दो विकासखण्डों का अधिकांश हिस्सा यमुना तथा चम्बल के मध्य स्थित है। यह विकासखण्ड चकरनगर तथा बढ़पुरा है। इन दोनों विकास खण्डों के अतिरिक्त जसवन्त नगर, महेवा, अजीतमल तथा औरैया विकास खण्डों की दक्षिणी सीमा यमुना नदी निर्धारित करती है। दोनों नदियों के मध्य अथवा यमुना

के किनारे स्थित विकासखण्डों की भूमियों का एक बड़ा हिस्सा असमतल तथा उबड़-खाबड़ है। जनपद के उत्तर में मैनपुरी तथा फर्रुखाबाद जनपद के दक्षिण पश्चिम में मध्य प्रदेश तथा भिण्ड जनपद एवं उत्तर प्रदेश का जनपद जालौन, पूर्व में कानपुर देहात तथा पश्चिम में फिरोजाबाद तथा आगरा जनपद स्थित हैं। इस शोध अध्ययन की इकाई विकासखण्ड है।

1. *प्रथम उपक्रमः*

इस अध्ययन के अन्तर्गत प्राथमिक एवं द्वितीयक दोनों ही प्रकार के समंको का प्रयोग किया गया है। द्वितीयक संमकों को राज्य तथा जनपद मुख्यालय में प्राप्त विभिन्न प्रकार के प्रकाशित एवं अप्रकाशित कार्यालय अभिलेखों, प्रतिवेदों तथा सांख्यिकी पत्रिकाओं से प्राप्त किया गया है। भूमि उपयोग से सम्बन्धित जानकारी हेतु अपेक्षित सांख्यकीय आंकड़े मुख्यतः राजस्व अभिलेखों तथा पंजियों से प्राप्त किये गये हैं। जपनद इटावा उत्तर प्रदेश के ऐसे जनपदों में से एक है, जिसे राजस्व अधिकारियों द्वारा विभिन्न समस्याओं (जैसे- बाढ़, अधिक जनसंख्या, गरीबी, अविकसित परिवहन के साधन तथा सेवायें, बेरोजगारी, औद्योगीकरण का नितान्त अभाव, निम्न जीवन स्तर तथा शिक्षा का निम्न स्तर आदि) से उलझा हुआ माना गया है। भूमि उपयोग की सूचनाओं का मुख्य स्रोत लेखपाल होता है। लेखपाल अपने निरीक्षण के विवरण का जिसे खसरा (निरीक्षण पुस्तिका) कहा जाता है, वार्षिक लेखा जोखा तैयार करता है। जिससे खरीफ, रबी तथा जायद में बोई जानेवाली विभिन्न फसलें, सिंचाई के साधन, सिंचित एवं असिंचित क्षेत्र तथा फसलों का बाढ़ अथवा सूखा या अन्य किसी प्राकृतिक आपदा के कारण क्षतिग्रस्त हुए क्षेत्र का भी उल्लेख करता है। ये विवरण लेखपालों के खसरे से प्राप्त हो जाते हैं। राजस्व विभाग द्वारा सभी आंकड़े पूर्णतया शुद्ध एवं विश्वसनीय समझे जाते हैं। समस्त विकासखण्डों से चयनित 14 गांवों (प्रत्येक विकासखण्ड से एक गांव) के मानचित्र विकासखण्ड मुख्यालयों से प्राप्त किए जा सकते हैं। इन्हें प्रतिदर्श गांवो के रूप में चयनित किया गया है। इन प्रतिदर्श गांवों के मानचित्रों पर खेतों की सीमायें, उनकी संख्या, मार्ग, नहरों की शाखायें, कुयें, आबादी के क्षेत्र तथा अन्य विवरण प्रस्तुत किए गए हैं। धरातल के स्वरूप, उच्चावच, ढाल, अपवाह, सिंचाई, बाग और झाड़ियों आदि से सम्बन्धित विश्वसनीय और उपयोगी आंकड़े जनपद मुख्यालय के कृषि एवं सांख्यिकी कार्यालय से प्राप्त किए गए हैं।

2. *द्वितीय उपक्रमः*

इस उपक्रम में भूमि उपयोग, पोषण स्तर तथा लोगों में कुपोषण से उत्पन्न बीमारियों से सम्बन्धित आवश्यक जानकारी के लिय प्राथमिक संमको का संग्रहण किया गया है। इसके लिए एक अनुसूची तथा प्रश्नावली तैयार की गई है जिसमें कृषकों से सम्बन्धित आवश्यक सूचनायें व्यक्तिगत सम्पर्क करके प्राप्त की गई हैं। यद्यपि कृषकों की अशिक्षा तथा उनके द्वारा आय-व्यय न तैयार किये जाने के कारण पारिवारिक उपयोग से सम्बन्धित वांछित सूचनाओं के एकत्रण में भ्रामक स्थितियां उत्पन्न हुयीं। इस कठिनाई को विभिन्न प्रकार के सरल एवं व्यवहारिक प्रश्न पूंछकर तथा आपस में तर्क-वितर्क करके दूर कर लिया गया, जिससे व्यक्तिगत आधारित सूचनाओं में आवश्यक संशोधन भी करने पड़े। प्राथमिक संमकों के संकलन में निम्न उपक्रम अपनाये गये-

क. गांवों का चयनः

इस उपक्रम में सर्वप्रथम आठ विकासखण्ड के गांवो की एक सूची तैयार की गयी और प्रत्येक विकासखण्ड में सम्मिलित गांवों की संख्या के आधार पर इनके क्रमांकों का कोड देते हुए उतनी ही पर्चियां तैयार की गई और उन समस्त पर्चियों की गोलियां तैयार करके एक डिब्बे में डालकर भली प्रकार मिला दिया गया। तत्पश्चात उस डिब्बे में से एक पर्ची निकाली गई और उस पर्ची में अंकित क्रमांक वाले गांव को अध्ययन के लिए चुना गया। यह क्रिया आठ विकासखण्डों से सम्बन्धित आठ बार की गई और इस प्रकार दैव निदर्शन पद्धति का प्रयोग करते हुए प्रत्येक विकासखण्ड से सम्बन्धित एक गांव का चयन सम्पन्न किया गया। इस प्रकार इस अध्ययन के विश्वसनीय और निष्कर्षो में शुद्धता के स्तर को उच्च बनाये रखने के लिए कुल 8 ग्रामों का चयन किया गया है।

ख. कृषकों का चयनः

इस उपक्रम में भी दैव निदर्शन पद्धति का प्रयोग किया गया है। आठ विकासखण्ड में से प्रत्येक विकासखण्ड से एक ग्राम के चयन के उपरान्त सम्बन्धित ग्राम के प्रधान से सम्पर्क करके ग्राम के समस्त कृषकों की एक सूची तैयार की गयी और सूची से ग्राम की चयन प्रक्रिया के आधार पर

प्रत्येक ग्राम से 25 कृषकों को चयनित किया गया है और चयनित कृषकों से व्यक्तिगत सम्पर्क करके आवश्यक वांछित सूचनाओं से सम्बन्धित प्रश्नों से छपी हुई सूची तथा प्रश्नावली को भरकर तथ्यों की जानकारी प्राप्त की गई है। आवश्यक सूचनाओं में परिवार के सदस्यों की संख्या, सदस्यों की उम्र, सदस्यों की शिक्षा, भूमि का आकार, खेतों की संख्या, कृषि से सम्बन्धित क्रियाओं का स्वरूप, कृषि का स्वरूप, फसल प्रतिरूप, सिंचाई के साधन, सिंचित क्षेत्र, विभिन्न आगतों का स्वरूप एवं मात्रा, विभिन्न फसलों का उत्पादन, उपयोग का स्तर तथा सदस्यों के स्वास्थ्य से सम्बन्धित जानकारियां प्राप्त की गई हैं।

शोधार्थी द्वारा लेखपालों, विकासखण्ड अधिकारियों तथा सम्बन्धित ग्राम के आसपास के चिकित्सकों से भी व्यक्तिगत सम्पर्क करके कृषकों से सम्बन्धित समस्याओं, कुपोषण जनित बीमारियों तथा कृषि के विकास के लिये किए गए सरकारी तथा गैर सरकारी प्रयासों की भी जानकारी प्राप्त की गई हैं। कृषि उत्पादन में वृद्धि तथा कृषकों की समस्याओं के समाधान हेतु उनके व्यक्तिगत दृष्टिकोणों से भी परिचय प्राप्त किया गया है। प्रतिचयित कृषकों से प्राप्त सूचनाओं का सावधानीपूर्वक वर्गीकरण तथा सारणीयन किया गया है। यथास्थान आवश्यक सांख्यिकीय विधियों का प्रयोग करते हुए अध्ययन व परिणाम प्राप्त किए गए हैं एवं अध्ययन से प्राप्त निष्कर्षों को प्रस्तुत किया गया है।

प्रस्तुत शोध में निष्कर्षो की शुद्धता के लिए जिन प्रतिनिधियों का प्रयोग किया गया है, उसका विवरण निम्न प्रकार है।

1. *खाद्य पदार्थों में खाद्य उपयोग का हिस्सा:*

1956 में जब प्रो0 एल0 डी0 स्टाम्प के रियोडीजेनेरो में खाद्य एवं पोषण विषय पर सम्पन्न होने वाली अन्तर्राष्ट्रीय भूगोल कान्फ्रेन्स में अध्यक्षीय सम्बोधन के बाद विभिन्न विद्वानों द्वारा विभिन्न खाद्य पदार्थों में कैलोरिक ऊर्जा के लिए खाद्य योग्य हिस्से की गणना के अनेकों प्रयास किए गए हैं। प्रो0 एल0 डी0 स्टाम्प ने स्वंय विभिन्न खाद्यान्नों के उत्पादन में से 10 प्रतिशत घटाकर शेष हिस्से से कैलोरिक उर्जा प्राप्ति की गणना की, जबकि सिंह जसवीर (1971:48) ने 16.80 प्रतिशत तथा तिवारी पी0

डी0 (1988:2) ने 15 प्रतिशत तथा कुछ अन्य विद्वानों ने 20 प्रतिशत तक घटाकर कैलोरिक ऊर्जा प्राप्ति की गणना की है। परन्तु वास्तव में उपलब्ध कृषि उत्पादन संमकों की दृष्टि से देखा जाये तो विभिन्न खाद्य फसलों के उत्पादन को पहले खाद्य योग्य बनाया जाता है तत्पश्चात उपभोग किया जाता है। उपभोग योग्य बनाने में विभिन्न खाद्य पदार्थो का कुछ हिस्सा नष्ट हो जाता है अतः विभिन्न फसलों से प्राप्त उत्पादन के खाद्य योग्य हिस्से की गणना प्रस्तुत शोध में निम्न प्रकार की गयी है।

सारणी क्रमांक 1.9: खाद्य फसलों में खाने योग्य भाग

खाद्य फसलें	बीज एवं भण्डारण क्षय (प्रतिशत)	शुद्ध उत्पादन (प्रतिशत)	खाने योग्य भाग (प्रतिशत)
1. धान	10	90	60
2. ज्वार	10	90	90
3. बाजरा	10	90	90
4. मक्का	10	90	90
5. गेहूं	10	90	90
6. जौ	10	90	90
7. अरहर	10	90	65
8. चना	10	90	65
9. मटर	10	90	70
10. उर्द/मूंग	10	90	70
11. लाही	02	98	36
12. गन्ना	10	90	12
13. आलू	10	90	83

सारणी 1.9 में विभिन्न खाद्य फसलों में खाने योग्य भाग को दर्शाया गया है। विभिन्न फसलों के कुल उत्पादन में सर्वप्रथम बीज एवं भण्डारण क्षय को घटाकार शुद्ध उत्पादन प्राप्त किया गया है। इसके उपरान्त शुद्ध उत्पादन में से उनके सामने अंकित खाने योग्य भाग की गणना करके कैलोरिक उर्जा प्राप्ति की गणना की गयी है।

2. *पोषण स्तर की गणना:*

भारतीय चिकित्सा शोध परिषद 1968 के पोषण विशेष दल द्वारा एक औसत भारतीय के लिए आवश्यक कैलोरिक ऊर्जा की गणना की गई है। जिसे विभिन्न आयु तथा लिंग के अनुसार सारणी में दर्शाया गया है।

सारणी 1.10: प्रतिदिन औसत कैलोरिक ऊर्जा की आवश्यकता

पुरूष-	हल्का कार्य	2400
	मध्यम कार्य	2800
	भारी कार्य	3900
स्त्री-	हल्का कार्य	1900
	मध्यम कार्य	2200
	भारी कार्य	3000
	गर्भवती	3300
	दूध पिलाने वाली	3700
बच्चे-	1 वर्ष से 3 वर्ष	1200
	4 से 6 वर्ष	1500
	7 से 9 वर्ष	1800
	10 से 12 वर्ष	2100
	13 से 15 वर्ष (लड़के)	2500

(लड़कियां)	2200
16 से 18 वर्ष (लड़के)	3000
(लड़कियां)	2200
औसत	2481.25

उपर्युक्त सारणी 1.10 में विभिन्न आयु वर्ग के लोगों के लिए प्रतिदिन न्यूनतम कैलोरिक आवश्यकता को दर्शाया गया है, परन्तु विभिन्न वर्ग के व्यक्तियों द्वारा सम्पन्न किये जाने वाले कार्यों को केवल हल्के तथा भारी कार्यों में ही विभाजित नहीं किया जा सकता है, बल्कि विभिन्न लोगों द्वारा प्रतिदिन विभिन्न कार्य सम्पन्न किए जाते हैं और लोगों द्वारा किए जानेवाले कार्यों के आधार पर प्रति व्यक्ति न्यूनतम कैलोरिक आवश्यकता भी भिन्न-भिन्न होती है। विभिन्न कार्यों को सम्पन्न करने में कितनी कैलोरिक उर्जा की आवश्यकता होती है इसे आगे सारणी में दर्शाया गया है।

सारणी 1.11: विभिन्न कार्यों के लिए प्रति घंटे प्रति किलोग्राम भार वाले शरीर की कैलोरिक आवश्यकता।

कार्य का विवरण	प्रति घंटे प्रति कि.ग्रा. शारीरिक भार पर कैलोरिक आवश्यकता
1. सोना	0.9
2. विश्राम के लिए लेटने पर	1.1
3. सोंचनें पर	1.2 से 1.25
4. अध्ययन (शान्ति से)	1.22
5. ताश खेलना	1.26
6. भोजन करना	1.4
7. कक्षा का कार्य	1.47
8. अध्ययन (चिल्लाकर)	1.5

9. लिखना	1.6
10. बुनाई करना	1.6
11. गीत गाना	1.74
12. कार्यालय का कार्य	1.74
13. टंकण	1.93
14. फर्श पर झाडू लगाना	2.40
15. कार चलाना	2.63
16. टहलना (4 कि.मी. प्रति घंटे की चाल)	2.86
17. मोटरसायकिल चलाना	3.20
18. वृक्षारोपण तथा लकड़ी काटना	4.20
19. साइलिक चलाना (16 कि.मी. प्रति घंटे की चाल)	4.40
20. कपड़े धोना	4.90
21. निराई गुड़ाई	5.17
22. गेंद फेंकना	5.80
23. घोड़े पर चढ़ना	5.30
24. हल चलाना	5.88
25. तैरना	7.10
26. दौड़ना (9 कि.मी. प्रति घंटे की चाल)	8.17
27. मिट्टी खोदना	8.20
28. तेज गति से टहलना	9.80
29. देनिक सामान्य कार्य	2.50

एक व्यक्ति जिसका शारीरिक भार 70 कि.ग्रा. है।

1. एक कृषक जो हल चलाने का कार्य करता है-

(अ) प्रातः 5 बजे से 8 बजे तक दैनिक कार्य तथा पशुओं को चारा

2.5 X 3 X 70 = 525.00

(ब) प्रातः 8 बजे से मध्यान्ह 12 बजे तक हल चलाना

5.88 X 4 X 70 = 1646.00

(स) अपरान्ह 12 बजे से लेकर 3 बजे तक का दैनिक कार्य

2.5 X 3 X 70 = 525.00

(द) अपरान्ह 3 बजे से 6 बजे तक हल चलाना

5.88 X 3 X 70 = 1234.80

(य) सांय 6 बजे से 10 बजें तक दैनिक कार्य तथा पशुओं को चारा पानी

2.5 X 4 X 70 = 700.00

(र) रात्रि 10 बजे से प्रातः 5 बजे तक का सोना

0.9 X 7 X 70 = 441.00

योग = 5072.20

2. एक श्रमिक जो सड़क निर्माण कार्य पर लगा हुआ है-

(सड़क से निवास की दूरी 4 किलोमीटर है)

(अ) प्रातः 5 बजे से 8 बजे तक दैनिक कार्य

2.5 X 2 X70 = 350.00

(ब) प्रातः 7 बजे से 8 बजे तक सड़क पर पहुंचना

2.86 X 1 X 70 = 200.20

(स) प्रातः 8 बजे से लेकर 12 बजे तक मिट्टी खनन

8.2 X 4 X 70 = 2296.00

(द) 12 बजे से 12.30 बजे तक भोजन करना

1.4 X 0.5 X 70 = 49.00

(य) 12.30 बजे से 2 बजे तक विश्राम

1.1 X 1.5 X 70 = 115.50

(र) 2 बजे से 6 बजे तक मिट्टी खनन

8.2 X 4 X 70 = 2296.00

(ल) 6 बजे से 7 बजे तक घर वापसी

2.86 X 1 X 70= 200.20

(व) 7 बजे से 9 बजे तक दैनिक कार्य

2.5 X 2 X 70 = 350.00

(स) 9 बजे से प्रातः 5 बजे तक सोना

0.9 X 8 X 70 = 504.00

योग = 6360.90

3. एक टाइपिस्ट जो अपने कार्यालय से 2 कि0मी0 दूर निवास करता है।

(अ) प्रातः 6 बजे से 9.30 बजे तक दैनिक कार्य

2.5 X 3.5 X70 = 612.50

(ब) प्रातः 9.30 बजे से 10 बजे तक कार्यालय पहुंचना (साइकिल से)

4.4 X 0.5 X 70 = 154.00

(स) प्रातः 10 बजे से लेकर सायं 4 बजे तक

टाइपिंग कार्य 4 घंटे	1.93 X 4 X 70	=	540.40
दोपहर का भोजन 0.5 घंटे	1.4 X 0.5 X 70	=	49.00
विश्राम 1 घंटे	1.1 X 1 X 70	=	177.00

(द) 4 बजे से 4.30 बजे तक घर वापसी

4.4 X 0.5 X 70 = 154.00

(य) 4.30 बजे से 10 बजे तक दैनिक कार्य

1.6 X 4 X 70 = 448.00

(र) 10 बजे से प्रातः 6 बजे तक सोना

0.9 X 8 X 70 = 504.00

योग = 2666.90

उपर्युक्त गणना विधि के आधार पर अध्ययन क्षेत्र में दैव निदर्शन पद्यति के आधार पर समस्त आठ विकासखण्डों में प्रत्येक से एक ग्राम सभा का निर्वाचन करके तथा प्रत्येक ग्राम सभा से 25 कृषक परिवारों का चुनावा किया गया है। इस प्रकार 200 कृषक परिवार का चुनाव करके इन्हें मुसलिम वर्ग, अनुसूचित जाति वर्ग, पिछड़ें वर्ग तथा सामान्य वर्ग के चार भागों में बांटा गया है तथा इन चार वर्गा की न्यूनतम कैलोरिक आवश्यकता की अलग-अलग गणना की गई है। गणना से प्राप्त परिणाम के आधार पर मुसलिम परिवार में प्रति व्यक्ति 2547 कैलारी, अनुसूचित जाति के परिवारों में प्रति व्यक्ति 2516 कैलोरी, पिछड़े वर्ग के आकार वाले कृषक

परिवारों को 2480 कैलोरी तथा सामान्य वर्ग वाले कृषक परिवारों को 2414 कैलोरी उर्जा की आवश्यकता होती है। इस प्रकार अध्ययन क्षेत्र में विभिन्न वर्ग के लोगों की औसत रूप में प्रति व्यक्ति 2502 कैलोरी प्रतिदिन की दर से ऊर्जा की आवश्यकता होती है। अध्ययन की सुविधा के लिए अध्ययन क्षेत्र में प्रति व्यक्ति प्रतिदिन कैलोरिक आवश्यकता का पैमाना 2500 कैलोरी माना गया है। यद्यपि यह सत्य है कि किसी क्षेत्र के निवासियों की न्यूनतम कैलोरिक आवश्यकता की गणना करने में प्रत्येक व्यक्ति द्वारा प्रत्येक 24 घंटे में सम्पन्न किए जानेवाले विभिन्न कार्यो के स्वभाव का विवरण, शारीरिक भार, आयु, लिंग आदि को ध्यान में रखना पड़ता है जो कि सरल कार्य नहीं है। परन्तु विभिन्न प्रकार की कठिनाइयों को सामना करते हुए यह कठिन कार्य सम्पन्न करके अध्ययन क्षेत्र में न्यूनतम कैलोरिक आवश्यकता 2500 कैलोरी गणना की गई है।

3. भूमि की अनुकूलतम भार वहन क्षमता का निर्धारण:

किसी क्षेत्र की भूमि की अनुकूलतम भार वहन क्षमता उस क्षेत्र की जनसंख्या की पोषण क्षमता को प्रदर्शित करती है। यद्यपि कृषि भूमि के किसी निश्चित क्षेत्रफल से प्राप्त उत्पादन द्वारा कितनी जनसंख्या के आवश्यक पोषण स्तर को बनाए रखा जा सकता है। अनुकूलतम भार वहन क्षमता को ज्ञात करने के लिए अध्ययन क्षेत्र की 13 प्रमुख फसलों की औसत उत्पादकता विकासखण्ड स्तर पर ज्ञात की गई है। औसत उत्पादन में बीज तथा भण्डारण क्षय घटाने के बाद विभिन्न फसलों का शुद्ध उत्पादन प्राप्त किया गया है। प्रत्येक फसल के शुद्ध उत्पादन में से खाद्य योग्य हिस्से की गणना की गई है। तत्पश्चात प्राप्त उत्पादन को कैलोरी में परिवर्तित किया जाता हैं। इस प्रकार 13 फसलों के खाद्य योग्य हिस्से को अलग-अलग कैलोंरिक में परिवर्तित करके सभी फसलों के उत्पादन से प्राप्त होनेवाली कैलोरिक उपलब्धता का योग किया गया है। प्रतिवर्ग किलोमीटर कृषि क्षेत्र में कुल कैलोरिक उपलब्धता की गणना निम्न सूत्र द्वारा दी गई है।

प्रति किलोमीटर कृषि क्षेत्र में कैलोरिक उपलब्धता

$$= \frac{\text{विभिन्न फसलों के उत्पादन से प्राप्त कुल कैलोरी}}{\text{सकल जोत का प्रतिशत}} \times 100$$

प्रति वर्ग किलोमीटर या 100 हेक्टेअर कृषि क्षेत्र में कैलोरिक उपलब्धता की गणना करने के पश्चात प्रति व्यक्ति प्रति वर्ष कैलोरिक आवश्यकता का आकलन किया गया है। इसके लिए अध्ययन क्षेत्र की विभिन्न आयु वर्ग की जनसंख्या तथा लिंगानुसार जनसंख्या के प्रतिशत के आधार पर प्रतिदिन कैलोरिक आवश्यकता की गणना की गई है, जिसे 365.25 से गुणा करके तथा गुणनफल को 100 से विभाजित करके प्रति व्यक्ति वार्षिक कैलोरिक आवश्यकता की गणना की गई हैं।

अनुकूलतम भूमि भार वहन क्षमता

$$= \frac{\text{प्रतिवर्ग किलोमीटर कृषि क्षेत्र में कुल कैलोरिक उपलब्धता}}{\text{प्रति व्यक्ति वार्षिक कैलोरिक आवश्यकता}}$$

$$\text{शस्य क्रम गहनता} = \frac{\text{सकल कृषि क्षेत्र}}{\text{शुद्ध कृषि क्षेत्र}} \times 100$$
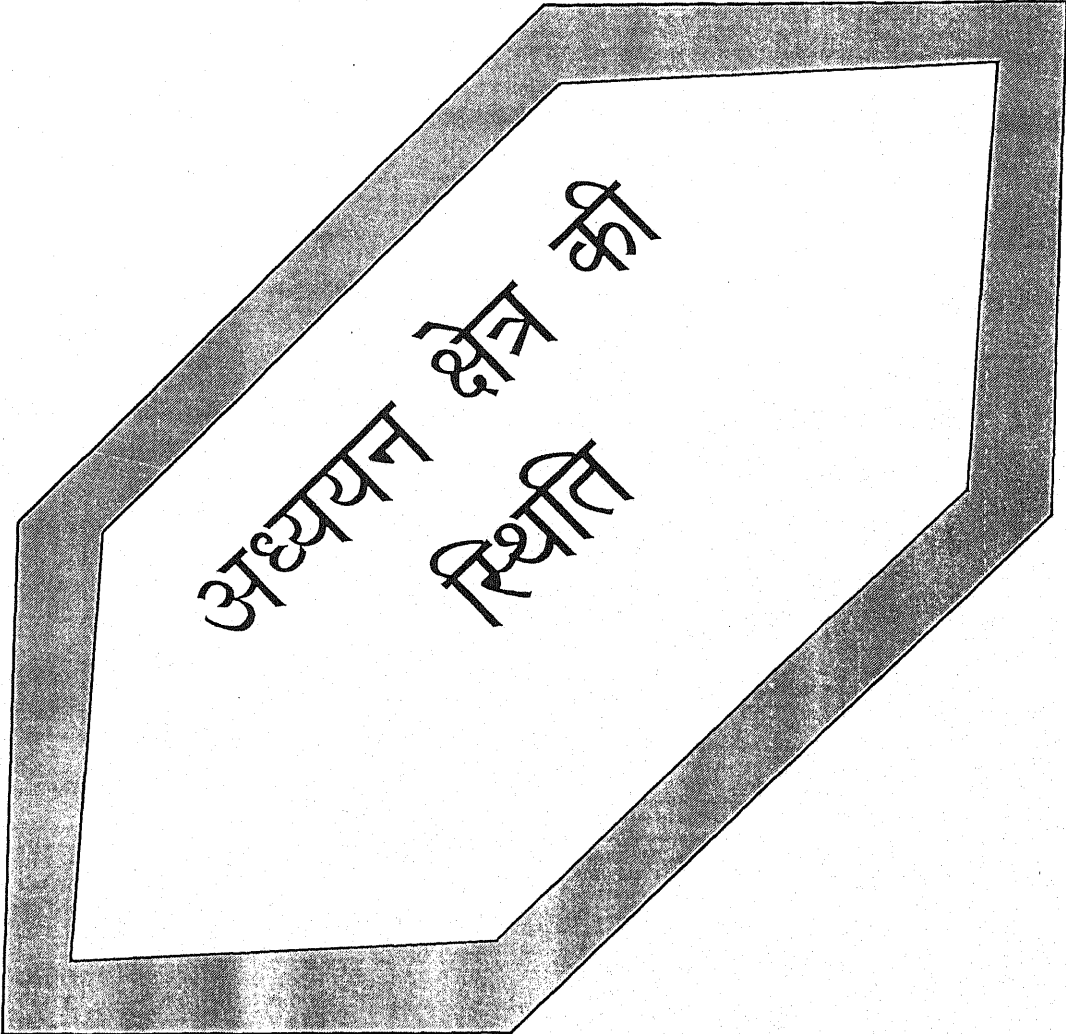
शस्य संयोजन - शस्य संयोजन के लिए दोई, थामस तथा रफीउल्लाह की विधियों का तुलनात्मक अध्ययन किया गया है।

सन्दर्भ ग्रन्थ

1. अमर्त्य के. सेन- पावर्टी, इनइक्वैलिटी एण्ड अनइम्प्लाइमेन्ट- इकोनोमिक एण्ड पोलिखिल नीकली वाल्यू. 8 स्पेशल नं. अगस्त 1973 पृ. 31-33.

2. टी एन. श्रीनिवासन एण्ड पी.के. वर्धन -पावर्टी एण्ड इनकम डिस्ट्रीब्यूटर इन इण्डिया पृ. 120.

3. प्लानिंग कमीशन - टास्क फोर्स आन मिनिमम नीड्स एण्ड इफेक्टिव कन्जम्शन डिमाण्ड ।

4. रिपोर्ट ऑफ दि सेविन्थ फाइनेन्स कमीशन 1978.

5. पी.डी. ओझा - ए कान्फीग्रेशन ऑफ इण्डियास पावर्टी इन इण्डिया, इकोनोमिक एण्ड पोटिकल वीकली जनवरी 2 तथा 1971.

6. वी. एम. डाण्डेकर एडं एन. रथ - पावर्टी इन इण्डिया, इकोनमिक एण्ड पोलिटिकल वीकली जनवरी 2 तथा 9-1971.

7. पी. के. वर्धन - ऑन दी इन्सीडेन्स ऑफ पावर्ती इन रूरल इण्डिया, इकोनमिक एण्ड पोलिटिकल, वीकली, एनुअल न. फरबरी 1973.

8. बी. एस. मिन्हास - रुरल पावर्टी लेण्ड डिस्ट्रीव्यूशन एण्ड डवलपमेण्ट, इण्डियन इकोनोमिक शिविर अप्रेल 1970.

9. प्लानिंग कमीशन - पंचवर्षीय योजना 1978-1983.

10. प्लानिंग कमीशन - छठवीं पंचवर्षीय योजना।

11. प्लानिंग कमीशन - सातवीं पंचवर्षीय योजना।

12. प्लानिंग कमीशन - सातवीं पंचवर्षीय योजना।

13. चरण सिंह-इकोनोमिक नाइट नेयर ऑफ इण्डिया।

14. ए0एन0 ओझा- हाउसिंग इस इण्डियास बिग विजनिस, दि इनलेसट्रेटिड वीकली ऑफ इण्डिया -1897-1977.

15. एन0 सी0 ए0 ई0 आर0 (नेशनल काउन्सिल ऑफ एप्लाइड इकोनिम्स रिसर्च) चोन्जिस इन रूरल इनकम्स इन इण्डिया।

16. सातवीं पंचवर्षीय योजना-वाल्यूम प्रथम, पृष्ठ 8.

17. ईश्वर धींगरा-ग्रामीण अर्थव्यवस्था सुल्तान चन्द्र एण्ड सन्स, पृष्ठ 83.

18. रिजर्व बैंक ऑफ इण्डिया बुलेटिन 1983.

19. ईश्वर धींगरा-ग्रामीण अर्थव्यवस्था सुल्तान चन्द्र एण्ड सन्स, पृष्ठ 85.

20. ईश्वर धींगरा-ग्रामीण अर्थव्यवस्था सुल्तान चन्द्र एण्ड सन्स, पृष्ठ 96.

21. ईश्वर धींगरा-ग्रामीण बेरोजगार एवं ग्रामीण उद्योग सुल्तान चन्द्र एण्ड सन्स।

22. अमर्त्य सेन- पावर्ती इन इक्वलटी एण्ड अनइम्पलायमेण्ट।

23. डॉ0 बद्री विशाल त्रिपाठी- भरतीय कृषि किताब महिला, इलाहाबाद, पृष्ठ 347-48.

24. पॉल स्ट्रीटेन- ट्रेड स्टैटिजीस एण्ड डवलपमेण्ट, पृष्ठ 100.

अध्याय - द्वितीय

अध्याय - द्वितीय

अध्ययन क्षेत्र की स्थिति

1. भौगोलिक स्थिति:

किसी क्षेत्र के निवासियों की आर्थिक एवं सामाजिक क्रियायें वहां की भौतिक परिस्थितियों द्वारा प्रत्यक्ष रूप ये निर्देशित एवं नियन्त्रित होती हैं। भौतिक वातावरण के प्रमुख अंग जैसे प्रादेशिक स्थित, भूमि की बनावट, जलवायु, मिट्टियां, जल राशियां, प्राकृतिक वनस्पति एवं खनिज पदार्थ किसी भी भू-भाग के सम्पूर्ण सांस्कृतिक पर्यावरण को प्रमाणित करते हुए उसके स्वरूप को निश्चित करते हैं। जलवायु एवं मिट्टी वातावरण के सर्वाधिक महत्वपूर्ण तत्व है जिनका कि प्रभाव कृषि एवं उससे सम्बन्धित अन्य क्रियाकलापों पर प्रत्यक्ष रूप से पड़ता है। भारतीय अर्थव्यवस्था कृषि प्रधान है जो कि प्रमुख रूप से जलवायु एवं मिट्टी पर निर्भर है। मिट्टी भारतीय कृषक की अमूल्य संपदा है, जिसका कि प्रभाव मानव के भोजन, वस्त्र और निवास जैसी मूल आवश्यकताओं पर पड़ता है। अतः उपर्युक्त तथ्यों द्वारा मानव की आर्थिक क्रियायें, शिक्षा, सामाजिक स्वर आदि प्रभावित होते हैं।

भौतिक परिस्थितियां जहां मानव के अनुकूल होती हैं, उस क्षेत्र में मनुष्य की आर्थिक क्रियायें जैसे- कृषि, पशु पालन, खनन, लकड़ी काटना, मत्स्य व्यवसाय एवं व्यापार वातावरण से प्रभावित होती हैं एवं इसका प्रभाव वहां के निवासियों के आर्थिक, सामाजिक एवं राजनीतिक जीवन स्तर पर स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होता है। इसके विपरीत प्रतिकूल भौगोलिक परिस्थितियों वाले क्षेत्रों में मानव मात्र निर्वाह की स्थिति में रहता है। उन्नति सामाजिक, आर्थिक क्रियाओं के क्षेत्र में पोषण स्तर उच्च होता है जिसका प्रभाव मानव स्वास्थ्य पर पड़ता है। प्रस्तुत अध्ययन क्षेत्र का विश्लेषण ग्रामीण निर्धनता खाद्य समस्या तथा पोषण स्तर से सम्बन्धित है। अतः अध्ययन क्षेत्र की भौतिक परिस्थितियों का ज्ञान आवश्यक है।

स्थिति, विस्तार एवं प्रशासनिक संगठन:

प्रस्तावित अध्ययन क्षेत्र जनपद इटावा उत्तर प्रदेश के इलाहाबाद मडल के अन्तर्गत आता है। यह जनपद 26^0 21' से $27^0$1' उत्तरी अक्षांश तथा 78^0 45' से 79^0 45', पूर्वी देशान्तर के मध्य स्थित है।[1] जनपद

का कुल भौगोलिक क्षेत्रफल 4364.17 वर्ग कि0मी0 है। इसके उत्तर में मैनपुरी, फर्रूखाबाद, पूर्व में कानपुर देहात, दक्षिण में जालौन तथा मध्य प्रदेश का जनपद भिण्ड, पश्चिम में आगरा एवं फिरोजाबाद जिले स्थित हैं। प्रशासनिक दृष्टि से सम्पूर्ण अध्ययन क्षेत्र 4 तहसीलों एवं 14 विकासखण्डों में विभाजित है।

सारणी क्रमांक : 2.1-अध्ययन क्षेत्र जनपद इटावा का प्रशासनिक संगठन

तहसील मुख्यालय	सामुदायिक विकास खण्ड			
1. इटावा	1. जसवन्तनगर,	2. बढ़पुरा	3. बसरेहर	
2. भरथना	1. भरथना	2. ताखा	3. महेवा	4. चकरनगर
3. बिधूना	1. अछल्दा	2. बिधूना	3. ऐरवा कटरा	4. सहार
4. औरैया	1. औरैया	2. अजीतमल		3. भाग्यनगर

भौमिकीय संरचना:

संरचना की दृष्टि से अध्ययन क्षेत्र भारत के उत्तरी मैदानी भाग का एक अभिन्न अंग है। जोकि दक्षिण में स्थित प्रायद्वीपीय भाग एवं उत्तर के हिमालय क्षेत्र के मध्य विस्तृत है। इस विस्तृत मैदानी भाग का पुरातन भूगर्भ, प्लीस्टोसीन युगीन अवसाद व गंगा यमुना क्रम की नदियों द्वारा लाई गई जलोढ़ मिट्टी के निक्षेप से आवृत्त है। हिमालय के पांदप प्रदेश में स्थित इस मैदानी भाग की भूगर्भिक संरचना का अनेक भूगर्भशास्त्रियों ने अध्ययन किया है। भूगर्भशास्त्रियों का विश्वास है कि इस मैदानी भाग की संरचना हिमालय के दक्षिण में स्थित एक " हिमालय की रचना के बाद हिमालय विशाल गर्त में अवसाद के निक्षेपीकरण से हुई है"।[2] एडवर्ड स्वेस के अनुसार एवं प्रायद्वीपीय भारत के मध्य स्थित एक विशाल गर्त में निक्षेपण द्वारा इस मैदानी भाग की संरचना हुई'। डॉ0 एस0 जी0 बुर्राड के अनुसार यह मैदान एक भ्रंश घाटी के रूप में है। भारतीय विद्वान डॉ0 एम0 एस0 कृष्णन ने इस भ्रंश घाटी को अवतलित छोल (Slag) के नाम से पुकारा है। डॉ0 कृष्णन के अनुसार इस अवतलित छोल का निर्माण भारतीय उप

महाद्वीप के उत्तर की ओर खिसकने और हिमालय के उत्थान के समय हुआ।[3] संक्षेप में कहा जा सकता है कि यहां पर एक भूसन्नति के आकार का एक गर्त था, जिसे डा0 डी0 एन0 वाडिया ने [4] सिन्क्लाइनोरियम के नाम से पुकारा है। डॉ0 एस0 जी0 बुर्राड के मतानुसार भ्रंश घाटी का निर्माण दरार के भू भाग के नीचे धसक जाने से हुआ होगा और उसमें जल भर जाने से इस गर्त की रचना हुई होगी। उनके अनुसार इस बड़े भ्रंश की रचना 2400 किलोमीटर की लम्बाई में एवं हजारों मीटर की गहराई में हुई होगी तथा इसके निर्माण में हिमालय का भी योगदान रहा होगा।

गंगा यमुना द्वारा निर्मित मैदान के अवसाद की गहराई का अभी तक निश्चित ज्ञान नहीं है। परन्तु पाताल तोड़ कुयें बनाने एवं खनिज तेल की खोज के लिए की गई खुदाई से इस मैदानी भाग की गहराई पृथ्वी की सतह से 1380 मीटर से 1400 मीटर तक सिद्ध होती है। ओल्डहम[5] के अनुसार ' सबसे गहरा छिद्र लखनऊ के निकट जो कि जनपद इटावा के पूर्वी सीमा से 168 किलोमीटर की दूरी पर है। वहां की गहराई 3920 मीटर नापी गयी है। [6] संरचना की दृष्टि से ओल्डहम[7] ने इस मैदान की गहराई 4500 मीटर तक बताई है। कोवी [8] ने उन्हीं आंकड़ों का प्रयोग करके कुछ अधिक गहराई बताई है। ग्लीनी [9] ने इन मैदानी भाग की गहराई कुछ कम बताई है। आपके अनुसार इन अवसादों की गहराई 1950 मीटर है।

अतः स्पष्ट है कि नदियों द्वारा लाई गई जलोढ़ मिट्टी से बना यह मैदान उत्तर में हिमालय पर्वत एवं दक्षिण में गौडवाना भूखण्ड के मध्य स्थित है। संरचना की दृष्टि से यह मैदानी भाग एक नवीन संरचना है। प्रस्तुत अध्ययन क्षेत्र जलोढ़ मिट्टी के निक्षेप से बना एक मैदानी भू भाग है। जो कि गंगा यमुना मैदानी भाग का ही एक हिस्सा है। इसकी रचना बालू, क्ले तथा सिल्ट से हुई है। कहीं-कहीं बजरी तथा कंकड़ भी पाए जाते हैं। जलोढ़ मिट्टी से निर्मित इस मैदानी भाग को संरचना की दृष्टि से दो भागों में विभाजित किया गया है।

1. पुरातन जलोढ़

2. नवीन जलोढ़

उच्चावचः

धरातल प्राकृतिक पर्यावरण का एक अति महत्वपूर्ण घटक है। किसी भी क्षेत्र के अध्ययन एवं विश्लेषण में धरातल की मुख्य भूमिका होती है। मानव के आर्थिक क्रियाकलापों पर धरातल का प्रभाव प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से दृष्टिगोचर होता है। धरातलीय स्वरूपों के आधार पर क्षेत्र की संचार व्यवस्था, मानव अदिवास, कृषि भूमि उपयोग आदि निर्धारित होता है। अतः अध्ययन के पूर्व किसी भी भू-भाग की भू आकृति का सम्यक ज्ञान प्राप्त करना आवश्यक होता है।

जनपद इटावा गंगा, यमुना दोआब में स्थित भारत के उत्तरी मैदानी भाग का एक अभिन्न अंग है जिसकी धरातलीय बनावट को यमुना, चम्बल, क्वारी तथा सेंगर नदियों ने अधिक प्रभावित किया है। जनपद का समस्त धरातलीय भाग नदियों द्वारा निर्मित निक्षेपित जलोढ़ मिट्टी का बना है। जोकि लगभग समतल है। कहीं - कहीं पर नदियों का प्रभाव स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है जिसके कारण कुछ भूमि ऊँची-नीची बीहड़युक्त पाई जाती है। जनपद का सामान्य ढाल उत्तर पश्चिम से दक्षिण पूर्व की ओर है। जिसमें कुछ स्थानीय विशेषतायें पाई जाती हैं। सम्पूर्ण अध्ययन क्षेत्र को धरातलीय रचना के आधार पर निम्नलिखित पांच भागों में बांटा जा सकता है।

1. बीहड़ क्षेत्र
2. ट्रांस यमुना उच्च भूमि
3. नवीन दोमट मिट्टी का क्षेत्र
4. सेंगर यमुना समतल भूमि
5. उत्तरी निम्न भूमि क्षेत्र

जलप्रवाह प्रणालीः

जल मानव जीवन की बहुत ही महत्वपूर्ण आवश्यकता है। जल के बिना जीवन सम्भव नहीं है। यह न केवल मनुष्य की शारीरिक आवश्यकताओं के लिए अनिवार्य है वरन , जन्तु जगत और वनस्पति जगत के विकास के लिए भी आवयश्यक है। जल की महत्ता को देखते हुए भारत की प्राचीन आर्य सभ्यता का विकास सिन्धु एवं गंगा नदियों की घाटियों में हुआ था। अतः स्पष्ट है कि किसी भी क्षेत्र के सामाजिक एवं आर्थिक विकास में

नदियों का महत्वपूर्ण योगदान होता है।। प्रस्तुत अध्ययन क्षेत्र गंगा, यमुना दोआब में स्थित एक समतल मैदानी भाग है जिसके धरातलीय स्वरूपों , संरचना , कृषि, आर्थिक एवं सामाजिक विकास पर नदियों का प्रत्यंक्ष प्रभाव सर्वत्र दृष्टिगोचर होता है। अतः इटावा जनपद की जल प्रवाह प्रणाली का अध्ययन अपरिहार्य है।

अध्ययन क्षेत्र जनपद इटावा में जलप्रवाह प्रणाली का विकास ढाल के अनुरूप हुआ है। यहां की अधिकांश नदियां उत्तर पश्चिम से दक्षिण पूर्व की ओर बहती हैं। यमुना, चम्बल, क्वारी एवं सेंगर जनपद की प्रमुख नदियां हैं तथा अरिन्द, पुराहा, सिरसा, अहनैया अध्ययन क्षेत्र की अन्य नदियां हैं। यमुना, चम्बल, क्वारी जनपद के दक्षिणी भाग में प्रवाहित होनेवाली नदियां हैं। जबकि सेंगर, सिरसा, अहनैया एवं पुराहा नदियां जनपद के उत्तरी भाग में बहती हैं। यमुना, चम्बल, क्वारी नदियों ने क्षेत्र के धरातल को बहुत अधिक प्रभावित किया है। इन नदियों के दोनों किनारों पर अधिक भूमि कटाव के कारण बीहड़ क्षेत्र बन गए है। जिन्हें स्थानीय भाषा में 'खार' कहते हैं। यह बीहड़ क्षेत्र अत्यन्त दुर्गम क्षेत्र हैं।

Name of River	Distance in Km.	Name of River	Distance in Km.
Yamuna	148	Arind	53
Chambal	74	Purha	48
Kuari	40	Sirsa	29
Sengar	97	Ahinaya	56

जलवायु :

जलवायु भौतिक वातावरण का सबसे महत्वपूर्ण तत्व है।[10] भूतल पर निवास करने वाले मानव जीवन पर भौतिक वातावरण के जिन अंगों का सर्वाधिक प्रभाव पड़ता है उनमें जलवायु का सर्वोच्च स्थान है। मानव ही नहीं वरन भौतिक वातावरण के अन्य अंग जैसे- धरातल, मिट्टी, वनस्पति आदि सभी जलवायु से प्रभावित होते हैं। मानव के सभी कार्यों , कृषि, पशु चारण, उद्योग, व्यापार आदि पर जलवायु का प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष प्रभाव पड़ता है। जलवायु से मनुष्य की शारीरिक एवं मानसिक क्षमतायें जुड़ी रहती हैं भारतीय कृषि जो भारत की अर्थव्यवस्था का प्रमुख आधार है का भविष्य

पूर्णतः मानसून पर निर्भर करता है। मानसून वह धुरी है जिसपर भारत का समस्त जीवन चक्र घूमता है क्योंकि वर्षा का अभाव अकेले कृषि को नष्ट नहीं करता है अपितु भारतीय किसान तथा देश के आर्थिक एवं सामाजिक जीवन को झकझोर देता है। इसलिए भारत सरकार का वित्त बजट मानसून बजट कहलाता है। टिट बैंक के शब्दों में 'जलवायु का आर्थिक क्रियाओं पर बहुत अधिक प्रभाव पड़ता है।'[12]

जनपद इटावा गंगा, यमुना दोआब में स्थित मानसूनी जलवायु वाला क्षेत्र है, जिसका कि प्रभाव यहां के निवासियों के रहन-सहन, क्रियाकलापों, व्यवसाय तथा कृषि पर स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होता है। जनपद इटावा का आर्थिक आधार कृषि है। जो कि मुख्य रूप से तापमान, वर्षा, वायुदाब पर निर्भर है। अतः प्रस्तुत अध्ययन क्षेत्र में जलवायु का अध्ययन अति आवश्यक है। चूंकि इटावा जनपद में वर्षा के अतिरिक्त जलवायु सम्बन्धी अन्य सूचनायें एकत्र नहीं की जाती हैं अतः प्रस्तुत विश्लेषण में वर्षा के अतिरिक्त अन्य सभी प्रकार की सूचनायें निकटतम भारतीय मौसम विज्ञान की बेधशाला मैनपुरी से प्राप्त की गई है।

अध्ययन के अन्तर्गत शोध क्षेत्र की जलवायु भारत के उत्तरी मैदानी भाग की जलवायु की विशेषताओं से युक्त है। इस आधार पर गंगा, यमुना दोआब के अन्य भू भागों की तरह भारतीय मौसम विभाग ने जनपद इटावा की जलवायु को निम्नलिखित चार ऋतुओं में विभाजित किया है।

1. ग्रीष्म ऋतु
2. वर्षा ऋतु
3. शरद ऋतु
4. शीत ऋतु

ग्रीष्म ऋतु:

मध्य मार्च से लेकर मध्य जून तक का समय ग्रीष्म ऋतु के अन्तर्गत आता है। फरवरी माह से उत्तरी भारत में तापमान में क्रमशः वृद्धि होने लगती है। जून माह में जिस समय सूर्य कर्क रेखा पर लम्बवत चमकता है, समस्त उत्तरी मैदानी भाग अत्याधिक गर्म हो जाता है एवं पूरे जनपद में भीषण गर्मी पड़ने लगती है। मई तथा जून का माह सबसे गर्म होता है तथा

अधिकतम औसत तापमान 45.8 डिग्री सें0ग्रे0 से अधिक रहता है। दिन में तेज धूप निकलती है एवं गर्म हवायें चलती हैं। जिन्हें स्थानीय भाषा में 'लू' कहते हैं। जून माह में अत्यधिक गर्मी के कारण भारत के उत्तर पश्चिम में निम्न वायुदाब केन्द्र स्थापित हो जाता है जिसका कि प्रभाव इस जनपद पर भी पड़ता है। इस समय यहां वर्ष का सबसे कम वायुदाब 980.88 मिलीबार रहता है। सम्पूर्ण उत्तरी भारत में इस ऋतु में मौसम शुष्क रहता है। मार्च के बाद मैदानी भागों में तापमान में तेजी से वृद्धि होती है। जबकि वायुमण्डल में आपेक्षित आद्रता बहुत ही कम पाई जाती है। भारतीय ऋतु बेधशाला मैनपुरी से उपलब्ध आपेक्षित आद्रता के आंकड़ों से स्पष्ट है कि अध्ययन क्षेत्र में मई माह में सबसे कम आपेक्षित आद्रता पाई जाती है। यह आपेक्षित आद्रता 29.00 प्रतिशत रिकार्ड की गयी है। जून माह से आपेक्षित आद्रता में क्रमशः वृद्धि होने लगती है। आपेक्षित आद्रता की कमी के कारण जनपद इटावा में ग्रीष्म काल में वर्षा बहुत कम होती है। जून माह में कुछ वर्षा होती है।

वर्षा ऋतु:

मध्य जून से मध्य सितम्बर तक का समय मानसून काल या वर्षा काल कहलाता है। जून की अत्याधिक गर्मी के बाद अचानक मानसून आ जाने से मौसम में भारी परिवर्तन होता है तथा गरज के साथ वर्षा प्रारम्भ हो जाती है। वर्षा अधिक होने के कारण ही इसे वर्षा ऋतु कहते हैं। जून के बाद उत्तरी भारत के मैदानी भाग में मानसून की सक्रियता देखने को मिलती है। मानसूनी वर्षा की वृद्धि के साथ-साथ जनपद के समस्त भागों का तापमान गिरने लगता है और तापमान में यह गिरावट क्रमशः दिसम्बर माह तक होती रहती है। ग्रीष्म काल में भारत के उत्तरी पश्चिमी भाग में निम्न वायुदाब केन्द्र स्थापित हो जाता है। इस समय हिन्द महासागर में उच्च वायुदाब होता है अतः मानसूनी हवायें हिन्द महासागर से उत्तर पश्चिम की ओर चलने लगती हैं। जून के आखिरी सप्ताह में यह मानसूनी हवायें समस्त जनपद में प्रवेश कर जाती हैं और वर्षा प्रारम्भ हो जाती है एवं जुलाई, अगस्त तथा सितम्बर माह में बादलों की गरज तथा बिजली की कड़क के साथ घनघोर वर्षा होती है। इस समय मानसून अधिक सक्रिय रहता है तथा जनपद की कुल वर्षा का लगभग 90 प्रतिशत भाग 5 माह में जून से

अक्टूबर तक इस जनपद को प्राप्त होता है। पूरे जनपद में ग्रीष्म कालीन वर्षा का वितरण लगभग समान है।

शरद ऋतु:

मध्य सितम्बर से मध्य नवम्बर तक का काल शरद ऋतु कहलाता है। सितम्बर के समाप्त होते ही सूर्य दक्षिणी गोलार्द्ध में प्रवेश कर जाता है। जिसके परिणामस्वरूप समस्त उत्तरी मैदानी भाग में तापमान में गिरावट प्रारम्भ हो जाती है। सितम्बर माह के बाद भारत के उत्तर पश्चिम में स्थित निम्न वायुदाब केन्द्र धीरे-धीरे उच्च वायुदाब केन्द्र में परिवर्तित होने लगता है। इस समय निम्न वायुदाब केन्द्र हिन्द महासागर में होता है जिसके परिणामस्वरूप इस समय हवा की दिशा परिवर्तित हो जाती है तथा उत्तरी पश्चिमी हवायें चलने लगती हैं। स्थल से आने के कारण ये हवायें शुष्क होती हैं तथा इनसे वर्षा बहुत कम होती है।

शीत ऋतु:

मध्य नवम्बर से लेकर मध्य मार्च तक का समय शीत ऋतु कहलाता है। यह जनपद का सबसे ठंडा मौसम है। जनवरी माह मौसम का सबसे ठंडा माह होता है। केन्ड्र्यू के अनुसार 'स्वच्छ आकाश, सुहावना मौसम, निम्न तापमान, साधारण आर्द्रता, सर्वाधिक दैनिक तापान्तर तथा धीमे चलने वाली उत्तरी हवायें इस माह की विशेषतायें हैं।' दिसम्बर माह में जिस समय सूर्य मकर रेखा पर लम्बवत चमकता है, भारत का समस्त उत्तरी मैदानी भाग अत्यधिक ठंडा हो जाता है जिसका प्रभाव जनपद इटावा के तापमान पर भी पडता है। जनपद में तापमान में गिरावट के साथ-साथ वायुदाब में भी वृद्धि होने लगती है तथा दिसम्बर एवं जनवरी में 1001 मिलीबार से भी अधिक वायुभार हो जाता है। सम्पूर्ण उत्तरी भारत में इस ऋतु में मौसम शुष्क रहता हैं । अक्टूबर माह से ही आसमान मेघ रहित होने लगता है चूंकि इस ऋतु में हवायें स्थलीय भाग से समुद्र की ओर चलती हैं अतः ये हवायें ठण्डी और शुष्क होती हैं तथा इनमें आर्द्रता की मात्रा बहुत कम होती है। आर्द्रता की कमी के कारण जनपद में इस ऋतृ में वर्षा बहुत ही कम होती है। इस ऋतृ में उत्तरी भारत में उत्तर पश्चिम से आनेवाले शीतोष्ण चक्रवातों द्वारा थोड़ी वर्षा हो जाती है जिसका प्रभाव इटावा पर भी पड़ता है। कभी-कभी ओले भी गिरते हैं।

मिट्टी:

विलकाक्स के अनुसार ' मानव सभ्यता का इतिहास मिट्टी का इतिहास है एवं एक व्यक्ति की शिक्षा मिट्टी से ही प्रारम्भ होती है।' इस कथन से मिट्टी का महत्व स्पष्ट है। मिट्टी भारतीय कृषक की अमूल्य संपदा है। यह मानव की प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से भोजन, वस्त्र एवं व्यवसाय जैसी मूल आवश्यकताओं का स्रोत है। मिट्टी किसी भी देश की सबसे महत्वपूर्ण राष्ट्रीय संपदा है। कृषि एवं पशुपालन जो शाकाहारी एवं मांसाहारी लोगों के जीवन का आधार है, मिट्टी पर निर्भर है। पृथ्वी के ऊपरी धरातल का कुछ सेन्टीमीटर से लेकर 3 मीटर तक की गहराई वाला भाग मिट्टी कहलाता है।[13] जिसका निर्माण शैलों की संरचना, धरातल की बनावट, जलवायुवीय दशाओं एवं जीवाष्म के विभिन्न रूपों में संयोजित होने से होता है। प्रस्तुत अध्ययन क्षेत्र जनपद इटावा एक कृषि प्रधान भू भाग है। जो कि मुख्य रूप से मिट्टी पर आधारित है। जनपद की 70 प्रतिशत से भी अधिक जनसंख्या कृषि व्यवसाय में लगी हुई है। अतः जनपद इटावा की मिट्टी का अध्ययन नितान्त आवश्यक है।

जनपद इटावा गंगा, यमुना दोआब के मैदानी भाग का एक अभिन्न अंग है। अतः जनपद के समस्त क्षेत्र में जलोढ़ मिट्टियां पाई जाती हैं। नदियों के समीपस्थ भागों में नवीन जलोढ़ मिट्टियां पाई जाती हैं जो कि वर्षाकाल में बाढ़ग्रस्त हो जाते हैं तथा नवीन जलोढ़ मिट्टियों का प्रतिवर्ष निक्षेपण होता रहता है। इन्हें 'खादर' नाम से पुकारते हैं। नदियों के दूरस्थ भागों में प्राचीन कांप मिट्टी से निर्मित अपेक्षाकृत ऊँचे भू भाग पाये जाते हैं। जिन्हें बांगर कहते हैं। सामान्यतः अध्ययन क्षेत्र में निम्नलिखित मिट्टियां पाई जाती हैं।

1. बलुई एवं बलुई चीकायुक्त मिट्टियां
2. हल्की बलुई दोमट मिट्टियां
    - अ. सेंगर यमुना की बलुई दोमट मिट्टियां
    - ब. ट्रान्स यमुना क्षेत्र की बलुई दोमट मिट्टियां
3. चीकायुक्त मिट्टियां
4. भारी दोमट मिट्टियां
5. बीहड़ मिट्टियां

2. आर्थिक स्थितिः

साख सुविधायें:

प्रत्येक आर्थिक क्रिया का वित्त से अविभाज्य सम्बन्ध होता है। क्योंकि वित्तीय आधार प्रत्येक क्रिया की एक महत्वपूर्ण पूर्वापेक्षा होती है। यह तथ्य कृषि के लिए भी समान रूप से लागू होता है। कृषकों को उर्वरक्, बीज, कृषि यन्त्र एवं कीटनाशक दवाइयां खरीदने, मजदूरी और लगान का भुगतान करने, भूमि में अधिक सुधार करने, विभिन्न उपभोग वस्तुओं की प्राप्ति एवं पुराने कणों के परिशोधनार्थ वित्त की आवश्यकता होती है। अधिकांश कृषक अपने निजी चालू आय स्रोतों द्वारा कृषिगत उक्त आवश्यकताओं की पूर्ति नहीं कर पाते हैं जिनके परिणामस्वरूप कृषि साख समस्या का उदय होता है। नियोजन काल में विविध रूप से कृषि की नवीन तकनीकी के प्रादुर्भाव के फलस्वरूप कृषि साख की मांग तीन प्रकार की होती है तथा खेती के चालू खर्चो तथा बीज, उर्वरक, मजदूरी आदि के लिए अल्पकालीन साख की आवश्यकता होती है। इसकी अवधि सामान्यतः 15 महीने तक होती है। कृषि के लिए उपयोगी पशु एवं कृषि उपकरण खरीदने तथा कुओं एवं बांधों की मरम्मत करने के लिए मध्य कालीन ऋण की आवश्यकता होती है। इसकी अवधि सामान्तया 3 से 5 वर्ष होती है, भूमि खरीदने, भूमि को कृषि योग्य बनाने, अधिक कीमत वाले कृषि यन्त्रों को खरीदने के लिए दीर्धकालीन साख की आवश्यकता होती है। इसकी अवधि 5 वर्ष से अधिक होती है।

सामान्यता कृषि साख की आपूर्ति करने वाले अभिकरणों को दो भागों में विभक्त किया जा सकता है, निजी या गैर संस्थागत श्रोत और संस्थागत श्रोत। भारत में दीर्घकाल तक कृषि साख संरचना में निजी श्रोतों जिन्हें गैर संस्थागत श्रोत कहा जाता है का ही वर्चस्व रहा है। ग्रामीण साहूकार महाजन सम्बन्धी भूस्वामी एवं दलाल इसके प्रमुख संघटक तत्व हैं। इनमें ग्रामीण महाजन, सम्बन्धी एवं व्यापारियों का विशेष महत्व रहा है। नियोजन काल में इसके महत्व में कमी आई है। अभी हाल तक इनका कृषि साख में महत्व इस कारण बना रहा क्योंकि इनकी कार्य पद्धति अत्यन्त लोचदार थी। निकट का सम्बन्ध होने के कारण वे ग्रामीण की समस्याओं और जरूरतों से भलीभांति अवगत थे तथा प्रत्येक कार्य के लिये उधार दे

देते थे। इनके नियम सरल एवं परिवर्तनशील थे। यहां जमानत अथवा किसी विशेष नियम का कोई महत्व नहीं हैं परन्तु कृषि साख प्रदान करने वाले निजी श्रोतों में कई दोष विद्यमान हैं। अत्याधिक ऊँची व्याज दर, ऋण के बदले में विभिन्न प्रकार के शोषण, निर्दयतापूर्वक वसूली आदि सामान्य बात है। इस कारण से संस्थागत कृषि साख की आवश्यकता का अनुभव किया जा रहा था।

सारणी क्रमांक 2.2: जनपद में विकासखण्ड वार प्रारम्भिक कृषि ऋण सहकारी समितियां (1991-1992)

विकास खण्ड	संख्या	सदस्यों की संख्या	अंशपूंजी (000रू0)	कार्यशील पूंजी (000रू0)	जमा धनराशि (000रू0)	अल्पकालीन ऋण (000रू0)
1. जसवन्तनगर	09	22024	1955	14610	520	6641
2. अढ़पुरा	10	9061	1212	8209	345	2926
3. बसरेहर	14	22487	2815	16650	410	8482
4. भरथना	04	12016	940	8503	560	3472
5. ताखा	03	9740	1101	6072	322	3040
6. महेवा	07	22194	2012	10320	501	6018
7. चकरनगर	10	12326	912	5180	320	808
8. अछल्दा	09	10826	901	6342	338	3352
9. बिधूना	09	14909	1644	8956	201	6616
10. ऐरवाकटरा	07	11971	2360	9293	728	3211
11. सहार	08	14164	1670	8515	435	5627
12. औरैया	17	15883	1350	9603	271	4104
13. अजीतमल	13	13463	1242	8892	403	3683
14. भाग्यनगर	13	16726	1344	9274	192	5986
योग ग्रामीण	133	207790	21458	130419	5546	3966
योग नगरीय	04	6542	445	4210	204	595
योग जनपद	137	214332	21903	134629	5750	64561

कृषि साख के संस्थागत श्रोतों में सरकार सहकारी समितियां और व्यापरिक बैंकों को मुख्यतः सम्मिलित किया जाता है, नियोजनकाल में

संस्थागत साख की मात्रा में प्रसार हुआ है, साख प्रदान करने की विधियों में सुधार हुआ है। अध्ययन क्षेत्र में साख सुविधाओं के अन्तर्गत संस्थागत क्षेत्रों में व्यापारिक बैंक, सहकारी साख तथा क्षेत्रीय ग्रामीण बैंकों द्वारा प्रदान की जानेवाली साख सुविधाओं की चर्चा करेंगें।

अ. सहकारी समितियां:

सहकारी साख समस्त संस्थागत श्रोतों में सबसे अधिक महत्वपूर्ण और उपयुक्त माना जाता है। सहकारी साख को कृषि साख के लिए सर्वाधिक उपयुक्त इस कारण माना गया है क्योंकि प्राथमिक सहकारी साख समितियों का कृषकों से प्रत्यक्ष अथवा अति निकट का सम्बन्ध होता है। सहकारी समितियों द्वारा कृषकों को अल्प और मध्यकालीन तथा भूमि विकास बैंकों के द्वारा दीर्घकालीन साख प्रदान की जाती है।

सारणी से स्पष्ट है कि जनपद में अल्प और मध्यकालीन साख प्रदान करनेवाली कृषि साख समितियों की संख्या 137 है, इनकी सदस्यों की संख्या 214332 है, जिनकी अंशपूंजी 21903 हजार रूपये है जबकि कार्यशील पूंजी 134629 हजार रूपये है। इन समितियों द्वारा कृषकों को वितरित वर्ष 1991-1992 अल्पकालीन ऋण 64561000 रू0 है। ऋण की सर्वाधिक मात्रा जसवन्तनगर विकासखण्ड में वितरित की गई जिसे 6641000 रू0 अल्पकालीन ऋण प्राप्त हुआ जबकि बिधूना विकासखण्ड इससे कुछ कम 6616000 रू0 ऋण प्राप्त कर रहा है। इन समितियों ने चकरनगर विकासखण्ड में न्यूनतम 808000 रू0 ऋण वितरित किया जबकि संख्या की दृष्टि से इस विकासखण्ड में 10 कृषि साख समितियां कार्यरत हैं। कृषि साख समितियों की संख्या की दृष्टि से ताखा विकासखण्ड का स्तर मात्र 3 कृषि साख समितियों तक सीमित है, परन्तु यह तीन समितियां अपने क्षेत्र में 304000 रू0 ऋण के रूप में वितरित करके अन्य विकास खण्डों की तुलना में अधिक पीछे नही हैं।

सारणी क्रमांक 2.3: जनपद में सहकारी बैंक तथा सहकारी कृषि एवं ग्रामीण विकास बैंक की स्थिति वर्ष (1991-1992)

क्र.सं.	मद	जिला सहकारी बैंक	सहकारी कृषि एवं ग्रामीण विकास बैंक
1.	शाखायें संख्या	24	4
2.	सदस्य संख्या	591	24365
3.	हिस्सा पूंजी (000रू0)	14999	6875
4.	क्रियाशील पूंजी (000रू0)	330402	112269
5.	वितरित ऋण (000रू0)		
	1. अल्पकालीन	49902	--
	2. मध्यकालीन	645	--
	3. दीर्घकालीन	--	27818

सारणी 2.3 जनपद में जिला सहकारी तथा सहकारी कृषि ग्रामीण विकास बैंक की स्थिति को दर्शा रही है। जिसके अनुसार वर्ष 1991-92 में जनपद में जिला सहकारी बैंक की कुल 24 शाखायें कार्यरत थीं जिसमें कि कुल 12 शाखायें ग्रामीण क्षेत्र में तथा 12 शाखायें शहरी क्षेत्र में विद्यमान थीं। इन शाखाओं ने सम्पूर्ण अध्ययन क्षेत्र में रू0 4990200.00 के अल्पकालीन तथा 645000.00 रू0 के मध्यकालीन ऋण वितरित किए गए थे। दीर्घकालीन ऋण वितरित करने वाले सहकारी कृषि एवं ग्रामीण विकास बैंक की कुल 4 शाखायें कार्यरत थीं जो तहसील मुख्यालय में स्थित हैं, जिन्होने वर्ष 1991-92 तक कुल 27818000.00 रू0 के दीर्घकालीन ऋण आवंटित किए हैं।

सारणी क्रमांक 2.4: जनपद में व्यवसायिक बैंकों में जमा धनराशि एवं ऋण वितरण (हजार रूपये)

क्र.सं.	मद	1991-92
1.	जमा धनराशि	2276941
2.	कुल ऋण वितरण	1040307
3.	जमा धनराशि पर ऋण वितरण का प्रतिशत	45.68
4.	प्राथमिकता क्षेत्र में ऋण वितरण	
(अ)	कृषि एवं कृषि से सम्बन्धित कार्य	568496
(ब)	लघु उद्योग	139091
(स)	अन्य प्रभावित क्षेत्र	168016
5.	कुल ऋण वितरण में प्राथमिकता क्षेत्र का प्रतिशत	84.17
6.	प्रति व्यक्ति जमा धनराशि (रू0)	1078
7.	प्रति व्यक्ति ऋण वितरण (रू0)	492
8.	प्रति व्यक्ति प्राथमिकता क्षेत्र में ऋण वितरण (रू0)	414

सारणी 2.4 से स्पष्ट है कि व्यवसायिक बैंकों की स्थिति अब पहले की अपेक्षा ग्रामीण तथा प्राथमिकता क्षेत्रों के लिए निरन्तर अच्छी होती जा रही है। ग्रामीण क्षेत्रों में इनके शाखा विस्तार का प्रभाव न केवल कृषि क्षेत्र के लिए साख समस्यायें सुलझाने पर ही पड़ा है अपितु इस क्षेत्र में लोगों में बैंकिग आदतों को डालने पर भी पड़ा है, यही कारण है कि ग्रामीण क्षेत्रों में जमा धनराशि में तेजी से वृद्धि हो रही है। यद्यपि अभी तक जमा धनराशि को केवल 45.68 प्रतिशत भाग को ही ऋणों के रूप में परिवर्तित किया जा सका है, परन्तु ऋणों में प्राथमिकता क्षेत्र का 84.17 प्रतिशत हिस्सा निर्बल क्षेत्रों के प्रोत्साहन का प्रतीक है।

सारणी क्रमांक 2.5: विकासखण्ड वार व्यवसायिक बैंकों तथा ग्रामीण बैंक शाखाओं की संख्या 1991-1992

विकासखण्ड	व्यवसायिक बैंक शाखायें	क्षेत्रीय ग्रामीण शाखायें	बैंक योग
1. जसवन्त नगर	2	6	8
2. बढ़पुरा	2	3	5
3. बसरेहर	2	4	6
4. भरथना	1	4	5
5. ताखा	2	3	5
6. महेवा	3	4	7
7. चकरनगर	3	1	4
8. अछल्दा	2	3	5
9. बिधूना	1	3	4
10. एरवाकटरा	1	4	5
11. सहार	2	3	5
12. औरैया	1	4	5
13. अजीतमल	2	1	3
14. भाग्यनगर	3	2	5
योग ग्रामीण	27	45	72
योग नगरीय	29	8	37
योग जनपद	56	53	109

सारणी 2.5 से स्पष्ट है कि जनपद में कुल 109 बैंक शाखायें कार्यरत हैं, जिनमें से 72 शाखायें ग्रामीण क्षेत्र में तथा 37 शाखायें शहरी क्षेत्र में विद्यमान हैं। व्यवसायिक बैंकों में केवल 27 शाखायें ग्रामीण क्षेत्र में वित्तीय सुविधायें उपलब्ध करवा रही हैं। जबकि 29 शाखायें शहरी क्षेत्र

में यह सुविधा उपलब्ध करवा रही हैं। जबकि ग्रामीण बैंक अपने नाम को सार्थक करते हुए इसकी 45 शाखायें ग्रामीण क्षेत्रों में कार्यरत हैं और मात्र 8 शाखायें शहरी क्षेत्रों में क्रियाशील हैं। विकासखण्ड स्तर पर सर्वाधिक बैंकिंग सुविधाओं से युक्त जसवन्तनगर विकासखण्ड है जहां पर 8 शाखायें वित्तीय सुविधायें उपलब्ध करवा रही हैं। दूसरा तथा तीसरा स्थान महेवा जहां पर 7 शाखायें तथा बसरेहर में 6 शाखायें रखकर यह कार्य पूरा कर रहे हैं। 5 शाखाओं वाले विकासखण्ड बढ़पुरा, भरथना, ताखा, अछल्दा, ऐरवाकटरा, सहार, औरैया तथा भाग्य नगर हैं। चकरनगर तथा बिधूना 4–4 बैंक शाखाओं से तथा जबकि अजीतमल विकासखण्ड मात्र 3 शाखाओं से ही अपना वित्तीय कार्य सम्पन्न कर रहा है।

भण्डारण और विपणन सुविधायें:

विपणन वह मानवीय क्रिया है जो विनिमय प्रक्रिया द्वारा मनुष्य की आवश्यकताओं को संतुष्ट करती है। विपणन में वे सभी क्रियायें संलग्न होती हैं जो वस्तुओं और सेवाओं को उचित समय पर तथा उचित मात्रा में उपभोक्ताओं तक पहुंचाकर उनकी उपयोगिता में वृद्धि करती हैं। विपणन संरचना में वस्तुओं और सेवाओं का संग्रह श्रेणीकरण, वित्त व्यवस्था, यातायात तथा बिक्री की क्रियायें सम्मिलित होती हैं। विपणन क्रिया आर्थिक विकास का एक प्रमुख प्रेरक तत्व है। विपणन और बाजार अवसरों का प्रसार पिछड़े एवं उपेक्षित क्षेत्रों में भी नवीन आर्थिक क्रियाओं का सृजन और प्रसार में सहायक होता है। कृषि विपणन उत्पादकों एवं उपभोकताओं के हितों की सुरक्षा करता है।

कृषि विपणन आर्थिक विकास को त्वरित व वांछित कर सकता हैं। यह कृषकों की आय और उपभोकताओं की संतुष्टि बढ़ाने का एक प्रमुख साधन है। प्रत्येक अर्थव्यवस्था में कृषिगत विपणन योग्य अतिरेक एकत्र करने के लिए विपणन संरचना का प्रभावी और सक्षम होना आवश्यक है। एक सक्षम विपणन तन्त्र की कमी की स्थिति में कृषि उत्पादन, वित्त वितरण और उपभोग की सार्थक प्रवृत्ति पूरी न हो सकेगी। अध्ययन क्षेत्र मूलतः कृषि प्रधान है, अतः अध्ययन क्षेत्र की विपणन संरचना की अब हम व्याख्या करेगें।

सारणी 2.6 जनपद में विकासखण्ड स्तर पर भण्डारण सुविधाओं को प्रकाशित कर रही है जिसके अनुसार जनपद में कुल 97 बीज भण्डार स्थापित किए गए हैं। जिनमें 63 बीज भण्डार ग्रामीण क्षेत्रों में तथा 34 बीज भण्डार शहरी क्षेत्रों में स्थापित हैं। जिनकी भण्डारण क्षमता 17152 मी0 टन है। इस प्रकार उर्वरक भण्डार 134 कार्यरत हैं जिनकी क्षमता 15480 मी0 टन है । इस क्षमता में 14680 टन ग्रामीण क्षेत्र में तथा 800 मी0 टन नगरीय क्षेत्रों में स्थित है। कीटनाशक डिपो ग्रामीण क्षेत्र में 6 तथा शहरी क्षेत्र में 9 स्थापित किए गए है जिनकी भण्डारण क्षमता 975 मी0 टन है। ग्रामीण क्षेत्र में बढ़पुरा, बसरेहर, ताखा, चकरनगर, एरवाकटरा तथा सहार विकासखण्ड यह सुविधा रख पा रहे हैं, जबकि अन्य विकासखण्ड इस सुविधा से वंचित हैं। जनपद की शीत भण्डारण क्षमता कुल 131028 मी0 टन है जिसमें 25168 मी0 टन ग्रामीण क्षेत्र तथा 95860 मी0 टन शहरी क्षेत्र में स्थित हैं। कुल 22 शीत भण्डारों में 7 ग्रामीण तथा 8 शहरी क्षेत्रों में स्थित है। ग्रामीण क्षेत्र में जसवन्तनगर तथा भाग्यनगर विकासखण्डों में दो-दो शीत भण्डार है जबकि भरथना, सहार एवं अजीतमल विकासखण्डों में एक-एक शीत भण्डार स्थापित किये हुये हैं।

सारणी क्रमांक 2.6: विकास खण्डवार भण्डारण एवं विणन सुविधायें वर्ष 1991-1992

विकासखण्ड	बीज गोदाम		उर्वरक भण्डार		कीटनाशक डिपो		शीत भण्डार	
	संख्या	क्षमता(मी0टन)	संख्या	क्षमता(मी0टन)	संख्या	क्षमता(मी0टन)	संख्या	क्षमता(मी0टन)
1. जसवन्तनगर	5	532	9	1440	–	–	2	9676
2. बढ़पुरा	6	556	9	1440	1	59	–	–
3. बसरेहर	6	533	14	1800	1	60	–	–
4. भरथना	3	450	4	480	–	–	1	8006
5. ताखा	5	382	3	400	1	36	–	–
6. महेवा	4	610	6	1020	–	–	–	–
7. चकरनगर	3	300	10	1000	1	60	–	–
8. अछल्दा	4	432	8	800	–	–	–	–
9. बिधूना	3	335	9	900	–	–	–	–
10. एरवाकटरा	6	755	7	700	1	76	–	–
11. सहार	6	630	8	800	1	70	1	4775
12. औरैया	6	640	16	1600	–	–	–	–
13. अजीतमल	3	270	11	1100	–	–	1	645
14. भाग्यनगर	3	316	12	1200	–	–	2	6257
योग ग्रामीण	63	6741	126	14680	6	361	7	35168
योग नगरीय	34	10411	8	800	9	614	15	95860
योग जनपदीय	97	17152	134	1548	15	975	22	131028

सारणी क्रमांक 2.7: जनपद में खाद्यान्न भण्डारण क्षमता तथा अन्य सुविधायें वर्ष 1991-92

क्र.सं.	संख्या	क्षमता (मी0 टन)
1. भारतीय खाद्य निगम	1	2500
2. केन्द्रीय भण्डारागार निगम	1	25960
3. राज्य भण्डारागार	5	36731
4. बीज वृद्धि फार्म	1	--
5. कृषि सेवा केन्द्र	16	--
6. कृषि उत्पादन मण्डी समिति	6	--

सारणी 2.7 में जनपद में खाद्यान्न भण्डारण तथा कुछ अन्य सुविधाओं का वर्णन किया गया है। जिसके अनुसार जनपद में कुल 7 खाद्यान्न भण्डार स्थापित हैं जिनकी भण्डारण क्षमता 65191 मी0 टन है। बीज वृद्धि फार्म केवल एक है जो कि जसवन्तनगर विकासखण्ड मुख्यालय में स्थित है। कृषि सेवा केन्द्रों की संख्या कुल 16 है जिनमें से एक एग्रो द्वारा संचालित है और यह इटावा में स्थित है शेष अन्य कृषि सेवा केन्द्रों में से 2 बसरेहर, ताखा में 1, महेवा में 3 तथा चकरनगर में 2 कृषि सेवा केन्द्र स्थित हैं। अन्य 8 शहरी क्षेत्रों में स्थित हैं।

सारणी 2.8 : जनपद में सहकारी विपणन समितियां 1991-92

मद	संख्या	सदस्य सं.	कार्यशील पूंजी (रू0 में)	विक्रय मूल्य (रू0 में)
1. क्रय-विक्रय सहकारी समितियां	7	44056	-	42941
2. प्रारम्भिक दुग्ध उत्पादक सहकारी समितियां	174	9048	635000	17167
3. मत्स्य सहकारी समितियां	9	532	483000	841
4. बुनकरों की प्रारम्भिक औद्योगिक सहकारी समितियां	230	2985	21357	71870

सारणी 2.8 जनपद में सहकारी समितियों का विवरण प्रस्तुत कर रही है। जनपद में क्रय-विक्रय सहकारी समितियों की संख्या 7 है जो 4 करोड़ रूपये से भी अधिक का व्यवसाय कर रही है। दुग्ध उत्पादक सहकारी समितियां 17 करोड़ से भी अधिक का व्यवसाय कर रही हैं। मत्स्य सहकारी समितियां 8 लाख से भी अधिक का व्यवसाय कर रही हैं जबकि बुनकरों की समितियां 7 करोड़ से भी अधिक का वस्त्र बेंच रही हैं। इसके अतिरिक्त ग्रामीण क्षेत्र में विभिन्न ग्रामों में 85 हाट बाजार सप्ताह में एक या एक से अधिकतर क्रय-विक्रय का कार्य सम्पन्न कर रहे हैं।

परिवहन एवं संचार सुविधायें:

कृषि उत्पादनों का क्रय-विक्रय जीवनयापन की अनिवार्यता है। लोग अपनी आय का एक बड़ा भाग खाद्यान्नों अथवा अन्य कृषि उत्पादों को खरीदने में व्यय करते हैं। गांवों, कस्बों और नगरों में स्थित मण्डियों तथा क्रय विक्रय के लिए माल की उपलब्धता परिवहन सुविधाओं पर निर्भर करती है। क्योंकि कृषिजन्य वस्तुओं की उत्पादन संरचना में अत्याधिक क्षेत्रीय विषमता होती है। कोई धान बाहुल्य क्षेत्र है तो कोई गेहूं बाहुल्य। जबकि कमोबेश मात्रा में प्रत्येक कृषि उत्पादन की मांग समस्त क्षेत्रों में होती है। इस कारण क्षेत्र में विभिन्न परिवहन के साधनों का महत्वपूर्ण स्थान होता है। सड़क परिवहन का किसानों को विशेष रूप से लाभ है। अच्छी सड़कों के द्वारा किसान अपना उत्पादन विशेषतः नाशवान वस्तुयें जैसे- सब्जियां आसानी से मण्डियों और शहरों तक ला सकते हैं। क्रान्ति के सन्दर्भ में सड़क परिवहन का महत्व और भी अधिक हो गया है। सड़क परिवहन के विकास द्वारा ही किसानों को एक विश्वसनीय मण्डी उपलब्ध कराई जा सकती है। वर्षा ऋतु के मौसम में तो बिना अच्छी सड़कों के किसानों को अपने ग्रामों सें बाहर जाना असम्भव सा हो जाता है।

अ. रेल परिवहन:

अध्ययन क्षेत्र में रेल परिवहन तथा सड़क परिवहन दोनों ही प्रकार की यातायात सुविधायें उपलबध हैं। रेल परिवहन के रूप में दिल्ली-हावड़ा बड़ी रेल लाइन (उत्तर प्रदेश) अध्ययन क्षेत्र को लगभग मध्य से विभाजित करती है, और यह कंचौसी रेलवे स्टेशन से बलरई रेलवे स्टेशन तक अध्ययन क्षेत्र

से होकर गुजरती है, जिसपर हाल्ट सहित 14 स्टेशन स्थित हैं। इस रेलवे लाइन की अध्ययन क्षेत्र में कुल लम्बाई 89 किलोमीटर है। 14 स्टेशनों में कंचौसी, फफूंद, पाता, अछल्दा, साम्हो, भरथना, इकदिल, इटावा, सराय, भूपत, जसवन्तनगर तथा बलरई प्रमुख स्टेशनों के अतिरिक्त 3 ब्लाक हट स्टेशन स्थित हैं। इन स्टेशनों में इटावा तथा फफूंद स्टेशन अत्याधिक महत्वपूर्ण है। जहां पर साधारण सवारी गाड़ियों के अतिरिक्त अनेक तीव्रगामी एक्सप्रेस सवारी गाड़ियों के रूकने की व्यवस्था है। इसके अतिरिक्त अछल्दा, भरथना तथा जसवन्तनगर में साधारण सवारी गाड़ियों के अतिरिक्त कुछ तीव्रगामी सवारी गाड़ियां भी रूकती हैं तथा इसके अतिरिक्त अन्य स्टेशनों पर साधारण सवारी गाडियां ही रूकती हैं।

ब. सड़क परिवहन:

अध्ययन क्षेत्र में सड़कें परिवहन की सर्वाधिक महत्वपूर्ण साधन हैं। सड़कों में मुगल रोड, जो औरैया विकासखण्ड के भाऊपुर ग्राम में प्रवेश करके जसवन्तनगर विकासखण्ड के बाद फिरोजाबाद जिले में प्रवेश करती है, सर्वाधिक महत्वपूर्ण है, जिसकी लम्बाई अध्ययन क्षेत्र में लगभग 96 किलोमीटर है। यह सड़क औरैया, अजीतमल, महेवा, बढ़पुरा तथा जसवन्तनगर विकासखण्डों से होकर गुजरती है। यह राष्ट्रीय राजमार्ग (NH2) की श्रेणी में आती है।

सारणी 2.9: जनपद में पक्की सड़कों की लम्बाई किलोमीटर वर्ष (1991-92)

क्र.सं.	मद	पक्की सड़कों की लम्बाई किलोमीटर में
1.	सार्वजनिक निर्माण विभाग के अन्तर्गत	
	(अ) राष्ट्रीय राजमार्ग	96
	(ब) प्रादेशिक राजमार्ग	994
	योग	1090
2.	स्थानीय निकायों के अन्तर्गत	
	(अ) जिला परिषद	48
	(ब) नगर पालिका/ नगर क्षेत्र समिति	51
	योग	99
	कुल योग	1189

सारणी 2.9 जनपद में सड़क परिवहन व्यवस्था का परिदृश्य प्रस्तुत कर रही है जिसमें राष्ट्रीय राजमार्ग की लम्बाई 96 किलोमीटर तथा प्रादेशिक राजमार्ग की लम्बाई 994 किलोमीटर है। इस प्रकार सार्वजनिक निर्माण विभाग द्वारा कुल 1090 किलोमीटर पक्की सड़कों का निर्माण किया जा चुका है। स्थानीय प्रशासन द्वारा कुल 99 किलोमीटर पक्की सड़कों का रख रखाव किया जाता है। इस प्रकार कुल 1189 किलोमीटर पक्की सड़कों का अब तक अध्ययन क्षेत्र में निर्माण हो चुका है।

सारणी 2.10 जनपद में विकासखण्ड स्तर पर सड़क परिवहन सुविधाओं की ओर संकेत कर रही है, जिसके अनुसार इटावा तहसील के अन्तर्गत स्थित तीनों विकासखण्डों जसवन्तजगर, बढ़पुरा तथा बसरेहर के अन्तर्गत आने वाले 52.86 प्रतिशत से लेकर 55.81 प्रतिशत गांव पक्की सड़कों से जोड़े जा चुके हैं। इन विकासखण्डों से होकर पक्की सड़कों में इटावा – मैनपुरी, इटावा – फर्रुखाबाद, इटावा – औरैया, इटावा – आगरा वाया उदी वाह प्रमुख सड़के हैं। विधूना तहसील के अन्तर्गत स्थित चारों विकासखण्डों में आने वाले गांवों की संख्या न्यूनतम है जो कि पक्की सड़क सुविधा का लाभ उठा रहे हैं और इन विकासखण्डों अछल्दा, विधूना, एरवाकटरा तथा सहार में स्थित 26.60 प्रतिशत से लेकर 35.51 प्रतिशत गांव इस सुविधा से युक्त हो पाये हैं। भरथना तहसील में स्थित चारों विकासखण्ड भरथना, ताखा, महेवा तथा चकरनगर अपने क्षेत्र में स्थित 27.63 प्रतिशत से 41.27 प्रतिशत गांवों को सड़क सुविधा उपलब्ध करवा सके हैं जबकि औरैया तहसील के विकासखण्ड औरैया, अजीतमल तथा भाग्यनगर 27.50 प्रतिशत से 40.27 प्रतिशत तक गांवों को पक्की सड़क से जोड़ सके हैं। समग्र रूप से यदि देखा जाये तो सहार विकासखण्ड 26.60 प्रतिशत गांवों को पक्की सड़क से जोड़कर सड़क सुविधा के न्यूनतम स्तर को प्रदर्शित कर रहा है। जबकि जसवन्तनगर 55.81 प्रतिशत गांवों को यह सुविधा देकर उच्चतम स्तर को दर्शा रहा है।

सारणी 2.10: विकासखण्डवार पक्की सड़कों की लम्बाई किलोमीटर में

विकासखण्ड	कुल लम्बाई	सा0नि0वि0 केअन्तर्गत	सब ऋतुओं से जुड़े ग्रामों की संख्या		
			1000 से कम जनसंख्या वाले गांव	1000 से 1500 जनसंख्या वाले गांव	1500 से अधिक जनसंख्या वाले गांव
1. जसवन्तनगर	158	155	25	23	24
2. बढ़पुरा	107	106	21	09	16
3. बसरेहर	123	118	25	25	24
4. भरथना	53	53	08	04	16
5. ताखा	45	39	12	04	05
6. महेवा	77	77	18	07	18
7. चकरनगर	75	75	08	09	09
8. अछल्दा	44	43	14	11	13
9. विधूना	82	74	11	07	15
10. एरवाकटरा	48	48	14	05	09
11. सहार	37	37	11	04	10
12. औरैया	94	91	29	18	13
13. अजीतमल	89	85	22	10	13
14. भाग्य नगर	78	57	10	12	11
योग ग्रामीण	1110	1062	228	148	196
योग नगरीय	79	28	--	--	--
योग जनपद	1189	1090	228	148	196

भरथना तहसील की पक्की सड़कों में निम्नलिखित प्रमुख सड़क हैं।

1. भरथना - ऊसराहार जो कि किशनी बिधूना पक्की सड़क से ऊसराहार कस्बे में मिलती है।
2. भरथ्ना - विधूना
3. भरथना - सिण्डौस वाया बकेवर, लखना, चकरनगर।
4. चकरनगर - ऊदी
5. इटावा - औरैया मुगल रोड
6. महेवा - निवाड़ी - अछल्दा

विधूना तहसील की पक्की सड़कों में निम्नलिखित प्रमुख सड़क हैं।

1. विधूना - औरैया वाया अछल्दा - फफूंद
2. विधूना - किशनी वाया एरवाकटरा

3. एरवाकटरा – छिबरामऊ

4. विधूना – कानुपर वाया बेला रसूलाबाद

5. औरैया – कन्नौज वाया तिर्वा

6. दिबियापुर – रसूलाबाद वाया सहायल

7. विधूना – सहार जो औरैया कन्नौज मार्ग पर सहार विकास खण्ड मुख्यालय पर मिलती है।

8. फफूंद – रामगढ़ वाया पाता

औरैया तहसील की पक्की सड़कों में निम्नलिखित प्रमुख सड़क हैं।

1. औरैया – कन्नौज

2. इटावा – औरैया – कानपूर मुगल रोड

3. औरैया – ज़ालौन

4. औरैया – विधूना वाया फफूंद , अछल्दा

5. बाबरपुर – दिबियापुर वाया फफूंद

6. ककोर – रसूलाबाद वाया कंचौसी।

इटावा तहसील की पक्की सड़कों में निम्नलिखित प्रमुख सड़क हैं।

1. इटावा – आगरा मुगल रोड

2. इटावा – फर्रुखाबाद – बरेली

3. इटावा – मैनपुरी – दिल्ली

4. इटावा – भिण्ड – ग्वालियर

5. इटावा – आगरा वाया ऊदी वाह

6. इटावा – औरैया मुगल रोड

उच्च प्रमुख सड़कों के अतिरिक्त अन्य अनेक पक्के ग्रामीण सम्पर्क मार्गो का निर्माण किया जा चुका है। जिससे विभिन्न गांवों की जनसंख्या कस्बों और शहरों के सम्पर्क में आती है तथा अपनी कृषि उपज को एक स्थान से दूसरे स्थान को लाती ले जाती हैं।

औद्योगिक स्थिति:

अर्थव्यवस्था की औद्योगिक संरचना में सार्वजनिक सहकारी एवं निजी क्षेत्र के बड़े उद्योगों के साथ- साथ कुटीर एवं लघु उद्योगों को भी सम्मिलित किया जाता है। लघु एवं कुटीर उद्योगों में पूंजी की अपेक्षा श्रम का प्रयोग

अधिक होता है। इनका उत्पादन अपेक्षाकृत सीमित क्षेत्रों के लिए होता है। अत्यन्त सरल रूप में कहा जा सकता है कि कुटीर उद्योग अत्यन्त छोटे आकार के होते हैं। पारम्परिक ढंग से पारम्परिक वस्तुओं का निर्माण किया जाता है। किराये के श्रमिकों का या तो प्रयोग नहीं किया जाता है या अत्यन्त कम होता है। इनकी उत्पादन प्रक्रिया में स्थानीय कच्चे पदार्थों का उपयोग होता है, लघु उद्योगों में विनियोजित राशि तो अधिक है ही, साथ ही साथ वे मशीनों से अपेक्षाकृत अधिक विस्तृत बाजार के लिए उत्पादन करते हैं। वस्तुतः लघु उद्योगों की अवधारणा में ही कुटीर उद्योगों की संकल्पना समाहित है। अध्ययन क्षेत्र में औद्योगिक स्थिति को सारणी 2.11 में दर्शाया गया है।

सारणी 2.11 तथा 2.12 में दर्शाया गया है कि जनपद में कारखाना अधिनियम 1948 के अन्तर्गत पंजीकृत कारखानों की संख्या 92 रही परन्तु इसमें से 67 कारखाना ही 1987-88 में कार्यरत थे, जिनमें 2140 श्रमिक कार्यरत रहकर 17 करोड़ रूपये से अधिक मूल्य का उत्पादन कर रहे थे।

सारणी 2.11: जनपद का औद्योगिक परिदृश्य 1987-88

क्र.सं.	विवरण	संख्या
1.	पंजीकृत कारखाना	92
2.	कार्यरत कारखाना	67
3.	औसत दैनिक कार्यरत श्रमिक एवं कर्मचारियों की संख्या	2140
4.	उत्पादन मूल्य (हजार रूपये)	173400

सारणी 2.12: जनपद में ग्रामीण एवं लघु उद्योग

क्र.सं.	विवरण	औद्योगिक इकाइयों की संख्या
1.	खादी उद्योग द्वारा प्रवर्तित उद्योग	65
2.	लघु इकाइयां	
	(अ) इन्जीनियरिंग	120
	(ब) रासायनिक	9
	(स) हथकरघा की इकाइयां	401
	(द) अन्य	368
	योग ग्रामीण एवं लघु उद्योग	963
3.	कार्यरत व्यक्तियों की संख्या	2142

सारणी 2.12 में ग्रामीण एवं लघु उद्योगों का विवरण दिया गया है। जिसके अनुसार खादी एवं ग्रामोद्योग द्वारा 65 इकाईयां स्थापित की जा चुकी हैं। लघु इकाईयों की कार्यरत संख्या 898 है, जिसमें से 120 इन्जीनियरिंग की, 9 रासायनिक, हथकरघा इकाईयों की संख्या 401 तथा अन्य इकाईयों की संख्या 368 हैं जिनमें कुल 2142 श्रमिक रोजगार पाये हुये हैं।

इसके अतिरिक्त वर्ष 1988 में जजपद मुख्यालय में औद्योगिक आस्थान स्थापित किया गया था। वर्ष 1992 तक अन्य तीन औद्योगिक आस्थानों की स्थापना तहसील मुख्यालयों पर की जा चुकी है जिनमें उक्त वर्ष तक 10 शेडों को आवंटित किया जा चुका था। इन औद्योगिक आस्थानों में 39 प्लाटों को आवंटित किया गया जिनमें से 17 प्लाटों पर लघु औद्योगिक इकाइयों की स्थापना की जा चुकी है और इन इकाइयों में लगभग 2000 व्यक्ति रोजगार प्राप्त कर चुके हैं। इन इकाइयों द्वारा किए गए उत्पादन का मूल्य वर्ष 1991-92 में लगभग 1430000 रूपये का हुआ।

3. सामाजिक स्थिति

जनांकिकीय संक्रमण के सिद्धान्त में आर्थिक विकास से सम्बन्धित जन्म और मृत्यु दरों की तीन अवस्थाओं को स्वीकार किया गया हैं प्रथम अवस्था में निम्न स्तरीय भोजन, अविकसित सफाई व्यवस्था और प्रभावशाली चिकित्सा सहायता के अभाव के कारण कृषि अर्थव्यवस्था की यह अवस्था ऊँची मृत्युदर वाली होती है। इस अवस्था में व्यापक, निरक्षरता, परिवार नियोजन के तरीकों के विषय में ज्ञान का अभाव, छोटी आयु में विवाह, परिवार के आकार के विषय में दृढ़ सामाजिक विश्वासों और प्रथाओं तथा बच्चों के प्रति मनोभाव इत्यादि के कारण जन्मदर ऊँची होती है। इसके अतिरिक्त आदिम कालीन समाज में बड़े परिवार के आर्थिक लाभ भी होते हैं। बच्चे छोटी अवस्था से ही परिवार के कार्य में हाथ बंटाने लगते हैं और माता-पिता के लिए बुढ़ापे में सुरक्षा के परम्परागत श्रोत होते हैं। मृत्यु की विशेषतः शिशु मृत्यु की ऊँची दर से यह संकेत मिलता है कि अधिक बच्चे उत्पन्न करके ही उक्त सुरक्षा व्यवस्था की जा सकती है। ऐसे समाज में जनसंख्या वृद्धि दर वास्तव में अधिक ऊँची नहीं होती क्योंकि उच्च जन्म दर को उच्च मृत्यु दर संतुलित कर देती है। यह अवस्था अधिक जन्म वृद्धि की सम्भावना अवस्था है किन्तु इसमें वास्तविक जनसंख्या वृद्धि कम होती है।

द्वितीय अवस्था में आय के स्तर में वृद्धि के परिणामस्वरूप जनता अपने भोजन में सुधार करने के योग्य हो जाती है। आर्थिक विकास के कारण सर्वांगीण विकास होना है जिसमें परिवहन का सुधार भी समाविष्ट है। परिवहन के विकास के फलस्वरूप खाद्य संभरण नियमित हो जाता है। इन सब कारणों से मृत्युदर कम हो जाती है। इस प्रकार इस अवस्था में जन्म दर ऊँची रहती है किन्तु मृत्यु दर में तीव्र गिरावट आने लगती है जिसके कारण जनसंख्या वृद्धि की दर बढ़ जाती है। मृत्यु दर में कमी के कारण प्रथम अवस्था की उच्च जनवृद्धि की सम्भावना द्वितीय अवस्था में उच्च वास्तविक वृद्धि बनकर प्रकट होती है। उच्च जन्म दर और घटती मृत्यु दर के कारण द्वितीय अवस्था में परिवार का औसत आकार बड़ा हो जाता है।

तृतीय अवस्था में आर्थिक विकास के कारण अर्थव्यवस्था का स्वरूप कृषक से परिवर्तित होकर अंशतः औद्योगिक हो जाता है। औद्योगीकरण में

वृद्धि के परिणामस्वरूप जनसंख्या ग्रामीण क्षेत्रों से औद्योगिक और वाणिज्यक केन्द्रों की ओर स्थानान्तरित होने लगती है। शहरी जनसंख्या में वृद्धि और स्त्रियों के लिए घर से बाहर आर्थिक कार्यों के विकास के परिणामस्वरूप आर्थिक गतिशीलता की सम्भावना बढ़ जाती है। जिसे छोटे परिवारों के सहारे भलीभांति प्राप्त किया जा सकता है। परिणामतः बड़े परिवार की लाभकारिता कम हो जाती है। आर्थिक विकास का एक लक्षण विशेष रूप से बढ़ता हुआ नगरीकरण है और ग्रामों के विपरीत नगरों में बच्चे अमूल्य निधि नहीं भार समझे जाते हैं। उचित जीवन स्तर बनाये रखने की चेतना औद्योगिक अर्थव्यवस्था में परिवार छोटा करने की प्रेरणा देती है, इस प्रकार इस अवस्था की विशेषतायें निम्न जन्मदर, छोटा परिवार, और जनसंख्या वृद्धि की निम्न दर के कारण जनसंख्या में कमी की अवस्था है।

इन तीन अवस्थाओं में उच्च जन्म दर और उच्च मृत्युदर वाली अर्थव्यवस्था का निम्न जन्मदर और निम्न मृत्युदर वाली अर्थव्यवस्था में रूपान्तर व्यक्त होता है। जब कोई अर्थव्यवस्था जनांकिकीय संक्रमण की प्रथम अवस्था से द्वितीय अवस्था में प्रवेश करती है तो घटती हुई मृत्यु दर किन्तु अपेक्षाकृत स्थिर जन्मदर के कारण उसमें असंतुलन उत्पन्न हो जाता है। ऐतिहासिक दृष्टि से यह देखा गया है कि मृत्युदर का नियन्त्रण अपेक्षाकृत सरल है क्योंकि मृत्युदर घटाने के उपाय वाह्यजात होने के कारण जनता उन्हें तत्परतापूर्वक स्वीकार कर लेती है। किन्तु जन्मदर में कमी के लिए अन्तर्जात तत्वों को परिवर्तित करना पड़ता है। इसके लिए सामाजिक मनोवृत्तियां और प्रथाओं तथा परिवार के आकार और विवाह आदि के सम्बन्ध में विश्वास और सिद्धान्तों में परिवर्तन करना आवश्यक है। मृत्युदर में कमी की अपेक्षा इसके लिए अधिक समय अपेक्षित होता है इससे जन्मदर में गिरावट देर से आती हैं। इसलिए जनांकिकीय विकास की दूसरी अवस्था में जनसंख्या विस्फोट की अवस्था कहा गया है। विकासमान अर्थव्यवस्था के लिए यह अवस्था सर्वाधिक संकटमय होती है। इसलिए द्वितीय अवस्था में मृत्युदर में कमी होने के कारण असंतुलन उत्पन्न हो जाता है जिसे सुधारने के लिए संक्रमण की अवधि अपेक्षित होती है। संक्रमण काल में जनांकिकीय तत्वों में असामंजस्य उत्पन्न हो जाता है। नये जनांकिकीय तत्व उपस्थित होते हैं जो समाज का रूप परिवर्तित कर देते हैं। जन्मदर और मृत्युदर निम्न स्तर पर संतुलित हो जाती है जिसके परिणामस्वरूप जनसंख्या वृद्धि की दर भी

कम हो जाती है। इस प्रकार किसी समाज के लिए जनांकिकीय विकास का निर्णय परिवार के आकार और जनसंख्या में वृद्धि की दर के सम्बन्ध में जन्म और मृत्यु के स्तर और परिवर्तनों के रूप में किया जा सकता है।

जनसंख्या:

सामाजिक स्थिति में मानव एक महत्वपूर्ण कारक है। अतः सामाजिक स्थिति के परिप्रेक्ष्य में जनसंख्या का अध्ययन आवश्यक हो जाता है। क्योंकि इसी आधार पर वर्तमान आर्थिक क्रियाओं की योजना का निर्धारण एवं क्रियान्वयन तथा विकास स्तर का निरूपण एवं मापन किया जा सकता है। जनसंख्या के समुचित अध्ययन हेतु उसके विभिन्न पक्षों का ज्ञान आवश्यक है जिनमें से जनसंख्या वृद्धि दर, विभिन्न घनत्व वर्गों का क्षेत्रीय वितरण, यौन अनुपात, साक्षरता क्रियाशीलता एवं व्यवसायिक संरचना आदि जनसंख्या अध्ययन के मुख्य घटक हैं। शोध अध्ययन क्षेत्र के परिप्रेक्ष्य में इन घटकों का विवरण नीचे दिया जा रहा है।

अ. जनसंख्या वृद्धि:

इटावा जनपद उत्तर प्रदेश का मध्यम जनसंकुल क्षेत्र है। जनसंख्या की दृष्टि से जहां इसे राज्य में 37वां स्थान प्राप्त है, वहीं कानपुर संभाग में इसका तीसरा स्थान हैं। प्रस्तुत तालिका में अध्ययन क्षेत्र की पिछले पांच छ दशकों की जनसंख्या वृद्धि को प्रदर्शित किया गया हैं।

तालिका 2.13: इटावा जनपद में जनसंख्या वृद्धि (1951-91)

जनगणना वर्ष	1951	1961	1971	1981	1991
कुल जनसंख्या	970704	1182202	1447702	1742651	2124655
जनसंख्या वृद्धि	+9.9	+21.8	+22.5	+20.4	+21.9
सामान्य घनत्व	224	273	334	403	474

तालिका 2.13 से स्पष्ट होता है कि वर्ष 1951 में जनसंख्या वृद्धि दर मात्र 9.9 प्रतिशत रही है, जबकि बाद के दशकों में क्षेत्रीय जनसंख्या वृद्धि दर दुगनी से अधिक रही है। परन्तु बाद के चार दशकों में यह वृद्धि

लगभग स्थिर सी रही है, क्योंकि 1961 में यह दर जहां 21.8 प्रतिशत रही है वहीं 1981 से 1991 के मध्य यह 21.9 प्रतिशत रही है। परन्तु यह प्रादेशिक स्तर पर 25.16 प्रतिशत से कम रही है।

तालिका 2.14: विकास खण्डवार जनसंख्या का वितरण (1981-1991)

क्र.सं. विकासखण्ड	जनसंख्या 1981	जनसंख्या 1991	वृद्धिदर प्रतिशत में	श्रेणीयन
1. जसवन्तनगर	143656	170275	18.53	10.5
2. बढ़पुरा	92536	109683	18.53	10.5
3. बसरेहर	140649	185263	31.72	1
4. भरथना	92340	113874	23.32	4
5. ताखा	84106	102938	22.39	6
6. महेवा	155412	169523	9.08	14
7. चकरनगर	60384	69291	14.75	13
8. अछल्दा	99411	122395	23.12	5
9. विधूना	101791	123473	21.30	7
10. एरवाकटरा	76126	95705	25.72	2
11. सहार	101688	125676	23.59	3
12. औरैया	133873	157093	17.33	12
13. अजीतमल	97056	117448	21.01	9
14. भाग्यनगर	105960	128317	21.10	8
योग ग्रामीण	1484988	1790954	20.60	-
योग नगरीय	257961	333701	29.36	-
योग जनपद	1742949	2124655	21.90	-

सारणी 2.14 से स्पष्ट है कि जनसंख्या में सर्वाधिक वृद्धि बसरेहर विकासखण्ड में हुई जहां पर 1981-91 के मध्य 31.72 प्रतिशत की वृद्धि दर अंकित की गई। इसी अवधि में जनसंख्या में न्यूनतम वृद्धि महेवा विकासखण्ड में प्राप्त हुई जिसमें मात्र 9.08 प्रतिशत की दर से जनसंख्या में वृद्धि प्राप्त हुई है। एरवाकटरा विकासखण्ड जनसंख्या वृद्धि दर 25.72 प्रतिशत रखकर दूसरे स्थान पर है। भरथना, सहार तथा अछल्दा विकासखण्ड न्यूनाधिक एक समान स्थिति दर्शा रहे हैं। जनपदीय स्तर से अधिक विकास दर प्रदर्शित करने वाले विकासखण्डों में ताखा 22.39 प्रतिशत वद्धि दर

करके छठवें स्थान पर हैं शेष आठ विकासखण्ड जनपदीय औसत से निचले स्तर पर हैं।

सारणी 2.15 अध्ययन क्षेत्र में साक्षरता के स्तर पर प्रकाश डाल रही है जिसे सम्पूर्ण अध्ययन क्षेत्र में पुरूषों की साक्षरता का प्रतिशत 66.23 है जबकि स्त्रियों का 38.34 प्रतिशत है। कुल साक्षरता प्रतिशत 53.69 प्रतिशत है। ग्रामीण और नगरीय क्षेत्रों में साक्षरता स्तर में काफी भिन्नता देखने को मिलती है। पुरूषों में यह अन्तर 10 प्रतिशत से अधिक है जबकि स्त्रियों में 23.63 प्रतिशत का अन्तर है। जबकि भोजन और पोषण स्तर में निर्धारण में साक्षरता का एक बहुत ही महत्वपूर्ण स्थान होता है स्त्रियों का साक्षर होना तो और भी आवश्यक है क्योंकि पढ़ी लिखी स्त्रियां क्षेत्रीय खाद्य पदार्थों की उपलब्धता के आधार पर सीमित पदार्थों से ही आवश्यक पोषक तत्वों का समायोजन करने में सक्षम हो सकती हैं।

विकासखण्ड वार यदि साक्षरता के स्तर पर विचार किया जाये तो भाग्य नगर विकासखण्ड 54.88 प्रतिशत पुरूष साक्षरता के आधार पर न्यूनतम साक्षरता स्तर को दर्शा रहे हैं। जबकि महेवा विकासखण्ड 71.69 प्रतिशत पुरूष साक्षरता प्रदर्शित करके उच्चतम स्तर पर स्थिति हैं। स्त्रियों के सम्बन्ध में भी यह विकासखण्ड 41.53 प्रतिशत स्त्री साक्षरता का प्रदर्शन करके वरीयता क्रम में सर्वाच्च स्थान पर है, परन्तु स्त्री साक्षरता में न्यूनतम स्तर 23.99 प्रतिशत का प्रदर्शन चकरनगर विकासखण्ड कर रहा है। जनपदीय साक्षरता स्तर पुरूष 66.23 प्रतिशत से कम स्तर को प्रदर्शित करने वाले विकासखण्डों में महेवा 71.69 प्रतिशत, अजीतमल 67.77 प्रतिशत तथा औरैया 66.46 प्रतिशत के अतिरिक्त समस्त विकासखण्ड निचले स्तर का प्रदर्शन कर रहे हैं। जबकि स्त्री साक्षरता में जनपदीय स्तर 38.34 प्रतिशत से उच्च स्तर को प्रदर्शित करने वाले विकासखण्डों में महेवा 41.53 प्रतिशत तथा अजीतमल 38.85 प्रतिशत ही है शेष अन्य विकासखण्ड जनपदीय स्तर से निम्न स्तर को प्रदर्शित कर रहे हैं। इस प्रकार सम्पूर्ण साक्षरता महेवा तथा अजीतमल विकासखण्ड जनपदीय स्तर से उच्च स्तर पर हैं शेष अन्य विकासखण्ड जनपदीय स्तर से निचले साक्षरता स्तर का प्रदर्शन कर रहे है।

तालिका 2.15: विकासखण्ड वार साक्षर व्यक्ति तथा साक्षरता का प्रतिशत

क्र.सं.	विकासखण्ड	साक्षर व्यक्ति			साक्षरता प्रतिशत		
		पुरूष	स्त्री	कुल	पुरूष	स्त्री	कुल
1.	जसवन्तनगर	48992	19540	68532	65.67	32.07	50.57
2.	बढ़पुरा	29449	12019	41468	60.90	30.41	47.19
3.	बसरेहर	52410	23442	75852	64.02	35.71	51.42
4.	भरथना	32773	13957	46730	65.47	34.10	561.34
5.	ताखा	27627	10058	37685	59.99	27.59	45.68
6.	महेवा	53652	25566	79218	71.69	41.53	58.08
7.	चकरनगर	17208	5925	23133	56.74	23.99	42.19
8.	अछल्दा	32929	13116	46045	60.97	30.13	47.21
9.	विधूना	35116	15859	50975	64.72	35.61	51.60
10.	एरवाकटरा	26023	11122	37145	60.92	32.41	48.22
11.	सहार	36914	16978	53892	65.39	37.67	53.08
12.	औरैया	46512	21174	67686	66.46	37.79	53.71
13.	अजीतमल	35257	16378	51635	67.77	38.85	54.82
14.	भाग्यनगर	38034	16925	54959	54.88	37.12	53.67
योग ग्रामीण		512896	222059	734955	64.73	34.65	51.28
योग नगरीय		109112	72169	181281	74.39	57.02	66.52
योग जनपद		622008	294228	916236	66.23	38.34	53.69

तालिका 2.16 अध्ययन क्षेत्र के व्यवसायिक ढांचे का चित्र प्रस्तुत कर रही है। 1991 की जनगणना में आर्थिक क्रियाओं के आधार पर श्रमिकों का वर्गीकरण 11 कोटियों में किया है जिसमें-

1. कृषक
2. कृषि श्रमिक
3. पशुपालन
4. खनन
5. पारिवारिक उद्योग
6. गैर पारिवारिक उद्योग

7. निर्माण कार्य 8. व्यापार एवं वाणिज्य 9. यातायात संग्रहण एवं संचार 10. सीमान्त कर्मकार 11. अन्य सेवाओं में लगे हुए हैं कार्य अवधि के आधार पर समस्त जनसंख्या को मुख्य श्रमिक, सीमान्त श्रमिक तथा गैर श्रमिक वर्गों में बांटा गया है। मुख्य श्रमिक वे हैं जिन्होने आर्थिक रूप से उत्पादन क्रियाओं में कुल 183 दिवस या 6 महीने या इससे अधिक समय तक कार्य किया। सीमान्त श्रमिक वे है जिन्होनें 183 दिन या 6 महीने से कम अवधि तक कार्य किया। गैर श्रमिक की श्रेणी में वे लोग आते हैं जिन्होने वर्ष में थोड़ा भी कार्य नहीं किया है। इन गैर श्रमिकों में भुगतान रहित घरेलू कार्य करने वाले लोग पूर्णकालिक विद्यार्थी, आश्रित यथा बच्चे और विकलांग, अवकाश प्राप्त लोग अथवा लगान उपजीवी भिखमंगे एवं संस्थाओं में रहने वाले लोग और अन्य गैर श्रमिक सम्मिलित हैं। अन्य गैर श्रमिकों में वे लोग सम्मिलित हैं जो अपनी शिक्षा समाप्ति के बाद कार्य की खोज में हैं। व्यवसायिक वर्गीकरण के आधार पर यदि देखा जाये तो जनपद में 27.43 प्रतिशत जनसंख्या कर्मकार की श्रेणी में है। शेष अन्य गैर कर्मकार की श्रेणी में हैं। कुल कर्मकारों में 76 प्रतिशत से अधिक कृषक तथा कृषि श्रमिक हैं।

गांव खेत की दूरीः

कृषि अर्थव्यवस्था को नियन्त्रित करने वाले अनेक महत्वपूर्ण कारणों में जैसे भूमि, श्रम और पूंजी इत्यादि आवासीय स्थान से खेत की दूरी का कम महत्वपूर्ण स्थान नहीं है। जोतों का पुर्नगठन तथा अनेक भूमि सुधार कानून केवल इसी कारण बनाए गए कि जिससे गांव और खेत के मध्य दूरी कम की जा सके परन्तु भूमि सुधार के अपेक्षित परिणाम नहीं प्राप्त किए जा सके हैं। खेत तथा गांव के मध्य दूरी का विश्लेषण इस मान्यता को लेकर किया जा रहा है कि सभी गांव आकार में लगभग समान है तथा उनका घना बसाव है। ग्रामवासी एक ग्राम की इकाई में निवास करते हैं। यह भी मान लिया गया है कि ग्रामवासी अपने ग्राम से बाहर जाकर कृषि कार्य नहीं करते है। यहां पर गांव खेत की दूरी का विश्लेषण विकासखण्ड स्तर पर निम्न सूत्र की सहायता से किया गया है।

$$\text{गांव खेत की दूरी} = 0.5373\sqrt{A/N}$$

जहां A = क्षेत्रफल, N = बराबर गांव की संख्या

तालिका क्रमांक 2.16: विकास खण्डवार जनसंख्या का आर्थिक वर्गीकरण

विकास खण्ड	कृषक	कृषि श्रमिक	पशुपालन एवं वृक्षारोपण	खनन	पारिवारिक उद्योग	गैर पारिवारिक उद्योग	निर्माण कार्य	व्यापार एवं वाणिज्य	यातायात संग्रहण एवं संचार	अन्य	कुल मुख्य कर्मकार	सीमान्त कर्मकार	कुल कर्मकार
1. जसवन्तनगर	30276	10102	150	1	253	782	256	874	540	3238	46472	89	46561
2. बढ़पुरा	18588	4787	140	1	283	1522	302	511	463	2312	28909	--	28909
3. बसरेहर	31815	8986	436	2	602	1438	646	2028	1131	4579	51663	68	57731
4. भरथना	21186	6308	150	–	276	429	176	710	368	1930	31533	6	31539
5. ताखा	24970	2845	80	–	84	213	50	282	100	1215	29839	172	30011
6. महेवा	26115	13151	204	1	282	695	288	773	331	3128	44968	148	45716
7. चकरनगर	13831	2499	133	–	86	130	63	175	66	1156	18139	--	18139
8. अछल्दा	24907	6147	123	1	88	322	115	334	266	1791	34094	282	34376
9. विधूना	25237	5426	173	1	364	624	108	721	181	2039	34874	187	35061
10. एरवाकटरा	21495	2516	90	–	137	367	119	738	133	1463	27058	38	27096
11. सहार	28018	3788	108	–	130	385	116	771	198	2009	35613	3	35616
12. औरैया	25458	11317	313	–	347	953	374	1029	435	3571	43797	7	43804
13. अजीतमल	19054	8168	200	–	266	1041	240	1022	384	2756	33131	144	33275
14. भाग्यनगर	23248	7634	136	1	159	601	252	1196	242	2641	36110	454	36564
योग ग्रामीण	334198	93674	2526	8	3357	9502	3105	11164	4838	33828	496200	1598	497798
योग नगरीय	9398	6300	1220	57	3777	9368	2197	21605	5383	25436	84741	280	85021
योग जनपद	343596	99974	3746	65	7134	18870	5302	32769	10221	59264	580941	1878	582819

सारणी 2.17: विकास खण्ड स्तर पर गांव खेत की दूरी

क्र.सं.	विकासखण्ड	क्षेत्रफल (वर्ग कि0मी0 में)	गांव की संख्या	गांव खेत की दूरी (मीटर में)
1.	जसवन्तनगर	366.09	129	905
2.	बढ़पुरा	345.13	84	1089
3.	बसरेहर	381.44	140	887
4.	भरथना	271.35	81	985
5.	ताखा	274.96	76	1022
6.	महेवा	327.86	117	899
7.	चकरगनर	377.26	63	1315
8.	अछल्दा	281.44	107	871
9.	विधूना	314.97	103	940
10.	एरवाकटरा	224.07	95	825
11.	सहार	280.89	94	929
12.	औरैया	399.38	149	880
13.	अजीतमल	221.87	103	789
14.	भाग्यनगर	280.04	120	821
औसत		4347.91	1461	927

सारणी 2.17 विकासखण्ड स्तर पर औसत गांव खेत की दूरी 927 मीटर प्रस्तुत कर रही है जो उत्तर प्रदेश (825.90 मीटर) से अधिक तथा भारतवर्ष (1281.10 मीटर) से कम है। सारणी से स्पष्ट है कि अजीतमल विकासखण्ड गांव खेत के बीच न्यूनतम दूरी 789 मीटर रखता है जो कि प्रादेशिक स्तर से कम है। जबकि चकरनगर विकासखण्ड अपनी ऊँची-नीची भूमि के कारण सर्वाधिक 1315 मीटर की दूरी रखता है जो न केवल प्रादेशिक स्तर से ही अधिक है बल्कि सम्पूर्ण भारतवर्ष से भी अधिक है। सहार विकासखण्ड सम्पूर्ण जनपद के औसत के सर्वाधिक पास है और यह विकासखण्ड 929 मीटर की औसत दूरी रखता है। इसके अतिरिक्त पांच विकासखण्ड बढ़पुरा, भरथना, ताखा , चकरनगर तथा विधूना जनपदीय

औसत से अधिक दूरी रखते हैं जबकि शेष 8 विकासखण्ड जनपदीय स्तर से कम औसत दूरी रखते हैं।

सारणी 2.18 विकासखण्ड स्तर पर गांवों का औसत क्षेत्रीय आकार तथा जनसंख्या के अनुसार वर्गीकरण प्रस्तुत कर रही है। जिसके अनुसार सम्पूर्ण जनपद का औसत क्षेत्रीय आकार 2.98 वर्ग किलोमीटर है जो कि प्रादेशिक स्तर 2.34 वर्ग किलोमीटर से अधिक तथा भारतवर्ष के 5.02 वर्ग किलोमीटर से कम है। विकासखण्ड स्तर पर निम्न क्षेत्रीय आकार (2.5 वर्ग किलोमीटर तक) वाले गांवों को रखने वाले विकासखण्डों में अजीतमल, भाग्यनगर तथा एरवाकटरा है। मध्यम क्षेत्रीय आकार (2.5 से 3.5 वर्ग किलोमीटर) वाले गांवों को औरैया, सहार, अछल्दा, महेवा, ताखा, बसरेहर, बिधूना, जसवन्तनगर तथा विकासखण्ड स्थापित किए हुए है। जबकि उच्च क्षेत्रीय आकार (3.50 वर्ग किलोमीटर से अधिक) बड़े गांव रखनेवाले बढ़पुरा, ताखा तथा चकरनगर विकासखण्ड हैं।

सारणी यह भी स्पष्ट कर रही है कि छोटे आकार वाले गांव (500 व्यक्तियों से कम) सम्पूर्ण अध्ययन क्षेत्र में लगभग 25 प्रतिशत है जिसमें 4.52 प्रतिशत गांव 200 या 200 से कम जनसंख्या वाले हैं। मध्यम आकार वाले (500 से 1999 तक जनसंख्या वाले) 59 प्रतिशत से अधिक गांव हैं। उच्च आकार वाले (2000 से 4999) गांव 14.44 प्रतिशत गांव हैं जबकि उच्चतम आकार वाले (5000 से अधिक जनसंख्या वाले) गांव मात्र 1.50 प्रतिशत हैं जिसमें मुख्यतः विकासखण्ड मुख्यालय आते हैं। जिसमें से अजीतमल विकासखण्ड मुख्यालय की जनसंख्या 5000 व्यक्तियों से भी कम है।

अन्य सुविधायें:

अन्य सुविधाओं में सार्वजनिक स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण सुविधायें, विद्युत वितरण प्रमुख है जिनका विवरण दिया जा रहा है।

अ. सार्वजनिक स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण सुविधायें:

आजादी के बाद देश में स्वास्थ्य सुविधाओं का जो ढांचा खड़ा किया गया उसमें ग्रामीण क्षेत्र पूरी तरह उपेक्षित रहा है। स्वास्थ्य सुविधाओं का जो ढांचा तैयार किया गया उसमें अपने स्वदेशी चिकित्सा पद्धति की पूरी

तालिका क्रमांक २.१८: विकासखण्ड स्तर पर जनसंख्या के अनुसार वर्गीकृत गांव

विकास खण्ड	२०० से कम	२००-४९९	५००-९९९	१०००-१९९९	२०००-४९९९	५००० से अधिक	योग	गांव का औसत क्षेत्रीय आकार (वर्ग किलोमीटर में)
१. जसवन्तनगर	७	२५	२८	४६	१९	४	१२९	२.८४
२. बढ़पुरा	२	१८	२४	२६	१२	२	८४	४.११
३. बसरेहर	५	२७	४६	३६	२५	१	१४०	२.७२
४. भरथना	३	१३	२०	२६	१८	१	८१	३.३६
५. ताखा	३	१७	२३	१८	११	४	७६	३.६२
६. महेवा	१	१४	३६	३७	२८	१	११७	२.८०
७. चकरनगर	१	९	२७	२०	५	१	६३	५.९९
८. अछल्दा	६	२५	४०	१७	१८	१	१०७	२.६३
९. विधूना	१	२३	२९	३८	१०	२	१०३	३.०६
१०. एरवाकटरा	१४	३०	२२	१८	९	२	९५	२.३६
११. सहार	३	१६	२८	२७	१९	१	९४	२.९९
१२. औरैया	८	३५	४३	५०	१२	१	१४९	२.६८
१३. अजीतमल	४	१८	३४	३४	१३	-	१०३	२.१५
१४. भाग्यनगर	८	२८	३७	३४	१२	१	१२०	२.३३
योग जनपद	६६ (४.५२)	२९८ (२०.४०)	४३७ (२९.९१)	४२७ (२९.२३)	२११ (१४.४४)	२२ (१.५०)	१४६१ (१००.००)	२.९६

तरह उपेक्षा कर अंग्रेजों द्वारा स्थापित स्वास्थ्य सुविधाओं का अत्यन्त सीमित मात्रा में ग्रामीण क्षेत्र में विस्तार किया गया। परिणामस्वरूप स्थानीय सुविधायें जो कुछ थीं वे भी धीरे - धीरे समाप्त हो गईं और ग्रामीण जन एलोपैथी चिकित्सा पर पूरी तरह निर्भर हो गई परन्तु एलोपैथी चिकित्सा न तो गांवों के लिए पर्याप्त है और न गरीबों की धारणा पहुंच के अन्दर है। एक तो गांवों में अस्पतालों का अभाव है और जहां है भी वहां कुशल डाक्टरों का अभाव है। कुल मिलाकर गांवों के लिए मात्र शिशु रक्षा से लेकर रोगमुक्त ग्रामीण समाज बनाने तक जो सुविधायें उपलब्ध कराई गई हैं वे अपर्याप्त साधनविहीन आरोपित और शोषण उन्मुख हैं। स्वास्थ्य के लिए शहरों व कस्बों पर निर्भरता दिन प्रतिदिन बढ़ती जा रही है। यहां तक की सामान्य रोगों के लिए भी ग्रामीणों को शहरों का मुंह ताकना पड़ता है। इस प्रकार निर्धन गांव का पैसा शहरों की तरफ जाने से गांव और निर्धन होते जा रहे हैं। अध्ययन क्षेत्र में स्वास्थ्य सुविधाओं का विवरण तालिका 2.19 में प्रस्तुत किया जा रहा है।

तालिका 2.19: विकासखण्ड वार चिकित्सा सुविधायें (1991-1992)

विकासखण्ड	चिकित्सालय एवं औषधालय	प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र	समस्त में शैश्यायें	प्रति लाख जनसंख्या पर एलो0 चिकि0एवं प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द	प्रतिलाख जनसंख्या पर उपलब्ध शै0
1. जसवन्तनगर	5	-	16	2.9	9.4
2. बढ़पुरा	2	1	18	2.7	16.4
3. बसरेहर	5	1	24	3.2	13.0
4. भरथना	3	-	12	2.6	10.5
5. ताखा	4	1	22	4.9	21.4
6. महेवा	4	1	20	2.9	11.8
7. चकरगनर	2	1	16	4.3	23.1
8. अछल्दा	3	-	16	2.5	13.1
9. विधूना	4	-	20	3.2	16.2
10. एरवाकटरा	2	1	12	3.1	12.5
11. सहार	3	1	16	3.2	12.7

12. औरैया	3	1	16	2.5	10.2
13. अजीतमल	3	–	12	2.6	10.2
14. भाग्यनगर	3	–	12	2.3	9.4
योग ग्रामीण	46	8	232	3.01	12.95
योग नगरीय	18	7	428	7.49	128.26
योग जनपद	64	15	660	3.72	31.06

सारणी 2.19 विकासखण्ड स्तर पर चिकित्सा सुविधाओं का विवरण प्रस्तुत कर रही है। जिसके अनुसार जनपद में कुल 79 एलौपैथिक चिकित्सालय, औषधालय तथा प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र वर्ष 1991-1992 तक स्थापित किए जा चुके थे जिनमें 54 ग्रामीण क्षेत्र में तथा 25 शहरी क्षेत्र में स्थित हैं। ग्रामीण क्षेत्र को 232 चिकित्सा शैय्यायें उपलब्ध हैं जबकि शहरी क्षेत्र में इससे लगभग दुगनी अर्थात 428 शैय्यायें सुलभ हैं। ग्रामीण क्षेत्र को प्रति लाख जनसंख्या पर चिक्रित्सालय 3.01 उपलब्ध है वहीं शहरी जनसंख्या को लगभग 7.50 उपलब्ध हैं। इसी प्रकार ग्रामीण क्षेत्र की प्रति एक लाख की आबादी पर लगभग 13 शय्यायें उपलब्ध हैं। जबकि शहरी क्षेत्र की 128 से अधिक शय्यायें उपलब्ध हैं।

तालिका 2.20: विकासखण्ड वार आयुर्वेदिक, होम्योपैथिक चिकित्सालय तथा परिवार एवं मातृ शिशु कल्याण केन्द्र (1991-1992)

विकासखण्ड	आयुर्वेदिक चिकि0 एवं औषधालय	उपलब्ध शैय्यायें	आयुर्वेदिक चिकि0 एवं औषधालय	यूनानी चिकि0 एवं औषधालय	परिवार एवं मातृ शिशु कल्याण केन्द्र	परिवार एवं मातृ शिशु कल्याण केन्द्र
1. जसवन्तनगर	2	4	2	–	–	34
2. बढ़पुरा	2	4	1	–	1	18
3. बसरेहर	1	4	1	–	1	28
4. भरथना	1	–	1	–	–	20
5. ताखा	2	–	–	–	1	15
6. महेवा	2	4	3	–	1	22
7. चकरगनर	3	4	–	–	1	11
8. अछल्दा	1	–	–	–	–	20

9. विधूना	3	8	–	–	–	21
10. एरवाकटरा	3	12	1	–	1	19
11. सहार	4	12	–	1	1	19
12. औरैया	–	–	1	–	1	26
13. अजीतमल	2	4	–	–	–	23
14. भाग्यनगर	2	–	–	–	–	23
योग ग्रामीण	28	56	28	1	8	299
योग नगरीय	8	56	10	–	9	8
योग जनपद	36	112	38	1	17	307

सारणी 2.20 जनपद में अन्य चिकित्सा सुविधाओं का विवरण प्रस्तुत कर रही है। ग्रामीण क्षेत्र में 28 आयुर्वेदिक चिकित्सालय, औषधालय तथा शहरी क्षेत्र में 8 चिकित्सालय, औषधालय लोगों को स्वास्थ्य सेवायें उपलब्ध करा रहा है। होम्योपैथिक 38 तथा यूनानी चिकित्सालय सहार विकासखण्ड की सेवा कर रहा है। परिवार एवं मातृ शिशु केन्द्र 17 है जिनमें से 50 प्रतिशत से अधिक शहरी क्षेत्रों में स्थापित हैं। परिवार एवं मातृ शिशु कल्याण उपकेन्द्र कुल 307 है जिनमें से मात्र 8 उपकेन्द्र शहरी क्षेत्र में हैं अन्य उपकेन्द्र ग्रामीण क्षेत्र में अपनी सेवायें अर्पित कर रहे हैं।

ब. विद्युत सुविधायें:

गांवों के समग्र विकास के लिए ग्रामीण विद्युताकरण अत्यन्त आवश्यक है इसका प्रमुख कारण यह है कि विद्युतीकरण से न केवल सिंचाई की सुविधाओं में प्रसार होता है वरन गांवों में प्रकाश व्यवस्था भी होती है। साथ ही अनेक उपकरण विद्युत चालित होने से ऐसे उपकरणों का ग्रामीण क्षेत्रों में प्रसार भी होता है। जिससे जीवन स्तर ऊँचा उठता है। गांवों में बिजली पहुंचाने के कार्य में ग्रामीण विद्युतीकरण निगम शीर्ष संस्था के रूप में कार्य कर रहा है। इस निगम का मुख्य प्रयास ग्रामीण क्षेत्रों में विद्युत के उत्पादक प्रयोग को प्रोत्साहित करना है। इन प्रयासों के अन्तर्गत पम्पसेटों को बिजली प्रदान करना, स्थानीय कच्चे माल का प्रयोग करने वाली लघु औद्योगिक इकाइयों को विद्युत संयोजन करना और घरों, सड़कों तथा सामुदायिक संस्थाओं में प्रकाश की व्यवस्था करना सम्मिलित हैं।

इस प्रकार स्पष्ट है कि गांवों को अधिक उत्पादक बनाने के लिए ग्रामीण विद्युतीकरण अत्यन्त आवश्यक है। अध्ययन क्षेत्र में विद्युत सुविधा की स्थिति सारणी 2.21 में दर्शाई गयी है।

सारणी 2.21: विकासखण्ड वार विद्युतीकृत ग्रामीण क्षेत्र वर्ष 1991-92

क्र.सं. विकासखण्ड	विद्युतीकृत ग्राम	समस्त ग्रामों का प्रतिशत	उर्जाकृत निजी नलकूप, पम्पिंग सेटों की संख्या
1. जसवन्तनगर	123	95.3	1107
2. बढ़पुरा	83	98.8	257
3. बसरेहर	93	66.4	913
4. भरथना	70	86.4	341
5. ताखा	38	50.0	76
6. महेवा	117	100.0	1344
7. चकरगनर	33	52.4	25
8. अछल्दा	40	37.4	121
9. विधूना	35	33.6	91
10. एरवाकटरा	56	59.0	115
11. सहार	39	41.5	102
12. औरैया	80	53.7	80
13. अजीतमल	57	55.3	313
14. भाग्यनगर	87	72.5	134
योग	951	65.1	5019

सारणी 2.21 विकासखण्ड स्तर पर ग्रामीण क्षेत्र को सुविधाओं का विवरण प्रस्तुत कर रही है। जनपद में कुल 1461 आबाद ग्रामों में से 951 ग्राम (65.1 प्रतिशत) विद्युतीकृत हो चुके हैं। इनमें से महेवा विकासखण्ड में शत प्रतिशत ग्राम विद्युतीकृत हो चुके हैं जबकि बढ़पुरा तथा जसवन्तनगर भी अपने पूर्ण लक्ष्य प्राप्ति से अधिक दूर नहीं हैं। सबसे निम्न स्तरीय प्रदर्शन विधूना विकासखण्ड का है। जहां केवल 33.6 प्रतिशत ग्राम ही अभी तक विद्युत सुविधा प्राप्त कर सके हैं। इसके अतिरिक्त 50 प्रतिशत

से कम विद्युतीकृत ग्रामों से युक्त विकासखण्डों में से अछल्दा 37.5 प्रतिशत तथा सहार 41.5 प्रतिशत है। शेष अन्य विकासखण्ड 50 प्रतिशत या इससे अधिक विद्युतीकृत ग्रामों से युक्त हैं। चूंकि महेवा शत प्रतिशत विद्युतीकृत विकासखण्ड है। इसलिय विद्युत चालित नलकूप/पम्पिंग सेट्स की संख्या भी सर्वाधिक 1344 है। इसके बाद दूसरा स्थान जसवन्तनगर विकासखण्ड का है जहांपर इस सुविधायुक्त 1107 नलकूप/पम्पिंग सेट्स हैं।

सन्दर्भ ग्रन्थ

1. सेन्सर डायरी (1985) स्टेटीकल डायरी, यू0 पी0, पृष्ट 116.
2. कर्राड एस0 जी0 (1912) "आन दि ओरीजिन ऑफ हिमालय माउण्टेन्स ज्योग्राफिकल सर्वे ऑफ इण्डिया" प्रोफेशनल पेपर, कलकत्ता नम्बर 12,पृष्ठ 11.
3. कृष्णन एम0 एस0 (1968) "जियोलॉजी ऑफ इण्डिया एण्ड वर्मा" मद्रास, पृष्ठ 511.
4. वाडिया डी0 एन0 प0 (1966) "जियोलॉजी ऑफ इण्डिर्या " लन्दन ई0 एल0वी0 एस0, पृष्ठ 89.
5. सिंह आर0 एल0 "इण्डिया - ए रीजनल ज्योग्राफी" वाराणसी, पृष्ठ 202-211.
6. ओल्डहम आर0डी0 "दि डीप वोरिंग एट लखनऊ रिकार्ड ऑफ दि जियोलॉजिकल सर्वे ऑफ इण्डिया" वाल्यूम 23, पृष्ठ 268.
7. ओल्डहम आर0 डी0 (1917) "दि स्ट्रक्चर ऑफ हिमालय एण्ड गैगेटिक प्लेन" ममोर्स ऑफ जियोलॉजिकल सर्वे ऑफ इण्डिया" वाल्यूम 13, वार्ट-2, पृष्ठ 82.
8. कू0 वी0 एच0 एम0 (1921) "ए क्रिटीसिज्म ऑफ ओल्डहम्स पेपर ऑन दि स्ट्रक्चर ऑफ हिमालयाज एण्ड ऑफ दि गैगेटिक प्लेन एज इलूसियेटिड बाई जियोडेटिक आबजर्वेशन इन इण्डिया" ममोर्स ऑफ जियोग्राफिकल सर्वे ऑफ इण्डिया, प्रोफेशनल पेपर नम्बर 18, देहरादून, पृष्ठ 6.
9. ग्लैनी ई0 ए0 (1932) "दि ग्रेविटी एनामोलीज इनदि स्ट्र क्चर ऑफ अर्थ क्रस्ट" मेमोर्स आफ ज्योग्राफिकल सर्वे ऑफ इण्डिया, प्रोफेशनल पेपर्स नम्बर 27, देहरादून, पृष्ठ 22.
10. हंटिगटन (1956) "प्रिंसपल ऑफ ह्यूमंन ज्योग्राफी, पृष्ठ 101.
11. कौशिक एस0 डी0 (1956) "इनवायरनमेण्ट एण्ड ह्यूमन प्रोग्रेस" चेप्टर 5.
12. हर्बल बैंक आर0 एन0 (1932) " दि ज्योग्राफिकल फैक्टर्स" न्यूयार्क, सेंचुरी क0, पृष्ठ 87.
13. केश ई0 सी0 (1996) कालेज ज्योग्राफी।

अध्याय - तृतीय

अध्याय- तृतीय
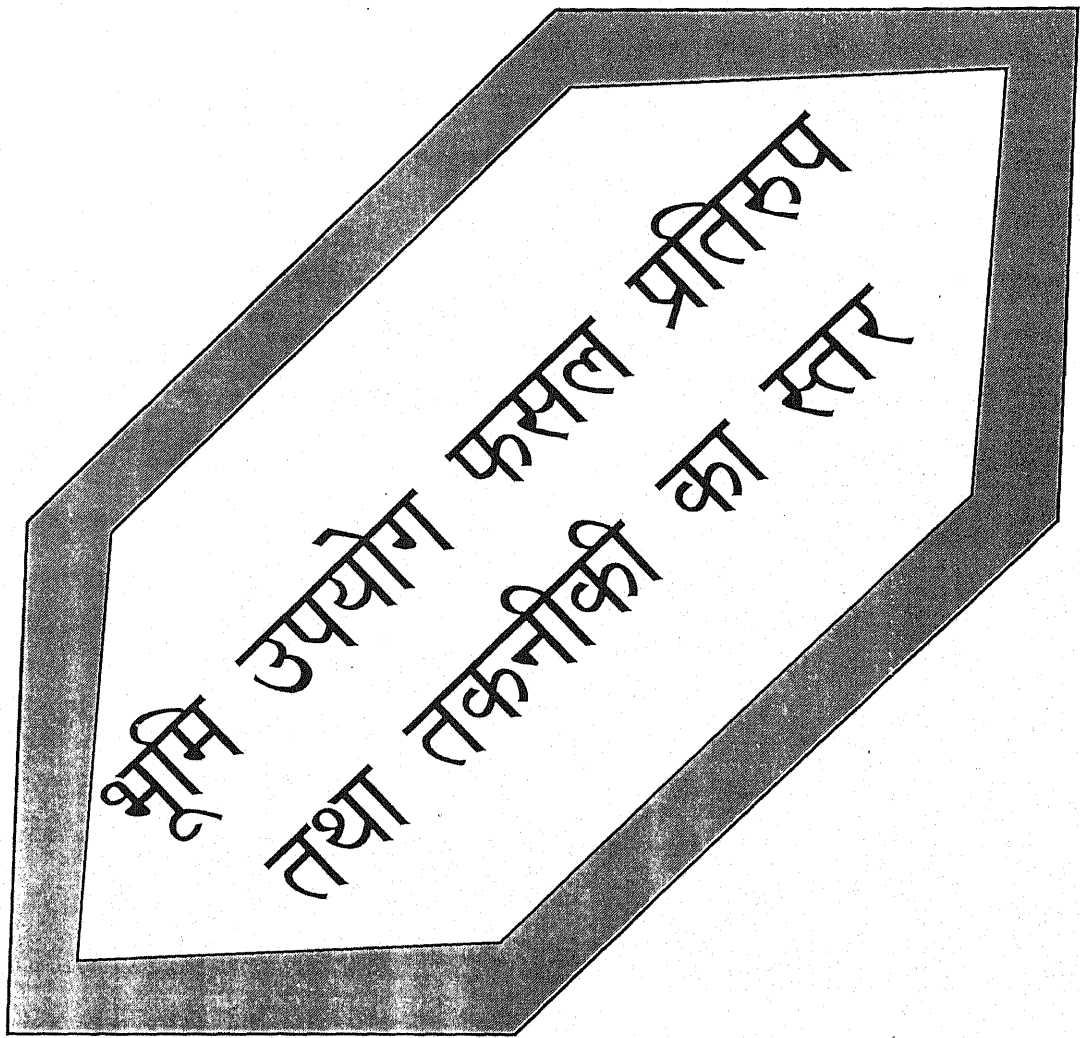
भूमि उपयोग फसल प्रतिरूप तथा कृषि तकनीकि का स्तर

1. भूमि उपयोग का प्रारूप एवं श्रेणियाँः

किसी भी विकासशील अथवा अर्द्धविकसित अर्थव्यवस्था की आर्थिक उन्नति का मूल आधार कृषि है। कृषि केवल उदरपूर्ति का मात्र साधन नहीं है बल्कि औद्योगीकरण के लिए बहुत से उद्योगों के कच्चे माल की आपूर्ति भी कृषि पर निर्भर करती है। भारत एक कृषि प्रधान देश है। अतः वर्तमान औद्योगिक युग में कृषि का महत्व और अधिक बढ़ गया है। विज्ञान की प्रगति के साथ - साथ कृषि क्षेत्र में भी काफी विकास हुआ है। भूमि का अधिक से अधिक उपयोग करने का प्रयास हो रहा है ताकि देश की लगभग 90 करोड़ से अधिक आबादी की उदरपूर्ति की जा सके। गंगा, यमुना दोआब में स्थित इटावा जनपद एक कृषि प्रधान देश है। यहां की अधिकांश जनसंख्या प्रत्यक्ष एवं परोक्ष रूप से कृषि पर निर्भर है। जनपद की अधिकांश भूमि समतल और उपजाऊ है। नदियों के किनारे का ही थोड़ा सा भू-भाग ऊबड़ खाबड़ बीहड़ क्षेत्र है जिसपर कृषि कार्य करना सम्भव नहीं है। अधिकांश भागों में कृषि की जाती है। सिंचाई के साधनों का पर्याप्त विकास हो चुका है। आधुनिक उर्वरकों का ही भरपूर उपयोग होता है जिसके परिणामस्वरूप प्रति हेक्टेयर उत्पादन क्षमता बढ़ गई है।

ऐसा अनुभव किया जाता है कि कृषि विकास के अनेक अवस्थाओं में परिवर्तन के लिए अनेक कारक उत्तरदायी होते हैं। जिनके आर्थिक उत्पादन जैसे- मांगपूर्ति, यातायात साधन, बाजार सुविधा, जनसंख्या वृद्धि आदि का विशेष योगदान होता है। कृषि कार्य प्रारम्भ करने के पूर्व अवस्था में सम्पूर्ण अकृष्य क्षेत्र होता है। सामान्यतः वनाच्छादित होता है। जिसे न्यूनतम लाभवाला कृषि उपयोग कहा जा सकता है। जब तक मानव अपनी आवश्यकता के अनुसार परिवर्तन नहीं करता है या सदुपयोग नहीं करता है, वह भूमि इकाई नहीं बन पाती है। मानव जैसे ही कृषि कार्य प्रारम्भ करता है भूमि लाभप्रद इकाई बन जाती है। यद्यपि प्रारम्भिक काल में स्थानान्तरित कृषि व्यवस्था मुख्य रूप से अपनाई जाती है। इस अवस्था में कृषि क्षेत्र में क्रमशः वृद्धि होती है तथा अकृष्य क्षेत्र में ह्रास होता है

तत्पश्चात एक ऐसी अवस्था की प्राप्ति होती है जब कृषि क्षेत्र अकृषि क्षेत्र की अपेक्षा अधिक होता है। इसे भूमि उपयोग की गहन जीवन निर्वाह कृषि अवस्था कहा जाता है। धीरे-धीरे एक ऐसी अवस्था की प्राप्ति होती है जबकि कृषि क्षेत्र (क) अधिकतम तथा अकृषि क्षेत्र (ख) न्यूनतम होता है तथा अकृषि क्षेत्र (ग) में वृद्धि प्रारम्भ हो जाती है। भूमि के विकास में यह अवस्था विशेष महत्वपूर्ण होती है क्योंकि क्रमिक परिवर्तन में आगे एक जैसी अवस्था की प्राप्ति होती है। जबकि कृषि क्षेत्र में ह्रास होता है फिर भी शस्यक्रम गहनता एवं कृषि क्षमता में वृद्धि होती है। इस अवस्था में कृषि भूमि का सर्वाधिक लाभप्रद उपयोग होता है। यह कृषि विकास की व्यापारिक अवस्था है। अगली अवस्था में कृषि क्षेत्र (क) अकृष्य (ख) की अपेक्षा कम हो जाता है। यह एक ऐसी अवस्था है जब ग्रामीण भूमि उपयोग नगरीय भूमि उपयोग में परिवर्तन हो जाता है।

जनपद में सामान्य भूमि उपयोगः

भूमि संसाधन मनुष्य के प्रगति के लिए सर्वोत्तम उपहार है। यह प्रत्येक अर्थव्यवस्था की आर्थिक क्रियाओं का आधार है। इस पर समस्त गतिविधियों का सृजन और विकास होता है। भूमि उपयोग का विभाजन मुख्य रूप से इस तथ्य पर आधारित है कि भूमि की प्रकृति कृषि भूमि की ओर बढ़ने की है अथवा चारागाह या वनों के अन्तर्गत बढ़ने की है। भूमि उपयोग का विवरण वन, गैर कृषि उपयोग में प्रयुक्त बंजर तथा कृषि का अयोग्य भूमि, स्थायी चारागाह, वृक्ष एवं बागोंवाली भूमि, कृषि योग्य खाली भूमि, बालू, परती भूमि, अन्य परती भूमि और शुद्ध कृषित भूमि नामक नौ शीर्षकों में प्रस्तुत किया जाता है। यह विवरण खाद्य एवं कृषि मन्त्रालय द्वारा 1948 में नियुक्त टेक्निकल कमेटी आन कोआर्डीनेशन आफ एग्रीकल्चर स्टेटिस्टिक्स की संस्तुति पर आधारित है।[1]

1. वनः

मनुष्यों का हित मानव जीवन एवं वनस्पति जीवन के बीच समुचित सम्बन्ध पर ही निर्भर करता है। वन मानव जीवन और वनस्पति जीवन के बीच संतुलन स्थापित करते हैं और इस प्रकार राष्ट्रीय कल्याण में वृद्धि करते हैं। यह संतुलन में बाधा पड़ने पर देश में बेकार की भूमि की वृद्धि होती है।

वन प्रकृति के आक्रमणों को सहन करती है और लोगों को बड़ी–बड़ी आपत्तियों से बचाते हैं। वृक्षों की अधिक वृद्धि से केवल बेकार भूमि का ही उपयोग नहीं होता बल्कि कृषि को भी बहुत लाभ होता है। वनों से प्राप्त लाभों को परम्परागत रूप से प्रत्यक्ष एवं परोक्ष लाभों में विभक्त किया जाता है।

वनों से प्राप्त होनेवाले प्रत्यक्ष लाभ में वनोपज को सम्मिलित किया जाता है। समस्त वनोपज की प्रधान वन उपज और गौण वन उपज नामक वर्गों में विभक्त किया जाता है। प्रधान वन उपज में इमारती तथा जलावन लकड़ी को सम्मिलित किया जाता है। जबकि गौण वन उपज में बांस और बेंत, पशुओं के लिए चारा, अन्य घास, गोंद, राल, बीड़ी के लिए पत्तियां, लाख इत्यादि को सम्मिलित किया जाता है। गौण वन उपज से ही रबर, दियासलाई, कागज, प्लाईवुड, रेशम, वार्निश आदि के उद्योग चलाये जाते हैं। इसके अतिरिक्त यह कई प्रकार के कुटीर उद्योगों का भी आधार है।

प्रत्यक्ष लाभों के अतिरिक्त वनों से कई परोक्ष लाभ भी मिलते हैं। वनोपज वन क्षेत्र में उगने वाले विभिन्न पौधों और वनस्पति के अवशेष सड़कर वहां की मिट्टी में स्वाभाविक रूप से मिलते हैं। जिनसे भूमि की उर्वरा शक्ति बढ़ती है। समाजोपयोगी समस्त पशु पक्षियों के लिए आश्रम स्थल वन हैं। वन अर्थव्यवस्था के पर्यावरणीय संतुलन को बनाए रखने में समर्थ हैं। वे जलवायु के असमायिक बदलाव, अनावृष्टि, अल्पवृष्टि और अतिवृष्टि को नियन्त्रित करते हैं। भूमि की जल अवशोषण शक्ति बढ़ाकर वे भूमिगत जल क्षेत्रों की संख्या बढ़ाते हैं। स्वंय कार्बन डाईआक्साइड का अवशोषण कर वातावरण को विषाक्त होने से बचाते हैं एवं जन जीवन के श्वसन के आधार आक्सीजन का सृजन करते हैं। अब तो यह स्पष्ट हो गया है कि ताप में सर्वाधिक वृद्धि और ओजोन परत का क्षतिग्रस्त होना भी वनों की कमी के कारण है। इसके लिए आपेक्षित स्तर तक प्रसार आवश्यक है।[2] वनों की उपादेयता के सम्बन्ध में जे० एस० कलिंस का विचार अत्यन्त सार्थक प्रतीत होता है कि वृक्ष पर्वतों को थामें रहते हैं, वे तूफानी वर्षा को नियन्त्रित करते हैं और नदियों में अनुशासन रखते हैं। उनके अनुचित स्थान परिवर्तन और तदजन्य विनाश को रोकते हैं। वन विभिन्न झरनों को बनाये रखते हैं और पक्षियों का पोषण करते हैं।[3]

2. गैर कृषि प्रयोग में प्रयुक्त भूमि:

इस शीर्षक में उन भूमियों को सम्मिलित किया जाता है जो भवन, सड़क, रेलमार्ग आदि कें प्रयोग में है। इसी प्रकार वे भूमियां जो जल प्रभावों यथा नदियों या नहरों के अन्तर्गत हैं, जो इस वर्षा में सम्मिलित हैं। इसके अतिरिक्त गैर कृषि प्रयोगों की भूमियां भी इसके अन्तर्गत सम्मिलित हैं।

3. बंजर और गैर कृषि योग्य भूमियाँ:

इस श्रेणी में वे सभी भूमियां सम्मिलित हैं जो बंजर हैं अथवा कृषि योग्य नहीं हैं। इस कोटि में पर्वतीय, पठारी और रेगिस्तानी भूमियां आती हैं। इन भूमियों को अत्याधिक लागत के बिना फसलों के अन्तर्गत नहीं लाया जा सकता है। बंजर और गैर कृषि योग्य भूमियां कृषित क्षेत्रों के मध्य हो सकती हैं या इससे पृथक क्षेत्र में भी हो सकती है।

4. स्थायी चारागाह:

इसके अन्तर्गत चराई जानेवाली सभी भूमियां सम्मिलित हैं। इस प्रकार की भूमियां घास स्थली हो सकती है या स्थायी चारागाह के रूप में। ग्राम समूहों के चारागाह भी इसी कोटि में आते हैं।

5. विविध वृक्षों एवं बागों वाली भूमि:

इस कोटि में कृषि योग्य वे सभी भूमियां सम्मिलित की जाती हैं जिन्हें शुद्ध कृषित क्षेत्र में सम्मिलित नहीं किया जाता हैं, परन्तु कतिपय कृषि योग्य भूमि में लाया जाता है। इसके अन्तर्गत छोटे पेड़, छावन वाली घासें, बांस की झाड़, ईंधन वाली लकड़ी के वृक्ष सम्मिलित किए जाते हैं।

6. कृषि योग्य व्यर्थ भूमियाँ:

इस श्रेणी में वह भूमि सम्मिलित है जो खेती के लिए उपलब्ध हैं, परन्तु जिस पर चालू वर्ष और पिछले 5 वर्षो या उससे अधिक समय से फसल नहीं उगाई गई है, ऐसी भूमियां परती हो सकती हैं या झाड़ियों और जंगलवाली हो सकती हैं। ये भूमियां किसी भी अन्य प्रयोग में नहीं लाई जा सकती हैं। वह भूमि जिसपर एकबार खेती की गई है, परन्तु पिछले 5 वर्षों से खेती नहीं की गई है, वह भी इस श्रेणी में आती हैं।

7. वर्तमान परती:

इस श्रेणी में वह कृषित क्षेत्र सम्मिलित किया जाता है जिसे केवल चालू वर्ष में परती रखा जाता है। उदाहरण के लिए यदि किसी पौधशाला वाले क्षेत्र को उसी वर्ष पुनः किसी फसल के लिए प्रयोग नहीं किया जाता है।

8. अन्य परती भूमि:

अन्य परती भूमि के अन्तर्गत वे भूमियां हैं जो पहले कृषि के अन्तर्गत थीं लेकिन अब अस्थायी रूप से एक वर्ष की अवधि से अधिक परन्तु 5 वर्ष की अवधि से कम अवधि से खेती के अन्तर्गत रही हैं। जमीन का खेती से बाहर होने के कई कारण हो सकते हैं यथा कृषकों को गरीबी, पानी का अपर्याप्त आपूर्ति, विषम जलवायु, नदियों और नहरों की भूमियां और खेती का गैर लाभदायक होना आदि।

9. शुद्ध कृषित क्षेत्र:

इस श्रेणी में फसल तथा फसलोत्पादन के रूप में शुद्ध बोया गया क्षेत्र सम्मिलित किया जाता है। एकबार से अधिक बोए गए क्षेत्र की गणना भी एक बार की जाती है। यह कुल बोए गए क्षेत्र से कम होता है क्योंकि कुल बोए गए क्षेत्र से शुद्ध बोए गए क्षेत्र और एक बार से अधिक बोए गए क्षेत्र का योग होता है।

तालिका 3.1 में भूमि उपयोग के आंकड़ें देखने से स्पष्ट होता है कि जनपद का कुल प्रतिवेदित क्षेत्र 436727 हेक्टेअर है जिसमें वनों का क्षेत्रफल 40372 हेक्टेअर है। जो कुल भौगोलिक क्षेत्र का 9.24 प्रतिशत है, यद्यपि यह प्रतिशत अन्य शीर्षकों में सर्वाधिक है परन्तु अब भी यह अपेक्षित स्तर से बहुत कम है क्योंकि प्रदेश के कुल प्रतिवेदित क्षेत्र में से लगभग 17 प्रतिशत भू-भाग पर वन है और देश के लगभग 22.7 प्रतिशत भू-भाग पर वनों के क्षेत्रफल के उपरान्त दूसरा स्थान गैर कृषि कार्यों में प्रयोग की जानेवाली भूमि का है। जिसका कुल क्षेत्रफल 34425 हेक्टेअर है जो समस्त प्रतिवेदित क्षेत्र का 7.88 प्रतिशत है। गैर कृषि कार्यों में प्रयुक्त होनेवाली भूमि से आशय उस भूमि से है जो भवनों, सड़कों,रेलमार्गों, नदियों या इसी प्रकार के अन्य प्रयोगों से है। वर्तमान एवं अन्य परती भूमि का हिस्सा भी कम महत्वपूर्ण नहीं है जो कि क्रमशः

15795 तथा 17460 हेक्टेअर है। इसी प्रकार बंजर भूमि का क्षेत्रफल 11308 हेक्टेअर है। इन तीन प्रकार की भूमियों को यदि कृषि प्रयोग में लाया जा सके तो कुल 44563 हेक्टेअर भूमि पर फसल प्राप्त की जा सकती है। इसके लिए कृषि कार्य हेतु आनेवाली बाधाओं को हटाया जा सके तो इस भूमि पर कृषि कार्य सम्भव है, इसे कृषि योग्य बनाया जाना चाहिये। चारागाह के लिए उपयोग में लाई जानेवाली भूमि का भाग अत्यन्त कम हैं यह भाग 2228 हेक्टेअर तथा केवल 0.51 प्रतिशत है। जनपद में पशुधन को देखते हुए यह हिस्सा लगभग नगण्य जैसा ही है, इसी प्रकार उद्यान एवं वृक्षों वाली भूमि का हिस्सा भी मात्र 0.33 प्रतिशत ही है। जनपद में ऊसर तथा कृषि के अयोग्य भूमि 24027 हेक्टेअर है, जिसको सरकार द्वारा ऊसर सुधार योजना के अन्तर्गत कृषि योग्य बनाने का प्रयास किया जा रहा है।

तालिका 3.1: जनपद में भूमि उपयोग का विवरण वर्ष 1990-91
(हेक्टेअर में)

क्र.सं. भूमि उपयोग शीर्षक	वर्ष 1990-91	प्रतिशत
1. कुल प्रतिवेदित क्षेत्रफल	436727	100.00
2. वन	40372	9.24
3. कृषि योग्य बंजर भूमि	11308	2.50
4. वर्तमान परती भूमि	15795	3.62
5. ऊसर और कृषि अयोग्य भूमि	24027	5.50
6. अन्य परती भूमि	17460	4.00
7. कृषि के अतिरिक्त अन्य उपयोग में लाई गई भूमि	34425	7.88
8. चारागाह	2288	0.51
9. उद्यान एवं वृक्षोंवाली भूमि	1421	0.33
10. शुद्ध बोया गया क्षेत्र	289691	66.23
11. एक से अधिक बार बोया गया क्षेत्र	135646	46.82
12. सकल बोया गया क्षेत्रफल	425337	146.82
13. फसल सघनता	--	146.82

स्रोतः सांख्यिकीय प्रत्रिका जनपद इटावा - 1992.

जिसके परिणामस्वरूप इस शीर्षक के अन्तर्गत आनेवाली भूमि का

क्षेत्रफल वर्ष 1980-81 की तुलना में कम हुआ है, पिछले दशक में यह 27342 हेक्टेअर था जो कि घटकर 24027 हेक्टेअर रह गया है, आशा की जानी चाहिए कि भविष्य में कृषि की नई तकनीक के परिणामस्वरूप जनपद में ऊसर भूमि को कृषि योग्य बनाया जा सकता है।

जनपद मे शुद्ध बोया गया क्षेत्र का 66.33 प्रतिशत है जिसपर कृषि फसलें उगाई जाती हैं, एक से अधिक बार बोए गए क्षेत्र का प्रतिशत 46.82 है, इस प्रकार फसल गहनता 146.82 है।

शुद्ध बोया गया क्षेत्रः

वास्तव में शुद्ध बोया गया क्षेत्र ही किसी क्षेत्र विशेष की जनसंख्या की खाद्यान्न आपूर्ति का एक साधन बनता है। एक विकासशील अर्थव्यवस्था के लिए जिसकी मुख्य विशेषतायें जनाधिक्य एवं श्रम अतिरेक व कृषि उत्पादों के अभाव की स्थिति में बना रहता हो, वहां पर खाद्यान्न उत्पादन के लिए तथा बढ़ती जनसंख्या के कारण श्रम अतिरेक को अतिरिक्त रोजगार के अवसर उपलब्ध कराने हेतु कृषि भूमि की अधिकाधिक आवश्यकता होती है क्योंकि समग्र अर्थव्यवस्था की दृष्टि से पर्याप्त खाद्यान्न की आपूर्ति न हो पाने की स्थिति में कृषि पदार्थों की मांग और पूर्ति में गम्भीर असंतुलन उत्पन्न हो सकते हैं। कृषि पदार्थों की आपूर्ति में कमी अर्थव्यवस्था में अनेक अन्य समस्याओं को जन्म दे सकती है। इसीलिए यह आवश्यक समझा जाता है कि विकास प्रक्रिया के मध्य जैसे-जैसे कृषि भूमि की मांग बढ़ती है, उसी के बंजर भूमि, परती तथा बेकार भूमि को कृषि योग्य बनाने के प्रयास करने चाहिये। कोशिश यह करनी चाहिये कि खेती-बाड़ी के लिए उपलब्ध भूमि के क्षेत्रफल में किसी प्रकार की कमी न आए बल्कि कृषि भूमि में वृद्धि ही होनी चाहिए।

खाद्यान्न उत्पादन में वृद्धि दो बातों पर निर्भर करती है। (अ) खेती के अन्तर्गत क्षेत्र में वृद्धि करके तथा (ब) प्रति एकड़ उपज में वृद्धि करके। निसंदेह अधिक विस्तृत खेती की सम्भावनाएं बहुत सीमित हैं किन्तु फिर भी ऊसर और बंजर भूमि पर सुधार कार्यक्रम अमल में लाकर इन्हें कृषि योग्य बनाने के प्रयास निरन्तर किए जाने चाहिये। बेशक इसके लिए हमें बड़ी धनराशि खर्च करनी होगी। इस तरह जलग्रस्त खारीय एवं लवणीय भूमि को

कृषि योग्य बनाना सम्भव हो सकता है। इन उपायों में यह बतलाना चाहेगें कि सिंचाई, गहरी जुताई, अपतृण का हटाया जाना, रसायनों के सुधार के लिए उपयोग, सम्प्रवाहन, भूतक का जलग्रस्तता रोकने के लिए उपर्युक्त नालियों को बिछाया जाना आदि।

यह सच है कि विस्तृत खेती की क्षमता सीमित है परन्तु गहन खेती की अपार सम्भावनायें हैं। जिनका उपयोग किया जाना चाहिये। कृषि की विकसित तकनीकी का मूल बिन्दु है फसलों की गहनता में विस्तार। अब तक एक से अधिक बार जोती गई भूमि के अन्तर्गत क्षेत्रों में अपेक्षित गति से वृद्धि नहीं हुई है, यह विचारणीय है। सम्भवतः इस प्रवृत्ति के दो कारण हैं।

अ. उन्नत कृषि आदानों के पैकेज पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध नहीं हुए हैं तथा

आ. जब कभी ये पैकेज उपलब्ध भी हुये हैं तो इनकी कीमतें बहुत ऊँची रही हैं।

इसलिए हमारे प्रयास होने चाहिये कि उन्नत आदानों को सस्ती दरों पर पर्याप्त मात्रा में किसानों को उपलब्ध कराया जाये। भूमि की उर्वरता एवं उत्पादकता बनाए रखने के लिए हमें निरन्तर प्रयास करने होगें, इस वास्ते हमें अनेक कदम उठाने होगें जैसे- भू परीक्षण, ठीक तरह से भूमि को जोतना, भूमि के नष्ट हो गए तत्वों को बदलना, पर्याप्त मात्रा में उर्वरक प्रदान करना आदि। इसी प्रकार कृषि की विकसित रीतियों को भी अपनाना होगा। जैसे फसलों का आवर्तन और मिश्रित फसलें आदि। फसलों के प्रतिरूप में वांक्षित परिवर्तन द्वारा भूमि की उत्पादकता में सुधार लाया जा सकता है।

जनपद में भूमि उपयोग आंकड़ों से यह विदित होता है कि अन्य प्रयोगों की तुलना में सर्वाधिक भूमि क्षेत्र कृषित भूमि के रूप में है। कुल प्रतिवेदित क्षेत्र का 66 प्रतिशत से भी अधिक भाग शुद्ध कृषि क्षेत्र का होना अनुकूल भौगोलिक अवस्था का द्योतक है, इस सन्दर्भ में जनपद की स्थिति अत्यन्त अनुकूल है जबकि प्रदेश की 60 प्रतिशत से भी कम भूमि शुद्ध कृषि क्षेत्र के अन्तर्गत आती है। जनपद में विकाखण्ड वार कृषि भूमि से सम्बन्धित सूचना अग्रान्कित तालिका में दर्शायी गई है।

सारणी क्रमांक 3.2 जनपद में विकासखण्ड वार कृषि क्षेत्र का विवरण

तालिका क्रमांक ३.२: विकासखण्ड वार शृद्ध या बोया गया क्षेत्र, एक से अधिक बार बोया गया क्षेत्र, कुल कृषि क्षेत्र तथा फसल गहनता वर्ष १९९०-९१ (हेक्टेअर में)

क्र.सं. विकासखण्ड	शृद्ध बोया गया क्षेत्र	प्रतिशत	एक से अधिकबार बोया गया क्षेत्र	प्रतिशत	कुल कृषि क्षेत्र	प्रतिशत	फसलगहनता
१. जसवन्तनगर	२७०६०	९.३४	१४८०३	१०.९१	४१८६३	९.८४	१५४.७०
२. बढ़पुरा	१६७८८	५.८०	४५८०	३.३८	२१३६८	५.०२	१२७.२५
३. बसरेहर	२७८५५	९.६२	१८०६६	१३.३२	४५९२१	१०.८०	१६४.८६
४. भरथना	१८९९३	६.५६	१०२८६	७.५८	२९२७९	६.८८	१५४.१६
५. ताखा	१७८६२	६.१७	१०२९३	७.५९	२८१५५	६.६२	१५७.६३
६. महेवा	२३४००	८.०८	१३१११	९.६७	३६५११	८.५८	१५६.०३
७. चकरनगर	१५९७८	५.५१	९८३	०.७२	१६९६१	३.९९	१०६.१५
८. अछल्दा	१९४२९	६.७०	९१२८	६.७३	२८५५७	६.७१	१४६.९८
९. विधूना	२००१८	६.९१	१०९१२	८.०४	३०९३०	७.२७	१५४.५१
१०. एरवाकटरा	१५८८५	५.४८	८६१६	६.३५	२४५०४	५.७६	१५४.२६
११. सहार	२०२६७	६.९९	१००६७	७.४२	२०३३४	७.१३	१४९.६७
१२. औरैया	२९३४७	१०.१३	८९०५	६.५७	३८२५२	८.९९	१३०.३४
१३. अजीतमल	१६७६६	५.७९	८०६८	५.९५	२४८३४	५.८४	१४८.१२
१४. भाग्यनगर	१९७०२	६.८०	७६३९	५.६३	२७३४१	६.४३	१३८.७७
योग ग्रामीण	२८९३५०	९९.८८	१३५४६०	९९.८६	४२४८१०	९९.८८	१४६.८२
योग नगरीय	३४१	०.१२	१८६	०.१४	५२७	०.१२	१५४.५५
योग जनपद	२८९६९१	१००.००	१३५६४६	१००.००	४२५३३७	१००.००	१४६.८२

स्रोतः सांख्यिकी प्रत्रिका जनपद इटावा १९९२.

प्रस्तुत कर रही है। शुद्ध कृषि क्षेत्र पर दृष्टिपात करने पर ज्ञात होता है कि जनपद में शृद्ध कृषि क्षेत्र 289691 हेक्टेअर उपलब्ध है जिसमें विभिन्न प्रकार का फसलोत्पादन किया जा रहा है। विकासखण्ड वार भागेदारी में प्रथम स्थान औरैया विकासखण्ड का है। जहां 10.13 प्रतिशत भागेदारी करके कुल 29347 हेक्टेअर में फसलोत्पादन किया जा रहा है, दूसरा स्थान बसरेहर विकासखण्ड का है, जहांपर 27855 हेक्टेअर भूमि पर कृषि कार्य करके जनपद में 9.62 प्रतिशत भागेदारी कर रहा है। इसी के न्यूनाधिक स्थिति में जसवन्तनगर विकासखण्ड अपने को पा रहा है। जहां पर 27060 हेक्टेअर भूमि पर विभिन्न फसलें उगाई जा रही हैं। जनपद में 9.34 प्रतिशत शुद्ध कृषि क्षेत्र रखकर यह विकासखण्ड तीसरे स्थान पर स्थित है। चौथा स्थान महेवा विकासखण्ड प्राप्त कर रहा है। जहां पर शुद्ध कृषि क्षेत्र 30400 हेक्टेअर है तथा 8.08 प्रतिशत भागेदारी निर्वाह कर रहा है। 6 प्रतिशत से अधिक तथा 7 प्रतिशत के मध्य कुल 6 विकासखण्ड भरथना, ताखा, अछल्दा, विधूना, सहार तथा भाग्यनगर स्थित हैं जिसके पास क्रमशः 18993 हेक्टेअर, 17862 हेक्टेअर, 19429 हेक्टेअर, 20018 हेक्टेअर, 20267 हेक्टेअर तथा 12702 हेक्टेअर शुद्ध कृषि क्षेत्र विभिन्न फसलों को उगाने हेतु उपलब्ध है। शेष विकासखण्ड 5-6 प्रतिशत के मध्य भागेदारी कर रहे हैं।

जहां तक एक से अधिक बोये गए क्षेत्र का प्रश्न है तो इस दृष्टि से प्रथम स्थान पर बसरेहर विकासखण्ड है जहां पर 18066 हेक्टेअर क्षेत्रफल पर वर्ष में एक से अधिक बार फसलें उगाई जाती हैं और जनपद में इस विकासखण्ड की भागेदारी 13.32 प्रतिशत है। दूसरा स्थाना जसवन्तनगर विकासखण्ड का आता है जहां पर 14803 हेक्टेअर कृषि भूमि पर एक से अधिक बार बुवाई करके कृषि उत्पादन प्राप्त किया जाता है। चकरनगर विकासखण्ड इस दृष्टि से सर्वाधिक पिछड़ा कहा जायेगा क्योंकि यहां पर केवल 983 हेक्टेअर क्षेत्र पर ही एक से अधिक फसलें प्राप्त की जाती हैं। इसकी भागेदारी भी जनपद में न्यूनतम 0.72 प्रतिशत ही है। इसी से मिलता जुलता कृषि स्तर बढ़पुरा विकासखण्ड का है जहां पर 4580 हेक्टेअर कृषि भूमि पर एक से अधिक बार कृषि उत्पादन प्राप्त किया जाता है। इन दोनों विकासखण्डों के पिछड़ेपन का कारण इनका यमुना तथा चम्बल नदियों के मध्य में स्थित होना है जिसके कारण एक तो भूमि अत्यन्त ऊबड़-खाबड़

है, दूसरे सिंचित सुविधाओं का नितान्त अभाव है। सिंचित सुविधाओं का होना गहन कृषि की पहली शर्त है क्योंकि सिंचाई के अभाव में गहरी खेती सम्भव नहीं हो सकती है और यही कारण है कि इन दोनों विकासखण्डों में अधिकांश कृषि भूमि पर वर्ष में केवल एक ही फसल प्राप्त की जा सकती है। शेष अन्य विकासखण्ड 5-8 प्रतिशत के मध्य भागेदारी कर रहे हैं केवल महेवा विकासखण्ड को छोड़कर। यह विकासखण्ड जनपद के 9.67 प्रतिशत हिस्सेदारी करके तीसरे स्थान पर स्थित है।

फसल गहनता कृषि उत्पादन बढ़ाने में अत्यन्त महत्वपूर्ण होती है। फसल गहनता से आशय उस फसल क्षेत्र से होता है जिसपर वर्ष में एक फसल के अतिरिक्त अन्य कई फसलें उगाई जाती हैं। इस दृष्टि से देखा जायें तो जनपद में सर्वाधिक फसल गहनता 164.86 प्रतिशत बसरेहर विकासखण्ड की है जहां पर 64.86 प्रतिशत भूमि पर दो या दो से अधिक फसलें उगाई जाती हैं। न्यूनतम 106.15 प्रतिशल फसल गहनता चकरनगर विकासखण्ड की है जिसका अर्थ है उस विकासखण्ड की अधिकांश कृषि भूमि पर वर्ष मे केवल एक ही फसल का उत्पादन सम्भव हो रहा है। कृषि की अत्यन्त दयनीय स्थिति है। बढ़पुरा विकासखण्ड की ऊबड़-खाबड़ कृषि भूमि रखते हुए भी अपनी फसल गहनता 127.25 प्रतिशत रखे हुए है। आश्चर्यजनक दृश्य तो विकासखण्ड औरैया प्रस्तुत कर रहा है जहां भूमि समतल है तथा सिंचाई की पर्याप्त सुविधायें है। यातायात की दृष्टि से भी जनपद में अगली श्रेणी में आता है फिर फसल गहनता में कमोबेश बढ़पुरा विकासखण्ड के समान ही है, इस विकासखण्ड की फसल गहनता 130.34 प्रतिशत है। अन्य विकासखण्ड कमाबेश एक समान ही हैं। 150 प्रतिशत या इससे अधिक फसल गहनता वाले विकासखण्ड जसवन्तनगर, भरथना, ताखा, महेवा, विधूना, एरवाकटरा तथा सहार है। भाग्यनगर विकासखण्ड की फसल गहनता 138.77 प्रतिशत , अछल्दा की फसल गहनता 146.94 प्रतिशत तथा अजीतमल विकासखण्ड की फसल गहनता 148.12 प्रतिशत है।

उपलब्ध कुल भूमि की उसके विभिन्न उपयोगों के आधार पर दो भागों में बांटा जा सकता है।

(अ) कृषि भूमि तथा (आ) गैर कृषि भूमि

कृषि भूमि के अन्तर्गत हम शुद्ध जोते गए क्षेत्र, वर्तमान परती क्षेत्र

तथा वृक्षों उपवनों के अन्तर्गत क्षेत्र शामिल करते हैं। जनपद का कुल प्रतिवेदित क्षेत्र 436727 हेक्टेअर है जिसमें कुल बोया गया क्षेत्र 289691 हेक्टेअर है जो कुल प्रतिवेदित क्षेत्र का 66.33 प्रतिशत से अधिक भाग फसलोत्पादन के अन्तर्गत आता है। अग्राकिंत तालिका में विकासखण्ड वार जनपद स्थिति को दर्शाया गया है।

तालिका 3.3: विकासखण्ड वार शुद्ध बोया गया क्षेत्र 1990-91
(हेक्टेअर में)

क्र.सं.	विकासखण्ड	कुल प्रतिवेदित क्षेत्र	शुद्ध बोया गया क्षेत्र	कुल बोए गए का प्रतिवेदित क्षेत्र प्रतिशत
1.	जसवन्तनगर	36609	27060	73.92
2.	बढ़पुरा	34513	16788	48.64
3.	बसरेहर	38144	27855	73.02
4.	भरथना	27235	18993	69.74
5.	ताखा	27496	17862	64.96
6.	महेवा	32786	23400	71.37
7.	चकरनगर	37726	15978	42.35
8.	अछल्दा	28144	19429	69.03
9.	विधूना	31497	20018	63.56
10.	एरवाकटरा	22407	15885	70.89
11.	सहार	28089	20267	72.15
12.	औरैया	39938	29347	73.48
13.	अजीतमल	22187	16766	75.57
14.	भाग्यनगर	28004	19702	70.35
	योग ग्रामीण	434791	289350	66.55
	योग नगरीय	1936	341	17.61
	योग जनपद	436727	289691	66.33

स्रोत : सांख्यिकीय पत्रिका जनपद इटावा - 1992.

सारणी क्रमांक 3.3 विकासखण्ड वार कुल प्रतिवेदित क्षेत्र तथा शुद्ध बोए गए क्षेत्र का तुलनात्मक चित्र प्रस्तुत कर रही है। सारणी से ज्ञात होता है कि जनपद की कृषि भूमि की उपलब्धता का अनुपात काफी ऊँचा है।

किन्तु यदि बढ़ती हुई जनसंख्या के सन्दर्भ में देखा जाये तो हम पाते हैं कि उपलब्ध कृषि योग्य भूमि केवल 0.16 हेक्टेअर ही है जबकि जनपद में कुल प्रतिवेदित क्षेत्र में शुद्ध बोया गया क्षेत्र 66.33 प्रतिशत है। विकासखण्ड वार शुद्ध बोए गए क्षेत्र के विवरण को यदि देखा जाये तो अजीतमल विकासखण्ड 75.57 प्रतिशत शुद्ध कृषि योग्य भूमि रखकर प्रथम स्थान पर आता है जबकि चकरनगर विकासखण्ड मात्र 42.35 प्रतिशत शुद्ध बोया गया क्षेत्र रखकर जनपद में न्यूनतम स्थान पर देखा जा रहा है। प्रदेश के शुद्ध बोए गए क्षेत्र से यदि तुलना की जाये तो जहां प्रदेश का शुद्ध का बोया गया क्षेत्र 58.44 प्रतिशत है। इस स्तर से ऊपर शुद्ध कृषि भूमि वाले विकासखण्ड केवल दो विकासखण्डों को छोड़कर समस्त विकासखण्ड ऊँचे स्तर को दर्शा रहे हैं। इन दो विकासखण्डों में चकरनगर तथा बढ़पुरा विकासखण्ड है। जो क्रमशः 42.35 प्रतिशत तथा 48.64 प्रतिशत शुद्ध बोए गए क्षेत्र को दर्शा रहे हैं। जिन विकासखण्डों में 70 प्रतिशत से अधिक शुद्ध बोया गया क्षेत्र उपलब्ध है इनमें क्रमशः अजीतमल 75.57 प्रतिशत, जसवन्तनगर 73.92 प्रतिशत , औरैया 73.48 प्रतिशत, बसरेहर 73.02 प्रतिशत, सहार 52.15 प्रतिशत, महेवा 71.35 प्रतिशत, एरवाकटरा 70.89 प्रतिशत तथा भाग्यनगर 70.35 प्रतिशत है। इस प्रकार कुल प्रतिवेदित क्षेत्र से शुद्ध बोया जानेवाला क्षेत्र का प्रादेशिक स्तर 58.44 प्रतिशत है। इस स्तर से ऊँचे स्तर को बनाए रखनेवाले कुल 14 विकासखण्डों में 12 विकासखण्ड आते हैं, शेष दो विकासखण्ड चकरनगर और बढ़पुरा प्रादेशिक स्तर से निचले स्तर का प्रर्दशन कर रहे हैं।

तालिका 3.4 से स्प्ष्ट है कि जनपद में 10 प्रतिशत से अधिक कृषि योग्य भूमि बेकार पड़ी है जिसमें 2.59 प्रतिशत कृषि योग्य बंजर भूमि के अन्तर्गत 3.62 प्रतिशत वर्तमान परती तथा 4.00 प्रतिशत अन्य परती भूमि के अन्तर्गत है। इस व्यर्थ पड़ी भूमि को उपयोग में लाया जाये तो लगभग 10 प्रतिशत भूमि कृषि क्षेत्र के अन्तर्गत लाई जा सकती है। इसी प्रकार यदि वनों के क्षेत्रफल की दृष्टि से देखा जाय तो बढ़पुरा तथा चकरनगर दो विकासखण्ड ही ऐसे हैं जो क्षेत्र में आवश्यक वन क्षेत्र से अधिक क्षेत्रफल को दर्शा रहे हैं। अन्य विकासखण्ड 9.4 प्रतिशत से निचले स्तर का प्रदर्शन कर रहे हैं। जबकि क्षेत्र को प्रदूषण से बचाये रखने के लिए वनों का अपना

तालिका क्रमांक 3.4: विकास खण्ड स्तर पर कुल प्रतिवेदित क्षेत्र से प्रतिशत में भूमि उपयोग का समग्र वितरण

विकास खण्ड	वन	कृषि योग्य बंजर भूमि	वर्तमान परती	अन्य परती	ऊसर और कृषि अयोग्य	कृषि के अतिरिक्त अन्य उपयोग में लाई गयी	चरागाह	उद्यानों तथा वृक्षों के प्रयोग में	शुद्ध बोया गया क्षेत्र	योग
1. जसवन्तनगर	4.18	2.03	3.11	3.18	6.01	7.01	0.27	0.29	73.92	100.00
2. बढ़पुरा	23.63	2.18	4.94	3.89	7.61	8.63	0.17	0.31	48.64	100.00
3. बसरेहर	6.04	1.99	2.88	4.02	4.81	6.65	0.46	0.12	73.03	100.00
4. भरथना	5.61	4.14	2.99	4.77	5.04	7.03	0.40	0.28	69.64	100.00
5. ताखा	6.37	4.39	4.24	6.45	6.43	5.91	0.86	0.28	64.96	100.00
6. महेवा	7.46	2.25	2.68	2.99	3.29	9.24	0.02	0.70	71.37	100.00
7. चकरनगर	31.47	0.94	3.02	5.11	7.91	9.18	--	0.01	42.35	100.00
8. अछल्दा	4.39	3.76	3.37	5.08	5.64	7.24	1.20	0.29	69.03	100.00
9. विधूना	8.28	4.59	4.53	4.78	6.89	6.17	0.90	0.30	63.56	100.00
10. एरवाकटरा	6.85	3.18	4.04	3.77	4.00	5.91	1.10	0.25	70.89	100.00
11. सहार	2.64	4.97	2.78	3.28	6.49	6.66	1.57	0.46	72.15	100.00
12. औरैया	6.25	0.61	3.32	2.92	3.92	9.03	0.15	0.32	73.48	100.00
13. अजीतमल	6.28	0.50	3.24	1.50	2.96	9.22	0.05	0.68	75.57	100.00
14. भाग्यनगर	2.36	2.32	6.00	3.83	4.52	8.67	1.56	0.38	70.35	100.00
समग्र	9.24	2.59	3.62	4.00	5.50	7.88	0.51	0.33	66.33	100.00

एक विशिष्ठ स्थान है इसीलिए 1952 में अपनाई गई राष्ट्रीय वन नीति के अन्तर्गत भारत के लिए देश की कुल भूमि का 33.3 प्रतिशत भाग जंगलों के रूप में रखने का निश्चय किया गया जिसमें पहाड़ी प्रदेशों में क्षेत्र का 60 प्रतिशत तथा मैदानी क्षेत्रों में 20 प्रतिशत भूमि पर वन रखने का निश्चय किया गया। इस मानक के आधार पर यदि देखा जाये तो अध्ययन क्षेत्र वन सम्पदा के औसत स्तर से बहुत दूर हैं।

अध्ययन क्षेत्र की भूमि उपयोग क्षमताः

भूमि संसाधन उपयोग के लिए यह देखना पड़ता है कि भूमि उपयोग किस चातुर्य या तत्परता से किया जा रहा है। उसकी कौन सी अवस्था है, क्या भूमि उपयोग अपने अनुकूलतम रूप में हैं ?

भूमि संसाधन उपयोग की मात्रा वास्तव में विभिन्न तत्वों के आपसी क्रियाकलापों या अन्तर्सम्बन्धों पर आधारित होती है। किसी विशेष समय या स्थान पर इन तत्वों का संयोग यह निश्चय करता है कि भूमि संसाधन उपयोग की क्षमता क्या है ? भूमि उपयोग क्षमता का प्रत्यय इस दृष्टिकोण से परिवर्तनशील है कि विभिन्न उत्पादक तत्व विभिन्न मात्रा तथा किस्म में प्रयुक्त होते हैं। अर्न्तनिहित भूमि संसाधन की विशेषतायें समयानुसार कम परिवर्तनशील हैं। सिंह ने हरियाणा राज्य की भूमि उपयोग क्षमता को निर्धारित किया है। इनके अनुसार भूमि उपयोग क्षमता से आशय कुल उपलब्ध भूमि में से बोई गई भूमि के प्रतिशत से हैं और भूमि उपयोग क्षमता तथा शस्य गहनता समान प्रत्यय हैं। इनका मत है कि भूमि उपयोग क्षमता निर्धारित करने का मुख्य उद्देश्य दो या दो से अधिक फसल क्षेत्र की मात्रा की जानकारी प्राप्त करना है। यदि बहु फसली क्षेत्र अधिक है तो शस्य गहनता या भूमि उपयोग क्षमता भी अधिक होगी। सिंह बी0 बी0 का विचार है कि भूमि उपयोग क्षमता तथा शस्य गहनता दो अलग-अलग पहलू हैं। शस्य गहनता, भूमि उपयोग क्षमता का एक महत्वपूर्ण पक्ष है। कृषि भूमि उपयोग क्षमता की परिभाषा का सम्बन्ध इस प्रभावोत्पादक क्रिया से है जहां पूंजी तथा श्रम के क्रमिक प्रयोग के आधार पर भूमि उत्पादन मात्रा में निरन्तर वृद्धि होती जाती है। अतः सिंह ने भूमि उपयोग क्षमता का प्रत्यय कोटि गणना के आधार पर विकसित किया है। भूमि उपयोग में पांच तत्वों, कृषि क्षेत्र, अकृष्य, कृष्य, सिंचित तथा बहुफसली क्षेत्र को कोटि गणना के

लिए चुना गया है और इन तत्वों के आधार पर मेरठ जिला के बढ़ौत विकासखण्ड में स्थित 54 ग्रामों में प्राप्त भूमि उपयोग क्षमता को पांच श्रेणियों में विभाजित किया है। शोधकर्ता सिंह बी0 बी0 की इस विधि को उत्तम मानते हुए अध्ययन क्षेत्र की भूमि उपयोग क्षमता की गणना करने में कुल प्रतिवेदित भूमि में शुद्ध बोए गए क्षेत्र, अकृष्य क्षेत्र , कृषि के अतिरिक्त अन्य उपयोग में लाई गई भूमिं, शुद्ध सिंचित क्षेत्र तथा बहुफसली क्षेत्र को चुनकर कोटि गणना विधि का प्रयोग किया गया है जिसे सारणी 3.5 में प्रस्तुत किया जा रहा है।

तालिका 3.5: अध्ययन क्षेत्र में विकासखण्ड स्तर पर भूमि उपयोग क्षमता

श्रेणी गुणांक	क्षमता	विकासखण्डों की संख्या	विकासखण्डों के नाम
5 से 6	उच्चतम	3	महेवा, बसरेहर, सहार
6 से 7	उच्च	3	ताखा, भरथना, विधूना
7 से 8	सामान्य	4	जसवन्तनगर, अजीतमल, एरवाकटरा, अछल्दा
8 से 9	न्यून	2	भाग्यनगर, औरैया
9 से 10	न्यूनतम	2	चकरनगर, बढ़पुरा

सारणी क्रमांक 3.5 से स्पष्ट हो रहा है कि उच्चतम भूमि उपयोग क्षमता को प्रदर्शित करने वाले विकासखण्डों में तीन विकासखण्ड महेवा, बसरेहर तथा सहार आते हैं। उच्च क्षमता प्रदर्शित करने वाले ताखा, भरथना तथा विधूना विकासखण्ड है। सामान्य भूमि उपयोग क्षमता प्रदर्शित करने वाले विकासखण्डों में जसवन्तनगर, अजीतमल, एरवाकटरा, तथा अछल्दा हैं। इसी प्रकार न्यून क्षमता भाग्यनगर तथा औरैया और न्यूनतम भूमि उपयोग क्षमता का प्रदर्शन चकरनगर और बढ़पुरा विकासखण्ड हैं जहां कि ऊबड़ खाबड़ भूमि के कारण भूमि उपयोग क्षमता कम है।

2. *अध्ययन क्षेत्र की वार्षिक फसलें:*

किसी भी अर्थव्यवस्था की वार्षिक फसलों का निर्धारण वहां के प्राकृतिक पर्यावरण से होता है। दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि फसलों की विविधिता एवं सघनता क्षेत्र के विभिन्न तापमान मिट्टी के गुण

धर्म, वर्षा की मात्रा और भूमिगत जल स्तर की मात्रा इत्यादि से प्रभावित होती है। इस दृष्टि से यदि देखा जाये तो जनपद में वर्ष में तीन फसलें उगाई जाती हैं, यह फसलें ऋतु परिवर्तन से प्रभावित होती हैं। अर्थात वर्षा ऋतु में खरीफ, शरद ऋतु में रबी तथा ग्रीष्म ऋतु में जायद फसलों का वर्चस्व रहता है। इसमें से रबी फसल का अपना एक महत्वपूर्ण स्थान है जिसकी कुल कृष्य भूमि में 50 प्रतिशत से भी अधिक भागेदारी है। जनपद में सम्पूर्ण फसलोत्पादन को दो भागों में विभाजित किया जा सकता है – खाद्य फसलें तथा अखाद्य फसलें। खाद्य फसलों के अन्तर्गत गेहूं, धान, ज्वार, बाजरा, मक्का तथा जौ ही प्रमुख हैं। दलहन फसलों में उर्द, मूंग, अरहर, चना तथा मटर ही प्रमुख रूप से उगाई जाती हैं। मसूर का भी अस्तित्व है परन्तु बहुत कम। तिलहनी फसलों में लाही, सरसों का ही प्रमुख स्थान है जबकि अखाद्य फसलों में गन्ना ही उगाया जाता है। जायद फसलों में सब्जियां, खीरा, ककड़ी, खरबूजा तथा तरबूज ही प्रमुख हैं। सब्जियां हर मौसम में उगाई जाती हैं। इस प्रकार कुल मिलाकर यह कहा जा सकता है कि जनपद के शस्य स्वरूप में खाद्यान्न फसलों का ही बोलबाला है। सारणी क्रमांक 3.6 में विभिन्न मौसमों की विभिन्न फसलों को दर्शाया गया है।

सारणी क्रमांक 3.6 जनपद में विकासखण्ड स्तर पर तीनों फसलों रबी, खरीफ तथा जायद के क्षेत्रफल पर प्रकाश डाल रही हैं। सारणी से ज्ञात हो रहा है कि विभिन्न विकासखण्डों में रबी की फसल में 51 प्रतिशत से 59.88 प्रतिशत तक भिन्नता है। अर्थात बसरेहर विकासखण्ड में रबी फसल की भागेदारी 51.38 प्रतिशत तथा भाग्यनगर की सर्वाधिक 59.88 प्रतिशत भागेदारी दिखाई पड़ रही है। 55 प्रतिशत से अधिक हिस्सेदारी दर्शाने वाले अन्य विकासखण्ड जसवन्तनगर 55.77 प्रतिशत, भरथना 55.03 प्रतिशत, चकरनगर 56.50 प्रतिशत , अछल्दा 55.77 प्रतिशत , विधूना 55.55 प्रतिशत, एरवाकटरा 57.74 प्रतिशत, सहार 56.48 प्रतिशत औरैया 55.29 प्रतिशत तथा अजीतमल 55.44 प्रतिशत हिस्सेदारी प्रदर्शित करते हैं। केवल तीन विकासखण्ड जो 55 प्रतिशत से कम भागेदारी कर रहे हैं। वे बढ़पुरा 52.70 प्रतिशत, बसरेहर 51.38 प्रतिशत तथा ताखा 52.96 प्रतिशत, रबी फसल का हिस्सा प्रदर्शित कर रहे हैं। इसका अर्थ है कि जनपद में रबी की फसल का एक महत्वपूर्ण स्थान है।

तालिका क्रमांक 3.6: विकासखण्ड स्तर पर विभिन्न फसलों का क्षेत्रफल 1990-91 (हेक्टेअर में)

क्र.सं.	विकासखण्ड	रबी	खरीफ	जायद	कुल
1.	जावन्तनगर	23346	17585	932	41863
		(55.77)	(42.00)	(2.23)	
2.	बढ़पुरा	11262	9838	268	21368
		(52.70)	(46.04)	(1.26)	
3.	बसरेहर	23594	21170	1157	45921
		(51.38)	(46.10)	(2.52)	
4.	भरथना	16112	12623	544	29279
		(55.03)	(43.11)	(1.86)	
5.	ताखा	14910	12896	349	28155
		(52.96)	(45.80)	(1.24)	
6.	महेवा	20035	15887	599	36511
		(54.87)	(43.51)	(1.62)	
7.	चकरनगर	9594	7364	3	16961
		(56.56)	(43.42)	(0.02)	
8.	अछल्दा	15926	12320	311	28557
		(55.77)	(43.14)	(1.09)	
9.	विधूना	17183	13393	354	30930
		(55.55)	(43.30)	(1.15)	
10.	एरवाकटरा	14148	9979	377	24504
		(57.74)	(40.72)	(1.54)	
11.	सहार	17131	12799	404	30334
		(56.48)	(42.19)	(1.33)	
12.	औरैया	21151	17061	40	38252
		(55.29)	(44.60)	(0.11)	
13.	अजीतमल	13768	10870	196	24834
		(55.24)	(43.77)	(0.79)	
14.	भाग्यनगर	16372	10648	321	27341

	(59.88)	(38.95)	(1.17)	
ग्रामीण	234532	184411	5845	24810
	(55.21)	(43.41)	(1.38)	
समस्त नगरीय	288	205	34	527
	(54.65)	(38.90)	(6.45)	
योग जनपद	234820	184616	5879	425337
	(55.21)	(43.41)	(0.38)	

स्रोतः- सांख्यकीय जनपद इटावा, 1992.
(कोष्टक में विभिन्न फसलों का प्रतिशत अनुपात दर्शाया गया है।)

जहां तक खरीफ फसल का सवाल है तो इसका महत्व भी जनपद में कम नही है, कुल कृषि क्षेत्र में खरीफ फसल का प्रतिनिधित्व औसत रूप में 43.41 प्रतिशत है। इस औसत से अधिक खरीफ फसल का क्षेत्रफल रखनेवाले विकासखण्डों में बढ़पुरा 46.04 प्रतिशत, बसरेहर 46. 10 प्रतिशत, ताखा 45.80 प्रतिशत, महेवा 43.51 प्रतिशत, चकरनगर 43.42 प्रतिशत, औरैया 44.60 प्रतिशत, अजीतमल 43.77 प्रतिशत है। जबकि जनपदीय औसत से कम भागेदारी करने वाले विकासखण्ड जसवन्तनगर 42.00 प्रतिशत, भरथना 43.11 प्रतिशत, अछल्दा 43.14 प्रतिशत, विधूना 43.30 प्रतिशत, एरवाकटरा 40.72 प्रतिशत, सहार 42.19 प्रतिशत तथा भाग्यनगर 38.95 प्रतिशत है। जायद फसलों का क्षेत्रफल जनपद में कुल कृषि क्षेत्र का मात्र 1.38 प्रतिशत है परन्तु कुछ विकासखण्डों की भागेदारी 2 प्रतिशत से भी अधिक है। जिनमें दो विकासखण्ड जसवन्तनगर 2.93 प्रतिशत तथा बसरेहर की सर्वाधिक 2.52 प्रतिशत हिस्सेदारी है। इस दृष्टि से वरीयता क्रम में चकरनगर विकासखण्ड मात्र 0.02 प्रतिशत हिस्सेदारी करके न्यूनतम स्थिति में है, इससे मिलती जुलती स्थिति में औरैया 0.11 प्रतिशत तथा अजीतमल 0.79 प्रतिशत है। अन्य विकासखण्ड प्रतिशत से अधिक जायद फसलों की हिस्सेदारी रख रहे हैं परन्तु जिनकी भागेदारी 1.5 प्रतिशत से अधिक है, उनमें भरथना 1.86 प्रतिशत, महेवा 1.62 प्रतिशत तथा एरवाकटरा 1.54 प्रतिशत है। अन्य विकासखण्ड 1.5 से 1 प्रतिशत तक भागेदारी निर्वाह कर रहे हैं। वास्तव

में खाद्यान्नों के अलावा जायद फसलें ही खाद्य सामग्री में सब्जियां उपलब्ध कराती हैं।

संतुलित भोजन में न्यूनाधिक हरी सब्जियों, जड़दार सब्जियां, पत्तेदार सब्जियों का भी महत्वपूर्ण स्थान है। इस दृष्टि से देखा जाये तो जनपद में पर्याप्त क्षेत्र में इन फसलों का उत्पादन किया जाता है। इस प्रकार स्पष्ट है कि जनपद में रबी का औसत हिस्सा 55.21 प्रतिशत है। जबकि खरीफ का 43.41 प्रतिशत है और जायद फ़सलों का मात्र 1.38 प्रतिशत भाग है।

जनपद में तीनों ही फसलों में खाद्यान्नों का ही वर्चस्व है क्योंकि कुल कृषित क्षेत्र के 85 से अधिक भाग पर खाद्यान्न फसलें बोई जाती हैं जबकि व्यवहारिक फसलों के अन्तर्गत बोया जानेवाला क्षेत्र 15 प्रतिशत से भी कम है।

1. *खरीफ की प्रमुख फसलें:*

ऊँचे तापक्रम तथा आद्र वायुमण्डलीय दशाओं में खरीफ ऋतु प्रारम्भ होती है। इस ऋतु की फसलें जून-जुलाई में बोई जाती हैं और अक्टूबर-नवम्बर तक पककर तैयार हो जाती हैं। इस दृष्टि से देखा जाये तो अध्ययन क्षेत्र में खरीफ की फसलों में धान, ज्वार, बाजरा तथा मक्का आदि खाद्यान्न फसलों में प्रमुख फसलें हैं। जबकि दलहनी फसलों में उर्द, मूंग, अरहर तथा सोयाबीन आदि प्रमुख फसलें उगाई जाती हैं, इस ऋतु में मूंगफली भी अपनी उपस्थिति दर्शाकर अपने अस्तित्व के लिए संघर्ष करती प्रतीत हो रही है। इसके अतिरिक्त इस ऋतु में सब्जियां भी एक महत्वपूर्ण स्थान रखती हैं। जनपद में खरीफ फसलों का विवरण अग्रांकित है।

1. *धान:*

धान जनपद की खरीफ में उगाई जानेवाली एक महत्वपूर्ण फसल है। जनपद में कुछ क्षेत्रों में अधिकांश लोगों का प्रमुख भोजन है। चावल अन्य धान्य फसलों से कैलोरी एवं भोजनात्मक मान के दृष्टिकोण से कम नहीं हैं। इसमें 7.7 प्रतिशत प्रोटीन, 72.5 प्रतिशत कार्बोहाइड्रेट (स्टार्च), 2.2 प्रतिशत वसा, 5.9 प्रतिशत राख, 11.8 प्रतिशत सेल्यूलोज पाया जाता है। जनपद के खरीफ फसल के कुल क्षेत्र के लगभग 37 प्रतिशत क्षेत्र पर यह फसल उगाई जाती है। विभिन्न फसलों के अन्तर्गत क्षेत्रफल की दृष्टि से इसका द्वितीय स्थान है। जबकि खरीफ फसल में इसका प्रथम स्थान है।

भोजन के रूप में प्रयोग करने के अतिरिक्त चावल का प्रयोग विभिन्न उद्योगों में किया जाता है। चावल में पाये जानेवाले स्टार्च का कपड़ा उद्योग में विशेष रूप से प्रयोग किया जाता है। सूखे पौधों को कांच का सामान एक स्थान से दूसरे स्थान पर भेजते समय पैकिंग के समय प्रयोग किया जाता है। हरे पौधों को चारे के रूप में , सूखे पौधों को निर्धन वर्ग बिछावन के रूप में भी प्रयोग करते हैं।

धान की अच्छी उपज के लिए अधिक वर्षा तथा अधिक नमी की आवश्यकता होती है, जिन क्षेत्रों में 100 से0मी0 से कम वर्षा होती है, वहां पर कृत्रिम सिंचाई की आवश्यकता होती है। स्पष्ट है कि कम वर्षा वाले क्षेत्रों में यदि सिंचाई की कृत्रिम सुविधा उपलब्ध होगी तभी धान की अच्छी उपज प्राप्त की जा सकती है, साथ ही इस फसल को पानी की अधिक आवश्यकता होने के कारण इस फसल के क्षेत्रीय वितरण में अधिक भिन्नता देखने को मिलती है। एक अन्य महत्वपूर्ण तथ्य जो इस फसल क्षेत्र को बहुत प्रभावित करता है वह है उस क्षेत्र की मिट्टी। धान की खेती के लिए भारी भूमि की आवश्यकता होती है जिसमें पानी रोकने की क्षमता अधिक होती है। चिकनी दोमट मिट्टी जिसमें जीवांश की पर्याप्त मात्रा हो, धान की खेती के लिए सर्वोत्तम मानी जाती है, 6.5 पी0 एच0 वाली भूमि इसके लिए सर्वाधिक उपयुक्त होती है।

धान की उत्पत्ति के विषय में विभिन्न मत है। अनेक भारतीय विद्वानों का मत है कि धान का जन्म स्थान भारतवर्ष, वर्मा तथा इण्डोचाइना हो सकता है क्योंकि धान की जंगली पत्तियां भारतवर्ष तथा दक्षिण पूर्वी एशिया में बहुतायत से पाई जाती हैं। इसके अतिरिक्त चावल का प्रयोग भारत में औसत के रूप में धार्मिक अनुष्ठानों, उत्सवों तथा शुभ अवसरों पर होता आया है। हिन्दुओं के सबसे प्राचीन ग्रन्थ ऋग्वेद में भी चावल का वर्णन पाया जाता है। घोष और उनके साथियों पार्थसारथी (1960) के अनुसार चावल का प्राचीनतम अवशेष उत्तर प्रदेश के हस्तिनापुर ग्राम की खुदाई से प्राप्त हुआ है। मोहन जोदड़ों और हड़प्पा की खुदाइयों से प्राप्त अवशेषों के आधार पर भारतवर्ष में चावल ईशा सें 5000 वर्ष पूर्व से ही उगाया जा रहा है। बेबीलोव के मतानुसार भारत तथा वर्मा दोनों ही चावल के जन्म स्थान हैं।

जनपद में धान की खेती के दो प्रकार प्रचलित हैं।

1. खेत में धान के पौध की रोपाई करके :

यह विधि उन्हीं क्षेत्रों में अपनाई जाती है जहां पर पानी की उचित व्यवस्था होती है या वर्षाकाल में पानी धान लगाने वाले खेतों में इकटठा हो जाता है तथा श्रम भी आसानी से उपलब्ध हो जाता है।

2. खेत में सीधे बुवाई करके सीधी बुवाई की दशा में तीव्र पकने वाली जातियां जैसे- साकेत 4, गोविन्द, कावेरीबाला तथा नगीना 22 आदि उगाई जाती हैं। जनपद में धान की कई जातियां उगाने का प्रचलन है इनमें देशी जातियों में बासमती, हंसराज, रामभोग, विष्णु पराग, लकड़ा, श्याम जीरा, लटेरा तथा इन्द्रासन प्रमुख हैं। जबकि उन्नत किस्म की जातियों में नगीना 22, गोविन्द, प्रसाद, पूसा 33, साकेत 4, कावेरी, रत्ना, पद्मा, सरजू 49, विजया, जया, कृष्णा, आई0 आर0 8 तथा जयन्ती प्रमुख रूप से उगाई जाती हैं।

2. मोटे अनाज:

हमारे देश में ज्वार, बाजरा तथा मक्का मोटे अनाज के रुप मे जाने जाते है। ये फसले न केवल मनुष्यो को खाद्यान्न ही उपलब्ध कराती है बल्कि पशुओ के लिए हरा एवं सूखा चारा भी आपूर्ति करती है। ज्वार तथा बाजरा के पौधे लगभग एक समान ऊँचाई के होते है परन्तु मक्का का पौधा ऊँचाई मे कम होता है। इन फसलो को जनपद मे दूसरा स्थान प्राप्त है। यदि तीनो की भागेदारी देखे तो इन तीनो फसलो की खरीफ फसल मे भागेदारी लगभग 44 प्रतिशत है।

ज्वार:

अध्ययन क्षेत्र में खाद्यान्न फसलों में ज्वार का एक महत्वपूर्ण स्थान है जनपद के समस्त विकासखण्डों में न्यूनाधिक ज्वार की फसल उगाई जाती है। यह दाने तथा चारे के लिए उगाई जाती है। इसमें 10.4 प्रतिशत प्रोटीन होती है। प्रति 100 ग्राम ज्वार में 349 कैलोरी उर्जा होती है तथा 72.6 प्रतिशत काबोहाइडेट्स पाया जाता है। ज्वार की उत्पत्ति स्थान के बारे में अलग-अलग मत हैं। डीकडोल तथा हूकर के अनुसार ज्वार की उत्पत्ति

स्थान अफ्रीका है जबकि बर्थ के अनुसार भारत व अफ्रीका है। बेविलोव ज्वार के उत्पत्ति स्थान को अवीसीनिया मानते हैं। ज्वार गर्म जलवायु की फसल है। 30-100 से0मी0 वर्षा वाले स्थानों में ज्वार की खेती की जाती है। 25 से 35 डिग्री सें0ग्रे0 तक का तापमान इस फसल के अनुकूल पड़ता है। इसके फूल पड़ते समय तथा परागण के समय वर्षा हानिकारक होती है। अध्ययन क्षेत्र में देशी तथा उन्नत किस्म दोनों प्रकार की प्रजातियां उगाई जाती हैं। देशी जातियों में वर्षा टा0 22, मऊ टा0 1 तथा उन्नतिशील जातियों में एस0 पी0 एच0 196, सी0 एस0 एच0 5, सी0 एस0 एच0 9, सी0 एस0 एच0 1 आदि प्रमुख रूप से उगाई जाती हैं।

बाजरा:

मोटे अनाजों में बाजरा सर्वाधिक महत्वपूर्ण फसल है और जाड़े के दिनों में अमीर व गरीब लोग बाजरा की रोटी खाना पसन्द करते हैं। बाजरा खरीफ में धान के अतिरिक्त अन्य फसलों में अधिक क्षेत्र में उगाया जाता है क्योंकि बाजरा अन्य फसलों की अपेक्षा सूखा अधिक सहन कर सकता है। इसलिये शुष्क क्षेत्रों की यह प्रमुख फसल है। इसके दाने में 11.6 प्रतिशत प्रोटीन पायी जाती है तथा 67.5 प्रतिशत कार्बोहाइडेट्स होता है। प्रति 100 ग्राम बाजरे के दाने से 391 कैलोरी उर्जा प्राप्त होती है। इसकी ख़ेती 40-75 से0मी0 वार्षिक वर्षा वाले क्षेत्रों में सफलतापूर्वक की जाती है। बाजरे की फसल के लिए 21 से 27 से0ग्रे0 तापमान उपयुक्त रहता है। अच्छे जल निकास वाली बलुई दोमट भूमि बाजरा के लिए सर्वोत्तम होती है। दोमट भूमि में भी बाजरा की खेती सफलतापूर्वक की जा सकती है। अधिकांश वैज्ञानिकों के मतानुसार बाजरा की उत्पत्ति स्थल अफ्रीका है। बर्थ के अनुसार इसका उत्पत्ति स्थल भारत है। अध्ययन क्षेत्र में यह न्यूनाधिक सभी विकासखण्डों में उगाया जाता है। देशी जातियों में मैनपुरी, पूसा, मोती, बाजरा फतेहाबाद आदि किस्में प्रमुख रूप से बोई जाती हैं जबकि उन्नत किस्म की जातियों में डब्ल्यू0 सी0 सी0 15, एम0 पी0 19, विजय पी0 एस0 वी0 , पी0 एच0 वी0 14 तथा वी0 के0 104 आदि प्रमुख रूप से उगाई जाती हैं।

मक्का:

मक्का भी मोटे अनाज की खरीफ ऋतु की एक महत्वपूर्ण फसल है। मक्का दाने, चारे व भुट्टे के लिए उगाई जाती है। यह विशेष रूप से गरीब जनता का भोजन है। मक्का में 11.6 प्रतिशत प्रोटीन, 78.9 प्रतिशत कार्बोहाइड्रेट्स, 5.3 प्रतिशत वसा, 1.5 प्रतिशत राख तथा 2.6 प्रतिशत सेल्यूलोज पाया जाता है। इसके दाने भुनवाकर खील बनाई जाती है। इसका प्रयोग औद्योगिक रूप से शराब, स्टार्च, प्लास्टिक, गोंद, रंग, ग्लूकोज, रेमन आदि तैयार करने में किया जाता है। मक्का को रातिब के रूप में पशुओं को भी खिलाया जाता है। अधिकतर वैज्ञानिकों के मतानुसार मक्का का जन्म स्थान मध्य अमेरिका तथा मैक्सिकों है। इन क्षेत्रों में की गई खुदाइयों में मक्का के पौधे के अवशेष पाये गए हैं। भारत में मक्का का प्रवेश सोलहवीं शताबदी में पुर्तगालियों द्वारा हुआ। मक्का के लिए ऊँची, समतल व उत्तम जल निकास वाली भूमि उपयुक्त मानी जाती है। इसके लिए बलुई दोमट या दोमट मिट्टी सर्वोत्तम मानी जाती है। मिट्टी का पी0एच0 6.5 से लेकर 7.5 तक होना चाहिये। अध्ययन क्षेत्र में टाइप 41, जौनपुरी सफेद, मेरठ पीली, गंगा 2, वी0 एल0 42, संगम 54 आदि जातियां बोई जाती हैं, इनमें से गंगा 2 तथा 41 भुट्टे उगाई जाती हैं। अन्य जातियां खाद्यान्न के लिए उगाई जाती हैं। मोटे अनाज का जनपद में विकासखण्ड स्तर पर विवरण सारणी क्रमांक 3.7 में दर्शाया जा रहा है।

तालिका क्रमांक 3.7: विकासखण्ड स्तर पर धान तथा मोटे अनाज का वितरण 1990-91 (हेक्टेअर में)

क्र.सं.	विकासखण्ड	कुल खरीफ फसल का क्षेत्रफल	धान	ज्वार	बाजरा	मक्का
1.	जसवन्तनगर	17585	3775	122	6769	2904
		(100.00)	(21.47)	(0.69)	(38.49)	(16.51)
2.	बढ़पुरा	9834	640	86	6214	292
		(100.00)	(6.51)	(0.87)	(63.16)	(2.97)
3.	बसरेहर	21170	12960	324	2446	2769
		(100.00)	(61.22)	(1.53)	(11.55)	(13.08)

4. भरथना	12623	7040	269	2190	1291
	(100.00)	(55.77)	(2.13)	(17.35)	(10.23)
5. ताखा	12896	8755	197	942	2027
	(100.00)	(67.89)	(1.53)	(5.75)	(15.72)
6. महेवा	15887	2097	423	7044	1296
	(100.00)	(13.20)	(2.66)	(44.34)	(8.16)
7. चकरनगर	7364	7	37	5532	14
	(100.00)	(0.10)	(0.50)	(75.12)	(0.19)
8. अछल्दा	12320	5561	443	2300	2172
	(100.00)	(45.14)	(3.60)	(18.67)	(17.63)
9. विधूना	13371	7885	460	809	2907
	(100.00)	(58.97)	(3.44)	(6.05)	(21.74)
10. एरवाकटरा	9979	5144	428	594	2991
	(100.00)	(51.55)	(4.29)	(5.95)	(29.97)
11. सहार	12799	7353	561	1517	1908
	(100.00)	(57.45)	(4.36)	(11.85)	(14.91)
12. औरैया	17061	2252	580	9074	342
	(100.00)	(13.20)	(3.40)	(53.19)	(2.01)
13. अजीतमल	10870	1561	440	4946	582
	(100.00)	(14.36)	(4.05)	(45.50)	(5.35)
14. भाग्यनगर	10648	3576	561	3468	1081
	(100.00)	(33.02)	(5.27)	(32.57)	(10.15)
ग्रामीण योग	184411	68546	4931	53645	22576
	(100.00)	(37.17)	(2.67)	(29.09)	(12.24)
योग नगरीय	205	32	5	46	26
	(100.00)	(15.61)	(2.44)	(22.44)	(12.68)
योग जनपद	184616	68578	4936	53691	22602
	(100.00)	(37.15)	(2.67)	(29.08)	(12.24)

स्रोतः- सांख्यकीय पत्रिका जनपद इटावा, 1992.

(कोष्टक में दिए गए समंक कुल खरीफ फसल से प्रतिशत अनुपात प्रदर्शित है।)

सारणी क्रमांक 3.7 में जनपद में विकासखण्ड स्तर पर खरीफ की धान तथा मोटे अनाजों वाली फसलों के वितरण का चित्र प्रस्तुत कर रही हैं। क्षेत्रफल वितरण की दृष्टि से देखें तो इन फसलों के क्षेत्रफल में विकासखण्ड स्तर पर काफी भिन्नता देखने को मिलती है। जहां तक जनपद में खरीफ फसल की सर्वाधिक महत्वपूर्ण फसल का प्रश्न है तो धान की फसल 35.15 प्रतिशत क्षेत्रफल पर अपनी हिस्सेदारी प्रदर्शित करके

सर्वाधिक महत्वपूर्ण फसल दृष्टिगोचर हो रही है। दूसरे स्थान पर बाजरा की फसल है। जो कुल 29.08 प्रतिशत क्षेत्रफल को बांट रही है। तीसरा स्थान मक्का प्राप्त कर रही है जो 12.24 प्रतिशत क्षेत्रफल पर उगाई जा रही हैं। ज्वार का स्थान मोटे अनाजों में सबसे निम्न है जो कि केवल 2.67 प्रतिशत क्षेत्रफल पर अपनी भागेदारी करके केवल अपनी उपस्थिति ही दर्शा पा रही है। विकासखण्ड स्तर पर इन फसलों का विवरण इस प्रकार है।

धान:

यह जनपद में खरीफ में उपजाई जानेवाली प्रमुख फसल है। प्रायः प्रत्येक विकासखण्ड में यह फसल उगाई जाती है। धान की अच्छी उपज के लिए अधिक वर्षा तथा अधिक गर्मी की आवश्यकता होती है। जिन क्षेत्रों में 100 से0 मी0 से कम वर्षा होती है वहां सिंचाई की आवश्यकता होती है। साथ ही इस फसल को अधिक पानी की आवश्यकता होने के कारण कम मूल्य पर पानी उपलब्ध हो, अन्यथा उत्पादन लागत बढ़ जाने के कारण यह फसल अधिक लाभदायक नहीं रह पाती है और यही कारण है कि विभिन्न विकासखण्डों में सिंचाई सुविधाओं में भिन्नता के कारण इस फसल के वितरण में अधिक भिन्नता देखने को मिल रही है। एक अन्य महत्वपूर्ण तत्व जो फसल के वितरण को प्रभावित कर रहा है वह है मिट्टी। धान की खेती के लिए चिकनी मिट्टी होनी चाहिये जिसमें नमी रोकने की क्षमता सर्वाधिक होंती है। स्पष्ट है कि सिंचन सुविधा तथा मिट्टी दोनों ही तत्व इस फसल की उत्पादकता को प्रभावित करते हैं। इसी कारण विभिन्न विकासखण्डों में इस फसल का वितरण भिन्न-भिन्न है, इस दृष्टि से देखें तो ताखा विकासखण्ड इस फसल की 67.89 प्रतिशत भागेदारी करके सर्वोच्च स्थान पर है जबकि इसके विपरीत चकरनगर विकासखण्ड इस फसल की केवल उपस्थिति मात्र ही दर्शा पा रहा है। क्योंकि इस विकासखण्ड की न तो भूमि ही समतल है और न सिंचाई सुविधा ही पर्याप्त है, जिसके कारण यह विकासखण्ड आज भी इस फसल को उगाने की अनुकूल परिस्थितियां नहीं बना पा रहा है। वरीयता क्रम में दूसरा स्थान बसरेहर विकासखण्ड का है जो 61.22 प्रतिशत क्षेत्रफल का उपयोग इस फसल के लिए कर रहा है। जिन विकासखण्डों में खरीफ फसल के सम्पूर्ण क्षेत्रफल में धान की भागेदारी 50 प्रतिशत से अधिक है उनमें से उक्त दोनों

विकासखण्डों के अतिरिक्त भरथना 55.77 प्रतिशत विधूना 58.97 प्रतिशत, एरवाकटरा 51.55 प्रतिशत, सहार 57.45 प्रतिशत है। इन विकासखण्डों के अतिरिक्त जनपदीय स्तर से अधिक क्षेत्रफल धान के लिए आवंटित करने वाला विकासखण्ड अछल्दा 45.41 प्रतिशत है। औरैया, अजीतमल तथा महेवा तीनों ही विकासखण्डों की स्थिति न्यूनाधिक एक समान ही है। जहां पर इस फसल का कोई महत्वपूर्ण प्रतिनिधित्व नहीं है। भाग्यनगर विकासखण्ड का लगभग एक तिहाई क्षेत्रफल पर धान की फसल उगा रहा है।

2. मोटे अनाज (ज्वार, बाजरा तथा मक्का):

हमारे देश में ज्वार, बाजरा तथा मक्का मोटे अनाज के नाम से जाने जाते हैं। ये फसलें न केवल मनुष्यों को खाने के लिए अनाज ही उपलब्ध कराती हैं अपितु पशुओं के लिए हरा व सूखा चारा भी उपलब्ध कराती हैं। ज्वार, बाजरा के पौधे तो लगभग एक समान ऊँचाई के होते हैं, परन्तु मक्का का पौधा अपेक्षाकृत ऊँचाई में कम होता है। इन फसलों में जनपद में बाजरा तथा मक्का ही प्रमुख रूप में उगाये जाते हैं। ज्वार का क्षेत्रफल अत्यन्त कम है। यदि हम तीनों फसलों की भागेदारी देखें तो कुल खरीफ क्षेत्रफल में इन तीनों फसलों की हिस्सेदारी लगभग 44 प्रतिशत है जो धान की भागेदारी से लगभग 7 प्रतिशत अधिक है। बाजरा की फसल के सम्बन्ध में विकासखण्ड स्तर पर विचार करें तो खरीफ फसल में सर्वाधिक हिस्सेदारी चकरनगर विकासखण्ड की है जो कि 75.12 प्रतिशत क्षेत्रफल पर बाजरा की फसल उगा रहा है। इसी से मिलती जुलती स्थिति में बढ़पुरा विकासखण्ड है जो कि इस फसल के लिए 63.16 प्रतिशत क्षेत्र आवंटित करके द्वितीय स्थान पर है। इसका मूल कारण यह है कि दोनों ही विकासखण्डों की प्राकृतिक स्थिति लगभग एक समान है। दोनों ही यमुना तथा चम्बल नदियों से प्रभावित हैं, दोनों की ही भूमि ऊँची-नीची हैं जो कि बाजरा फसल के लिए अत्यन्त उपयुक्त है और यही कारण है कि ये दोनों ही विकासखण्ड बाजरा फसल को अत्यधिक महत्व दे रहे हैं। औरैया विकासखण्ड भी इस फसल 53.19 प्रतिशत क्षेत्रफल आवंटित करके इस फसल के महत्व को दर्शा रहा है। जबकि अजीतमल 45.50 प्रतिशत तथा महेवा विकासखण्ड 44.34 प्रतिशत क्षेत्रफल पर इस फसल का उत्पादन

करके लगभग एक समान स्थिति में है। भाग्यनगर विकास खण्ड 32.57 प्रतिशत तथा जसवन्तनगर 38.49 प्रतिशत क्षेत्रफल पर बाजार की हिस्सेदारी कर रहे हैं अन्य विकासखण्ड न्यूनाधिक 20 प्रतिशत से कम की हिस्सेदारी प्रदर्शित कर रहे है।

मोटे अनाज में मक्का भी एक महत्वपूर्ण फसल के रूप में जनपद में उगाई जाती है। इस फसल का जनपद में सर्वाधिक महत्वपूर्ण स्थान एरवाकटरा विकासखण्ड का है जहां पर यह फसल 29.97 प्रतिशत क्षेत्रफल पर बोई जाती है। वरीयता के क्रम में दूसरा स्थान विधूना विकासखण्ड का है जहां पर यह फसल 21.74 प्रतिशत क्षेत्रफल पर हिस्सेदारी कर रही है और इन दोनों ही विकासखण्डों में धान के बाद इस फसल को दूसरी महत्वपूर्ण फसल का दर्जा प्राप्त है। अन्य विकासखण्डों में जहां इस फसल को दूसरा स्थान प्राप्त है, उनमें सहार 14.91 प्रतिशत, ताखा 15.72 प्रतिशत, बसरेहर 3.08 प्रतिशत तथा जसवन्तनगर 16.51 प्रतिशत क्षेत्रफल पर मक्का की खेती कर रहे हैं। अन्य विकासखण्डों में इसकी भागेदारी अछल्दा 17.63 प्रतिशत, भरथना 10.23 प्रतिशत तथा भाग्यनगर विकासखण्ड 10.15 प्रतिशत हिस्सेदारी करके इसके महत्व को दर्शा रहे हैं। जबकि शेष विकासखण्ड 10 प्रतिशत से कम की हिस्सेदारी कर रहे हैं। ज्वार का स्थान मोटे अनाजों में तीसरा है और इस फसल का क्षेत्रफल किसी भी विकासखण्ड में 5 प्रतिशत से अधिक नहीं है। केवल भाग्यनगर विकासखण्ड को छोड़कर, जहां पर इस फसल को 5.27 प्रतिशत क्षेत्रफल पर उगाया जा रहा है। चकरनगर विकासखण्ड में इस फसल की न्यूनतम हिस्सेदारी हो रही है। जबकि बढ़पुरा विकासखण्ड भी कमोबेश चकरनगर की ही स्थिति में है।

खरीफ की दलहनी फसल:

दालों में प्रोटीन की मात्रा अधिक होने से भारतीय भोजन में दालों का विशेष महत्व है। कार्यशील जनसंख्या की बहुलता दालों के महत्व को और अधिक बढ़ा देती है इनमें से कुछ दालों की फसलें पशुओं के लिए पौष्टिक चारा उपलब्ध कराती हैं। जबकि कुछ हरी खाद के रूप में काम आती हैं। इनमें से अरहर, मूंग, उर्द तथा सोयाबीन भी खरीफ की प्रमुख दलहनी फसलें हैं। जबकि चना और मटर रबी की प्रमुख दलहनी फसलें हैं। खरीफ की दलहनी फसलों में अरहर की प्रधानता है। अरहर कहीं-कहीं स्वतन्त्र रूप

से बोई जाती है परन्तु अधिकांश रूप में यह मिश्रित फसल के रूप में उगाई जाती हैं जो ज्वार, बाजरा तथा मक्का के साथ बोई जाती हैं। गन्ने के साथ भी अरहर बोने का प्रचलन है। मिश्रित फसलों में यह बोई तो खरीफ फसलों के साथ जाती है। परन्तु यह फसल पकती रबी फसल के साथ है। अब तो उन्नत किस्म के बीजों के प्रचलन के साथ-साथ इसके पकने का समय अत्यन्त कम हो गया है जिससे कहीं-कहीं यह फसल स्वतन्त्र रूप से बोई जाने लगी है क्योंकि इसके कटने के बाद गेहूं की फसल उगाई जा सकती है। दलहनी फसलों का विवरण इंस प्रकार है।

1. *अरहर:*

दलहनी फसलों में अरहर का महत्वपूर्ण स्थान है। यह फसल अकेली तथा दूसरी फसलों के साथ भी बोई जाती है। ज्वार, बाजरा, मूंगफली, अरहर के साथ बोई जानेवाली प्रमुख फसलें हैं। अरहर की देर से पकने वाली प्रजातियां 9 से 10 महीने में पकती हैं और शीघ्र पकनेवाली प्रजातियां 4 से 5 महीने में पककर तैयार हो जाती हैं। इसके दाने में प्रोटीन की प्रचुर मात्रा (20.9) प्रतिशत पाई जाती है। लोहा तथा आयोडीन भी पर्याप्त मात्रा में होता है। इसकी लकड़ी ईंधन के रूप में जलाने के काम आती है। यह भूमि की उर्वरा शक्ति भी बढ़ाती है। विद्वानों के मतानुसार इसकी उत्पत्ति स्थल अफ्रीका माना जाता है वहीं से अन्य देशों में इसका प्रसार हुआ। अरहर शुष्क तथा नम दोनों ही प्रकार की गर्म जलवायु में सफलतापूर्वक उगाई जा सकती है, यह पाले से अत्यधिक प्रभावित होनेवाली फसल है, अधिक वर्षा भी इसके लिए हानिकारक होती है। अरहर के लिए बलुई दोमट व दोमट भूमि अच्छी होती है, उचित जल निकास तथा हल्के ढालू खेत इसके लिए सर्वोत्तम होते हैं। अध्ययन क्षेत्र में कम समय में पकने वाली प्रजातियों में पूसा, अगेती, पूसा 74, पन्त ए0 3 तथा मानक टाइप 21 प्रमुख रूप से बोई जाती हैं। देर से पकनेवाली प्रजातियों में टाइप 7 तथा टाइप 17 ही प्रमुख रूप से प्रचलित है।

2. *उर्द / मूंग:*

दलहनी फसलें उगाने से भूमि की उर्वरा शक्ति बढ़ती है क्योंकि इनकी जड़ों में पाए जानेवाले राइजोबियम वैक्टीरिया वायुमण्डल से नाइट्रोजन लेकर उसे जमीन में संचित कर लेते हैं। मूंग, उड़द भूमि में लगभग

30-40 किलोग्राम नाइट्रोजन प्रति हेक्टेअर की दर से संचित कर सकते हैं। इन फसलों को हरी खाद के रूप में भी प्रयोग किया जा सकता है। यह फसलें अल्प अवधि की होने के कारण शस्य सघनता बढ़ाकर भूमि का अधिकतम उपयोग होने में सहायक होती हैं। यह फसलें भूमि को आच्छादन भी प्रदान करती हैं। जिससे भूमि का कटाव रोकने में सहायता मिलती है। इन फसलों को कम खाद तथा कम पानी की आवश्यकता होती है। इसलिए उत्पादन लागत भी कम होती है। उर्द में प्रोटीन की मात्रा 24 प्रतिशत होती है जबकि मूंग में 24 से 24.5 प्रतिशत तक प्रोटीन पाई जाती है।

3. *सोयाबीन:*

सोयाबीन दलहनी वर्ग की फसल है। भारत मुख्यतः एक शाकाहारी देश है। इसलिए यहां सोयाबीन जैसी फसल का विशेष महत्व है क्योंकि इससे चिकनाई व प्रोटीन दोनों ही मिलती हैं। सोयाबीन के दाने में सर्वाधिक 40-42 प्रतिशत प्रोटीन तथा 20-22 प्रतिशत तेल की मात्रा होती है। इसके अतिरिक्त इसमें 30 प्रतिशत तक कार्बोहाइड्रेट्स तथा खनिज लवण, विटामिन आदि पाए जाते हैं। सोयाबीन के दूध से पनीर, दही तथा अनेक प्रकार की मिठाइयां बनाई जाती हैं। सोयाबीन के आंटे से चपाती, पेस्टी, बड़ियां, समोसे, डबलरोटी व आइसक्रीम भी बना सकते हैं। इसमें स्टार्च की मात्रा कम होने से मधुमेह तथा अग्निमन्दता के रोगियों को विशेष लाभदायक है। सोयाबीन का तेल अनेक औषधिक वस्तुयें बनाने में प्रयोग होता है जैसे- वार्निश, पेन्ट्स, लिनोलियम, कीटनाशक दवायें, सौन्दर्य प्रसाधन सामग्री, सीमेण्ट, मोमबत्ती, साबुन, रंग, स्याही, चिकनाई औषधियां, टाइपराइटर रिबन, रबर, प्लाईवुड का सामान, कागज आदि। सोयाबीन की खली पशुओं का उत्तम आहार है। खली का उपयोग खाद के रूप में किया जा सकता है। अधिकांश विद्वानों के अनुसार सोयाबीन का जन्म स्थान चीन है। सोयाबीन के लिए गर्म तथा नम जलवायु की आवश्यकता होती हैं। 20-30 डि0से0ग्रे0 ताप इसकी वृद्धि के लिए उपयुक्त है। इसके लिए उत्तम जल निकास वाली दोमट भूमि सर्वोत्तम होती है। मृदा पी0 एच0 6.0 से 7.5 उपयुक्त रहती है। अध्ययन क्षेत्र में पी0 के0 416, शिलाजीत, अलंकार, अंकुर, पी0 के 0 262, पी0 के0 475 तथा जे0 एस0 2 प्रमुख रूप से बोई जाती है।

तालिका क्रमांक 3.8: जनपद में विकासखण्ड स्तर पर दलहनी फसलों का वितरण 1990-91 (हेक्टेअर में)

क्र.सं.	विकासखण्ड	उर्द	मूंग	अरहर	सोयाबीन
1.	जसवन्तनगर	316 (1.80)	181 (1.03)	1043 (5.93)	494 (2.81)
2.	बढ़पुरा	209 (2.12)	55 (0.56)	1258 (12.79)	37 (0.38)
3.	बसरेहर	147 (0.69)	333 (1.57)	653 (3.09)	372 (1.76)
4.	भरथना	282 (2.23)	122 (0.97)	433 (3.43)	156 (1.24)
5.	ताखा	59 (0.46)	146 (1.13)	344 (2.67)	288 (2.23)
6.	महेवा	2140 (13.47)	101 (0.64)	975 (6.14)	476 (3.00)
7.	चकरनगर	48 (0.55)	11 (0.14)	1636 (22.22)	16 (0.22)
8.	अछल्दा	189 (1.53)	107 (0.87)	729 (5.92)	312 (2.53)
9.	विधूना	71 (0.53)	113 (0.85)	531 (3.97)	294 (2.20)
10.	एरवाकटरा	48 (0.48)	93 (0.93)	389 (3.90)	144 (1.44)
11.	सहार	123 (0.96)	147 (1.15)	639 (4.99)	302 (2.36)
12.	औरैया	1288 (7.55)	85 (0.50)	2062 (12.09)	394 (2.31)
13.	अजीतमल	1451 (13.35)	10 (0.09)	636 (5.85)	448 (4.12)
14.	भाग्यनगर	290 (2.72)	67 (0.63)	675 (6.34)	126 (1.18)
ग्रामीण योग		6661 (3.61)	1571 (0.85)	12003 (6.51)	3859 (2.09)
योग नगरीय		10 (4.88)	11 (5.37)	18 (8.78)	24 (11.71)
योग जनपद		6671 (3.61)	1582 (0.86)	12021 (6.51)	3883 (2.10)

(कोष्टक में दिए गए समंक कुल खरीफ फसल क्षेत्र से प्रतिशत अनुपात प्रदर्शित है।)

तालिका 3.8 जनपद में विकासखण्ड स्तर पर दलहनी फसलों के क्षेत्रफल पर प्रकाश डाल रही है। सम्पूर्ण जनपद में दलहनी फसलों के क्षेत्रीय वितरण को यदि देखा जाये तो ज्ञात होता है कि अरहर दलहनी फसलों में सर्वाधिक क्षेत्र 12021 हेक्टेअर क्षेत्रफल में बोई जाती है। यह कुल खरीफ फसलों से 6.51 प्रतिशत हिस्सेदारी करके सर्वोत्तम स्थान पर है। यदि दलहनी फसलों में इस फसल के अनुपात को देखें तो लगभग आधे हिस्से पर यह फसल अपना वर्चस्व बनाए हुए है। दूसरे स्थान पर उड़द है। जो 6671 हेक्टेअर क्षेत्रफल पर आच्छादित है और कुल खरीफ फसल के 3.61 प्रतिशत पर अपनी हिस्सेदारी कर रहा है। यह एक सुखद तथ्य है कि दलहनी फसलों में सर्वाधिक पौष्टिक तथा प्रोटीनयुक्त सोयाबीन का जनपद में प्रसार 3883 हेक्टेअर क्षेत्रफल पर हो चुका है, इसके क्षेत्रफल में और अधिक वृद्धि की सम्भावनायें उज्जवल हैं, यदि इस फसल को पर्याप्त प्रोत्साहन दिया जाये तो कुपोषण जनित बीमारियों से बचाव किया जा सकता है।

विभिन्न विकासखण्डों में यदि दलहनी फसलों के वितरण की दृष्टि से देखें तो विभिन्न दलहनी फसलों का वितरण असमान है। अरहर फसल का सर्वाधिक विस्तार चकरनगर विकासखण्ड में देखा जा रहा है। जहां पर यह फसल अकेले 22.22 प्रतिशत क्षेत्र पर बोई जा रही है। इस प्रकार यह विकासखण्ड वरीयता क्रम में प्रथम स्थान प्राप्त कर रहा है। जबकि बढ़पुरा 12.79 प्रतिशत क्षेत्रफल पर इस फसल को उगाकार वरीयता क्रम में द्वितीय स्थान पर स्थित है। औरैया विकासखण्ड कमोबेश बढ़पुरा के ही समकक्ष स्थित है और यह विकासखण्ड 12.09 प्रतिशत क्षेत्रफल का उपयोग अरहर फसल के लिए कर रहा है। जहां तक इस फसल की न्यूनतम भागेदारी का प्रश्न है तो ताखा विकासखण्ड 2.67 प्रतिशत क्षेत्र पर अरहर बोकर इस फसल को अधिक महत्व नहीं दे रहा है। अन्य विकासखण्ड 3 से 7 प्रतिशत के मध्य इस फसल की हिस्सेदारी दर्शा रहे हैं। दलहनी फसलों में दूसरा स्थान उड़द फसल को प्राप्त हो रहा है। परन्तु कुछ विकासखण्डों में यह फसल प्रथम स्थान पर है। अजीतमल तथा महेवा विकासखण्डों में उड़द की फसल को दलहनी फसलों में प्रथम वरीयता प्राप्त है और यह क्रमशः 13.35 प्रतिशत तथा 13.47 प्रतिशत क्षेत्रफल में उड़द की फसल को उगा रहे हैं। स्वाभाविक है कि ये विकासखण्ड इस फसल की दृष्टि से सर्वोच्च स्थान पर है। इसके विपरीत मात्र 0.46 प्रतिशत भागेदारी करके इस फसल

के लिए न्यूनतम महत्व प्रदर्शित कर रहा है। अन्य विकासखण्ड 0.53 से 7.55 प्रतिशत भूमि का उपयोग इस फसल के लिए कर रहे हैं। जनपद में तीसरा स्थान सोयाबीन फसल का है। इस फसल का सर्वाधिक विस्तार अजीतमल में हुआ है, परन्तु अभी भी यह विकासखण्ड 5 प्रतिशत से भी कम भूमि का उपयोग इस फसल के लिए कर रहा है। इस फसल का न्यूनतम विस्तार चकरनगर विकासखण्ड में हो सका है। जहां मात्र 16 हेक्टेअर भूमि पर इस फसल को उगाया जा रहा है जबकि इससे लगभग दुगने क्षेत्र का उपयोग बढ़पुरा विकासखण्ड कर रहा है। अन्य विकासखण्डों में 1 प्रतिशत से 4 प्रतिशत तक भूमि का उपयोग इसके महत्व को दर्शा रहा है जहां तक मूंग फसल का सम्बन्ध है तो यह फसल भी विभिन्न विकासखण्डों में क्षेत्रफल की दृष्टि से अपनी उपस्थिति नहीं दर्शा पा रही है। कोई भी विकासखण्ड इस फसल के लिए 1.57 प्रतिशत से अधिक की हिस्सेदारी नहीं कर पा रहा है। अजीतमल विकासखण्ड में तो मात्र 10 हेक्टेअर भूमि ही इस फसल के लिए प्रयोग में लाई जा रही है। मूंग की फसल अभी तक जनपद के किसी भी विकासखण्ड में कोई महत्वपूर्ण स्थान अभी तक नहीं बना सकी है।

4. *अन्य फसलें:*

खरीफ फसल की अन्य फसलों में मूंगफली, तिल, सनई तथा हरे चारे की फसलें महत्वपूर्ण है। इनमें से मूंगफली तथा तिल, तिलहनी फसलें हैं। जबकि सनई को हरी खाद के रूप में अधिकांश बोया जाता है। सनई के रेशों से रस्सियों की आवश्यक्ता की पूर्ति भी होती है। हरे चारे के अर्न्तगत इस फसल मे चरी ही अधिकांश बोई जाती है। मूंगफली तथा तिल की फसल सम्पूर्ण जनपद में क्रमशः 65 तथा 353 हेक्टेअर क्षेत्रफल में उगाई जाती है। जबकि सनई के लिये 104 हेक्टेअर क्षेत्र का उपयोग किया जा रहा है, जबकि हरे चारे का सर्वाधिक क्षेत्र 5917 हेक्टेअर उपयोग किया जा रहा है। विकासखण्ड स्तर पर इनका वितरण तालिका 3.9 में दर्शाया जा रहा है।

तालिका क्रमांक 3.9: विकासखण्ड स्तर पर अन्य फसलों का वितरण 1990-91 (हेक्टेअर में)

क्र.सं.	विकासखण्ड	तिल	मूंगफली	सनई	सब्जियां	हरे चारे की फसलें	अन्य
1.	जसवन्तनगर	258	6	8	10	929	740
2.	बढ़पुरा	36	1	4	2	343	661
3.	बसरेहर	33	4	4	6	684	435
4.	भरथना	-	-	2	4	450	384
5.	ताखा	-	-	1	3	313	21
6.	महेवा	-	1	8	8	751	567
7.	चकरनगर	1	-	3	2	42	15
8.	अछल्दा	2	10	7	7	365	116
9.	विधूना	1	21	6	6	207	60
10.	एरवाकटरा	3	1	2	6	109	27
11.	सहार	6	7	16	12	127	79
12.	औरैया	1	13	16	16	645	291
13.	अजीतमल	1	-	10	18	455	312
14.	भाग्यनगर	1	1	17	12	469	394
ग्रामीण योग		345	65	104	112	5891	4102
योग नगरीय		8	-	-	25	-	-
योग जनपद		353	65	104	138	5891	4102

तालिका 3.9 विकासखण्ड वार जनपद की अन्य खरीफ फसलों का विवरण प्रस्तुत कर रही हैं। जिससे ज्ञात होता है कि जनपद में चारे की फसलों का भी एक महत्वपूर्ण स्थान है। कुल खरीफ फसल के क्षेत्रफल में से 5891 हेक्टेअर पर चारे की फसलें उगाई जा रही हैं। खरीफ फसल में चरी का महत्वपूर्ण स्थान चारे की फसल के रूप में है। जबकि तिल, मूंगफली तथा सनई का अधिक महत्वपूर्ण स्थान नहीं है। खरीफ की फसल में सब्जियों का क्षेत्रफल 138 हेक्टेअर है। सब्जियों में प्रमुख रूप से लौकी,

तरोई, टिण्डे, काशीफल, बैंगन आदि की फसलें उगाई जाती हैं। सारणी से ज्ञात होता है कि तिल सर्वाधिक जसवन्तनगर विकासखण्ड में बोया जाता है, कुल 353 हेक्टेअर में से अकेले जसवन्तनगर में 258 हेक्टेअर में उगाया जाता है जबकि भरथना, ताखा तथा महेवा विकासखण्ड पूर्णतया तिलविहीन हैं। मूंगफली सर्वाधिक विधूना विकासखण्ड में 21 हेक्टेअर क्षेत्रफल पर उगाई जाती है, दूसरा स्थान औरैया विकासखण्ड का है। सनई न्यूनाधिक सभी विकासखण्डों में बोई जाती है। इसी प्रकार सब्जियों में अजीतमल विकासखण्ड अग्रणी है। हरे चारे की फसलों में जसवन्तनगर प्रथम स्थान पर है।

2. रबी की प्रमुख फसलें:

मात्रात्मक उपलब्धियों के अतिरिक्त कृषि विकास प्रयासों से अब जनपद की कृषि व्यवस्था में गुणात्मक परिवर्तन भी हो रहे हैं। कृषि को अब मात्र जीवन निर्वाह का साधन न मानकर इसकी व्यवसायिक गतिविधियों की प्रतिष्ठा की गई है। कृषक अब लाभ कमाने के लिये तकनीकी का प्रयोग करने को तैयार हैं। श्रेष्यकर कृषि विधियों तथा श्रेष्यकर जीवन यापन की आकांक्षा न केवल उत्पादन तकनीक का प्रयोग करने वाले एक छोटे से धनी वर्ग तक सीमित है, बल्कि उन कृषकों तक फैल गयी है जिन्होने इसे अब तक अपनाया नहीं है और जिनके लिए उच्च जीवन स्तर एक सपना मात्र है। कृषकों के दृष्टिकोण का यह परिवर्तन निश्चित ही कृषि विकास में सहायक है। हरितक्रान्ति के बाद अब जनपद में कृषक अच्छे अनाजों के उत्पादन के प्रति अग्रसर हुए है। छोटे कृषकों का झुकाव सब्जियों तथा मसाले की फसलों के प्रति बढ़ा है। कृषि विकास प्रयासों के परिणामस्वरूप फसलों की संरचना में आधारभूत परिवर्तन आया है। भूमि उपयोग आंकड़ों से पता चलता है कि रबी की फसल में गेहूं का क्षेत्र बढ़ा है। इसी प्रकार तिलहनी फसलों में लाही, सरसों, सोयाबीन सब्जी वाली फसलों के अन्तर्गत क्षेत्रफल में भी वृद्धि हुयी है। सर्वाधिक वृद्धि गेहूं की फसल के क्षेत्र में हुयी है।

जनपद में रबी की फसल के अन्तर्गत खाद्य फसलों में केवल दो ही फसलों गेहूं तथा जौ की प्रधानता है, दलहनी फसलों में चना, मटर फसलों की प्रमुखता है। जबकि तिलहनी फसलों में लाही तथा सरसों फसल का भी

प्रभुत्व है। यद्यपि कुछ क्षेत्रों में मसूर तथा अलसी ने अपनी उपस्थिति को अहसास कराया है, परन्तु इसका क्षेत्रफल अभी महत्वपूर्ण नहीं है। हां इन फसलों की उपस्थिति इस बात की प्रतीक अवश्य है कि प्रोत्साहन मिलने पर इन फसलों का उत्पादन किया जा सकता है।

1. *गेहूँ:*

विश्व के धान्य फसलों में गेहूं बहुत ही महत्वपूर्ण फसल है। क्षेत्रफल की दृष्टि से विश्व में धान के बाद गेहूं का स्थान है। गेहूं का उपयोग चपाती (रोटी), डबलरोटी, बिस्कुट, मैदा, सूजी बनाने में किया जाता है। इसका भूसा पशुओं को खिलाने में प्रयोग किया जाता है। इसके दाने में 9 से 15 प्रतिशत प्रोटीन, 70.72 प्रतिशत कार्बोहाइड्रेट्स तथा प्रचुर मात्रा में खनिज तत्व व विटामिन भी पाये जाते हैं। गेहूं का उपयोग जहां मनुष्यों के भोजन के रूप में किया जाता है वहां इसे बीज के रूप में पशुओं को खिलाने के लिए तथा कुछ भाग विभिन्न उद्योगों में स्टार्च आदि बनाने के लिए भी किया जाता है। एक अनुमापन के अनुसार गेहूं का उपयोग 74 प्रतिशत मनुष्यों के भोजन में,11 प्रतिशत बीज के रूप में तथा 15 प्रतिशत पशुओं का भोजन, औद्योगिक उपयोग तथा व्यर्थ में प्रयुक्त होता है। गेहूं की उत्पत्ति के विषय में विद्वानों के अलग-अलग मत हैं। डी0 कन्डोले के मतानुसार गेहूं का जन्म स्थान दजला और फरात की घाटियां है जहां से यह चीन, मिश्र तथा अन्य देशों में गया। रोबर्ट ब्रेड बुड ने गेहूं के कार्बनयुक्त दाने ईराक के जारमों नामक स्थान से प्राप्त किए जो कि 6700 वर्ष पुराने बताये जाते है। बेवीलोव के मतानुसार (कडे) गेहूं की उत्पत्ति अवीसीनिया तथा कोमल गेहूं का जन्म स्थान भारत तथा अफगानिस्तान है। अधिकांश तथ्यों के आधार पर कहा जा सकता है कि गेहूं की उत्पत्ति दक्षिणी पश्चिमी एशिया में हुई।

अध्ययन क्षेत्र में गेहूं एक प्रमुख खाद्य फसल है जिसके अन्तर्गत शुद्ध बोए गए क्षेत्र का 47.82 प्रतिशत हिस्सा इस फसल के लिए प्रयुक्त किया जाता है। यदि रबी की फसल में इस फसल की भागेदारी देखें तो लगभग 59 प्रतिशत क्षेत्रफल पर गेहूं की खेती की जाती है। जनपद में इसकी अनेक किस्में बोई जाती हैं। जिनमें ऊँची बढ़वार वाली जातियां के0 65, के0 68, सी0 306, के0 78 तथा के0 72 प्रमुख रूप से उगाई जाती हैं जबकि

बौनी जातियों में लरमारोजा, सोनारा 63, एस0 227, यू0 पी0 2003, एच0 डी0 2204, रोहिनी, मालवीय 37, यू0 पी0 262, एच0 डी0 2210, यू0 पी0 115, कुन्दन, सुजाता, मुक्ता, मेघदूत, कल्याण सोना (एच0 डी0 1593), मालवीय 55, सीपान 2016 तथा यू0 पी0 2402 प्रजातियां प्रमुख रूप से प्रयोग में लाई जाती हैं। यह फसल शीतोष्ण जलवायु की फसल है। गेहूं सभी प्रकार की जलवायु सहन कर लेता है। गेहूं को बोते समय 20-220 से0 ग्रे0 ताप सर्वोत्तम रहता है। पौधो की वृद्धि के समय ठण्डा मौसम तथा पकते समय गर्म मौसम एवं लम्बे दिनों की आवश्यकता पड़ती है। गेहूं की खेती के लिए अच्छे जल निकास वाली दोमट मिट्टी सर्वोत्तम होती है। इसकी खेती सभी प्रकार की भूमियों पर की जा सकती है। 5.0 से 7.5 पी0 एच0 मानवाली भूमियां गेहूं की खेती के लिए उपयुक्त रहती हैं। गेहूं की बौनी प्रजातियों में प्रोटीन की मात्रा 13 से 16 प्रतिशत तथा ऊँची बढ़ने वाली प्रजातियों में 9 से 12 प्रतिशत होती है। अब तो गेहूं की एक जीनवाली (110 से 120 से0मी0 ऊँची), दो जीनवाली (100 से 110 से0मी0 ऊँची) तथा तीन जीनवाली (70 से 90 से0मी0 ऊँची) प्रजातियां विकसित की जा चुकी हैं।

2. *जौः*

संसार के विभिन्न भागों में जौ की खेती प्राचीन काल से की जा रही है। इसका प्रयोग प्राचीनकाल से मनुष्यों के भोजन तथा जानवरों के दाने (रातिब) के लिए किया जा रहा है। हमारे देश में जौ का प्रयोग रोटी बनाने के लिए शुद्ध रूप से तथा चने के साथ मिलाकर अथवा गेहूं के साथ मिलाकर किया जाता है लेकिन कहीं-कहीं इनको भुनकर चने के साथ (भुना हुआ) पीसकर सत्तू के रूप में भी प्रयोग करते हैं। इसके अतिरिक्त जौ का प्रयोग माल्ट के लिए किया जाता है तथा यह शराब बनाने के काम आता है। जौ के दाने में 11 से 12 प्रतिशत प्रोटीन, 1.8 प्रतिशत वसा, 0.42 प्रतिशत फास्फोरस, 0.08 प्रतिशत कैल्सियम तथा 5 प्रतिशत रेशा पाया जाता है। जौ शीतोष्ण जलवायु की फसल है लेकिन सम शीतोष्ण जलवायु में भी इसकी खेती सफलतापूर्वक की जा सकती है। जौ की खेती के लिए न्यूनतम तापक्रम 35 से 400 फारेनहाइट, उच्च तापक्रम 82 सें 860 फारेनहाइट और उपयुक्त ताप 680 फारेनहाइट होता है।

अध्ययन क्षेत्र में जौ भी रबी की एक प्रमुख फसल है, परन्तु गेहूं के क्षेत्रफल में विस्तार के साथ जौ के क्षेत्रफल में कमी होती जा रही है। यह फसल अधिकांश असिंचित क्षेत्रों में उगाई जाती है क्योंकि इस फसल को अधिक पानी की आवश्यकता नहीं होती है। 1970 से पूर्व इस फसल का जनपद में महत्वपूर्ण स्थान रहा है क्योंकि इस समय तक सिंचाई की सुविधायें अपर्याप्त थीं, परन्तु सिंचाई तथा उवर्रकों की सुविधा की वृद्धि के साथ इस फसल के क्षेत्रफल में महत्वपूर्ण गिरावट आई है जिसका कारण गेहूं की फसल का प्रतिस्थापन इस फसंल के स्थान पर होता गया है। 1970 से पूर्व इस फसल का उपादन पेयजल आपूर्ति के रूप में किया जाता है परन्तु अब लोगों के खान-पान में परिवर्तन के साथउ इसका स्थान गेहूं ने ले लिया है और इस फसल को खाद्य की दृष्टि से निकृष्ट खाद्यान्न की श्रेणी में समझा जाने लगा है। जनपद में जौ की अनेक फसलें बोई जाती हैं। जिसमें से ज्योति, जागृति, करण 19, करण 252, डी0 एल0 88, विजया , आजाद, रत्ना तथा करण 18 प्रमुख रूप से उगाई जाती हैं। सारणी क्रमांक 3.10 में विकासखण्ड स्तर पर गेहूं तथा जौ वितरण दर्शाया गया है।

सारणी क्रमांक 3.10 जनपद में विकासखण्ड स्तर पर रबी फसल के अन्तर्गत उगाई जानेवाली दोनों प्रमुख फसलों गेहूं तथा जौ के क्षेत्रफल का चित्रण कर रही हैं। सारणी से ज्ञात होता है कि इन दोनों फसलों के लिए 234820 हेक्टेअर भूमि प्रयुक्त हो रही है। जिसमें गेहूं के लिए 138543 हेक्टेअर तथा जौ की फसल के लिए 15013 हेक्टेअर क्षेत्रफल प्रयोग किया जा रहा है। इस प्रकार गेहूं की फसल, रबी के फसल के अन्तर्गत कुल क्षेत्रफल के 59 प्रतिशत क्षेत्रफल पर बोई जा रही हैं जबकि जौ का हिस्सा केवल 6.39 प्रतिशत निर्धारित हो रहा है। विकासखण्ड स्तर पर यदि विचार करें तो गेहूं की फसल की दृष्टि से ताखा विकासखण्ड कुल 11839 हेक्टेअर इस फसल को आवंटित करके वरीयता क्रम में सर्वोच्च स्थान पर यह विकासखण्ड अपने सम्पूर्ण रबी के अन्तर्गत बोए जानेवाले क्षेत्रफल का 79.40 प्रतिशत हिस्सा इस फसल के लिए उपयोग में ला रहा है। इससे थोड़ी सी भिन्न स्थिति में बसरेहर विकासखण्ड तथा विधूना विकासखण्ड देखे जा रहे हैं जो क्रमशः 75.71 प्रतिशत तथा 75.28 प्रतिशत भूमि का इस फसल के लिए प्रयोग करके इसके महत्व को प्रदर्शित कर रहे हैं। इसके

विपरीत चकरनगर विकासखण्ड अपनी ऊँची नीची भूमि , सिंचाई की असुविधाओं के कारण गेहूं फसल के क्षेत्र में आज के इस वैज्ञानिक युग में भी वृद्धि करने में असमर्थ हो रहा है। अभी भी यह विकासखण्ड अपनी रबी की फसल की कुल भूमि 18.38 प्रतिशत क्षेत्र गेहूं की फसल को आवंटित करके वरीयता क्रम में सबसे निम्न स्तर प्रदर्शित कर रहा है।

तालिका क्रमांक 3.10: विकासखण्ड स्तर पर गेहूं तथा जौ का वितरण 1990-91 (हेक्टेअर में)

क्र.सं.	विकासखण्ड	रबी फसल का कुल क्षेत्रफल	गेहूं		जौ	
			क्षेत्रफल	रबी का प्रतिशत	क्षेत्रफल	रबी का प्रतिशत
1.	जसवन्तनगर	23346	11829	50.67	1346	5.77
2.	वढ़पुरा	11292	3927	34.87	1265	11.23
3.	बसरेहर	23594	17761	75.28	813	3.45
4.	भरथना	16112	11711	72.69	870	5.40
5.	ताखा	14910	11839	79.40	533	3.58
6.	महेवा	20035	10212	50.97	1588	7.93
7.	चकरनगर	9594	1763	18.38	1790	18.66
8.	अछल्दा	15926	9990	62.73	748	4.70
9.	विधूना	17183	13010	75.71	505	2.94
10.	एरवाकटरा	14148	10506	74.26	378	2.67
11.	सहार	17131	11851	69.18	614	3.58
12.	औरैया	21151	8298	39.23	2246	10.62
13.	अजीतमल	13768	6277	45.59	1044	7.58
14.	भाग्यनगर	16372	9430	57.60	1256	7.67
	ग्रामीण योग	234532	138404	59.01	14996	6.39
	योग नगरीय	288	139	48.26	17	5.90
	योग जनपद	234820	138543	59.00	15013	6.39

ऐसा लगता है कि अपनी प्राकृतिक स्थिति के कारण यह विकासखण्ड आज भी आधुनिक कृषि तकनीक के प्रयोग से अपने को वंचित रख रहा है। यदि जनपदीय औसत से इस फसल की तुलना करें तो ज्ञात होता है

कि ताखा, विधूना तथा बसरेहर विकासखण्डों के अतिरिक्त भरथना 72.69 प्रतिशत, अछल्दा 62.73 प्रतिशत, एरवरकटरा 74.26 प्रतिशत तथा सहार विकासखण्ड 69.81 प्रतिशत क्षेत्रफल गेहूं की फसल को आवंटित करके जनपदीय स्तर से ऊँचा स्तर बनाए रखने में सफल हो रहे हैं। जबकि अन्य विकासखण्ड जनपदीय औसत से निचले स्तर का प्रदर्शन कर रहे हैं।

जनपद में जौ फसल के क्षेत्रफलीय वितरण को यदि देखें तो चकरनगर विकासखण्ड की स्थिति अन्य विकासखण्डों से सर्वोच्च है और यह विकासखण्ड 18.66 प्रतिशत भूमि जौ की फसल को आवंटित करके वरीयता क्रम में केवल प्रथम स्थान दर्शा रहा है। अपितु गेहूं की अपेक्षा जौ की फसल को अधिक महत्व भी दे रहा है। जबकि प्राकृतिक दृष्टि से लगभग समान स्थिति वाला विकासखण्ड बढ़पुरा 11.23 प्रतिशत भूमि जौ फसल के लिए उपयोग में ला रहा है और वरीयता क्रम में द्वितीय स्थान पर है। विकासखण्ड एरवाकटरा इस फसल के लिए 2.67 प्रतिशत भूमि प्रयोग करके वरीयता क्रम में सबसे निचले स्तर पर है जबकि विधूना विकासखण्ड इससे कुछ बेहतर स्थिति में है और यह विकासखण्ड 2.94 प्रतिशत क्षेत्रफल पर जौ की फसल को उगा रहा है। जनपदीय औसत से यदि तुलना करें तो चकरनगर और बढ़पुरा विकासखण्डों के अतिरिक्त महेवा 7.93 प्रतिशत, औरैया 10.62 प्रतिशत, अजीतमल 7.58 प्रतिशत तथा भग्यनगर 7.67 प्रतिशत क्षेत्रफल पर जौ की फसल को बोकर जनपदीय स्तर से ऊँचा स्तर प्रदर्शित कर रहे हैं। जबकि जनपदीय स्तर से निचले स्तर को प्रदर्शित करने वाले विकासखण्डों में एरवाकटरा तथा विधूना के अतिरिक्त जसवन्तनगर 5.77 प्रतिशत, बसरेहर 3.45 प्रतिशत, भरथना 5.40 प्रतिशत, ताखा 3.58 प्रतिशत, अछल्दा 4.70 प्रतिशत तथा सहार 3.58 प्रतिशत है। गेहूं की फसल तथा जौ की फसल के क्षेत्रफल पर तुलनात्मक दृष्टिपात करें तो यह तथ्य स्पष्ट होता है कि जिन विकासखण्डों में गेहूं की फसल का क्षेत्रफल अधिक है वहां पर जौ का क्षेत्रफल कम है, परन्तु जहां पर गेहूं का क्षेत्रफल कम है वहां पर जौ फसल की हिस्सेदारी अधिक है। स्पष्ट है कि जौ तथा गेहूं फसल एक दूसरे का स्थानान्तरण है। कृषि की उन्नत तकनीकी के साथ-साथ गेहूं का प्रतिस्थापन जौ की फसल के स्थान पर होता जा रहा है।

रबी की फसल के अन्तर्गत दलहनी फसलें:

हमारे भोजन में प्रोटीन का विशेष महत्व है, दालें ही देश की आम जनता के लिए प्रोटीन का सबसे बड़ा स्रोत है। प्रोटीन की कमी के कारण हमारा शरीर तथा मानसिक विकास पूरी तरह नहीं हो पाता है। अतः भोजन में दालों का होना अत्यन्त आवश्यक है। प्रोटीन का व्यवहारिक व सस्ता श्रोत दालें ही हैं। इनसे 20 से 25 प्रतिशत तक प्रोटीन प्राप्त होता है। दालों के सेवन से हमें विटामिन, कैल्सियम तथा फास्फोरस भी पर्याप्त मात्रा में मिलता है। दालें कृषकों के लिए उलटफेर वाली फसलें ही हैं क्योंकि इनको बोने से खेतों को नाइट्रोजन मिलती है जिनसे भूमि की उर्वरा शक्ति बढ़ जाती है। जनपद में रबी फसल के अन्तर्गत दलहनी फसलों में चना तथा मटर दो ही प्रमुख फसलें हैं। यद्यपि जनपद में मसूर ने घुसपैठ की है, परन्तु अभी तक क्षेत्र की दृष्टि से यह फसल कोई महत्वपूर्ण स्थान नहीं बना पाई है, इतना अवश्य कहा जा सकता है कि फसल की उपस्थिति ही इस बात का सूचक है। यदि इसे पर्याप्त प्रोत्साहन प्राप्त हो सके तो यह भी एक नकद मुद्रादायनी फसल बन सकती है।

अ. चना:

इस देश में उगाई जानेवाली दलहनी फसलों में चना सबसे पुरानी और महत्वपूर्ण फसल है। चने का प्रयोग दाल, रोटी, स्वादिष्ट मिठाइयां, नमकीन बनाने तथा सब्जियों के रूप में किया जाता है। चने का प्रयोग करने से मनुष्य के शारीरिक विकास व उचित पोषण के लिए इसमें प्रोटीन 21 प्रतिशत तथा आवश्यक अमीनो अम्ल, कार्बोहाइड्रेट्स तथा खनिज लवण पाये जाते हैं। वसा 4.5 प्रतिशत, कार्बोहाइड्रेट्स 61.5 प्रतिशत, कैल्सियम 1.49 प्रतिशत, लोहा 0.072 प्रतिशत, राइबोफ्लेविन 0.0023 प्रतिशत तथा नाइसिन 0.023 प्रतिशत प्राप्त होता है। चना ठण्डे व शुष्क मौसम की फसल है। बहुत अधिक सर्दी व पाला चने के लिए हानिकारक होता है। चने की खेती अधिकतर असिंचित क्षेत्रों में की जाती है। चने की खेती के लिए दोमट एवं पड़वा भूमि जहां पानी के निकास का उचित प्रबन्ध हो, उपयुक्त होती है। चने के लिए अति उपजाऊ भूमि अच्छी नहीं होती है क्योंकि ऐसी भूमि में पौधों की बढ़वार अधिक होती है और फलियां कम लगती हैं।

चना जनपद की दलहनी फसलों में एक प्रमुख फसल है, यह अधिकतर धान की खेतों में, धान की फसल कटने के बाद बोया जाता है। कहीं-कहीं बाजरे की फसल काटने के बाद उसी खेत में चना बो दिया जाता है। इसकी अनेकों किस्में अध्ययन क्षेत्र में बोई जाती हैं जिनमें से टाइप 3, के0 468, पन्त जी 114, पूसा 408, गौरव, काबुली के0 5, काबुली एल0 550, पूसा 417 (गिरनार) आदि प्रमुख रूप से बोई जाती हैं।

ब. मटर:

शरद कालीन सब्जियों में मटर का प्रमुख स्थान है। यह एक बहुउपयोगी सब्जी है। मटर में केवल 22 प्रतिशत प्रोटीन ही नहीं होती बल्कि इसमें विटामिन, फास्फोरस तथा लौह तत्व भी प्रचुर मात्रा में पाए जाते है। मटर में वसा 1.8 प्रतिशत, कार्बोहाइड्रेट्स 62.1 प्रतिशत, कैल्सियम 0.64 प्रतिशत , लोहा 0.048 प्रतिशत तथा नाइसिन 0.024 प्रतिशत पाया जाता है। वैज्ञानिको के अनुसार विभिन्न वर्ग की मटर का जन्म स्थान भिन्न-भिन्न देश है। विद्वानों के अनुसार सब्जी वाली मटर का मूल उत्पत्ति स्थल इथोपिया है। दानेवाली मटर के पौधे इटली में जंगली रूप में पाए जाते हैं। बेवीलोव का यह मत है कि इसका उत्पत्ति स्थल इटली व पश्चिम भारत के बीच कहीं होगा। मटर के लिए शुष्क तथा ठण्डी जलवायु की आवश्यकता होती है। मटर के वृद्धि काल में अधिक वर्षा हानिकारक होती है। फसल के पकने के समय उच्च तापमान तथा शुष्क जलवायु की आवश्यकता होती है। अच्छे जल निकास वाली दोमट या हल्की दोमट भूमि जिसका पी0एच0 मान 6 से 7.5 के बीच हो, मटर के लिए सर्वोच्च मानी जाती है।

जनपद में दलहनी फसलों में मटर भी एक प्रमुख फसल है। यह सामान्यतः बाजरा की फसल कटने के बाद उसी खेत में बोया जाता है। यह कम लागत पर अच्छी उपज देनेवाली सब्जियों में तथा सूखे दानों का प्रयोग दाल व छोलों के रूप में अधिक किया जाता है। इसकी अनेकों किस्में अध्ययन क्षेत्र में उगाई जाती है। जिनमें से रचना, पन्त मटर -5, स्वर्णरेखा, किन्नूरी, अर्किल वोर्नविले, पन्त उपहार, जवाहर मटर 4, अर्लीवैजर हंस तथा असौनी जातियां प्रमुख हैं।

स. मसूरः

मसूर भी एक दलहनी फसल है जिसमें 26 प्रतिशत प्रोटीन पाया जाता है। यह दाल तथा नमकीन बनाने में अधिकांश रूप में प्रयोग की जाती है, परन्तु जनपद में अभी इसका पर्याप्त प्रसार नहीं हो पाया है, परन्तु सभी विकासखण्डों में न्यूनाधिक उगाई जाती है। परन्तु किसी भी विकासखण्ड में यह अभी तक कोई महत्वपूर्ण स्थान नहीं बना सकी है, केवल अपनी उपस्थिति दर्ज कराने में अवश्य ही सफल हुई है।

अध्ययन क्षेत्र में रबी फसल के अन्तर्गत दलहनी फसल के क्षेत्रफल को तालिका 3.11 में प्रस्तुत किया जा रहा हैं।

तालिका क्रमांक 3.11: विकासखण्ड स्तर पर चना, मटर तथा मसूर का वितरण 1990-91 (हेक्टेअर में)

क्र.सं.	विकासखण्ड	चना		मटर		मसूर	
		क्षेत्रफल	रबी का प्रतिशत	क्षेत्रफल	रबी का प्रतिशत	क्षेत्रफल	रबी का प्रतिशत
1.	जसवन्तनगर	1980	8.48	3263	13.98	12	0.05
2.	बढ़पुरा	2435	21.62	180	1.60	2	0.02
3.	बसरेहर	1054	4.47	585	2.48	9	0.04
4.	भरथना	836	5.19	731	4.54	4	0.03
5.	ताखा	685	4.95	168	1.13	4	0.03
6.	महेवा	2003	10.00	2670	13.33	-	-
7.	चकरनगर	3163	32.97	25	0.26	-	-
8.	अछल्दा	1508	9.47	896	5.63	7	0.04
9.	विधूना	1245	7.25	246	1.43	20	0.12
10.	एरवाकटरा	1013	7.16	185	1.31	6	0.04
11.	सहार	1473	8.60	502	2.93	15	0.09
12.	औरैया	4052	19.16	2086	9.86	2	0.01
13.	अजीतमल	1585	11.51	2854	20.73	2	0.02
14.	भाग्यनगर	2052	12.53	747	4.56	4	0.04

ग्रामीण योग	25084	10.70	15138	6.45	87	0.04
योग नगरीय	9	3.13	8	2.78	–	–
योग जनपद	25093	10.69	15146	6.45	87	0.04

सारणी क्रमांक 3.11 जनपद में विकासखण्ड स्तर पर रबी फसल के अन्तर्गत दलहनी फसलों के क्षेत्रीय वितरण का चित्र प्रस्तुत कर रही है। चने की फसल के सम्बन्ध में विचार करें तो सम्पूर्ण जनपद में 25093 हेक्टेअर क्षेत्रफल पर इसकी फसल उगाई जा रही है जो रबी फसल का 10.69 प्रतिशत हिस्सा है। दूसरा स्थान मटर की फसल को प्राप्त है, यह फसल कुल 15146 हेक्टेअर पर बोई जा रही है जो कि हिस्सेदारी की दृष्टि से 6.45 प्रतिशत है। आंकिक दृष्टि से देखें तो तीसरा स्थान मसूर फसल का है परन्तु यह न तो क्षेत्रफल की दृष्टि से और न ही हिस्सेदारी की दृष्टि से कोई महत्वपूर्ण स्थान रखती है।

विकासखण्ड स्तर पर यह देखें तो ज्ञात होता है कि चने की फसल के वितरण में विभिन्न विकासखण्डों में अत्याधिक असमानता है, जहां चकरनगर विकासखण्ड अपने रबी फसल के सम्पूर्ण क्षेत्रफल में से लगभग 33 प्रतिशत हिस्से पर चने की फसल उगा रहा है। वहीं बसरेहर विकासखण्ड इस फसल को मात्र 4.47 प्रतिशत क्षेत्र ही उपलब्ध करा पा रहा है। स्पष्ट है कि कुछ विकासखण्ड इस फसल को अधिक महत्व दे रहे हैं जबकि कुछ विकासखण्ड इस फसल को अधिक महत्व नहीं दे रहे हैं। जनपदीय औसत 10.69 प्रतिशत से अधिक महत्व देनेवाले विकासखण्डों में चकरनगर के अतिरिक्त बढ़पुरा 21.62 प्रतिशत, औरैया 19.16 प्रतिशत, भाग्यनगर 12.53 प्रतिशत तथा अजीतमल 11.51 प्रतिशत हैं। अन्य विकासखण्ड जो जनपदीय स्तर से निम्न प्रदर्शन कर रहे हैं, वे हैं महेवा 10 प्रतिशत, अछल्दा 9.47 प्रतिशत, सहार 8.60 प्रतिशत, विधूना 7.25 प्रतिशत, एरवाकटरा 7.16 प्रतिशत, जसवन्तनगर 8.14 प्रतिशत, ताखा 4.95 प्रतिशत तथा भरथना 5.19 प्रतिशत भूमि पर चने की फसल उगा रहे हैं।

दलहनी फसलों में मटर के क्षेत्रीय वितरण पर दृष्टिपात करें तो इस फसल को सम्पूर्ण जनपद में 6.45 प्रतिशत की हिस्सेदारी प्राप्त है। विकासखण्ड स्तर पर देखें तो अजीतमल विकासखण्ड मे इस फसल को

20.73 प्रतिशत क्षेत्रफल पर बोकर वरीयताक्रम में सर्वोच्च स्थान प्राप्त कर रहा है, जबकि इसके विपरीत चकरनगर विकासखण्ड इस फसल को मात्र 0.25 प्रतिशत क्षेत्रफल आवंटित करके वरीयता क्रम में सबसे निचले स्तर पर है और यह फसल मात्र अपनी उपस्थिति ही दर्शा पा रही है। महेवा विकासखण्ड में इस फसल को चने से अधिक महत्व दिया जा रहा है जहां पर मटर की भागेदारी रबी की फसल का 13.33 प्रतिशत है जबकि चने की हिस्सेदारी 10 प्रतिशत ही है। चने की फसल से अधिक महत्व इस फसल को जसवन्तनगर विकासखण्ड में भी दिया जा रहा है। जहां पर इस फसल को 13.78 प्रतिशत क्षेत्रफल पर बोया जा रहा है जबकि फसल की भागेदारी 8.48 प्रतिशत ही है। अन्य विकासखण्ड मटर की फसल को न्यूनाधिक क्षेत्रफल आवंटित करके महत्व की दृष्टि से द्वितीय स्थान पर ही रख रहे हैं। जहां तक मसूर फसल का प्रश्न है तो यह फसल अभी तक पूरे जनपद में मात्र 87 हेक्टेअर क्षेत्रफल पर ही अपने पैर फैला सकी है परन्तु महेवा तथा चकरनगर विकासखण्डों को छोड़कर अन्य विकासखण्डों में इस फसल ने न्यूनाधिक अपनी घुसपैठ कर ली है और विभिन्न विकासखण्डों में 0.01 प्रतिशत से लेकर 0.12 प्रतिशत तक क्षेत्रफल भी हथिया लिया है। महेवा तथा चकरनगर विकासखण्डों में अभी तक यह फसल अपने आच्छादन से वंचित है।

3. *तिलहनी फसलें:*

तिलहनी फसलों में तोरिया (इण्डियन रेप) सरसों तथा राई फसलों का रबी की फसल में उगाई जानेवाली फसलों में प्रमुख स्थान है क्योंकि ये फसलें करोड़ों लोगों के लिए खाद्य तेल का मुख्य श्रोत है। इन फसलों में तेल की मात्रा 35 से 38 प्रतिशत के मध्य होती है। सरसों तथा तोरिया का तेल खाने के अतिरिक्त जलाने के लिए, शरीर की मालिश के लिए, चमड़ें और लकड़ी के सामान पर लगाने के लिए, रबर और साबुन के निर्माण तथा अचार आदि में प्रयोग किया जाता है। इसकी खली पशु बड़े चाव से खाते हैं। इनमें 30 से 35 प्रतिशत तक प्रोटीन होता है। सरसों की फसल के लिए शुष्क और ठण्डी जलवायु की आवश्यकता होती है। अधिक तेल उत्पादन के लिए सरसों वर्ग को ठण्डा तापमान, साफ और खुला आसमान तथा पर्याप्त मृदा नमी की आवश्यकता होती है।

राई का उत्पत्ति स्थान भारत, चीन तथा योरोप का कोई स्थान माना जाता है। भूरी सरसों का जन्म स्थान बेवीलोव के अनुसार अफगानिस्तान या भारतीय उप महाद्वीप का उत्तरी-पश्चिमी भाग है। पीली सरसों का मूल स्थान डॉ0 धर्मपाल के अनुसार उत्तरी-पूर्वी भारत है। बनारसी राई का जन्म स्थान यूरेशिया माना जाता है। सरसों के लिए दोमट मिट्टी या हल्की दोमट मिट्टी सर्वोत्तम रहती है। भूमि का पी0 एच0 मान 6.5 से 7.5 के मध्य रहे तो उपज अच्छी मिलती है। अध्ययन क्षेत्र में सरसों की अनेकों किस्में बोई जाती हैं। जिनमें से राई की वरूणा (टाइप 59), रोहिणी, क्रान्ति (पन्त 15), कृष्णा (पन्त 18), वरदान, वैभव तथा शेखर (के0आर0 1510) प्रमुख रूप से उगाई जाती है। सरसों की पूसा कल्याणी, के0 88 तथा टाइप 151 जातियां प्रमुख हैं तथा तोरिया या लोहिया की प्रमुख जातियों में टाइप 9, टाइप 36, भवानी, पन्त तोरिया 303 तथा पी0 टी0 ही अधिकांश बोई जाती है। सारणी क्रमांक 3.12 में विकासखण्ड स्तर पर सरसों वर्ग की तिलहनी फसल का क्षेत्रीय वितरण दर्शाया जा रहा है।

तालिका क्रमांक 3.12: विकासखण्ड स्तर पर तिलहनी फसल का वितरण 1990-91 (हेक्टेअर में)

क्र.सं. विकासखण्ड	लाही/सरसो		अन्य तिलहन		कुल तिलहनी फसले	
	क्षेत्रफल	रबी का प्रतिशत	क्षेत्रफल	रबी का प्रतिशत	क्षेत्रफल	रबी का प्रतिशत
1. जसवन्तनगर	2494	10.68	264	1.33	2758	11.81
2. बढ़पुरा	2733	24.27	38	0.34	2771	24.61
3. बसरेहर	963	4.08	39	0.16	1002	4.24
4. भरथना	923	5.73	-	-	923	5.73
5. ताखा	677	4.54	-	-	677	4.54
6. महेवा	2318	11.57	01	-	2319	11.57
7. चकरनगर	2775	28.92	05	0.05	2780	28.97
8. अछल्दा	1933	12.14	12	0.07	1945	12.21
9. विधूना	1329	7.73	30	0.1	1359	7.90
10. एरवाकटरा	1248	8.82	11	0.08	1259	8.90
11. सहार	1932	11.28	13	0.08	1945	11.36

12. औरैया	3892	18.40	17	0.08	3909	18.48
13. अजीतमल	1508	10.95	02	0.02	1510	10.97
14. भाग्यनगर	2324	14.20	02	0.01	2326	14.21
ग्रामीण योग	27049	11.53	434	0.18	27483	11.72
योग नगरीय	56	19.44	08	2.78	64	22.22
योग जनपद	27105	11.54	442	0.19	27547	11.73

सारणी क्रमांक 3.12विकासखण्ड स्तर पर तिलहनी फसलों के क्षेत्रफलीय वितरण पर प्रकाश डाल रही है। सारणी से ज्ञात होता है कि जनपद में तिलहनी फसलों में लाही प्रमुख है और इसका लगभग एकाधिकार है। अन्य तिलहनी फसलों में रबी फसल की मात्र अलसी फसल ही ऐसी है जिसका किसी विकासखण्ड में नामोनिशान तक नहीं है। सम्पूर्ण जनपद की कुल 27547 हेक्टेअर तिलहनी क्षेत्र में लाही/सरसों, 27105 हेक्टेअर क्षेत्र में उगाई जा रही है। जहां तक विकासखण्ड स्तर पर इस फसल को देखें तो चकरनगर विकासखण्ड अपने रबी क्षेत्र के 28.92 क्षेत्रफल पर लाही/सरसों बोकर इस फसल को अन्य विकासखण्डों की अपेक्षा सर्वाधिक महत्व प्रदान कर रहा है। बढ़पुरा विकासखण्ड भी चगरनगर का पीछा करता हुआ प्रतीत हो रहा है और यह अपने यहां 24.27 प्रतिशत क्षेत्रफल में इस फसल को उगा रहा है। जहां तक इस फसल को न्यनूतम महत्व देने की बात है तो यह कार्य बसरेहर विकासखण्ड पूरा कर रहा है, यह विकासखण्ड अपने रबी क्षेत्रफल का 4.08 प्रतिशत क्षेत्र इस फसल को प्रदान करके वरीयमा क्रम में अन्तिम स्थान पर है। जिन विकासखण्डों में इस फसल को 10 से 15 प्रतिशत तक स्थान दिया जा रहा है उनमें से भाग्यनगर 14.20 प्रतिशत, अछल्दा 12.24 प्रतिशत, महेवा 11.57 प्रतिशत, सहार 11.28 प्रतिशत, अजीतमल 10.95 प्रतिशत तथा जसवन्तनगर 10.68 प्रतिशत है जबकि अन्य विकासखण्ड इस फसल को उगा रहे हैं । अन्य तिलहनी फासलों में अलसी तो नाम मात्र को बोई ही जाती है । अलसी के अतिरिक्त अन्य तिलहनी फसलों में तिल, रेड़ी तथा मूंगफली खरीफ की फसलें हैं लेकिन इनका क्षेत्र अधिक महत्वपूर्ण नही है। कुल 442 हेक्टेअर क्षेत्र में अलसी का क्षेत्रफल मात्र 18 हेक्टेअर है जो दो विकासखण्डों क्रमशः

विधूना 8 हेक्टेअर तथा एरवाकटरा 7 हेक्टेअर में केन्द्रित है। बसरेहर, चकरनगर तथा औरैया तीनों में इस फसल का 1-1 हेक्टेअर क्षेत्रफल है। स्पष्ट है कि इस तिलहनी फसल का कोई महत्वपूर्ण स्थान नहीं है।

4. अन्य फसलें:

अन्य फसलों के अन्तर्गत गन्ना, आलू, सब्जियां तथा चारे की प्रमुख फसल हैं। सब्जियों में टमाटर, बैंगन, फूलगोभी, पातगोभी, मिर्च, कुम्हेड़ा, धनिया, मूली, गाजर, पालक आदि प्रमुख रूप से उगाई जाती हैं।

अ) गन्ना:

भारत में शर्करा के प्रमुख स्रोत के रूप में गन्ने की खेती प्राचीनकाल से होती है। गन्ने का उपयोग विभिन्न रूपों से किया जाता है। इससे चीनी, गुड़, खांड़ के अतिरिक्त शीरा भी मिलता है जो तम्बाकू, अल्कोहल, यीष्ट तथा पशुओं का आहार बनाने में काम आता है। गन्ने का हरा अगोला पशुओं के चारे के रूप में तथा सूखी पत्ती ईंधन तथा छावनी के लिए प्रयोग की जाती है। गन्ने की खोई से कार्ड बोर्ड या मोटा कागज बनाया जाता है। भारत में गन्ने की खेती प्राचीनकाल से होती आ रही है। कुछ ऐसे प्रमाण उपलब्ध हैं कि भारत में गन्ने की कृषि ऋग्वेद (2500 -1400 ई0 पूर्व) में की जाती थी। जब सिकन्दर ने भारत पर आक्रमण (326 ई0 पूर्व) किया था तो उसके सैनिकों ने नरकुल जैसे पौधे के तने को चूसा था जिसमें मिठास थी। इन्हीं तथ्यों के आधार पर कहा जा सकता है कि गन्ने की उत्पत्ति केन्द्र भारत है। गन्ना लगभग सभी प्रकार की भूमियों पर उगाया जाता है। अच्छे जल निकास वाली दोमट भूमि इसकी खेती के लिए सर्वोत्तम मानी जाती है। 6.1 से 7.5 पी0 एच0 मान वाली भूमियां इसके लिए सर्वोत्तम रहती हैं। अध्ययन क्षेत्र में इसकी अनेकों किस्में बोई जाती हैं जिसमें से को0 1148, को0 1158, को0 7321, को0 शा0 770, 802, को0शा0 510, बी0 ओ0 5470, पन्त 84211, पन्त 84215, को0 शा0 758, को0 395 तथा को0 शा0 687 प्रमुख रूप से उगाई जाती हैं।

(ब) आलू:

वर्षभर प्राप्त होनेवाली सब्जियों में आलू का प्रमुख स्थान है। आलू एक पूर्ण भोजन है। इसमें 22.6 प्रतिशत कार्बोहाइड्रेट्स, 1.6 प्रतिशत

प्रोटीन, 0.1 प्रतिशत वसा तथा 0.6 प्रतिशत खनिज पदार्थ पाया जाता है। आलू के प्रोटीन में अधिकतर खाद्यान्नों की अपेक्षा शरीर के लिए आवश्यक अमीनो अम्ल में से एक नाइसीन की मात्रा अधिक होती है। विटामिन बी तथा सी की भी बहुतायत होती है। आलू का प्रयोग सब्जी के रूप में तथा नमकीन पदार्थ तैयार करके खाने के लिए किया जाता है। आलू से ग्लूकोज, स्टार्च, शराब, कागज, साइट्रिक अम्ल तैयार किए जाते हैं। इसकी खेती से किसानों को अन्य खाद्यान्न फसलों की अपेक्षा अधिक आय प्राप्त होती है क्योंकि यह कम समय में तैयार होकर प्रति हेक्टेअर अधिक पैदावार होती है। आलू का उत्पादित स्थल दक्षिणी अमेरिका है जहां से यह योरोप तथा अन्य देशों में फैला है। भारत में आलू सत्रहवीं शताब्दी में पुर्तगालियों द्वारा लाया गया। 1915 में सर थामस टो की दावत में पहली बार आलू का प्रयोग किया था। आलू की खेती में ठण्डी जलवायु की आवश्यकता होती है। पौधों की वृद्धि के समय लगभग 24 डि0 से0ग्रे0 तथा कन्द बनने के समय लगभग 17.2 डि0से0ग्रे0 तापमान की आवश्यकता होती है। आलू के लिए छोटे दिन तथा रातें लम्बी कन्द की बढ़वार के लिए उपयुक्त हैं। आलू के लिए बलुई दोमट या दोमट भूमि सर्वोत्तम रहती है जिसमें जल निकास अच्छा हो तथा भूमि उर्वरा हो क्योंकि आलू को अधिक पोषक तत्वों की आवश्यकता होती है। हल्की अम्लीय भूमियों जिसकी पी0 एच0 मान 6.0 से 6.5 में आलू की अच्छी उपज मिलती है। अध्ययन क्षेत्र में आलू की अनेक किस्में उगाई जाती हैं। जिनमें से अगेती किस्में कुफरी चन्द्रमुखी (ए0 2708), कुफरी अलंकार (ए0 3649), कुफरी बहार (ई0 3747), कुफरी नवताल (जी0 2524), मध्य कालिक किस्में कुफरी बादशाह (जे0 एस0 4870), कुफरी शीतमान (सी0 3745), कुफरी चमत्कार (ओ0 एन0 1202), तथा पछेती किस्में कुफरी सिन्दूरी, कुफरी नवीन तथा कुफरी किसान आदि प्रमुख किस्में उगाई जाती हैं।

स) अन्य सब्जियां:

रबी फसल की अन्य सब्जियों में प्याज, लहसुन, टमाटर, बैंगन, फूलगोभी, पातगोभी, मिर्च तथा कुम्हेड़ा, मूली, गाजर तथा शकरकन्द आदि अध्ययन क्षेत्र में प्रमुख रूप से उगाई जाती हैं। हरी पत्तेदार सब्जियों में पालक, मैथी भी उगाई जाती है। परन्तु इन सब्जियों का क्षेत्रफल अत्यन्त सीमित है।

द) चारा फसलें:

चारा फसलों में अध्ययन क्षेत्र में जई, रिजका तथा बरसीम प्रमुख रूप से उगाई जाती हैं। परन्तु इन तीनों फसलों में बरसीम सभी विकासखण्डों में प्रमुख रूप से उगाई जाती है। जई एक पौष्टिक चारा है जो कि सभी वर्गों के पशुओं को अधिक मात्रा में खिलाया जा सकता है। प्रोटीन इसमें अपेक्षाकृत कम होती है। इसकी क्रेंट फ्लेनिंग गोल्ड तथा यू0पी0ओ0 94 किस्में अधिकांश प्रयोग में लायी जाती हैं।

बरसीम उन हरे चारों में से एक है जो अपने गुणों द्वारा दुधारू पशुओं के लिए प्रसिद्ध है। यह मक्का, धान, ज्वार या बाजरा के बाद आसानी से उगाई जा सकती है। धान के खेत प्रायः बरसीम के लिए अच्छे रहते हैं। भूमि का पी0 एच0 मान 6.0 या इससे अधिक होना चाहिये। इसकी भेसकवी तथा पूसा जायन्ट प्रमुख किस्में उगाई जाती हैं। रबी की अन्य फसलों का वितरण तालिका क्रमांक 3.13 में दर्शाया जा रहा है।

तालिका क्रमांक 3.13: विकासखण्ड वार अन्य फसलों का वितरण 1990-91 (हेक्टेअर में)

क्र.सं. विकासखण्ड	गन्ना	सब्जियां		चारा फसलें	अन्य फसलें
		आलू	अन्य		
1. जसवन्तनगर	544	1852	117	141	102
2. बढ़पुरा	431	473	84	24	58
3. बसरेहर	224	1919	210	158	112
4. भरथना	214	833	104	127	88
5. ताखा	264	482	82	144	52
6. महेवा	453	1000	176	156	66
7. चकरनगर	6	19	11	4	8
8. अछल्दा	315	492	75	145	72
9. विधूना	318	514	118	109	85
10. एरवाकटरा	200	370	86	90	42
11. सहार	261	561	128	110	68
12. औरैया	465	161	56	30	17

13. अजीतमल	374	387	92	62	32
14. भाग्यनगर	296	393	102	95	48
ग्रामीण योग	4365	9456	1441	1365	850
योग नगरीय	1	35	32	12	8
योग जनपद	4366	9491	1473	1377	858

तालिका क्रमांक 3.13 में विकासखण्ड स्तर पर विभिन्न फसलों के क्षेत्रीय वितरण को दर्शा रही है जो कुल 10964 हेक्टेअर क्षेत्रफल पर उगाई जा रही है। उस क्षेत्रफल में अकेले आलू की भागेदारी 9491 हेक्टेअर क्षेत्रफल पर है। इस दृष्टि से विकासखण्ड स्तर पर देखें तो ज्ञात होता है कि आलू का सर्वाधिक क्षेत्रफल बरसेहर विकासखण्ड का है जंहां पर 1919 हेक्टेअर क्षेत्रफल आलू तथा 210 हेक्टेअर क्षेत्र पर अन्य सब्जियां उगाई जा रही हैं। दूसरे स्थान पर जसवन्तनगर विकासखण्ड है जो 1852 हेक्टेअर क्षेत्र पर आलू तथा 117 हेक्टेअर क्षेत्र अन्य सब्जियों को आवंटित कर रहा है। इस दृष्टि से चकरनगर विकासखण्ड की स्थिति सर्वाधिक दयनीय हैं। यह विकासखण्ड मात्र 19 हेक्टेअर क्षेत्रफल पर आलू तथा 11 हेक्टेअर क्षेत्रफल पर अन्य सब्जियों उगा रहा है। अन्य विकासखण्डों की स्थित न्यूनाधिक एक जैसी है। गन्ने की फसल की दृष्टि से देखें तो जसवन्तनगर विकासखण्ड 544 हेक्टेअर क्षेत्रफल पर गन्ना बोकर सर्वाधिक गन्ने के क्षेत्र वाला विकासखण्ड है। जबकि इसके विपरीत चकरनगर विकासखण्ड मात्र 6 हेक्टेअर क्षेत्रफल पर गन्ने की फसल उगा रहा है। इस दृष्टि से न्यूनतम क्षेत्रफल वाला विकासखण्ड दृष्टिगोचर हो रहा है। औरैया, महेवा तथा बढ़पुरा विकासखण्ड क्रमशः 465 हेक्टेअर, 453 हेक्अेअर तथा 431 हेक्टेअर क्षेत्रफल गन्ने की फसल को आवंटित करके लगभग एक जैसी स्थिति दर्शा रहे हैं। अन्य विकासखण्ड इस फसल के लिए 200 हेक्टेअर से अधिक भूमि गन्ने की फसल को प्रदान कर रहे हैं। जहां तक चारा फसलों का प्रश्न है तो बसरेहर विकासखण्ड 158 हेक्टेअर चारा फसलों को देकर सर्वाधिक चारा क्षेत्र वाला विकासखण्ड है। जबकि महेवा 156 हेक्टेअर इन फसलों को देकर बसरेहर का पीछा करते हुए प्रतीत हो रहा है। अन्य विकासखण्ड जो चारे की फसलों को 100 हेक्टेअर से अधिक भूमि आवंटित कर रहे हैं वे

जसवन्तनगर 141 हेक्टेअर, भरथना 127 हेक्टेअर, ताखा 114 हेक्टेअर, अछल्दा 145 हेक्टेअर, विधूना 109 हेक्टेअर तथा एरवाकटरा 110 हेक्टेअर भूमि आवंटित करने वाले विकासखण्ड हैं। अन्य विकासखण्ड 100 हेक्टेअर से कम भूमि चारा फसलों को दे रहे हैं।

जायद फसलें:

इस वर्ग की फसलों मे तेज गर्मी, शुष्क हवायें तथा लू सहन करने की बड़ी क्षमता होती है। इनकी बोआई फरवरी–मार्च में भी की जाती है। खरबूजा, तरबूज, ककड़ी, मूंग, खीरा तथा सूरजमुखी आदि प्रमुख फसलें हैं। इसके अतिरिक्त कुछ सब्जियां भी इस फसल के अन्तर्गत उगाई जाती हैं। गर्म व शुष्क मौसम के कारण खरबूजा व तरबूज में मिठास का अनुपात बढ़ जाता है। सब्जियों में लौकी, करेला, काशीफल, तरोई, भिण्डी, बैंगन आदि प्रमुख रूप से उगाई जाती हैं। जायद मौसम में हरे चारे की फसलें भी उगाई जाती है। विकासखण्ड वार जायद फसलों का विवरण तालिका क्रमांक 3.14 में दिया जा रहा है।

सारणी क्रमांक 3.14 जायद फसल के अन्तर्गत विभिन्न फसलों के क्षेत्रफल को विकासखण्ड स्तर पर दर्शाया गया है। सारणी से ज्ञात होता है कि सम्पूर्ण जनपद में सर्वोच्च भागेदारी 32.91 प्रतिशत मूंग की फसल कर रही है। खरबूज तथा तरबूज एवं सूरजमखी की फसलें न्यूनाधिक एक जैसे स्तर को दर्शा रहे हैं परन्तु सूरजमुखी की फसल प्रतिशत की दृष्टि से खरबूजा के क्षेत्रफल से थोड़ा अधिक हिस्सेदारी करके द्वितीय स्थान पर अपनी स्थिति को दर्शा रही है जबकि खरबूजा/तरबूज तृतीय स्थान प्राप्त कर रहे हैं। ककड़ी, खीरा तथा सब्जियां भी कमोबेश एक जैसी स्थिति में दिखाई दे रही है। विकासखण्ड स्तर पर देखें तो सर्वाधिक क्षेत्र पर बोई जानेवाली मूंग की फसल विभिन्न विकासखण्डों में क्षेत्रीय वितरण में भिन्नता दर्शा रही है। अछल्दा विकासखण्ड अपने जायद क्षेत्र का 40.51 प्रतिशत क्षेत्र इस फसल को देकर वरीयता क्रम में सर्वोच्च स्थान पर स्थित है, इसके विपरीत अजीतमल विकासखण्ड इस फसल को मात्र 14.28 प्रतिशत क्षेत्रफल पर ही उपलब्ध करा पा रहा है। अन्य विकासखण्ड इन दोनों विकासखण्डों के मध्य क्षेत्रफल पर मूंग की फसल उगा रहे हैं। सूरजमुखी की फसल जनपद में अपना एक स्थान बनाती जा रही है। यह एक तिलहनी फसल है। इसमें

तालिका क्रमांक 3.14: विकासखण्ड स्तर पर जायद फसलों का क्षेत्रीय वितरण 1990-91. (हेक्टेअर में)

विकास खण्ड	जायद का क्षेत्रफल	तरबूज/खरबूज		सब्जियां		ककड़ी/खीरा		मूंग		सूरजमुखी		चारा फसलें	
		क्षेत्र	प्रतिशत	क्षेत्र	प्रतिशत	क्षेत्र	प्रतिशत	क्षेत्र	प्रतिशत	क्षेत्र	प्रतिशत	क्षेत्र	प्रतिशत
1. जसवन्तनगर	932	185	19.85	118	12.66	107	11.48	360	38.63	112	12.02	50	5.36
2. बढ़पुरा	268	34	12.69	26	9.70	41	15.30	102	38.06	34	12.69	31	1.56
3. बसरेहर	1157	261	22.56	110	9.51	129	11.15	416	35.96	198	17.11	43	3.71
4. भरथना	544	63	11.58	70	12.87	80	14.71	204	37.50	67	12.32	60	11.03
5. ताखा	349	79	22.64	32	9.17	41	11.75	124	35.53	54	15.47	09	2.57
6. महेवा	589	47	7.98	98	16.64	111	11.85	220	37.35	42	7.13	71	12.05
7. चकरनगर	3	-	-	2	66.67	-	-	-	-	-	-	01	33.33
8. अछल्दा	311	52	16.72	26	8.36	27	8.68	126	40.51	85	27.33	05	1.61
9. विधूना	354	80	22.60	32	9.04	44	12.43	76	21.47	118	33.33	04	1.12
10. एरवाकटरा	377	46	12.20	51	13.53	62	16.45	114	30.24	102	27.86	02	0.53
11. सहार	404	104	25.74	42	10.40	42	10.40	92	22.77	112	30.20	02	0.50
12. औरैया	40	10	25.00	10	25.00	3	7.50	7	17.50	08	20.00	02	5.00
13. अजीतमल	196	22	11.22	16	8.16	14	7.14	28	14.28	92	46.94	24	12.23
14. भाग्यनगर	321	76	23.68	52	16.20	47	14.64	66	20.56	74	23.05	06	1.87
योग ग्रामीण	5845	1058	18.10	686	11.74	748	12.80	1935	13.11	1108	18.96	310	5.30
योग नगरीय	34	7	20.59	16	47.06	10	29.41	-	-	-	-	01	2.94
योग जनपद	5879	1075	18.29	702	11.94	758	12.89	1935	32.91	1108	18.85	311	5.29

40–50 प्रतिशत उच्च कोटि का प्रोटीन पाया जाता है। इस फसल की सर्वाधिक हिस्सेदारी अजीतमल विकासखण्ड कर रहा है जो अपनी जायद की फसल में 46.94 प्रतिशत स्थान इस फसल को प्रदान कर रहा है। इसके विपरीत चकरनगर विकासखण्ड अभी तक अपने यहां इस फसल को प्रारम्भ भी नहीं कर पाया है। इसके अतिरिक्त महेवा विकासखण्ड इस फसल को 7.13 प्रतिशत स्थान देकर न्यूनतम महत्व देनेवाले विकासखण्डों में एक है। जनपदीय औसत 18.85 प्रतिशत से अधिक महत्व देने वाले विकासखण्ड अछल्दा 27.33 प्रतिशत, विधूना 33.33 प्रतिशत, एरवाकटरा 27.06 प्रतिशत, सहार 30.20 प्रतिशत, औरैया 20.00 प्रतिशत तथा भाग्यनगर 23.05 प्रतिशत है। अन्य विकासखण्ड जनपदीय औसत से निचले स्तर को प्रदर्शित कर रहे हैं। वरीयता क्रम में जनपद में सब्जियां चौथा स्थान प्रदर्शित कर रही हैं। सब्जियों की सर्वाधिक पैदावार प्रतिशत की दृष्टि से तो चकरनगर तथा औरैया विकासखण्डों में दिखाई पड़ रही है। परन्तु इनका जायद क्षेत्र अधिक महत्वपूर्ण न होने के कारण ही इनका प्रतिशत ऊँचा है। जबकि क्षेत्रीय दृष्टि से देखें तो चकरनगर मात्र अपने जायद क्षेत्रफल 3 हेक्टेअर में 2 हेक्टेअर पर सब्जी उगाकर प्रतिशत की दृष्टि से प्रथम स्थान पर है और इसी प्रकार अजीतमल कुल 40 हेक्टेअर क्षेत्र में से 10 हेक्टेअर पर सब्जियां उगाकर द्वितीय स्थान पर है। जबकि जसवन्तनगर 118 हेक्टेअर क्षेत्र पर सब्जियां उगाकर क्षेत्रफल की दृष्टि से इन दोनों विकासखण्डों के कुल क्षेत्र को मिलाकर लगभग तीन गुना अधिक क्षेत्र सब्जियों को आवंटित कर रहा है। परन्तु प्रतिशत की दृष्टि से इन फसलों की विकासखण्ड में भागेदारी 12.66 प्रतिशत ही है। महेवा विकासखण्ड तथा भाग्यनगर विकासखण्ड क्रमशः 16.64 तथा 16.20 प्रतिशत जायद क्षेत्र सब्जियों को प्रदान कर रहे हैं। अन्य विकासखण्ड 8 से लेकर 14 प्रतिशत के मध्य सब्जियों की हिस्सेदारी कर रहे हैं। जायद फसलों में खरबूजा, तरबूज की फसल महत्व की दृष्टि से जनपद में तीसरे स्थान पर है। इस फसल की हिस्सेदारी 18.29 प्रतिशत है। इस फसल की सर्वाधिक भागेदारी सहार विकासखण्ड कर रहा है और यह इस फसल को अपने यहां जनपद के क्षेत्रफल का 25.74 प्रतिशत हिस्सा देकर सर्वाधिक महत्व दर्शा रहा है। इस फसल को जनपदीय औसत से अधिक महत्व देनेवाले विकासखण्डों में जसवन्तनगर 19.85 प्रतिशत, बसरेहर 22.56 प्रतिशत,

ताखा 22.64 प्रतिशत, विधूना 22.60 प्रतिशत, औरैया 25 प्रतिशत तथा भाग्यनगर 23.68 प्रतिशत है। अन्य विकासखण्ड जनपदीय स्तर से नीचा स्तर प्रदर्शित कर रहे हैं। ककड़ी, खीरा का भी जायद फसलों में विशेष महत्व होता है। इस दृष्टि से देखा जाये तो 12.89 प्रतिशत क्षेत्र इन फसलों को जनपद में दिया जा रहा है। इस फसल की सर्वाधिक पैदावार महेवा विकासखण्ड 18.85 प्रतिशत क्षेत्र पर उगाकर की जा रही है। जबकि न्यूनतम हिस्सेदारी अजीतमल विकासखण्ड 7.14 प्रतिशत कर रहा है। अन्य विकासखण्ड इन दोनों विकासखण्डों के मध्य स्थित हैं। जनपद में चारा फसलों को 5.29 प्रतिशत क्षेत्रफल आवंटित करके अन्तिम स्थान पर दिया जा रहा है। इस दृष्टि से महेवा विकासखण्ड 12.05 प्रतिशत क्षेत्रफल इस फसल को देकर सर्वोच्च स्थान पर है। न्यूनतम हिस्सेदारी सहार विकासखण्ड की है। जो कि मात्र 0.50 प्रतिशत क्षेत्र ही इन फसलों को आवंटित कर रहा है।

3. शस्य विभेदीकरणः

किसी भी क्षेत्र की कृषि की स्थिति के पूर्ण अर्थ ग्रहण के लिए यह आवश्यक होता है कि उस क्षेत्र के शस्य विभेदीकरण का ज्ञान प्राप्त किया जाये। कृषि के इस स्वभाव की जानकारी प्राप्त करने के लिए अनेकों कृषि विद्वानों ने प्रयास किये हैं। शस्य विभेदीकरण इस तथ्य का ज्ञान कराता है कि किसी क्षेत्र विशेष में कितनी फसलों की प्रधानता है। यदि किसी क्षेत्र विशेष में अधिक फसलें उगाई जाती हैं और उनका क्षेत्रफलीय विवरण भी लगभग समान है तो उस क्षेत्र विशेष में फसलों का विभेदीकरण अधिक होगा। इसके विपरीत जिन क्षेत्रों में फसलों की संख्या कम होगी वहां पर विभेदीकरण भी कम होगा। उदाहरण के लिए यदि किसी क्षेत्र में 10 फसलें उगाई जाती हैं तो यह माना जाता है कि उन सभी फसलों में लगभग 10 प्रतिशत क्षेत्र प्रत्येक फसल में आच्छादित होगा, इस स्थिति में शस्य विभेदीकरण उच्च श्रेणी का होगा। यदि किसी क्षेत्र में कोई फसल शत प्रतिशत क्षेत्रफल में उगाई जाती है तो वहां पर विभेदीकरण 100 होगा और वह क्षेत्र उस फसल के लिए विशिष्ट होगा। अतः यह कहा जा सकता है कि शस्य विभेदीकरण सूचकांक तथा शस्य विभेदीकरण की श्रेणी में विपरीत सम्बन्ध होता है, अर्थात यदि शस्य विभेदीकरण सूचकांक निम्न

होगा तो शस्य विभेदीकरण उच्च होगा, इसके विपरीत सूचकांक यदि उच्च होगा तो विभेदीकरण की श्रेणी निम्न होगी। भाटिया एस0 एस0[4] ने शस्य विभेदीकरण को ज्ञात करने के लिए एक सरल विधि प्रस्तुत की है।

$$\text{शस्य विभेदीकरण सूचकांक} = \frac{\text{एक्स फसलों के अन्तर्गत कुल बोए जानेवाले क्षेत्रफल का प्रतिशत}}{\text{एक्स फसलों की संख्या}}$$

भाटिया ने एक्स फसलों में केवल उन्हीं फसलों को अपनी गणना में सम्मिलित किया जिन फसलों के अन्तर्गत 10 प्रतिशत या इससे अधिक क्षेत्र संलग्न है।

सिंह जसवीर[5] (1976) ने हरियाणा राज्य के शस्य विभेदीकरण ज्ञात करने के लिए भाटिया की गणना विधि में न्यून परिवर्तन करके गणना की है। सिंह द्वारा प्रस्तुत सूत्र इस प्रकार है।

$$\text{शस्य विभेदीकरण सूचकांक} = \frac{\text{एक्स फसलों के अन्तर्गत कुल काटे जानेवाले क्षेत्र का प्रतिशत}}{\text{एन फसलों की संख्या}}$$

यहां एन फसलों के अन्तर्गत 5 प्रतिशत या इससे अधिक क्षेत्रफल वाली फसलों की गणना में सम्मिलित किया गया है। गिब्स-मार्टिन (1962) ने शस्य विभेदीकरण के विस्तार को ज्ञात करने के लिए एक विधि प्रस्तुत की जो इस प्रकार है।

$$\text{शस्य विभेदीकरण सूचकांक} = 1 - \frac{\Sigma X_2}{(\Sigma X)^2}$$

जहां X = प्रत्येक फसल का सकल कृषि क्षेत्र से प्रतिशत क्षेत्रफल

Σ = योग

गिब्स तथा मार्टिन की विधि के अनुसार गणना करने पर विभेदीकरण सूचकांक 0 से 0.99 के मध्य आता है तथा इस मूल्य और शस्य विभेदीकरण में सीधा सम्बन्ध होता है अर्थात यदि शस्य विभेदीकरण सूचकांक 1 के समीप होता है तो शस्य विभेदीकरण का विस्तार उच्च होता है। इसके विपरीत सूचकांक यदि 0 के समीप है तो शस्य विभेदीकरण का विस्तार भी निम्न स्तरीय होगा।

अध्ययन क्षेत्र में शस्य विभेदीकरण के विस्तार को जानने के लिए शोधार्थी द्वारा भाटिया की विधि के आधार पर गणना करके शस्य विभेदीकरण सूचकांक प्राप्त किया गया है। जिसे सारणी क्रमांक 3.15 में प्रस्तुत किया जा रहा है।

सारणी क्रमांक 3.15 अध्ययन क्षेत्र में विकासखण्ड स्तर पर शस्य विभेदीकरण सूचकांक

क्र.सं. विकासखण्ड	शस्य विभेदीकरण सूचकांक
1. जसवन्तनगर	12.36
2. बढ़पुरा	13.91
3. बसरेहर	19.62
4. भरथना	23.84
5. ताखा	26.78
6. महेवा	11.14
7. चकरनगर	16.37
8. अछल्दा	13.69
9. विधूना	25.65
10. एरवाकटरा	20.29
11. सहार	16.19
12. औरैया	11.10
13. अजीतमल	11.65
14. भाग्यनगर	15.21

तालिका क्रमांक 3.15 में यह तथ्य स्पष्ट हो रहा है कि शस्य विभेदीकरण सूचकांक 11.10 से लेकर 26.78 के मध्य विस्तृत है, विभिन्न विकासखण्डों में विभिन्न फसलों के अन्तर्गत 5 प्रतिशत या इससे अधिक क्षेत्रफल के आधार पर गणना की है, परिणामस्वरूप कुछ विकासखण्डों में न्यून शस्य विभेदीकरण है और कुछ विकासखण्डों में उच्च शस्य विभेदीकरण दिखाई पड़ रहा है।

सारणी क्रमांक 3.16 : विकासखण्ड स्तर पर विभेदीकरण

शस्य विभेदीकरण सूचकांक	शस्य विभेदीकरण विकासखण्डों की श्रेणी	विकासखण्डों के नाम	संख्या
15 से कम	अति उच्च	औरैया, महेवा, अजीतमल, जसवन्तनगर, बढ़पुरा, अछल्दा	6
15 से 20	उच्च	भाग्यनगर, सहार, बसरेहर चकरनगर	4
20 से 30	मध्यम	एरवाकटरा, भरथना	2
25 से अधिक	निम्न	विधूना, ताखा	2

सारणी क्रमांक 3.16 में शस्य विभेदीकरण की श्रेणी प्रस्तुत की गई है। सारणी पर दृष्टिपात करने से ज्ञात होता है कि अति उच्च शस्य विभेदीकरण के अन्तर्गत कुल 6 विकासखण्ड स्थित हैं। इन विकासखण्डों में किसी भी फसल का व्यक्तिगत क्षेत्र 30 प्रतिशत से अधिक नहीं है। केवल अछल्दा विकासखण्ड को छोड़कर जिनमें गेहूं लगभग 35 प्रतिशत क्षेत्र में उगाया जाता है, यही कारण है कि इन विकासखण्डों में अनेक फसलें उगाई जाती हैं। जिससे किसी एक या दो फसलों की प्रधानता नहीं हो पाती है और यही कारण है कि ये विकासखण्ड अति उच्च शस्य विभेदीकरण की श्रेणी में आते हैं। उच्च शस्य विभेदीकरण की श्रेणी में भाग्यनगर, सहार, चकरनगर तथा बसरेहर कुल चार विकासखण्ड आते हैं। इन विकासखण्डों में सहार तथा बसरेहर में गेहूं तथा धान फसलों की प्रधानता है। जो लगभग 65 प्रतिशत क्षेत्र पर उगाई जाती है। चकरनगर में बाजरा तथा चना लगभग 50 प्रतिशत क्षेत्र में उगाया जाता है तथा भाग्यनगर में धान, गेहूं तथा बाजरा लगभग 60 प्रतिशत क्षेत्र पर उगाया जाता है। मध्यम शस्य विभेदीकरण सूचकांक सीमा 20 से 25 के मध्य दो विकासखण्ड एरवाकटरा तथा भरथना स्थित है, यह दोनों विकासखण्ड एक दूसरे की सीमाओं को छू रहे हैं। भरथना में तीन फसलों गेहूं, धान तथा बाजरा फसलें 70 प्रतिशत

से अधिक क्षेत्र घेरे हुए हैं जबकि एरवाकटरा में गेहूं, धान तथा मक्का फसलें 75 प्रतिशत से अधिक क्षेत्रफल घेरे हुए हैं। इसी कारण से यह विकासखण्ड मध्यम शस्य विभेदीकरण की श्रेणी में आते हैं। निम्न शस्य विभेदीकरण श्रेणी में विधूना तथा ताखा विकासखण्ड स्थित हैं। जिनमें तीन-तीन फसलों की प्रधानता है। ताखा विकासखण्ड में धान, गेहूं तथा मक्का के अन्तर्गत 80 प्रतिशत से अधिक क्षेत्र फसल आच्छादित है। जबकि यही संयोजन विधूना विकासखण्ड का है जिसमें 78 प्रतिशत से अधिक क्षेत्रफल आच्छादित हैं। यह तथ्य भी स्पष्ट हो रहा है कि जिन विकासखण्डों में गेहूं तथा धान की प्रधानता है वहां पर फसलों की संख्या कम है। क्योंकि धान के बाद गेहूं का फसलचक्र कृषकों के लिए सरल पड़ता है। जिन विकासखण्डों में धान तथा गेहूं की प्रधानता नहीं है, वहां पर फसलों की संख्या भी अधिक है। जिसके कारण शस्य विभेदीकरण भी उच्च है। इस दृष्टि से यदि देखा जाये तो अध्ययन क्षेत्र अति उच्च से निम्न स्तर तक विस्तार लिए हुए है।

4. *शस्य संयोजन:*

शस्य संयोजन के अन्तर्गत किसी क्षेत्र विशेष में उत्पन्न की जानेवाली सभी फसलों का अध्ययन होता है। किसी इकाई क्षेत्र में एक या दो विशिष्ट फसलें होती हैं और उन्हीं के साथ अन्य अनेक गौण फसलें भी पैदा की जाती है। कृषक मुख्य फसल के साथ ही कोई न कोई खाद्यान्न, दलहन, तिलहन या रेशेदार फसल की खेती करते हैं। प्रायः यह भी देखने को मिलता है कि यदि विशिष्ट क्षेत्र में दलहन या तिलहन फसल प्रथम वरीयता क्रम में है तो उसके साथ कृषक कोई न कोई खाद्यान्न फसल अवश्य ही उत्पन्न करता है। इस प्रकार किसी क्षेत्र या प्रदेश में उत्पन्न की जानेवाली प्रमुख फसलों के समूह को शस्य संयोजन कहते हैं। कृषि प्रदेशीकरण के अध्ययन में फसल प्रतिरूप के प्रादेशिक अध्ययन के साथ ही शस्य संयोजन का अध्ययन महत्वपूर्ण होता है। इससे कृषि की क्षेत्रीय विशेषताओं को आसानी से जाना जा सकता है। अतः शस्य संयोजन प्रदेशों का निर्धारण उन फसलों के स्थानिक वर्चस्व के आधार पर किया जाता है, जिनमें से क्षेत्रीय सह सम्बन्ध पाया जाता है एवं जो साथ साथ विभिन्न रूपों में उगाई जाती है। फसलों के ऐसे अध्ययन से कृषि की प्रकृति पद्धति एवं उसकी विशेषताओं के आधार पर कृषि प्रदेशीकरण हेतु उपागम प्राप्त होते हैं। शस्य संयोजन

प्रदेशों के अध्ययन से जहां एक तरफ क्षेत्रीय कृषि विशेषताओं के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त होती है वहीं वर्तमान कृषि समस्याओं के निराकरण हेतु समुचित सुझाव दिये जा सकते है। किसी भी क्षेत्र के फसल संयोजन का स्वरूप मुख्यतः उस क्षेत्र विशेष के भौतिक (जलवायु, जल प्रवाह, मृदा) तथा सांस्कृतिक, आर्थिक, सामाजिक तथा संस्थागत वातावरण की देन होता है। इस प्रकार यह मानव तथा भौतिक वातावरण के सम्बन्धों को प्रदर्शित करता है।

शस्य संयोजन से सम्बन्धित सर्वप्रथम जॉनवीवर[6] महोदय ने महत्वपूर्ण प्रयास किया। इन्होने फसलों से सम्बन्धित अध्ययन हेतु एक नई दिशा दी। इनके द्वारा प्रतिपादित शस्य समिश्रण के महत्वपूर्ण सूत्र को विश्व के अनेक देशों में कृषि भूगोलवेत्ताओं ने अपनाकर अपने अध्ययन प्रस्तुत किए। इनका सूत्र कुल फसल क्षेत्र से अनेक फसलों को अधिकृत प्रतिशत द्वारा तथा कुल क्षेत्र के सैद्धान्तिक वितरण जिसमें सम्पूर्ण फसल क्षेत्र को बराबर-बराबर अनेक क्षेत्रों में विभाजित किया गया है, की तुलनात्मक विधि पर आधारित है। थामस[7] ने वीवर महोदय के सूत्र में सुधार प्रस्तुत किया है। वीवर महोदय ने दो शस्य संयोजन में दो मुख्य फसलों के अन्तर के आधार पर गणना की। जबकि थामस ने प्रत्येक शस्य संयोजन में सभी फसलों के लिए वास्तविक तथा सैद्धान्तिक प्रतिशत के अन्तर के आधार पर गणना की। शेष फसलों की गणना शून्य से विचलन के आधार पर की।

भारत में सर्वप्रथम बनर्जी[8] ने पश्चिमी बंगाल के लिए वीवर महोदय की संशोधित विधि को अपनाया। हरिपाल सिंह[9] ने पंजाब मैदान के मालवा क्षेत्र के शस्य संयोजन का निर्धारण करते समय वीवर महोदय की विधि को अपनाया। इनके अनुसार वीवर महोदय की विधि वहां उपयुक्त नहीं है जहां पर अनेक फसलों द्वारा अधिकृत क्षेत्र की मात्रा का अन्तर कम है, इन्होंने वीवर विधि को अपनाते हुए पंजाब के मालवा क्षेत्र को 22 शस्य संयोजन प्रदेशों में विभाजित किया। ई0 दयाल[10] ने पंजाब मैदान के शस्य संयोजन प्रदेशों का परिसीमन करने के उद्देश्य से एक विधि को अपनाया। प्रत्येक क्षेत्रीय इकाई में मुख्य फसलों के चयन हेतु 50 प्रतिशत मापदण्ड का प्रयोग किया। दूसरे शब्दों में कुल फसल क्षेत्र के 50 प्रतिशत के अन्तर्गत आनेवाली फसलों को शस्य संयोजन विश्लेषण के लिए चुना गया। राय[11] ने पूर्वी

गंगा, घाघरा के दोआब के फसलों के बदलते शस्य स्वरूप का अध्ययन करते समय शस्य सहचर्य प्रदेशों का निर्धारण किया है। अहमद तथा सिद्दीकी[12] ने लूनी बेसिन के शस्य सहचर्य का अध्ययन कम विभिन्नता तथा सभी कृषि सम्भावना वाले प्रदेशों में सम्मिश्रण विश्लेषण को दृष्टिगत रखते हुए किया है।

सारणी 3.17 में फसलों की संख्या रफीउल्लाह महोदय के शस्य संयोजन में हैं जो कि अध्ययन क्षेत्र के लिए सर्वाधिक औचित्यपूर्ण है। शस्य संयोजन में सर्वाधिक फसलों की संख्या थामस की विधि में है जो कि क्षेत्रीय शस्य संयोजन के लिए प्रतिकूल प्रतीत होती है। सारणी से यह तथ्य भी स्पष्ट हो रहा है कि दोई के अनुसार विकासखण्डो की सर्वाधिक 5 दो शस्य संयोजन में प्राप्त होता है। इसके उपरान्त 3 विकासखण्ड पांच शस्य संयोजन में स्थित हैं। 6 शस्य संयोजन में दो विकासखण्ड तथा शेष संयोजनों में 1-1 विकासखण्ड स्थित है। इस प्रकार अध्ययन क्षेत्र में दोई विधि के अनुसार शस्य संयोजन 2 शस्य सम्मिश्रण से 8 शस्य सम्मिश्रण तक विस्तार लिए हुए हैं । थामस महोदय की विधि में भी दो शस्य संयोजन से लेकर आठ शस्य संयोजन तक विस्तृत हैं। यद्यपि इस विधि में चार, छः तथा सात शस्य संयोजन में एक भी विकासखण्ड स्थित नहीं है। तीन, पाँच तथा आठ शस्य संयोजन में चार-चार विकासखण्ड स्थित हैं। शेष दो विकासखण्ड दो शस्य संयोजन में दृश्य हो रहे हैं। रफीउल्लाह की विधि में सर्वाधिक विकासखण्डों की कुल संख्या सात, तीन शस्य संयोजन में स्थित हैं। चार संयोजन में 4 विकासखण्ड आते हैं। शेष तीन विकासखण्ड पांच शस्य संयोजन दर्शा रहे हैं। इस प्रकार प्रो० रफीउल्लाह के शस्य संयोजन में तीन फसल से पांच फसल संयोजन तक विस्तार है। जो अध्ययन क्षेत्र के लिए सर्वाधिक उपयुक्त है। अन्तर्वर्ती शस्य संयोजन में प्रो० रफीउल्लाह तथा दोई विधियों की संख्या एक समान 10 है। जबकि थामस की विधि में अन्तर्वर्ती संयोजनों की संख्या 13 है। इस प्रकार न्यूनतम अन्तर्वर्ती शस्य संयोजन संख्या की दृष्टि से देखें तो दोई तथा रफीउल्लाह दोनों की विधियां उपयोगी तथा औचित्यपूर्ण हैं।

सारणी क्रमांकः 3.17– मुख्य संयोजन तथा अन्तर्वर्ती संयोजन की संख्या

शस्य संयोजन	दोई			थामस			रफी उल्लाह		
	विकासखण्डों की संख्या	अन्तर्वर्ती संयोजन की संख्या	फसलों की कुल संख्या	विकासखण्डों की संख्या	अन्तर्वर्ती संयोजन की संख्या	फसलों की कुल संख्या	विकासखण्डों की संख्या	अन्तर्वर्ती संयोजन की संख्या	फसलों की कुल संख्या
दो शस्य संयोजन	5	1	10	2	1	4	–	–	–
तीने शस्य संयोजन	1	1	3	4	4	12	7	3	21
चार शस्य संयोजन	1	1	4	–	–	–	4	4	16
पांच शस्य संयोजन	3	3	15	4	4	20	3	3	15
छः शस्य संयोजन	2	2	12	–	–	–	–	–	–
सात शस्य संयोजन	1	1	7	–	–	–	–	–	–
आठ शस्य संयोजन	1	1	8	4	4	32	–	–	–
योग	14	10	59	14	13	68	14	10	52

यहां अध्ययन क्षेत्र इटावा में विकासखण्ड स्तर पर शस्य संयोजन मण्डलों के निर्धारण हेतु 1990-91 फसल वर्ष के आधार पर भूमि उपयोग सम्बन्धी आंकड़ों का प्रयोग किया गया है। विभिन्न फसलों के क्षेत्रफल को सकल कृषित भूमि के आधार पर प्रतिशत में परिवर्तित करके उन्हें अवरोही क्रम में व्यवस्थित कर प्रो0 रफीउल्लाह विधि के आधार पर फसलों को श्रेणीबद्ध प्रथम, द्वितीय तथा तृतीय आदि क्रम में करके शस्य संयोजन का निर्धारण किया गया है। प्रथम स्तर के प्रदेशों के अन्तर्गत जनपद में गेहूं, धान, बाजरा तथा मक्का फसलों की प्रधानता पायी जाती है। इसमें से 11 विकासखण्डों में गेहूं प्रथम स्थान पर है जबकि तीन विकासखण्डों बढ़पुरा, औरैया तथा चकरनगर विकासखण्डों में बाजरा प्रथम स्थान पर है। इसका कारण यह है कि बढ़पुरा तथा चकरनगर विकासखण्ड में यमुना तथा चम्बल नदियों के कारण भूमि का ऊंचा नीचा होना सिंचाई की पर्याप्त सुविधा न होने के कारण यह क्षेत्र बाजरा प्रधान है। औरैया विकासखण्ड का भी अधिकांश क्षेत्र यमुना तथा सेंगर नदी के किनारे स्थित होने के कारण बाजरा प्रधान क्षेत्र बन गया है। इन तीनों ही विकासखण्डों में धान की फसल नगण्य है। बाजरा के बाद इन विकासखण्डों में केवल चकरनगर को छोड़कर गेहूं की फसल दूसरे स्थान पर है। इन विकासखण्डों में चना तथा लाही/सरसों की भी मान्यता प्राप्त है। अतः प्रथम स्तर के प्रदेशों में गेहूं, धान के फसलों की प्रधानता पायी जाती है।

द्वितीय स्तर के प्रदेशों में बाजरा, गेहूं का कृषि की प्रधानता दृष्टिगोचर होती है। वास्तव में जनपद के उन विकासखण्डों में जहां गेहूं को प्रथम स्थान प्राप्त है वहां धान को द्वितीय स्थान प्राप्त है। जिन विकासखण्डों में धान द्वितीय स्थान नहीं प्राप्त कर पा रही है वहां बाजरा द्वितीय स्थान पर है और जहां गेहूं प्रथम स्थान नहीं प्राप्त कर पा रहा है वहां बाजरा प्रथम स्थान पर है। प्रथम स्तरीय प्रदेशों की भांति जनपद के दक्षिणी-पश्चिमी तथा दक्षिणी-पूर्वी भाग में यमुना नदी के किनारे कछारी क्षेत्र में बाजरा, अरहर, गेहूं, लाही, चना तथा मक्का आदि फसलों की प्रधानता है। अतः तीसरी प्रमुख फसल के रूप में बाजरा की फसल अध्ययन क्षेत्र में एक महत्वपूर्ण फसल है।

चौथी मुख्य फसल के रूप में मक्का का स्थान आता है। जो कुछ विकासखण्डों को छोड़कर सभी में उगाई जाती हैं। मक्का के साथ-साथ

चना, मटर, लाही तथा उर्द/मूंग को भी अध्ययन क्षेत्र में मान्यता प्राप्त है। ये फसलें भी एक विस्तृत क्षेत्र में उगाई जाती हैं।

5. *कृषि में प्राविधिक प्रयोग का स्तर:*

जनपद इटावा के कृषि क्षेत्र में नियोजन के पूर्व बहुधा आन्तरिक आगतों (क्षेत्रफल) का ही प्रयोग किया जाता था। उस समय पौधों के एकमात्र पोषक जैविक उर्वरक थे जो कृषक स्वतः उत्पन्न कर लेते थे। इसी प्रकार बीज, सिंचाई, खेत की तैयारी आदि विभिन्न उपकरणों की व्यवस्था कृषक स्वतः ही कर लेते थे। इन्हें कृषि के परम्परागत निवेश कहा जा सकता है। प्रकारान्तर से यह कहा जा सकता है कि औद्योगिक उत्पादनों का कृषि क्षेत्र में अत्यन्त कम प्रयोग होता था। अब कृषि क्षेत्र में औद्योगिक उत्पादनों का प्रयोग बढ़ गया है, कृषि की निर्भरता उद्योगों पर बढ़ी है। उद्योगजन्य कृषि यन्त्र, रासायनिक उर्वरक, कीटनाशक दवाइयां, ट्रैक्टर आदि कृषि उत्पादन प्रणाली के अभिन्न अंग बन गये हैं। कृषि की नवीन तकनीकी के प्रचलन के बाद तो इस दिशा में उल्लेखनीय परिवर्तन हुआ है, इन्हें कृषिगत नवीन निवेश कहा जाता है। जनपद की कृषि का आगामी स्वरूप भी इन्हीं नवीन निवेशों से प्रभावित होगा। यहां प्रमुख नवीन कृषि निवेशों तथा अधिक उपजाऊ किस्म के बीज, रासायनिक उर्वरक, कीटनाशक रसायन, सिंचाई की सुविधायें तथा कृषि यन्त्रों की प्रकृति एवं प्रयोग स्तर का विश्लेषण किया गया है।

1. *सिंचित सुविधायें:*

प्रकृति प्रदत्त संसाधनों में जल अत्यन्त विशिष्ट संसाधन है। यह समस्त जीव और वनस्पति जगत के अस्तित्व का आधार है। समाज की समस्त आर्थिक क्रियायें किसी न किसी रूप में जल की अपेक्षा करती हैं। कृषि के सम्बन्ध में इसका विशेष महत्व है क्योंकि कृषि कार्य पूर्णतया जल आपूर्ति पर निर्भर है। चाहे वह वर्षा से प्राप्त जल हो या नदियों या भूमिगत श्रोतों से। कृषि उत्पादकता के आधारभूत घटकों वायु, प्रकाश , जल, भूमि की स्थिति और पोषक तत्व में से जल की पर्याप्त और सम्यक उपलब्धि से पौधों का वांछित विकास होता है। जल संसाधन के इसी अतिलाभदायक प्रयोग के कारण ही यह कहा जाता है कि जल ही जीवन है।

सिंचाई से आशय अभिकरण के माध्यम से विभिन्न फसलों की उपज बढ़ाने के लिए जल के प्रयोग से है। कुछ अन्य निर्माण कार्यों के माध्यम से भी मनुष्य जल के संचय और प्रवाह को नियन्त्रित करता है। ऐसे कार्यक्रमों से सिंचाई कार्यक्रम का निश्चय सिंचाई के लिए रखे गए जल द्वारा होता है। कृषि उत्पादकता बढ़ाने के लिए सिंचाई एक उत्प्रेरक की भूमिका का निर्वाह करती है। सिंचाई से भूमि के प्रयोग से भूमि मिट्टी कणों का परिचालक होता है। जो कि स्वाभाविक रूप से मिट्टी के गुण धर्म में परिवर्तन ला देता है। सिंचाई से भूमि के आयतन में परिवर्तन होने लगता है जिससे भूमि सतह पर खाद मिट्टी पहले की तुलना में 50-75 प्रतिशत तक अधिक हो जाती है।

सिंचाई के साथ मिट्टी के कण फैलने और अधिक स्थान पर आच्छादित होने लगता है। मिट्टी के कणों की इसी सह व्यवस्था तथा पुर्न व्यवस्था के कारण भूमि आयतन में परिवर्तन होता है जो पौधों को भूमि से अधिक पौष्टिक तत्व ग्रहण करने में सहायक होता है। समुचित सिंचाई उस अव्यवस्था में अपरिहार्य हो जाती है। जल वर्षा अनिश्चित, अपर्याप्त और सीमित समय अवधि मे ही केन्द्रित होती है। ऐसी अवस्था में सिंचाई की दोहरी भूमिका होती है। एक ओर यह दुर्भिक्ष के विरूद्ध किसी जोखिम के निदान की बीमा है और दूसरी ओर फसल उत्पादन और उत्पादकता बढ़ाने में इसका प्रमुख योगदान है।

कृषि प्रधान अर्थव्यवस्था और वर्षा की प्रकृति के परिप्रेक्ष्य में सिंचाई का जनपदीय अर्थव्यवस्था में विशेष स्थान है। जनपद में वर्षा का वार्षिक स्तर औसत रूप से 792 मि0मी0 है। जो कृषि के लिए आपेक्षित वर्षा स्तर से कम है। सामान्य रूप से जहां वार्षिक वर्षा का स्तर 1270 मि0मी0 से कम होता है वहां बिना सिंचाई सुविधा के कृषि कार्य में कठिनाई उत्पन्न होती है। इस दृष्टि से जनपद में सम्यक सिंचाई व्यवस्था कृषि विकास के लिए आवश्यक है। वार्षिक वर्षा की मात्रात्मक अल्पता के अतिरिक्त समय के दृष्टिकोण से भी वर्षा का वितरण अत्यन्त असमान है। अधिकांश वर्षा जून से सितम्बर तक के महीने में होती है। शेष महीनों में सूखा रह जाता है। जनपद में लगभग 73.5 प्रतिशत वर्षा जून से सितम्बर तक, 14.1 प्रतिशत अक्टूबर से दिसम्बर तक तथा 12.4 प्रतिशत वर्षा

जनवरी से मई तक होती है। इससे यह स्पष्ट होता है कि वर्षा कुछ महीने तक में केन्द्रित रहती है। जबकि कृषि कार्य सतत जारी रहने की प्रवृत्ति रखता है। वर्षा का कुछ अवधि तक सीमित होना फसलों की विविधिता को हतोत्साहित करती है। वे फसलें जिनकी परिपक्वता अवधि लम्बी होती है, उनकी उत्पादकता हतोत्साहित होती है। अतः यह स्पष्ट है कि जनपद में समय और मात्रा के दृष्टिकोण से वर्षा अत्यन्त अनिश्चित है और निरपेक्ष रूप से वर्षा की मात्रा अत्यन्त कम है। इसलिए व्यापक क्षेत्रों में एक से अधिक फसल उगाने और उत्पादता बढ़ाने के लिए सिंचाई विकास आवश्यक है।

जनपद में सिंचाई क्षेत्र का विकास:

नियोजन काल में प्रारम्भ में जनपद में नहरें, सिंचाई का सबसे बड़ा श्रोत थीं। दूसरा स्थान राजकीय नलकूप का था। निजी सिंचाई व्यवस्था का पूर्णता अभाव था। जो थोड़ा बहुत था भी उसकी क्षमता अत्यन्त न्यून थी क्योंकि सिंचाई साधन परम्परागत थे जिनमें तालाबों से बेड़ी द्वारा जल प्रसार तथा कुओं से चरसे द्वारा ही जल निकाला जाता था। इसके उपरान्त चरसे का स्थान रहट तथा चेन पम्प ने ले लिया। परन्तु इनकी क्षमता यद्यपि चरसे से अधिक थी, परन्तु सिंचाई आवश्यकताओं को पूरा करने में यह साधन भी अपर्याप्त थे। यद्यपि जनपद में आज भी नहरों का स्थान महत्वपूर्ण है। जो शुद्ध सिंचित क्षेत्र के आधे से अधिक क्षेत्र को जल उपलब्ध कराती है। परन्तु अब निरन्तर निजी नलकूप, डीजल पम्प सेट्स का सिंचाई साधनों में महत्व बढ़ता जा रहा है। जनपद के शुद्ध बोए गए भी नहीं थी , अब वर्ष 1990-91 में 216566 हेक्टेअर भूमि को सिंचाई सुविधा प्राप्त हो चुकी है। तालिका संख्या 3.18 में जनपद में सिंचाई सुविधा के विकास को दर्शाया गया है।

तालिका क्रमांक 3.18 जनपद इटावा की कृषि भूमि तथा सिंचित क्षेत्र का चित्र प्रस्तुत कर रही है। जो इस तथ्य की ओर संकेत कर रही है कि स्वतन्त्रता के बाद सिंचित क्षेत्र में लगातार वृद्धि हो रही है। वर्ष 1950-51 में जहां शुद्ध कृषि क्षेत्र के 15.60 प्रतिशत क्षेत्र को सिंचाई की सुविधा प्राप्त थी, वहीं वर्ष 1990-91 में शुद्ध बोए गए क्षेत्रफल में से 74.76 प्रतिशत भू भाग को सिंचाई सुविधा के अन्तर्गत लाया जा चुका है। वास्तव में सिंचाई सुविधा का विकास शुद्ध और कुल कृषि क्षेत्र बढ़ाने का मुख्य

सारणी क्रमांकः 3.18- जनपद में सिंचाई क्षेत्र का विकास (बोया गया और सिंचित क्षेत्र हेक्टेअर में)

वर्ष	शुद्ध बोया गया क्षेत्र	कुल बोया गया क्षेत्र	शुद्ध सिंचित क्षेत्र	शुद्ध सिंचित क्षेत्र बोए गए क्षेत्र से प्रतिशत	कुल सिंचित क्षेत्र	कुल सिंचित क्षेत्र का शुद्ध बोए गए क्षेत्र से प्रतिशत
1950-51	269314	276720	42013	15.60	43168	16.03
1960-61	270866	291775	53631	19.80	66450	24.53
1970-71	273587	317641	91104	33.30	122802	44.89
1980-81	280454	362888	168883	60.20	193846	69.12
1984-85	284648	399476	196692	69.10	244692	55.96
1989-90	288631	427159	213115	73.84	297709	100.50
1990-91	289691	425337	216566	74.76	292507	100.97

स्रोतः जनपदीय सांख्यिकीय कार्यालय इटावा

उत्प्रेरक घटक रहा है। सिंचाई सुविधा के विकास से बंजर और कम उपजाऊ भूमि को भी फसलोत्पादन के अन्तर्गत लाया गया जब सिंचाई के अभाव में इस प्रकार की भूमि पर कृषि कार्य करना लाभदायक नहीं था, परन्तु इस सुविधा के प्रसार से इस प्रकार की भूमि की लाभदायकता बढ़ा दी, जिसके फलस्वरूप शुद्ध कृषि क्षेत्र 1950-51 के 269314 हेक्टेअर से बढ़कर 289691 हेक्टेअर हो गया। 1950-51 से कुल कृषि क्षेत्र में लगातार तेजी से वृद्धि हुई है जो इस तथ्य की ओर संकेत करता है कि सिंचाई सुविधा के कारण शुद्ध कृषि क्षेत्र द्विफसलीय अथवा बहुफसलीय बन सका। यह इस तथ्य से स्पष्ट है कि जहां 1950-51 में जनपद में कुल कृषि क्षेत्र 276720 हेक्टेअर था, वहीं 1990-91 में यह बढ़कर 425337 हेक्टेअर हो गया। अर्थात इसमें डेढ़ गुने से भी अधिक की वृद्धि हुई। यह वृद्धि सिंचाई सुविघा के विकास के कारण ही सम्भव हो सकी है। इसी प्रकार यदि कुल सिंचित क्षेत्र के प्रसार को यदि देखा जाये तो नियोजन काल में मात्र 16.03 प्रतिशत क्षेत्र ही कुल सिंचित क्षेत्र के अन्तर्गत था जो कि वर्ष 1990-91 में बढ़कर 100.97 प्रतिशत हो गया जिसका अर्थ है कि जनपद में सम्पूर्ण शुद्ध बोए गए क्षेत्र को सिंचन सुविधायें प्राप्त हो चुकी हैं जिसमें कुछ भूमि ऐसी भी है जहां तिहरा फसलोत्पादन किया जा रहा है। कुल मिलाकार यह कहा जा सकता है कि जनपद में सिंचाई सुविधा का स्तर कोई असंतोषजनक नहीं है, यह स्तर प्रादेशिक स्तर से अधिक है।

स्रोतवार शुद्ध सिंचित क्षेत्र (हेक्टेअर में):

जनपद में विभिन्न स्थानों की भौतिक संरचना में विविधिता और भूमिगत तथा सतही जल संसाधन की असमान स्थिति के कारण सिंचाई के भिन्न-भिन्न साधनों का प्रयोग किया जाता है। जनपद के दो विकासखण्ड चकरनगर तथा बढ़पुरा यमुना तथा चम्बल नदियों से प्रभावित होने के कारण यहां की भूमि अत्यन्त ऊबड़-खाबड़ तथा जंगली है, जहां पर चाहकर भी नहरों का पानी नहीं पहुंचाया जा सकता है। ऊँची-नीची भूमि होने के कारण नलकूपों का भी जाल नहीं बिछाया जा सकता है क्योंकि नलकूपों से जल वितरण की समस्या का समाधान नहीं किया जा सकता है। इन्हीं सब कारणों से अन्य विकासखण्डों की अपेक्षा उक्त दोनों ही विकासखण्ड सिंचाई सुविधाओं से वंचित रहे हैं। जनपद में श्रोतवार सिंचाई सुविधाओं को

तालिका क्रमांक 3.19में प्रस्तुत किया गया है।

तालिका क्रमांक 3.19: जनपद में स्रोतवार सिंचाई सुविधा का विकास (हेक्टेअर में)

स्रोत	1970-71		1980-81		1990-91	
	क्षेत्र	प्रतिशत	क्षेत्र	प्रतिशत	क्षेत्र	प्रतिशत
1. नहरें	62378	68.47	108680	64.37	137203	63.35
2. नलकूप						
अ. राजकीय	3485	3.82	8686	5.15	10638	4.91
ब. निजी	18922	20.77	45645	27.04	63390	20.27
3. कुएं	4872	5.35	4564	2.70	4086	1.89
4. तालाब	652	0.72	547	0.32	476	0.22
5. अन्य	795	0.87	711	0.42	773	0.36
समस्त शुद्ध सिंचित क्षेत्र	91104	100.00	168833	100.00	216566	100.00

तालिका क्रमांक 3.19 से स्पष्ट होता है कि जनपद में मुख्य रूप से नहरों, नलकूपों, कुओं तथा तालाबों द्वारा सिंचाई की जा सकती है। यदि 1970-71 में श्रोतवार सिंचित क्षेत्र के आंकड़ों पर विचार किया जाये तो स्पष्ट होता है कि नहरें ही सिंचाई का मुख्य साधन रही हैं। जो कुल 68.47 प्रतिशत क्षेत्र को जल उपलब्ध कराती थीं। यह स्थिति कमोबेश आज तक विद्यमान है, यद्यपि नहरों द्वारा सिंचित क्षेत्र का प्रतिशत घट रहा है, परन्तु अभी भी सिंचित क्षेत्र में इनका स्थान महत्वपूर्ण तथा उल्लेखनीय है। वर्ष 1970-71 में दूसरे स्थान पर नलकूपों द्वारा सिंचित क्षेत्र का स्थान है। जनपद में नलकूप राजकीय एवं निजी दोनों ही प्रकार के स्वामित्व में हैं और दोनों ही प्रकार के नलकूपों द्वारा 24.59 प्रतिशत कृषि भूमि सिंचित की जा रही थी, जिसमें निजी स्वामित्व वाले नलकूप की भागेदारी 20.77 प्रतिशत दिखाई दे रही है। यदि 1980-81 में सिंचित क्षेत्र पर विचार करें तो निजी स्वामित्व वाले नलकूपों की भागेदारी बढ़कर 27.04 प्रतिशत हो

गयी है, जबकि राजकीय नलकूपों की भागेदारी भी बढ़कर 5.15 प्रतिशत हो गई। इस प्रकार नलकूपों द्वारा सिंचित क्षेत्रफल पर यदि विचार करें तो सम्पूर्ण सिंचित क्षेत्र का लगभग एक तिहाई हिस्सा नलकूपों का ही है। जबकि नहरों द्वारा इससे लगभग दुगने क्षेत्र की सिंचाई हेतु जल उपलब्ध कराया जा रहा है। वर्ष 1990-91 में नहरों की कुल सिंचित क्षेत्र में लगभग 1 प्रतिशत भागेदारी कम हुई है जबकि नलकूपों की भागेदारी लगभग 2 प्रतिशत बढ़ी है, जिसमें निजी नलकूपों ने ही अपनी हिस्सेदारी बढ़ाई। राजकीय नलकूपों की भागेदारी वर्ष 1980-81 की तुलना में कम हुई है। यदि समग्र दृष्टि से देखा जाये तो नहरों तथा नलकूपों की भागेदारी सम्पूर्ण सिंचित क्षेत्र में 97 प्रतिशत से भी अधिक है। 1970 से 1990 तक यह दोनों साधन सम्पूर्ण सिंचित क्षेत्र की 90 प्रतिशत से भी अधिक हिस्सा सिंचित करते हैं। यह तथ्य भी उल्लेखनीय है कि 1970-71 में जहां कि कुओं द्वारा कुल सिंचित क्षेत्र का 5 प्रतिशत से भी अधिक हिस्सा सिंचित किया जाता था वहीं पर दो दशकों के उपरान्त वर्ष 1990-91 में इसकी भागेदारी घटकर 1.89 प्रतिशत रह गई। इससे यह स्पष्ट होता है कि जनपद में सिंचाई स्रोतों में कुओं का महत्व घटता जा रहा है। और यही स्वभाव तालाबों के द्वारा सिंचित क्षेत्र का भी है।

सारणी क्रमांक 3.20 विकासखण्ड वार विभिन्न श्रोतों से सिंचित क्षेत्रफल

क्र.सं.	विकासखण्ड	नहरों द्वारा शुद्ध सिंचित क्षेत्रफल का कुल शुद्ध सिंचित क्षेत्रफल से प्रति0		नलकूपों द्वारा शुद्ध सिंचित क्षेत्रफल का कुल शुद्ध सिंचित क्षेत्रफल से प्रति0		अन्य साधनों द्वारा शुद्ध सिंचित क्षेत्रफल का कुल शुद्ध सिंचित क्षेत्रफल से प्रति0	
		84-85	90-91	84-85	90-91	84-85	90-91
1.	जसवन्तनगर	34.0	67.0	53.7	30.2	12.3	2.8
2.	बढ़पुरा	49.6	38.5	42.4	61.0	8.0	0.5
3.	बसरेहर	67.6	70.4	19.3	26.5	13.1	2.9
4.	भरथना	77.3	80.5	16.5	18.0	6.2	1.5
5.	ताखा	70.1	63.3	24.7	34.5	5.2	2.2
6.	महेवा	67.6	70.1	21.2	29.3	11.2	0.9

7. चकरनगर	-	-	96.6	88.4	3.4	11.6
8. अछल्दा	60.9	46.9	33.7	50.7	5.4	2.4
9. विधूना	59.5	57.2	32.8	39.1	7.7	3.7
10. एरवाकटरा	49.3	49.1	43.8	44.8	6.9	6.1
11. सहार	59.8	52.1	32.9	44.6	7.3	3.3
12. औरैया	82.7	84.2	16.4	14.7	0.9	1.1
13. अजीतमल	74.5	67.8	24.9	31.5	0.6	0.7
14. भाग्यनगर	76.8	58.9	22.6	30.7	0.6	0.4
जनपदीय	65.4	63.4	28.3	34.2	6.3	2.4

स्रोतः सांख्यिकीय पत्रिका जनपद इटावा

तालिका क्रमांक 3.20 में जनपद में विकासखण्ड वार तथा श्रोतवार सिंचाई के प्रतिशत का दृश्य प्रस्तुत कर रही है। तालिका को देखने से ज्ञात होता है कि जनपद में सिंचाई के दो प्रमुख श्रोत है जिनमें नहरें प्रथम स्थान पर हैं और नलकूपों का दूसरा स्थान है। नहरों द्वारा शुद्ध सिंचित क्षेत्र को देखा जाये तो वर्ष 1984-85 की तुलना में वर्ष 1990-91 में नहरों की भागेदारी सम्पूर्ण जनपद में 2 प्रतिशत घटी है, जबकि नलकूपों की हिस्सेदारी 5.9 प्रतिशत बढ़ी है। अन्य दोनों का हिस्सा 4.1 प्रतिशत घटा है। जहां चकरनगर विकासखण्ड अपनी प्राकृतिक स्थिति के कारण नहरों से वंचित है, वहीं औरैया विकासखण्ड दोनों ही समयावधियों में अपनी सर्वाधिक भूमि को इस साधन से वंचित कर रहा है, स्वाभाविक है कि इस विकासखण्ड में नलकूपों की भागेदारी दोनों ही अवधियों में न्यूनतम है। वे विकासखण्ड जो 1984-85 में अपनी कुल सिंचित भूमि में से 70 प्रतिशत से अधिक भूमि नहरों द्वारा सिंचित करते हैं, भरथना 77.3 प्रतिशत, ताखा 70.1 प्रतिशत, अजीतमल 74.5 प्रतिशत तथा भाग्यनगर 76.8 प्रतिशत है। 50 से 70 प्रतिशत के मध्य सिंचन सुविधा प्राप्त करने वाले विकासखण्डों में बसरेहर 67.6 प्रतिशत, महेवा 67.6 प्रतिशत, अछल्दा 60.9 प्रतिशत, विधूना 59.5 प्रतिशत तथा सहार 59.8 प्रतिशत हैं। शेष विकासखण्ड 40 से 50 प्रतिशत के मध्य यह सुविधा प्राप्त करते हैं, केवल जसवन्तनगर की भागेदारी मात्र 34 प्रतिशत है। वर्ष 1990-91 में इसी दृष्टि से देखा जाये तो केवल चार विकासखण्ड जसवन्तनगर, बसरेहर,

भरथना तथा महेवा ही भागेदारी बढ़ा रहे हैं, जबकि अन्य विकासखण्ड न्यूनाधिक इस साधन की हिस्सेदारी कम करते हैं। भागेदारी बढ़ाने वालों में से जसवन्तनगर सर्वाधिक लगभग दुगनी हिस्सेदारी में वृद्धि कर रहा है।

नलकूपों में राजकीय तथा निजी स्वामित्व वाले नलकूपों द्वारा सिंचित क्षेत्रफल का महत्वपूर्ण स्थान है। वर्ष 1990-91 में 50 प्रतिशत से अधिक हिस्सेदारी करने वाले विकासखण्डों में से चकरनगर प्रथम, बढ़पुरा द्वितीय तथा अछल्दा तृतीय स्थान पर है। इसके अतिरिक्त इस साधन द्वारा 30 प्रतिशत से अधिक हिस्सेदारी जसवन्तनगर, ताखा, विधूना, एरवाकटरा, सहार, अजीतमल तथा भाग्यनगर विकासखण्डों की हो रही है। इनमें से एरवाकटरा तथा सहार लगभग समान स्थिति में हैं।

सारणी क्रमांक 3.21 जनपद में विकासखण्ड वार विभिन्न साधनों द्वारा श्रोतानुसार सिंचित क्षेत्रफल को दर्शाया गया है। सारणी से ज्ञात होता है कि जनपद में नहरों और नलकूपों का ही प्रमुख स्थान है। अन्य साधनों का सिंचाई में योगदान कोई अधिक महत्वपूर्ण नहीं है। विकासखण्ड वार यदि देखें तो प्रतिशत की दृष्टि से औरैया विकासखण्ड 84.19 प्रतिशत सिंचाई सुविधा नहरों के द्वारा प्राप्त कर रहा है, परन्तु क्षेत्रफल में केवल 10639 हेक्टेअर ही सिंचित हो रहा है, जबकि बसरेहर विकासखण्ड नहरों द्वारा 18724 हेक्टेअर सिंचित कर रहा है। परन्तु फिर भी 70.45 प्रतिशत सिंचन सुविधा प्राप्त कर समस्त विकासखण्डों में तीसरे स्थान पर है। चकरनगर विकासखण्ड अभी तक इस सुविधा से वंचित है। नलकूपों द्वारा भी सिंचाई सुविधा का जनपद में एक महत्वपूर्ण स्थान है। जनपद का कुल सिंचित क्षेत्रफल में से 34.18 प्रतिशत क्षेत्रफल को नलकूप ही सिंचाई सुविधा उपलब्ध करा रहे हैं। इस दृष्टि से देखा जाये तो अछल्दा विकासखण्ड अपने समस्त सिंचित क्षेत्रफल का आधे से अधिक भाग नलकूपों द्वारा सिंचित करता है क्योंकि यहां पर नहरों की मात्र 46.88 प्रतिशत ही भागेदारी है। एक आश्चर्यजनक तथ्य यह स्पष्ट हो रहा है कि औरैया विकासखण्ड में नलकूपों की भागेदारी मात्र 14.65 प्रतिशत कर रहा है, जबकि इस विकासखण्ड में 72 राजकीय नलकूप हैं और जिनका सिंचित क्षेत्रफल मात्र 850 हेक्टेअर है। इस प्रकार प्रति नलकूप लगभग 11.5 हेक्टेअर भूमि सिंचित हो रही है। जबकि इसके विपरीत अछल्दा विकासखण्ड

तालिका क्रमांक 3.21: जनपद में विकासखण्ड वार विभिन्न स्रोतानुसार सिंचित क्षेत्रफल 1990-91. (हेक्टेअर में)

विकास खण्ड	कुल सिंचित क्षेत्रफल	नहरों द्वारा		नलकूपों द्वारा			कुएं		तालाब		अन्य	
		क्षेत्रफल	प्रतिशत	राजकीय	निजी	प्रतिशत	क्षेत्रफल	प्रतिशत	क्षेत्रफल	प्रतिशत	क्षेत्रफल	प्रतिशत
1. जसवन्तनगर	22560	15123	67.03	2877	3940	30.22	310	1.37	200	0.89	110	0.49
2. बढ़पुरा	6566	2526	38.47	1615	2390	61.00	35	0.53	–	–	–	–
3. बसरेहर	26577	18724	70.45	593	6457	26.53	397	1.49	127	0.48	279	1.05
4. भरथना	16903	13608	80.51	–	3040	17.98	169	1.00	2	0.01	84	0.50
5. ताखा	17232	10912	63.32	330	5621	34.53	350	2.03	7	0.04	12	0.07
6. महेवा	18193	12702	70.13	177	5126	29.28	38	0.21	3	0.02	67	0.37
7. चकरनगर	1641	–	–	210	1241	88.42	157	9.57	–	–	33	2.01
8. अछल्दा	16753	7854	46.88	508	7986	50.71	330	1.97	38	0.22	37	0.22
9. विधूना	18604	10645	57.22	857	6408	39.06	626	3.36	45	0.24	23	0.12
10. एरवाकटरा	14568	7151	49.09	794	5733	44.80	882	6.05	8	0.06	–	–
11. सहार	17833	9289	52.09	956	6988	44.55	572	3.21	21	0.12	7	0.04
12. औरैया	12637	10639	84.19	850	1001	14.65	90	0.71	15	0.12	42	0.33
13. अजीतमल	12668	8589	67.80	288	3702	31.50	61	0.48	2	0.02	26	0.20
14. भाग्यनगर	13647	9397	68.86	580	3605	30.67	48	0.35	3	0.06	9	0.06
योग ग्रामीण	216302	137159	63.41	10635	63238	34.15	4065	1.88	476	0.22	729	0.34
योग नगरीय	264	44	16.67	3	152	58.71	21	7.95	–	–	44	16.67
योग जनपद	216566	137203	63.35	10638	63390	34.18	4086	1.89	476	0.22	773	0.36

में मात्र 15 राजकीय नलकूप हैं जिनका सिंचित क्षेत्रफल 508 हेक्टेअर है। इस प्रकार इस विकासखण्ड में प्रति नलकूप 33.87 हेक्टेअर भूमि सिंचित हो रही है। यदि औरैया और अछल्दा विकासखण्ड की इस दृष्टि से तुलना करें तो औरैया की अपेक्षा अछल्दा विकासखण्ड राजकीय जलकूपों की सिंचन सुविधा का लगभग तीन गुना उपभोग कर रहा है। स्पष्ट है कि विकासखण्डों में सिंचन क्षमता का कुशलतम उपयोग नहीं किया जा रहा है। इसी प्रकार यदि निजी नलकूपों की दृष्टि से देखा जाये तो औरैया विकासखण्ड में इनकी सिंचन सुविधाओं का भी कुशलता से उपयोग नहीं किया जा रहा है फिर भी समग्र दृष्टि से देखा जाये तो जनपद में सिंचाई की स्थिति संन्तोषजनक कही जायेगी।

संन्दर्भ ग्रन्थ

1. आई0 सी0 ए0 आर0 हैण्डबुक ऑफ एग्रीकल्चर, पृष्ठ 113.
2. वोहरा बी0 बी0 " ए पोलिसी फार लैण्ड उण्ड वाटर, सरदार मेमोरियल लेवन्चरर्स "1980, मैनस्ट्रीम, जनवरी3, 1981.
3. त्रिपाठी वी0 वी0 "भारतीय कृषि" में उल्लेख, किताब महल, 1992, पृष्ठ 64.
4. भाटिया एस0 एस0 (1967) "ए न्यू मीजर्स ऑफ एग्रीकल्चरल इफीसियेन्सी इन यू0 पी0 इन इण्डिया" इकोनोमिक ज्योग्राफी।
5. सिंह जसवीर (1976) "एन एग्रीकल्चर ज्योग्राफी ऑफ हरियाणा" कुरुक्षेत्र (1976) पृष्ठ 254.
6. बीवर जे0 सी0 (1954) "क्राप कॉम्बीनेशन रीजन इन दि मिडिल रेस्ट", ज्योग्राफिकल रिव्यू, वोल्यूम 44, पृष्ठ 1-13.
7. थामस (1963) "क्राप कॉम्बीनेशन रीजन इन दि मिडिल रेस्ट",ज्योग्राफिकल रिव्यू, वोल्यूम 44, पृष्ठ 60-67.
8. बनर्जी वी0 (1964) " चेन्जिंग क्राप लैण्ड इन वेस्ट बंगाल" ज्योग्राफिकल रिव्यू ऑफ इण्डिया 24 (1).
9. सिंह हरपाल (1965) "क्राप कम्बीनेशन रीजन इन मालवा ट्रेक ऑफ पंजाब" डेकन ज्योग्राफर, वोल्यूम, पृष्ठ 21-30.
10. दयाल ई0 " क्राप कम्बीनेशन रीजन-ए स्टडी ऑफ पंजाब प्लेन, नीदरलैण्ड जनरल ऑफ इकोनोमिक्स सोसल ज्योग्राफी 38-59.
11. राय बी0 के0 (1967) " क्राप एसोसियेशन एण्ड चेन्जिंग पैटर्न ऑफ क्राप इन दि गंगा घाघरा दोआब" एन0 जी0 जे0 आई0 13(4) 1994-207.
12. अहमद ए0 एण्ड सिद्दीकी एम0 एफ0 (1967) "क्राप एसोसियेशन पेटर्न इन दि लूनीबेसिन"- दि ज्योग्राफर, वाल्यूम 14, पृष्ठ 68.

अध्याय - चतुर्थ
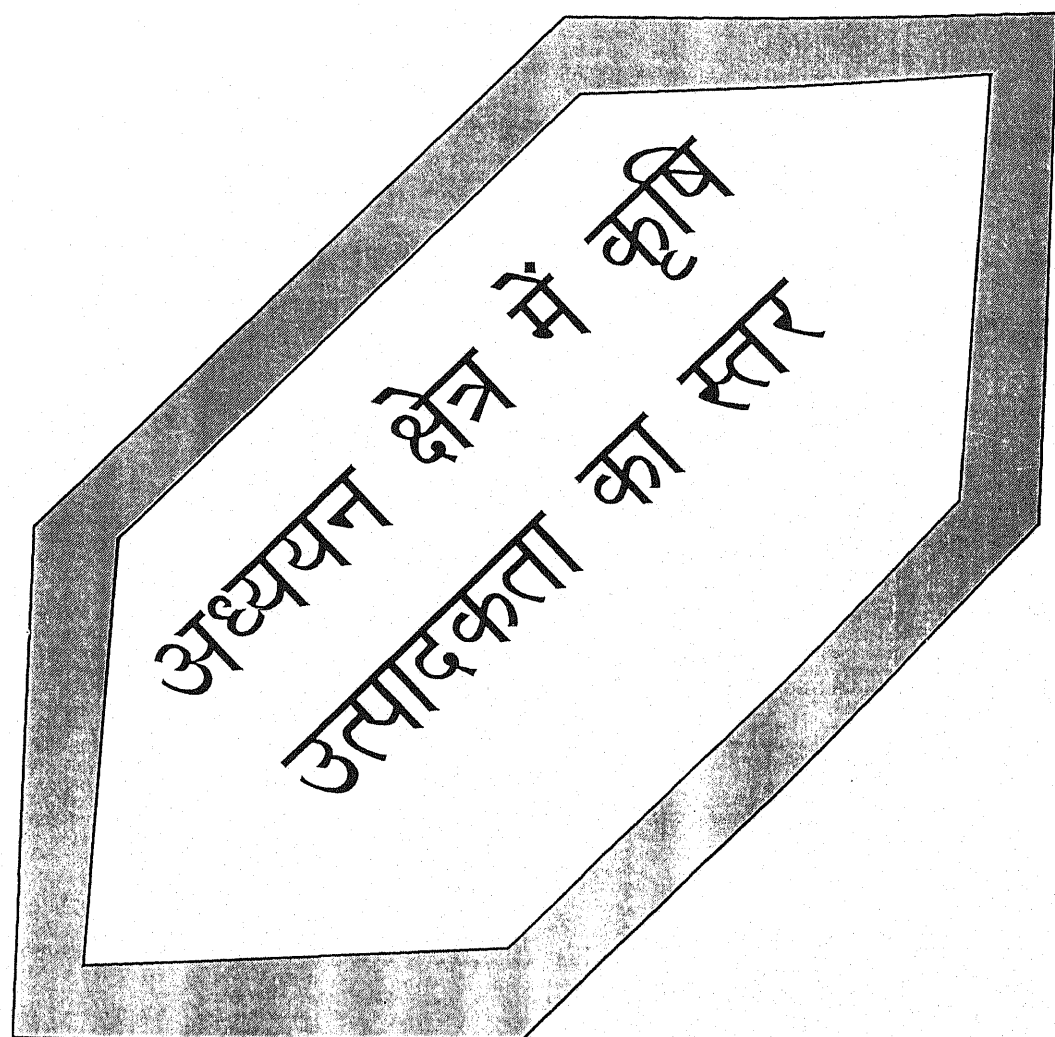
अध्याय - चतुर्थ

अध्ययन क्षेत्र में कृषि उत्पादकता का स्तर

1. कृषि उत्पादकता मापन विधियां:

कृषि अध्ययन में कृषि उत्पादकता को निर्धारित करने के लिए विधि सम्बन्धी पर्याप्त साहित्य मिलता है। स्टाम्प[1] ने प्रति इकाई क्षेत्र की कृषि उत्पादकता को निर्धारित करते समय यह बताया कि कृषि उत्पादकता में क्षेत्रीय अन्तर अंशतः जलवायु एवं अन्य प्राकृतिक अनुकूलित दशायें तथा अंशतः फार्मिंग क्षमता की देन है। उत्पादकता कृषि क्षमता का मापक होती है। जिसमें उत्पादन वृद्धि के दृष्टिकोण से लागत कारकों का प्रयोग किया जाता है। कृषि उत्पादकता में वृद्धि का सम्बन्ध लागत चुनाव मात्रा तथा तकनीकी कुशलता से है जिनका उत्पादन प्रक्रियाओं के रूप में प्रयोग किया जाता है। तथा जिससे उत्पादन में वृद्धि होती है। कृषि उत्पादकता तथा कृषि क्षमता के मापन का प्राथमिक सम्बन्ध प्रथम एकड़ इकाई से है जो सभी भौतिक तथा सांस्कृतिक कारकों के अन्तर्सम्बन्धों की देन है।

भिन्न-भिन्न विद्वानों ने कृषि उत्पादकता को निर्धारित करने में अलग-अलग विधियों को अपनाया है। विधि सम्बन्धी इन सभी उपागमों को सात वर्गों में विभाजित किया जा सकता है।

1. कृषि उत्पादन से प्राप्त आय पर - आधारित विधि।
2. प्रति श्रम लागत इकाई उत्पादन पर आधारित विधि।
3. कृषि उत्पादन से प्रति व्यक्ति उपलब्ध अन्न पर आधारित विधि।
4. कृषि लागत आय पर आधारित विधि।
5. प्रति एकड़ उपज तथा कोटि गुणांक पर आधारित विधि।
6. फसल क्षेत्र तथा प्रति क्षेत्र इकाई उत्पादन पर आधारित विधि।
7. भूमि के पोषक भार क्षमता पर आधारित विधि।

उपर्युक्त विधियों में से एक दो तथा चौथे उपागम के लिये संसार के अधिकांश देशों में उपर्युक्त आंकड़े नहीं मिल पाते है। भारतवर्ष के अधिकांश राज्यों में कृषि आकड़े इस दृष्टि से अधूरे हैं। संकाल्पनिक दृष्टिकोण से चौथी विधि का औचित्य जीवन निर्वाह कृषि व्यवस्था में नगण्य है। तृतीय उपागम अर्थात कृषि उत्पादन से प्रति व्यक्ति उपलब्ध अन्न पर

आधारित विधि को सर्वप्रथम बक[2] महोदय ने अपनाया। इसे अन्न तुल्य विधि भी कहते है। बक महोदय ने अनुभव किया कि चीन जैसे देश में जहां जीवन निर्वाहन व्यवस्था प्रचलित है। कृषि उत्पादकता का मूल्यांकन मुद्रा के रूप में उचित नही होगा। जबकि अमेरिका तथा पश्चिमी यूरोप की कृषि क्षमता का निर्धारण अन्न तुल्य विधि के आधार पर अचित नही होगा क्योंकि वहां पर अनेक मुद्रादायिनी फसलों का उत्पादन होता है, इनको अन्न के बराबर या किसी भार इकाई के बाराबर बदलना न्यायकार नही प्रतीत होता हैं । संसार के विभिन्न देशों में विनमय की दर में अदला बदली दर के कारण भी परिणाम में अन्तर का होना स्वाभाविक है। एक ही देश में विनिमय की दर में भी अन्तर मिलता है। ब्रीज महोदय ने भी कृषि उन्नति को निर्धारित करने के लिये "अन्न तुल्य पद्यति" का प्रयोग किया है। इन्होंने एशियाई देशों के सभी प्रकार के उत्पादित अन्न को प्रति व्यक्ति चावल की आवश्यकता की मात्रा में बदला । इस प्रकार इनकी चावल तुल्य विधि बक की प्रारम्भिक विधि में सुधार थी । जिसमें ब्रीज महोदय ने अनेक प्रकार के अन्नों को स्थानीय कीमत के आधार पर बदला जबकि बक महोदय ने सभी अन्नों की समान इकाई मानी। क्लार्क तथा हैसवेल[3] ने भी ठीक यही विधि अपनायी जो प्रति व्यक्ति गेहूँ तुल्य पर आधारित है। कुछ विद्वानों ने अन्तर्राष्ट्रीय संघ के भार पद्धति को अपनाया, जिसकी कृषि उत्पादन सूची संख्या प्रयोग करने में प्रयोग किया गया था इस मापक में सम्पूर्ण कृषि उत्पादन को प्रति व्यक्ति वार्षिक गेहूँ की मात्रा (किलोग्राम) के रूप में प्रदर्शित किया गया । यह आधार पर कृषि उन्नति का तुलनात्मक अध्ययन आसानी से किया जा सकता है।

प्रति एकड़ उपज तथा कोटी पर आधारित विधि का सम्बन्ध फसलों के प्रति एकड़ उपज से है। केण्डल[4] की कृषि क्षमता निर्धारण विधि प्रति क्षेत्र इकाई के उत्पादन पर आधारित है। इन्होनें इग्लैण्ड के 48 काउन्टीज की क्षमता निर्धारण में दस मुख्य फसलों के प्रति एकड़ उपज को आधार माना तथा श्रेणी गुणांक विधि को अपनाया। स्टाम्प महोदय ने केन्डाल की श्रेणी गुणांक विधि का प्रयोग अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर तुलनात्मक अध्ययन के लिये किया, इसके लिये स्टाम्प महोदय ने बीस देशों को चुना, नौ प्रमुख फसलों के प्रति एकड़ उत्पादन के आधार पर अध्ययन किया। भारतवर्ष में इस विधि का सर्वप्रथम प्रयोग मुहम्मद सफी ने किया । इन्होने उत्तर प्रदेश के

सभी जनपदों की कृषि क्षमता का निर्धारण आठ खाद्यान्न फसलों के प्रति एकड़ उपज के आधार पर किया । केण्डल के श्रेणी गुणांक विधि का विवरण इस प्रकार हैं:

1. प्रत्येक फसल के प्रति एकड़ उत्पादन के आधार पर श्रेणी बनाना।
2. चुनी फसलों की प्रत्येक इकाई की गणना श्रेणी को जोड़ना ।
3. प्रत्येक इकाई की श्रेणी से प्राप्त जोड़ को चुनी फसलों की संख्या से विभाजित करना तथा
4. इस प्रकार श्रेणी गुणांक की प्राप्ति हो जाती है। इस विधि की मुख्य आलोचना इस आधार पर की गयी कि फसलों के प्रति एकड़ उत्पादन के विश्लेषण के साथ उस फसल के क्षेत्र का ध्यान नही दिया जाता है। उदाहरण के लिये "अ" इकाई की श्रेणी गेहूँ के प्रति एकड़ उत्पादन के लिये प्रथम स्थान पर है। लेकिन क्षेत्र केवल एक प्रतिशत है, प्रति एकड़ उत्पादन अधिक होते हुये भी क्षेत्र की दृष्टि से स्थान नगण्य हो सकता है। फलस्वरूप "अ" इकाई का महत्व कृषि उत्पादकता की द्रष्टि से कम महत्वपूर्ण होगा जबकि श्रेणी गुणांक विधि के अनुसार कृषि क्षमता अधिक होगी ।

श्रेणी गुणांक विधि की इस कमी को स्प्रे तथा देशपाण्डे[5] ने दूर किया। इन्होनें फसलों के अन्तर्गत क्षेत्र को स्थान देकर श्रेणी गुणांक उपागम में सुधार किया। अनेक फसलों की श्रेणियों के लिये भार सम्पूर्ण क्षेत्र में से प्रत्येक फसल के अन्तर्गत गणना की गयी प्रतिशत की अनुपातीय है। इस विधि की मूल कमी यह है कि इसमें प्रत्येक फसल की प्रतिशत की गणना कुल फसल क्षेत्र से किया गया है जबकि कृषि क्षमता निर्धारित करते समय कुल बोई गयी भूमि का प्रयोग करना चाहिये क्योकि कटाई क्षेत्र या कुल बोई गयी भूमि ही उत्पादन तथा प्रति एकड़ पैदावार को प्रभावित करती है। उदाहरणार्थ "क" इकाई में चावल की प्रति एकड़ उपज की दो श्रेणी, गेहूँ-3, ज्वार, मक्का-4, रुई-13 तथा दालें 9 है तथा "क" इकाई में ही चावल के अन्तर्गत 10 प्रतिशत क्षेत्र गेहूँ 15 प्रतिशत, मक्का 20 प्रतिशत, रुई 25 प्रतिशत, दालें 20 प्रतिशत तथा शेष सभी फसलों में 10 प्रतिशत क्षेत्र है। स्प्रे तथा देश पाण्डे ने इन सभी प्रतिशतों को भार के रूप में प्रयोग कियाहै। जिसकी गणना इस प्रकार की है। $(2X10)+(3X15)+(4X20)+(13X25)+(9X20) = 650$ तथा पुनः क्षेत्र प्रतिशत के कुल जोड़ द्वारा विभाजित करना : $10+15+20+25+20 = 90$, इस प्रकार 'क' इकाई की सूची $=650/90$

= 7.2 प्राप्त होगी परन्तु जब उपज आकड़ो की गणना कुल बोई गई भूमि के सन्दर्भ में करते हैं तो स्थिति में परिवर्तन हो जाता है। यदि मान लिया जाये कि कुल बोई भूमि का चावल, गेहूँ, मक्का, रूई आदि फसलों के अन्तर्गत क्रमशः 19,18,16,10 तथा 22 प्रतिशत क्षेत्र है जो इस सम्बन्ध में श्रेणियों का औसत भार (2X19)+(3X18)+(4X16)(13X10)+(9X22) = 484 प्राप्त हुआ, तथा पुनः भार के सम्पूर्ण योग द्वारा विभाजित करना 19+18+16+10+22त्र85 होगा, इस प्रकार "क" इकाई की सूची = 484/85 = 5.7 प्राप्त होगी। फलस्वरूप कुल फसल क्षेत्र के स्थान पर कुल बोई गयी भूमि क्षेत्र से विभिन्न फसलों की प्रतिशत की गणना करना अधिक उचित होगा।

गाँगुली[6] ने फसल सूची विधि को अपनाया है। इन्होने नौ मुख्य फसलों को चुना तथा प्रत्येक फसल की सूची की गणना की । इनका उपज सूची सूत्र निम्न है-

$$\frac{\text{अध्ययन इकाई के “क” फसल प्रति एकड़ उपज}}{\text{सम्पूर्ण प्रदेश में “क” फसल की औसत उपज}} \times 100$$

उपज सूची ज्ञात करने के बाद, उस फसल की प्रतिशत (जो कुल उपज क्षेत्र से निकाली गई है) से गुणा करके फार्म क्षमता सूची की गणना की गई है। इस अध्ययन में भी फार्म क्षमता सूची की गणना कुल फसल क्षेत्र के स्थान पर बोई गयी भूमि के सन्दर्भ में किया गया होता तो परिणाम अधिक उचित होता। भाटिया [7] ने उत्तर प्रदेश के विभिन्न जिलों की कृषि क्षमता निर्धारित करने में एक विशेष सूत्र का प्रयोग किया है, इनका अनुमान है कि (क) प्रति एकड़ उपज भौतिक एवं मानवीय पर्यावरण का प्रतिफल है, (ख) अनेक फसलों के अन्तर्गत क्षेत्र भूमि उपयोग से सम्बन्धित अनेक कारकों के प्रभाव को प्रदर्शित करता है, फलस्वरूप कृषि क्षमता प्रति एकड़ उत्पादन तथा फसल क्षेत्र दोनों तथ्यों की देन हैं। उदाहरण के लिये "क" क्षेत्र में गेहूँ की प्रति एकड़ उपज 1000 पौण्ड है जो क्षेत्रीय औसत का 115 प्रतिशत है तथा चावल की प्रति एकड़ उपज 1200 पौण्ड है जो क्षेत्रीय औसत का 140 प्रतिशत है। गेहूँ के अर्न्तगत कुल क्षेत्र का 50 प्रतिशत है जबकि चावल के अन्तर्गत केवल 10 प्रतिशत है फलस्वरूप कृषि क्षेत्र का प्रभाव भी कृषि क्षमता पर अलग-अलग पडेगा । दूसरे

उदाहरण में मान लीजिये कि तम्बाकू की प्रति एकड़ उपज दो इकादयों (क तथा ख) में समान है तथा क क्षेत्र में तम्बाकू के अन्तर्गत 40 प्रतिशत है तथा "ख" में केवल 10 प्रतिशत है। फलतः क तथा ख क्षेत्रों में कृषि क्षमता अलग-अलग होगी तथा ख क्षेत्र की तुलना मे क क्षेत्र में कृषि क्षमता निर्धारण में तम्बाकू फसल का योगदान अधिक होगा इन्ही तथ्यों को ध्यान में रखते हुये भाटिया ने निम्न लिखित सूत्र के आधार पर उत्तर प्रदेश की कृषि क्षमता को निर्धारित किया है।

(1) $$Lya = \frac{Yc}{Yr} \times 100$$

जहां Lya ='a' फसल की उपज सूची।

Yc = 'a' फसल की प्रति एकड़ उपज।

Yr = 'a' फसल की सम्पूर्ण क्षेत्र की प्रति एकड़ उपज।

(2) $$Ei = \frac{Lya.Ca + Lyb.Cb + \ldots\ldots\ldots\ldots\ Lyn.Cn}{Ca + Cb + \ldots\ldots\ldots\ldots Cn}$$

जहां Ei = कृषि क्षमता की सूची।

Lya, Lyb..............Lyn = अनेक फसलों की उपज सूची।

Ca, Cb................Cn = अनेक फसलों के अन्तर्गत क्षेत्र का कुल फसल क्षेत्र से प्रतिशत।

उपर्युक्त सूत्र के आधार पर भाटिया ने उत्तर प्रदेश की कृषि क्षमता को चार वर्गो में विभाजित किया है -

1. उच्च कृषि क्षमता 109.6
2. मध्यम कृषि क्षमता 100.0
3. निम्न कृषि क्षमता 88.80
4. न्यूनतम कृषि क्षमता 86.70

सिन्हा[8] ने भाटिया की विधि का समर्थन करते हुये जनपद स्तरीय अध्ययन के लिये दोषी बताया, इन्होने भारतवर्ष स्तर पर आकड़ों की ओर ध्यान दिलाते हुये कृषि क्षमता निर्धारण में प्रति हेक्टेअर उपज को ही लाभकर

बताया । सिंह[9] ने कृषि क्षमता का निर्धारण प्रति एकड़ भूमि भार क्षमता के आधार पर किया है। इनके मतानुसार कृषि क्षमता, भूमि भार क्षमता तथा उत्पादकता में कोई विशेष अन्तर नही है। इनका मत है कि प्रति क्षेत्र इकाई का उत्पादन जितना अधिक होगा, भूमि पोषण क्षमता भी उतनी ही अधिक होगी, फलतः फार्मिंग क्षमता भी अधिक होगी।

वास्तव में भूमि भार पोषक क्षमता विधि की मुख्य विशेषता यह है कि संसार के किसी भी भाग में फसलों की विभिन्नताओं का तुलनात्मक अध्ययन आसानी से किया जा सकता है। इस विधि में उत्पादन को कैलोरीज में बदल दिया जाता है। इन्हाने कृषि क्षमता की सूची संस्था को इस प्रकार निर्धारित किया है।

$$Lae = \frac{CPe}{CPr} \times 100$$

जहां Lae= इकाई की कृषि क्षमता सूची।

CPe= इकाई की भूमि भार पोषक क्षमता उपज।

CPr = सम्पूर्ण प्रदेश की भूमि भार पोषक क्षमता।

इस विधि में :

1. प्रत्येक फसल के प्रति एकड़ उपज को ध्यान में रखा गया है।
2. प्रत्येक फसल के अन्तर्गत कटाई क्षेत्र की गणना की गयी है।
3. अन्न, दालें, अन्य खाद्य तथा तिलहन फसलें जो कुल फसल क्षेत्र के 85 प्रतिशत से 95 प्रतिशत पर बोई जाती है, कृषि क्षमता निर्धारण में गणना की गयी है।
4. कुल उत्पादन में 16.8 प्रतिशत उत्पादन घटाकर भोजन के लिये शुद्ध उपलब्धि के आधार पर पोषक क्षमता की गणना की गयी है।
5. प्रत्येक फसल से प्राप्त कैलोरिक मात्रा का निर्धारण किया गया है।
6. प्रति व्यक्ति मानक पोषक तत्व इकाई को भी निर्धारित किया गया है।

यह उपागम उन क्षेत्रो के लिये उपयुक्त होगा जहां कुल फसल क्षेत्र के 95 प्रतिशत क्षेत्र पर केवल खाद्यान्न फसलें उगायी जाती है।

कृषि क्षमता के स्थान पर कृषि उत्पादकता शीर्षक के अन्तर्गत

अध्ययन करने वाले विद्वान ईनेदी[10] ने कृषि की मौलिक किस्मों का वर्णन करते समय कृषि उत्पादकता को निर्धारित करने के लिये निम्न सूत्र प्रतिपादित किया -

$$\frac{Y}{Yn} \% \frac{T}{Tn}$$

$$\text{अथवा } \frac{Y}{Yn} X \frac{Tn}{T}$$

जहाँ Y = इकाई क्षेत्र में चुनी फसल की पैदावार की कुल मात्रा

Yn =राष्ट्रीय स्तर पर फसल की पैदावार की कुल मात्रा

T = जिला में फसल के अर्न्तगत कुल क्षेत्र

Tn= राष्ट्रीय स्तर पर फसल के अर्न्तगत कुल क्षेत्र

इनेदी ने सूत्र को उदाहरण द्वारा स्पष्ट किया है जैसे किसी इकाई के राष्ट्रीय स्तर पर फसल के अन्तर्गत कुल क्षेत्र 5.7 मिलियन हेक्टेअर है जिसमें गेहूँ के अर्न्तगत 1 मिलियन हेक्टेअर है तथा प्रति हेक्टेअर उत्पादन 15 क्विटल है। इस प्रकार गेहूँ का कुल उत्पादन 15 मिलियन क्विटल होगा । जनपद स्तर पर "क" इकाई में फसल का कुल क्षेत्र 50000 हेक्टेअर है तथा 15000 हेक्टेअर पर गेहूँ की खेती की जाती है तथा गेहूँ का प्रति हेक्टेअर उत्पादन 23 क्विंटल है तो कुल उत्पादन 345000 क्विंटल होगा।

$$\frac{345000}{15000000} X \frac{5700000}{50000} = 2.62$$

फलस्वरुप गेहूँ के लिए "क" की उत्पादकता राष्ट्रीय इकाई की अपेक्षा 162 प्रतिशत अधिक होगी।

सफी[11] ने भारतवर्ष के वृहत मैदान की कृषि उत्पादकता को निर्धारित करते समय इनेदी के सूत्र में संशोधन प्रस्तुत किया। इनेदी के सूत्र में मुख्य दोष यह था कि उत्पादकता की सूची पर फसल क्षेत्र की मात्रा पर अधिक प्रभाव पड़ता था। राष्ट्रीय या जिला स्तर पर प्रति हेक्टेअर पैदावार समान या कम होने पर भी राष्ट्रीय स्तर की अपेक्षा जिला स्तर पर उत्पादकता सूची

अधिक होती है। उदाहरण के लिए "क" जनपद में गेहूँ की पैदावार 15 क्विंटल/हेक्टेअर, राष्ट्रीय स्तर पर गेहूँ की पैदावार 15 क्विंटल प्रति हेक्टेअर, जनपद में फसल का क्षेत्र 15000 राष्ट्रीय स्तर पर फसल का क्षेत्र 1000000 हेक्टेअर, जनपद में सम्पूर्ण फसल क्षेत्र 50000 हेक्टेअर, राष्ट्रीय स्तर पर सम्पूर्ण फसल क्षेत्र 7.5 मिलियन हेक्टेअर। इनेदी के सूत्र के अनुसार-

$$\frac{225000}{15000000} \times \frac{5700000}{50000} = 1.71$$

उत्पादकता गुणांक = 171-100 = 71 प्रतिशत। स्पष्ट है कि गेहूं की उपज राष्ट्रीय स्तर पर समान होते हुए भी जनपद की उत्पादकता राष्ट्रीय स्तर की अपेक्षा 71 प्रतिशत अधिक है, यह निष्कर्ष त्रुटिपूर्ण प्रतीत होता है।

सफी ने इनेदी के सूत्र में सुधार किया जो कि इस प्रकार है-

$$\Sigma \frac{y1}{t1} + \frac{y2}{t2} + \ldots\ldots\ldots\ldots\ldots n : \Sigma \frac{Y1}{T1} + \frac{Y2}{T2} + \ldots\ldots\ldots n$$

$$\Sigma \frac{Yn}{tn} : \frac{Yn}{Tn}$$

जहां y1, y2............n = इकाई क्षेत्र में चुनी गई फसलों का कुल उत्पादन।

t1, t2.............n = इकाई क्षेत्र में चुनी गई फसलों का कुल क्षेत्रफल।

Y1, Y2...........n = राष्ट्रीय स्तर पर उन फसलों का कुल उत्पादन।

T1, T2...........n = राष्ट्रीय स्तर पर उन फसलों का कुल क्षेत्रफल।

n = चुनी गई फसलें।

इस सूत्र में जनपद में सभी फसलों से प्राप्त कुल उपज को सभी फसलों के कुल क्षेत्र से विभाजित किया गया और प्रति हेक्टेअर उपज वसूल की गई है। इस प्रकार राष्ट्रीय स्तर पर सभी फसलों से प्राप्त कुल उपज को भी कुल क्षेत्र से विभाजित करके प्रति हेक्टेअर उपज मालूम की गई है। तत्पश्चात जनपद के प्रति हेक्टेअर उपज में राष्ट्रीय स्तर के प्रति हेक्टेअर उपज से विभजित किया गया है।

हुसैन[12] ने समतल गंगा मैदान की कृषि उत्पादकता प्रदेश निर्धारण में एक नूतन विधि का सुझाव दिया है। इनका कहना है कि उत्पादकता अध्ययन में सभी उत्पादित फसलों की गणना की जानी चाहिये। ऐसा देखा जाता है कि किसी एक इकाई में कुछ फसलें क्षेत्र के दृष्टिकोण से प्रमुख होती हैं तथा ऐसी अनेक फसलें होती हैं जो मुद्रा के दृष्टिकोण से प्रमुख होती हैं जबकि क्षेत्र न्यूनतम होता है। अब तक अपनाई गई विधियों में न्यून क्षेत्र वाली फसलों की गणना नहीं की जाती है। इन्होने सभी उत्पादित फसलों की उपज से प्राप्त मुद्रा की गणना की। इनका सूत्र इस प्रकार है।

$$Lj = \frac{\overset{\Sigma\, Yij\, Cij}{j = i}}{aij} \times \frac{\overset{\Sigma Yi\, Ci}{i = j}}{Ai}$$

जहां

Lj=j	जनपद में कृषि उत्पादकता सूची।
Yij = j	जनपद में i फसल का उत्पादन।
Cij = j	जनपद में i फसल का मूल्य।
n=j	जनपद में उगाई गई फसलों की कुल संख्या।
aij = j	जनपद में i फसल के अन्तर्गत क्षेत्र।
Yi =	सम्पूर्ण प्रदेश में i फसल का उत्पादन।
Ci =	सम्पूर्ण प्रदेश में i फसल का औसत मूल्य।
Ai =	सम्पूर्ण प्रदेश में i फसल के अन्तर्गत कुल क्षेत्र।

सूत्र का स्पष्टीकरण इस प्रकार भी किया जा सकता है।

$$\textbf{Productivity Index} = \frac{\text{Productivy value in money of all crops in a unit}}{\text{Total cropped area in a district}} \times \frac{\text{Production value in money all crops in the region}}{\text{Total cropped area in a region}}$$

उदाहरण के लिए किसी प्रदेश में 'क' इकाई में फसलें उगाई जाती हैं तथा कुल उत्पादन का मूल्य 2000000.00 रूपये है। कुल फसल क्षेत्र 10000 हेक्टेअर है जबकि सम्पूर्ण प्रदेश में उगाई गई कुल फसलों का मूल्य 10 करोड़ रूपये है तथा प्रदेश में कुल फसल क्षेत्र 15 लाख हेक्टेअर है। सूत्र के आधार पर 'क' इकाई की फसल उत्पादकता सूची इस प्रकार होगी।

$$\text{उत्पादकता सूची} = \frac{2000000}{10000} \times \frac{1500000}{100000000} = 3.00$$

1. अति निम्न उत्पादकता < 20
2. निम्न उत्पादकता < 23
3. मध्यम उत्पादकता < 26
4. उच्च उत्पादकता < 30
5. अति उच्च उत्पादकता > 30

उक्त श्रेणियों के आधार पर हुसैन ने सम्पूर्ण प्रदेश को पांच वर्गों में बांटकर अध्ययन किया।

2. अध्ययन क्षेत्र में कृषि उत्पादकता का स्तर:

किसी भी क्षेत्र में कृषि सक्रियता, कृषि गहनता एवं कृषि कुशलता को प्रदर्शित करने में कृषि उत्पादकता का विशेष स्थान है। यदि उत्पादकता क्षीण होती है तो स्वतः कृषि कुशलता घट जाती है। कृषि उत्पादकता बढ़ाने में जिन कारकों का महत्वपूर्ण योगदान है, उनमें भौतिक पृष्ठभूमि के अतिरिक्त सुधरे हुए बीजों, उर्वरकों, सिंचन सुविधाओं, कृषि कार्यों में यन्त्रों का प्रयोग तथा कृषक प्रशिक्षण आदि विशेष उल्लेखनीय हैं। कुछ विद्वानों ने उर्वरकों के आधार पर उत्पादकता बढ़ाने के प्रयासों का विश्लेषण किया है। उनके अनुसार रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग एक सीमा तक ही लाभदायक होता हैं उस सीमा के बाद उर्वरकों का प्रयोग हानिकारक सिद्ध होता है। अतः उस उपयुक्त सीमा का निर्धारण करना आवश्यक हो जाता है जिसपर उर्वरकों की सीमान्त उत्पादकता अधिकतम हो। साधारण कृषक ऐसे प्रायोगिक पक्षों से अनिभिज्ञ होते हैं, इसलिए कृषि प्रसार सेवाओं के द्वारा

इस सम्बन्ध में ज्ञान कराया जाना चाहिये।

कृषि उत्पादकता में असंतुलन भी एक ऐसा कारक है कि जिसमें कृषि कुशलता के होते हुए भी उत्पादन क्षीण होने लगता है। यह असंतुलन कई कारकों से होता है। जिनमें क्षेत्रीय विषमतायें, खेतों के छोटे-छोटे आकार, प्राविधिक कारक, प्रबन्धकीय कारक, यातायात के साधन, सामाजिक रूपरेखा, जल उपलब्धि, उर्वरकों का संतुलित प्रयोग, अच्छे बीजों का प्रयोग, बीमारियों और कीड़ों से फसलों की सुरक्षा इत्यादि उल्लेखनीय हैं। शाह ने (1969) यह प्रदर्शित किया है कि सिंचन सुविधाओं में असंतुलन के कारण तथा यान्त्रिक साधनों में कमी के कारण किस प्रकार उच्च उत्पादन देने वाली किस्मों की उपज में असमानताएं पायी जाती हैं,यद्यपि भौतिक पृष्ठ भूमि और अन्य आर्थिक सुविधा के समान रहती है। अली मोहम्मद[13] के अनुसार सुविधाओं के आधार पर गहन खेती का अभियान चलाने से भारत के कुछ क्षेत्रों में उत्पादन अवश्य वढ़ा है लेकिन इससे क्षेत्रीय उत्पादन में असंतुलन उत्पन्न हो गया है। इसके उचित विपणन की समस्या भी उत्पन्न हो गई है। यदि यह असंतुलन और बढ़ेगा तो कम उत्पादन वाले क्षेत्रो में कृषको को अपने उत्पादन का उचित लाभ नही मिल सकेगा ।

कृषि उत्पादन से कृषि उत्पादन का गहरा सम्बन्ध है क्योंकि कृषि उत्पादकता जहाँ सक्षमता का द्योतक है वही कृषि उत्पादन वास्तविकता का प्रतीक है। यदि कृषि उत्पादकता वृद्धि के सक्रिय प्रयास के बावजूद भी वास्तविक कृषि उत्पादन अधिक न बढ़ सके तो सारा प्रयास असफल दिखता है। अतः अध्ययन क्षेत्र में कृषि उत्पादकता तथा कृषि उत्पादन का निर्धारण भी आवश्यक हो जाता है। जिससे कृषि उत्पादकता वृद्धि के प्रयासो के प्रतिफल को ज्ञात किया जा सके। कुछ विद्धानो ने इसके लिये फसल गहनता तथा फसल उपज समकक्षता सकेतों का प्रयोग किया है। फसल गहनता में फसलों की लागत को ध्यान में रखकर अतिरिक्त उपज का अनुमान लगाया जा सकता है, जबकि फसल उपज समकक्षता द्वारा भिन्न-भिन्न फसलों के सापेक्ष महत्व का अनुमान लगाया जा सकता है।

अ. फसल गहनता (Cropping Intensity) :

फसल गहनता से आशय उस फसल क्षेत्र से है जिस पर वर्ष में एक

फसल के अतिरिक्त अन्य कई फसलें उगाई जाती है। शुद्ध कृषि क्षेत्र तथा दोहरी या अनेक फसल क्षेत्र को मिलाकर कुल फसल क्षेत्र का संबोधन होता है। किसी भी क्षेत्र में शुद्ध बोया गया क्षेत्र की अपेक्षा कुल फसल क्षेत्र का अधिक होना फसल गहनता की मात्रा को प्रदर्शित करता है। फसल गहनता वह सामयिक बिन्दु है जहाँ भूमि, श्रम, पूंजी तथा प्रवन्ध का सम्मिश्रण सर्वाधिक लाभप्रद सिद्ध होता है। भारत वर्ष की वर्तमान अर्थव्यवस्था में फसल गहनता का निर्धारण इन चरों के अनुपात में नही किया जाता है। क्योकि भूमि एक स्थाई कारक है, मानवीय श्रम की अधिकता तथा बेरोजगारी भी अधिक है, कृषि जीवन निर्वाह का एक माध्यम मात्र है, फार्म का आकार छोटा है और कृषि उद्यम का रूप धारण नही कर पायी है। वास्तव में यहाँ फसल गहनता सिचाई के साधन, बीज, खाद तथा मशीनों की उपलब्धि पर आधारित रही है। यही कारण है कि भारतीय कृषि अर्थव्यवस्था में बड़े कृषि फार्मों की अपेक्षा छोटे आकार के फार्मों में फसल गहनता अधिक होती है, क्योंकि कृषक, पारिवारिक श्रम तथा अन्य लागतों का भरपूर प्रयोग करता है, जबकि बड़े आकार के फार्मों में पूजी का वितरण असमान हो जाता है इस प्रकार फसल गहनता संकल्पना का प्रादुर्भाव एक ही खेत में एक ही वर्ष में एक से अनेक फसलों की उत्पादन मात्रा से होता है। फसल गहनता की गणना निम्न लिखित सूत्र के आधार पर की जाती है।

$$\text{फसल गहनता सूची} = \frac{\text{कुल फसल क्षेत्र (Total Cropped Area)}}{\text{शुद्ध बोया गया क्षेत्र (Net Area Sowh)}}$$

उदाहरण के लिये "क" इकाई में शुद्ध बोया गया क्षेत्र 100 हेक्टेअर तथा 20 हेक्टेअर दो फसलीय क्षेत्र है। इस प्रकार कुल फसल क्षेत्र 100+20=120 हेक्टेअर होगी। फलस्वरूप फसल गहनता सूची = (120/100) X 120 प्रतिशत होगी। 100अध्ययन क्षेत्र में फसल गहनता सूची तालिका क्रंमाक 5.1 में दर्शायी गई है।

तालिका क्रमाक 4.1 अध्ययन क्षेत्र में विकासखण्ड स्तर पर फसल गहनता सूची 1990-1991

विकासखण्ड	शुद्ध बोया गया क्षेत्रफल	सकल बोया गया क्षेत्रफल	फसल की गहनता
1. जसवन्तनगर	27060	41863	154.70
2. बढ़पुरा	16788	21368	127.28
3. वसरेहर	27855	45921	164.86
4. भर्थना	18993	29279	154.16
5. ताखा	17862	28155	157.63
6. महेवा	23400	36511	156.03
7. चकरनगर	15978	16961	106.15
8. अछल्दा	19429	28557	146.98
9. विधूना	20018	30930	154.51
10.एरवाकटरा	15885	24504	154.26
11.सहार	20267	30334	149.67
12.औरैया	29347	38252	130.34
13.अजीतमल	16766	24834	148.12
14.भाग्यनगर	19702	27341	138.77
ग्रामीण योग	289350	424810	146.2
समस्त नगरीय	341	527	154.55
योग जनपद	289691	425337	146.82

तालिका क्रंमाक 4.1 जनपद इटावा में विकासखण्ड स्तर पर फसल गहनता का चित्र प्रस्तुत कर रही है। तालिका से ज्ञात होता है कि जनपद

की फसल गहनता का स्तर 146.82 प्रतिशत अर्थात 46.82 प्रतिशत क्षेत्रफल पर एक से अधिक बार कृषि फसलें बोई जाती है। जनपदीय फसल गहनता से ऊँचा स्तर प्रदर्शित करने वाले विकासखण्डों बसरेहर विकासखण्ड 164.86 प्रतिशत फसल गहनता रखकर सर्वोच्च स्तर को प्राप्त कर रहा है, दूसरे तथा तीसरे क्रम में ताखा तथा महेवा विकासखण्डों का स्थान आता है। जो क्रमशः 157.63 प्रतिशत तथा 156.03 प्रतिशत फसल गहनता के स्तर को प्राप्त करके कमोबेश समान स्थिति में है। इसी प्रकार जसवन्तनगर, भरथना, विधूना तथा एरवाकटरा विकासखण्ड क्रमशः 154.70 प्रतिशत , 154.16 प्रतिशत 154.51 प्रतिशत तथा 154.26 प्रतिशत फसल गहनता दर्शाते हुये कमाबेश एक समान स्थिति का प्रदर्शन कर रहे है। जबकि सिंचन सुविधाओं का दृष्टि से देखा जाये तो बसरेहर विकासखण्ड के बाद जसवन्तनगर विकास खण्ड आता है। फसल गहनता की दृष्टि से सर्वाधिक दयनीय स्थिति में चकरनगर विकासखण्ड है जो केवल 106.15 प्रतिशत फसल गहनता दर्शाकर न्यूनतम क्षेत्र में ऐ से अधिक बार फसलों को बोने की सुविधा पा रहाँ है। अन्य विकासखण्ड कमाबेश मध्य स्थिति इस दृष्टि से प्राप्त कर रहे है।

सारणी 5.2 फसल गहनता का स्तर

फसल गहनता सूची	फसल गहनता का स्तर	विकास खण्डों की संख्या	विकासखण्डों के नाम
100-115	अतिनिम्न	1	चकरनगर
115-130	निम्न	1	बढ़पुरा
130-145	मध्यम	2	औरैया, भाग्यनगर
145-160	उच्च	9	जसवन्तनगर, भरथना ताखा, महेवा, विधूना एरवाकटरा, सहार, अजीतमल, अछल्दा
160 से अधिक	अति उच्च	1	बसरेहर

फसल गहनता की दृष्टि से देखा जाये तो अध्ययन क्षेत्र में अधिकांशं विकासखण्डों की स्थिति उच्च फसल गहनता वाली है। क्योकि इस वर्ग में नौ विकासखण्ड आते है जिनकी फसल गहनता 145 से 160 के मध्य है। जबकि दो विकासखण्ड 130 - 145 के मध्य स्थित होने के कारण मध्यम फसल गहनता को दर्शा रहे है। एक-एक विकासखण्ड अति निम्न तथा निम्न फसल गहनता वाला है। तथा एक विकासखण्ड बसरेहर अति उच्च फसल गहनता की श्रेणी में है।

ब. प्रति एकड़ उपज के आधार पर कृषि क्षमता :

प्रो0 शफी के सूत्र के आधार पर अध्ययन क्षेत्र की कृषि क्षमता को निर्धारित करने का प्रयास किया गया है। जनपद की 10 फसलों से प्राप्त कुल उपज कों 10 फसलों के कुल क्षेत्र से विभाजित किये गये है जिससे प्रति हेक्टेअर उपज ज्ञात हो गई, तत्पश्चात राष्ट्रीय स्तर पर उन्ही फसलों से प्राप्त कुल उपज को उन्ही फसलों के क्षेत्रफल से विभाजित करके प्रति हेक्टेअर उपज ज्ञात की गई। इसके उपरान्त जनपद की प्रति हेक्टेअर उपज में राष्ट्रीय स्तर की प्रति हेक्टेअर उपज का भाग दिया गया। इस क्रिया से विकासखण्ड स्तर पर कृषि उत्पादकता सूची ज्ञात की गई है। उत्पादकता सूची में 100 का गुणा करके उत्पादकता गुणांक प्राप्त किया गया है।

सारणी 4.3 विकासखण्ड बार उत्पादक्ता सूची तथा उत्पादकता गुणांक

विकासखण्ड	उत्पादकता सूची	उत्पादकता गुणांक
1. जसवन्तनगर	1.7036	170.36
2. बढ़पुरा	1.3311	133.11
3. बसरेहर	1.7983	179.83
4. भर्थना	1.5844	158.44
5. ताखा	0.9418	94.18
6. महेवा	1.5394	153.94
7. चकरनगर	1.4246	142.46
8. अछल्दा	1.5045	150.45

9. विधूना	1.4569	145.69
10.एरवाकटरा	1.4813	148.13
11.सहार	1.1528	115.28
12.औरैया	1.3919	139.19
13.अजीतमल	1.4028	140.28
14.भाग्यनगर		
जनपद	1.4738	147.38

सारणी 4.3 विकासखण्ड स्तर पर अध्ययन क्षेत्र की कृषि उत्पादकता के स्तर का चित्र प्रस्तुत कर रही है। प्रो0 शफी के सूत्र के आधार पर अध्ययन क्षेत्र की कृषि उत्पादकता सूची 1.4738 प्राप्त की गई है। जिसे सामान्य कहाँ जा सकता है। विकासखण्ड स्तर पर देखे तो चकरनगर विकासखण्ड वरीयता क्रम में सर्वाधिक निचले स्तर को प्रकट करता है। इसी प्रकार सर्वाधिक उच्च स्तर को दर्शाने वाला विकासखण्ड बसरेहर है। जिसकी कृषि उत्पादकता सूची 1.7983 है। अन्य विकासखण्ड इन दोनो सीमाओं के मध्य अपनी स्थिति को दर्शा रहा है।

सारणी 4.4 विकास खण्ड स्तर पर कृषि उत्पादकता का स्तर

कृषि उत्पादकता गुणांक	कृषि उत्पादकता का स्तर	विकासखण्डों की संख्या	विकासखण्डों के नाम
75-100	अतिनिम्न	1	चकरनगर
100-125	निम्न	1	औरैया
125-150	मध्यम	6	बढ़पुरा,अछल्दा, एरवाकटरा, अजीतमल तथा भाग्यनगर
150-175	उच्च	5	जसवन्तनगर, भरथना, ताखा, महेवा तथा विधूना
175-200	अति उच्च	1	बसरेहर
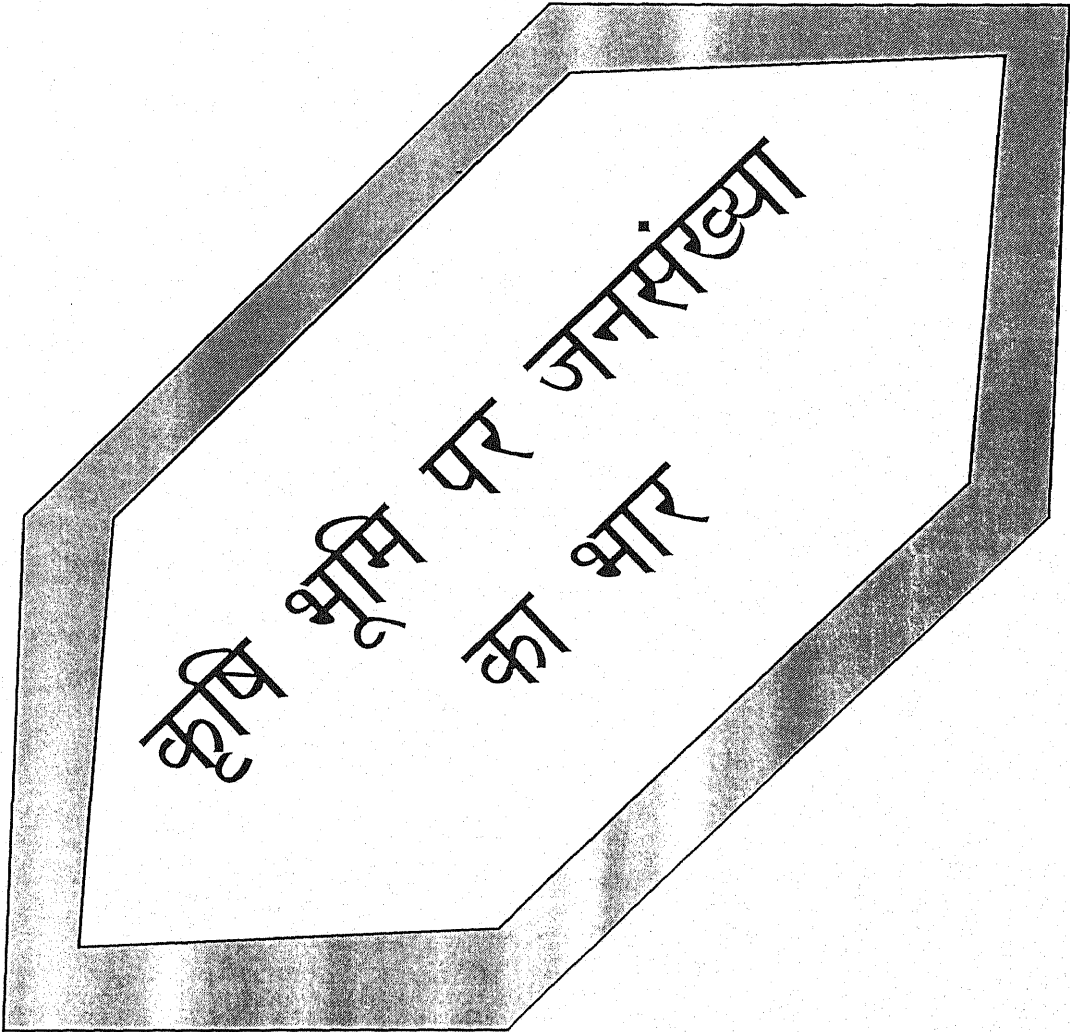
अध्ययन क्षेत्र में विकासखण्ड स्तर पर कृषि उत्पादकता के स्तर को सारणी 4.4 में दर्शाया गया है जिसके अनुसार अति निम्न कृषि उत्पादकता स्तर को दर्शाने वाला अकेला विकासखण्ड चकरनगर है। जो अपनी प्राकृतिक स्थिति के कारण तमाम प्रयासों के बाबजूद कृषि उत्पादकता के ऊँचे स्तर को नही प्राप्त कर पा रहा है। इसी विकासखण्ड से मिलती जुलती स्थिति वाला विकासखण्ड औरैया का कृषि उत्पादन निम्न स्तरीय है, परन्तु यह चकरनगर से अच्छी स्थिति में हैं। मध्यम उत्पादन स्तर वाले विकासखण्ड बढ़पुरा, अछल्दा, एरवाकटरा, सहार, अजीतमल तथा भाग्यनगर है जो 125 से 150 के मध्य स्थिति है। 5 विकासखण्ड, जसवन्तनगर, भरथना, ताखा, महेवा तथा बिधूना उच्च उत्पादकता स्तर 150-175 मध्य स्थिति है। बसरेहर विकासखण्ड सर्वाधिक उच्च उत्पादकता स्तर का प्रदर्शन कर रहा है। और यह 175-200 के वर्ग में स्थिति है उत्पादकता स्तर की दृष्टि से देखा जाये तो अध्ययन क्षेत्र औसत रूप में मध्यम उत्पादकता स्तर वाला है। जिसकी उत्पादकता सूची 1.4738 तथा उत्पादकता गुणांक 147.38 है।

सन्दर्भ ग्रन्थ

1. स्टाम्प एल. डी. (1940) "फार्टिलिटी प्रोडक्टविटी एण्ड क्लासीफिकेशन ऑफ लैण्ड इन ब्रिटेन" ज्योग्रफी वाल्यूम 111(6)

2. बक जे. एल. (1967) "लेण्ड यूटीलाइजेशन इन चाइना वाल्यूम 1 नानकिंग विश्वविद्यालय ।

3. क्लार्क सी एण्ड हैसवेल एम. (1967) दि् इकोनोमिक्स ऑफ सब्सिसटेंस एग्रीकल्चर, पी 67.

4. कैण्डल एम. जी. (139) "ज्योग्रेफीकल डिस्ट्रीब्यूशन ऑफ क्राप प्रोडकिटीविटी इन इग्लैण्ड जनरल ऑफ रायल स्टैटिस्टिक सोसाइटी 102, 21-62

5. सापर एस. जी. एण्ड देश पाण्डे (1964) "इन्टर डिस्ट्रिक्ट वेरिएशन्स इन एग्रीकल्चर इफीसिएन्सी इन महाराष्ट्र स्टेट" इण्डियन जनरल ऑफ एग्रीकल्चर इकोनोमिक्स वाल्यूम 19 न. पी पी 242-252.

6. गाँगुली बी. एन. (1938) "ट्रेन्डस ऑफ एग्रीकल्चर एण्ड पापुलेशन इन दि गंगाज बैली" लन्दन पी. पी. 39-94.

7. भाटिया एस.एस. (1967) ए न्यू मीजर्स ऑफ एग्रीकल्चर इफीसिएन्सी इन यू. पी. इन इण्डिया " इकोनोमिक ज्योग्रफी 43(3) 248.

8. सिन्हा बी. एन. "एग्रीकल्चरल इफीसिएन्सी इन इण्डिया "इन ज्योग्रफर वोल्यूम, 15 स्पेशल आई. जी. यू. वाल्यूम।

9. सिंह जसवीर 1972 "ए न्यू टेक्नीक फॉर मीजरिगं एग्रीकल्चरल प्रोडक्टविटी इन हरियाना, इण्डिया " दि ज्योग्रफर 19 पी.पी. 14-33.

10. इन्मेदी (1967) दि चेन्जिग फेस ऑफ एग्रीकल्चर इन इस्टर्न यूरोप, ज्योग्रफीकल रिब्यू 57 पी. पी. 358-72

11. सफी एम. (1972) "मेजरमेन्ट ऑफ एग्रीकल्चर प्रोडक्टविटी ऑफ ग्रेट इण्डियन प्लेन्स " दि ज्योग्रफर बाल्यूम 19 न. 1 पी. पी. 4-13.

12. हुसैन मजीद (1978) "ए न्यू एप्रोच टु दि एग्रीकल्चर प्रोटक्टविटी रीजन्स ऑफ दि सतलज गंगा प्लेन्स ऑफ इण्डिया" ज्योग्रफिकल रिव्यू ऑफ इण्डिया वाल्यूम 30 न. 3 पी. पी. 230-236.

13. मुहम्मद अली (1978) "रीजनल इम्बैलेन्सेस इन लेबेल्स एण्ड ग्रोथ ऑफ एग्रीकल्चर प्रोडक्टिविटी ए केश स्टडी ऑफ बिहार कान्सेप्ट पब्लिशिंग कम्पनी दिल्ली ।

अध्याय - पंचम

अध्याय-पंचम्

कृषि भूमि पर जनसंख्या का भार

प्राकृतिक संसाधन किसी देश की अमूल्य निधि होते हैं, परन्तु उन्हें गतिशील बनाने, जीवन देने और उपयोगी बनाने का दायित्व देश की मानव शक्ति पर ही निर्भर करता है। इस दृष्टि से देश की जनसंख्या उसके आर्थिक विकास और समृद्धि का आधार स्तम्भ होती है । जनसंख्या को मानवीय पूंजी कहना कदाचित अनुचित न होगा। विकसित देशों की वर्तमान प्रगति तथा समृद्धि व सम्पन्नता की पृष्ठभूमि में वहां की मानव शक्ति ही है। जिसने प्राकृतिक संसाधनों पर नियन्त्रण और शासन द्वारा उन्हें अपनी समृद्धि का अंग बना लिया है। परन्तु हमें यह स्मरण रखना चाहिये कि जनसंख्या देश की मानवीय श्रेणी में तभी आ सकती है जबकि वह शिक्षित हो, कुशल हो, दूरदर्शी हो और उसकी उत्पदाकता उच्च कोटि की हो। यदि ऐसा न हुआ तो मानवीय संसाधन के रूप में वह वरदान के स्थान पर अभिशाप में परिणित हो जायेगी क्योंकि उत्पादक कार्यो में उसका विनियोग सम्भव नही हो सकेगा स्पष्ट है कि मानवीय शक्ति किसी देश की निवासियों की संख्या पर नही वरन् गुणों पर निर्भर करती है। इसलिये प्रो0 हिप्पिल ने लिखा है कि "एक देश की वास्तविक सम्पत्ति उसकी भूमि, जल, वनो खानों, पशु, पक्षियों के झण्डों और डालरों में नही वरन् देश के समृद्धि एवं सम्पन्न प्रसन्नचित्त, पुरूष, स्त्रियों और बच्चों में निहित होती है।

1. खाद्यान्न उत्पादन तथा जनसंख्या का विकासः

मानवीय संसाधन आर्थिक विकास के साधन एवं लक्ष्य दोनों है साधन के रूप में मानवीय संसाधन श्रम शक्ति एवं उद्यमियों, को सेवायें प्रदान करते है जिनकी सहायता से उत्पत्ति के अन्य साधनों का उपयोग सम्भव हो पाता है । मानवीय संसाधन की इस भूमिका पर देश में कुल उत्पादन का स्तर निर्भर करता है । इसके दूसरे ओर अर्थव्यवस्था में जितनी भी विकासात्मक क्रियायें सम्पन्न की जाती है उनका उद्देश्य मानव समुदाय को जीवन की अच्छी सुविधायें प्रदान करना होता है। यदि मानवीय साधन उत्कृष्ट कोटि के है तो आर्थिक विकास की गति तेज होती है अतः आर्थिक विकास की दर का निर्धारण मानवीय संसाधनों की गुणात्मक श्रेष्ठता पर

निर्भर करता है। इसलिए वे सभी क्रियाये तो जो मानवीय साधनों के कौशल को बढानें में सहायक होती है, उत्पादक क्रियायें कहलाती है। उपभोग इकाई के रूप में मानवीय संसाधन देश के कुल उत्पादन का उपभोग करते है यदि मनुष्यों की संख्या राष्ट्रीय उत्पाद की तुलना में अधिक है तो अनेक समस्याये उठ खड़ी होती है जिनमें निर्धनता, कुपोषण तथा अल्पपोषण जैसी समस्यायें प्रमुख है। योजनाबद्ध विकास की पिछली लगभग चार दशकों के दौरान निसन्देह सामान्य जीवन स्तर में सुधार हुआ है तथा प्रतिव्यक्ति आय में भी वृद्धि हुई है, किन्तु इसके वावजूद भी निर्धनता का विकराल रूप वैसा ही बना हुआ है जैसा कि पिछले 45 वर्षो से पहले था।

सामान्यता यह देखा गया है कि विकसित देशों में शहरी क्षेत्र का प्रभुत्व बना रहता है जबकि आर्थिक दृष्ठि से पिछडें देशों में ग्रामीण क्षेत्र प्रधान होता है। भारत जैसी विकासशील अर्थव्यवस्था कि बागडोर ग्रामीण क्षेत्र को ही सम्भालनी होती है, इसी क्षेत्र में उन सब परिस्थतियों का निर्माण होता है जो समपूर्ण अर्थव्यवस्था को आगे बढानें में समर्थ होती है। भारतीय अर्थव्यवस्था में ग्रामीण समुदाय के प्रभुत्व की जानकारी निम्न तथ्यों से स्पष्ठ है।

1. भारत की कुल जनसंख्या का लगभग तीन चौथाई भाग आज भी ग्रामीण क्षेत्र में रहता है ।
2. श्रम शक्ति का लगभग 78 प्रतिशत भाग गावों में रहता है।
3. राष्ट्रीय आय में ग्रामीण क्षेत्र का योगदान लगभग 33 प्रतिशत है।
4. देश के निर्यात की जाने वाली वस्तुओं का लगभग एक चौथाई भाग कृषि क्षेत्र से प्राप्त होता है ।
5. परोक्ष करों से प्राप्त राजस्व में ग्रामीण क्षेत्र का योगदान लगभग 46 प्रतिशत अनुमानित किया गया है।

भारत की ग्रामीण अर्थव्यवस्था को दो उपक्षेत्रों में बाँटा जा सकता है।

अ. कृषि क्षेत्र

ब. गैर कृषि क्षेत्र

कृषि क्षेत्र में वे सभी लोग शामिल किये जाते है जिनके निर्वाह का साधन खेतीबाड़ी है। गैर कृषि क्षेत्र में अन्य सभी ग्रामीण समुदाय को सामिल किया जाता है। ग्रामीण अर्थव्यवस्था के इस स्वरूप को निम्नलिखित माध्यम से स्पष्ट किया जाता है।

अ. कृषि क्षेत्र	भूमि श्रम अनुपात	रोजगार का स्वरूप
1. बड़े कृषक	भूमि श्रम	प्रमुखतः नियोजक
2. माध्यम कृषक	भूमि श्रम	अनियमित नियोजक
3. छोटे कृषक	भूमि श्रम	अनियमित श्रमिक
4. सीमान्त कृषक	भूमि श्रम	प्रमुखतः श्रमिक
5. भूमिहीन श्रमिक	मातृ श्रम	पूर्णतः श्रमिक

(ब) गैर कृषि क्षेत्र :

1. *व्यापारी वर्ग :*

अ. सामान्य वस्तुओं का व्यापार करने वाले ।

ब. कृषि आदानों का व्यापार करने वाले।

2. *दस्तकार:*

अ. सामान्य सेवायें उपलब्ध कराने वाले ।

ब. कृषि क्षेत्र की आवश्यक्तायें पूरी करने वाले ।

स्पष्ट है कि ग्रामीण समुदाय में अनेक तरह के कार्य जुडे है । इनमें उत्पादक साधन के रूप में प्रधान साधन भूमि है। सक्षेप में पिछले चार दशकों में ग्रामीण अर्थव्यवस्था में अनेक परिवर्तन देखने में आये है, निसन्देह ये परिवर्तन विकास के परिचायक है अतः इनका स्वागत है परन्तु इनके परिप्रेक्ष्य में छिपी कुछ समस्याओं की ओर भी हमें ध्यान देना होगा । इन समस्याओं को अनदेखा नही किया जा सकता है बल्कि इन्हे जड़ से समाप्त करना होगा अन्यथा भविष्य में यह विकास के मार्ग में गम्भीर बाधा सिद्ध हो सकती है।

1. बढ़ती जनसंख्या के परिणाम स्वरूप भूमि पर दबाव बढता जा रहा है, जोतो की इकाई छोटी होती जा रही है जो उन्नत कृषि के अनुकूल नहीं है।
2. किसान की अब बाजार शक्तियों पर निर्भरता बढती जा रही है। परिणामस्वरूप बाजार की शक्तियाँ उसके शोषण के माध्यम बनती जा रही है।
3. नई तकनीकी के प्रयोग के परिणाम स्वरूप कृषि आय में उल्लेखनीय वृद्धि हुई है, किन्तु इस आय का बड़ा भाग ग्रामीण वर्ग के उन्नत और समृद्ध वर्ग के ही हाथों में केन्द्रित हुआ है, गरीब और निर्बल वर्ग को इस नई टेक्नोलोजी के कोई लाभ प्राप्त नही हुये है। परिणामस्वरूप ग्रामीण जीवन में आर्थिक

विषमतायें पहले से कही ज्यादा बढ़ गयी हैं।

4. यद्यपि कानूनी रूप से जमीदारी प्रथा समाप्त हो चुकी है किन्तु वास्तविक्ता यह है कि ग्रामीण समाज में अभी भी सामन्तवादी शक्तियों का बोलबाला है।

5. शहरीपन ग्रामीण समाज पर पूरी तरह छाया हुआ है यह परिस्थिति निर्बल वर्ग के लिये किसी तरह अनुकूल नहीं है।

6. ग्रामीण रोजगार की स्थिति निरन्तर बिगड़ती जा रही है अतः भूमिहीन, सीमान्त तथा लघु कृषक निर्धनता में और अधिक धंसे जा रहे हैं।

संक्षेप में पिछले चार दशको के दौरान निसंदेह भारत की ग्रामीण अर्थव्यवस्था में महत्वपूर्ण परिवर्तन हुये हैं। कृषि उत्पादन की मात्रा एवं प्रति हेक्टेअर उत्पादकता में उल्लेखनीय वृद्धि हुयी है किन्तु इन सबका लाभ साधन सम्पन्न वर्ग को ही अधिक प्राप्त हुआ है। साधनविहीन एवं निर्बल वर्ग की स्थिति सोचनीय तथा पहले से खराब हुई है।

निर्धनता से आशय उस सामाजिक अवस्था से है जिसमें समाज के एक वर्ग के लोग अपनी जीवन की बुनियादी आवश्यकताओं को पूरा नहीं कर पाते है। निर्धनता की स्थिति का सही-सही अनुमान लगाना शायद सम्भव नहीं है, परन्तु समय समय पर ऐसे प्रयत्न किये गये है जिनसे समस्या के उग्र रूप का ज्ञान हो सकता है विभिन्न प्रयासों में 'गरीबी की रेखा' निर्धारित करने के प्रयत्न शामिल है। इन प्रयत्नों के परिणामस्वरूप गरीबी रेखा के निर्धारण में निम्न मापदण्डों का प्रयोग किया जा सक्ता है ।

1. निर्वाह के लिये न्यूनतम पौष्टिकता का स्तर।
2. पौष्टिकता के इस स्तर को बनाये रखने के लिये न्यूनतम खुराक की लागत।
3. इस खुराक को प्राप्त करने के लिये न्यूनतम प्रति व्यक्ति आय।

उपरोक्त मापदण्डों के आधार पर अनेक विद्वानों तथा योजना आयोग ने भारत में निर्धनता के सम्बन्ध में अनुमान प्रस्तुत किये है । सन् 1977 में योजना आयोग द्वारा स्थापित "न्यूनतम आवश्यक्ताओं व प्रभावपूर्ण उपभोग की मांग पर भावी अनुमानों के लिये कार्यकारी दल " ने निर्धनता की रेखा की परिभाषा में प्रतिव्यक्ति उपभोग समूह का वह बिन्दु माना है जिसमें ग्रामीण क्षेत्रों में प्रतिव्यक्ति प्रतिदिन 2400 कैलोरी का उपभोग हो तथा शहरी क्षेत्रों में 2100 कैलोरी का हो । 1984-85 में यह बिन्दु ग्रामीण क्षेत्रों में प्रति व्यक्ति प्रतिमाह 107 रुपये तथा शहरी क्षेत्रो में 122 रुपये थे । इसके नीचे प्रतिव्यक्ति प्रतिमाह का उपभोग करने वाले व्यक्ति

निर्धन माने गये है । इसी प्रकार पांच सदस्यों वाले एक ऐसे ग्रामीण परिवार को गरीबी की रेखा के परे माना गया जिसकी वार्षिक आय 6400 रुपये से कम थी व शहरी क्षेत्रों में यह आय 7200 रुपये निर्धारित की गयी । 1987-88 की कीमतों के आधार पर ग्रामीण क्षेत्रों के लिये यह राशि 7980 रुपये तथा शहरी क्षेत्रों के लिये 9120 रुपये निर्धारित की गयी। इस आधार पर देश की सातवीं योजना के प्रारम्भ में 272.7 मिलियन व्यक्ति गरीबी की रेखा के परे रहते थे जो कि कुल जनसंख्या का 36.9 प्रतिशत था । ग्रामीण क्षेत्रों में गरीबी का अनुपात 39.9 प्रतिशत तथा शहरी क्षेत्रों में 27.7 प्रतिशत था। ग्रामीण क्षेत्रों में इस प्रकार गरीबों की संख्या 222.2 मिलियन थी जिनमें मुख्यतः भूमिहीन, छोटे कृषक, दशतकार, बन्धुआ मजदूर तथा कृषि श्रमिक जुड़े थे।

राष्ट्रीय न्यादर्श सर्वेक्षण के 38 वें तथा 43 वें दौर में एकत्र किये गये आंकड़ों के अनुसार यह अनुमान लगाया गया है कि 1987-88 में गरीबी का अनुपात कम होकर 29.2 प्रतिशत रह गया है। गरीबी रेखा से नीचे रहने वाली जनसंख्या के प्रतिशत और उनकी निरपेक्ष संख्या में कमी के बाद भी आज देश की प्रमुख समस्या जनसंख्या के एक बड़े भाग में व्याप्त गरीबी की है । व्यापक गरीबी समाज में कुपोषण , अल्पपोषण, आर्थिक विषमता और शोषण जैसे आर्थिक दोषों को जन्म देती है । इसके अतिरिक्त यह भ्रष्टाचार नैतिक अवमूल्यन और भविष्य के प्रति आशंका जैसे सामाजिक अभिशापों को भी बढ़ा रही है। इन गरीबों की श्रेणी में लघु एवं सीमान्त, भूमिहीन श्रमिक, कृषि श्रमिक, परम्परागत सेवा कार्य करने वाले लोग भ्रमणशील जन समुदाय के लोग सम्मिलित है । सामान्यतः आय का सृजन रोजगार एवं उत्पादक परिसम्पत्ति से होता है इन गरीबो के पास न तो कोई उत्पादक परिसम्पत्ति है और न ही सम्यक रोजगार है। इनके पास रोजगार प्राप्त करने की दृष्टि से विशिष्ट प्रतिभा और कौशल की भी कमी हो।

आर्थिक विषमताओं का एक महात्वपूर्ण पहलू समष्टि रूप से ग्रामीण और नगरीय क्षेत्र के मध्य व्याप्त आर्थिक विषमताऐं है। अब तक की विकास प्रक्रिया के परिणामस्वरूप ग्रामीण और नगरीय क्षेत्र के मध्य व्याप्त आर्थिक विषमता बढ़ती गयी है । ग्रामीण क्षेत्र का विकास शहरों के तुल्य नहीं रहा

है। ग्रामीण और नगरीय क्षेत्र के मध्य आर्थिक विषमता की जानकारी नेशनल काउंसिल आफ एप्लाइड इकोनोमिक रिसर्च के एक नवीनतम अध्ययन "हाउस होल्ड इन्कम एण्ड इट्स डिस्पोजीशन" के आंकड़ो से होती है। यदि दोनो के मध्य आय, सम्पत्ति एवं उपभोग स्तरो की तुलना की जाये तो इनमें व्याप्त आर्थिक विषमता का स्पष्ट बोध होता है, इस अध्ययन के अनुसार ग्रामीण क्षेत्र के केवल 4.95 प्रतिशत परिवारो की औसत वार्षिक आय 10000 रु. या उससे अधिक है जबकि नगरीय क्षेत्र के 17.61 प्रतिशत परिवारों की औसत वार्षिक आय 10000 रु. या उससे अधिक है। समस्त नगरीय परिवारों की औसत आय 7074 रु. है जबकि ग्रामीण परिवारों की औसत वार्षिक आय मात्र 3930 रु. है। नगरीय क्षेत्र में उच्चतम 1.5 प्रतिशत परिवारों की औसत वार्षिक आय 30000 रु. या उससे अधिक है। ग्रामीण क्षेत्रों में प्रतिव्यक्ति औसत बचत मात्र 106 रु. है जबकि नगरीय क्षेत्रों में प्रति व्यक्ति औसत बचत 272 रु. है। आवश्यक सामाजिक सेवाओं की जो अवस्थापना गावों में है उससे कई गुना अधिक शहरों में है। शहर में बहुखण्डीय प्रासाद बने, किन्तु गावों के कच्चे मकानों का आकार और आयतन कम होता गया है। शहरों में आधुनिक उद्योग अन्य सुख सुविधाओं लेने की होड़ लगी है। किन्तु गांव के बहुसंख्यक लोग कड़ी मेहनत के बाद भी बेहद जरूरी चीजों से वंचित रहे है। इसी क्षेत्रीय असमानता के कारण शहर में वैभव की चकाचौध से आकृष्ट तथा बेरोजगारी से पीड़ित गांव के लोग शहरों की ओर पलायन करते है जहां उन्हें दिन भर की कड़ी मेहनत के बाद जो क्रय शक्ति प्राप्त होती है वह उनकी आवश्यकताओं को पूरा करने के लिये बिल्कुल अपर्याप्त होती है। खाद्यान्न उत्पादन के अतिरिक्त अन्य अधिकांश उत्पादन क्रियायें नगरो और बड़े औद्योगिक घरानों में केन्द्रित होती जा रही है जो वस्तुयें पहले गांव में सुगतमापूर्वक बनाई जा सकती थीं। वे अब यांत्रिक और अवस्थापनागत सुविधाओं के कारण शहरों में कम लागत पर बनने लगी हैं। परिणामस्वरूप गांव के कारीगर और दस्तकार बेकारी की हालत में जीवनयापन कर रहे हैं।

किसी देश की जनसंख्या तभी प्रगतिशील होगी जब उसका भरपूर पोषण होगा। पोषण स्तर में सुधार लाने हेतु कृषि उत्पादन में वृद्धि करना, साथ ही कृषि के सहायक उद्योग धन्धों पर भी यथेष्ठ ध्यान देना आवश्यक है। अतः ग्रामीण जनसंख्या के पोषण स्तर को आवश्यक मानक स्तर के

अनुरूप बनाये रखने के लिए यह जरूरी है कि किसी क्षेत्र विशेष के कृषि उत्पादकता के स्तर, कृषि उत्पादकता में वृद्धि के प्रयास, कृषि उत्पादन में गुणात्मक परिवर्तन को खोजा जाये। जिससे भूमि संसाधन पर जनसंख्या भार का मूल्यांकन हो तभी ग्रामीण क्षेत्रों में निर्धनता तथा निर्धन व्यक्तियों के पोषण स्तर में सुधार लाने के लिए कृषि विकास की ठोस योजना का तैयार किया जाना सम्भव है।

2. खाद्यान्न उत्पादन तथा जनसंख्या संतुलन:

मानवीय संसाधन आर्थिक क्रियाओं के साधन एवं लक्ष्य दोनों है। साधन के रूप में मानवीय संसाधन श्रम शक्तियों एवं उद्यमियों की सेवायें प्रदान करते है जिनकी सहायता से उत्पत्ति के अन्य साधनों का उपभोग सम्भव हो जाता है। मानवीय संसाधनों की इस भूमिका पर देश में कुल उत्पादन का स्तर निर्भर करता है। इसके दूसरे ओर अर्थव्यवस्था में जितनी भी विकासात्मक क्रियायें सम्पन्न की जाती है इनका उद्देश्य मानव समुदाय को जीवन की अच्छी सुविधायें प्रदान करना होता है। उपभोग की इकाई के रूप में मानवीय संसाधन देश के कुल उत्पादन का उपभोग करते है। इस प्रकार मानवीय संसाधन की दोहरी भूमिका होती है।

क. साधन सेवाओं के रूप में

ख. उपभोग की इकाईयों के रूप में ।

क. साधन सेवाओं के रूप में मानवीय संसाधन:

साधन सेवाओं के रूप में मानवीय संसाधन श्रम तथा उद्यमी की सेवायें प्रदान करते है। किस सीमा तक मनुष्य प्राकृतिक साधनों का विदोहन करता है इस पर आर्थिक विकास का स्तर निर्भर करता है। यदि मानवीय संसाधन उत्कृष्ट कोटि के है; तो आर्थिक विकास की गति तेज हो जाती है। अतएव आर्थिक विकास की दर से निर्धारण में मानवीय संसाधनों की गुणात्मक श्रेष्ठता के निर्धारण में मानवीय संसाधनों की गुणात्मक श्रेष्ठता का महत्वपूर्ण स्थान होता है। इसलिये वे सभी क्रियाये जो मानवीय संसाधन के कौशल को बढ़ानें में सहायक होती है उत्पादक क्रियाये कहलाती है। इस बात की आवश्यकता है कि मानवीय पूंजी के निर्माण हेतु निवेश की विभिन्न योजनायें प्रारम्भ की जानी चाहिये। भौतिक पूंजी निर्माण और मानवीय पूंजी निर्माण सम्मिलित रूप से आर्थिक विकास की गति की तीव्रता प्रदान करते हैं।

ख. उपभोग की इकाईयों के रूप में मानवीय संसाधन:

उपभोग इकाइयों के रूप में मानवीय संसाधन राष्ट्रीय उत्पाद के लिये मांग का सृजन करते हैं। यदि मनुष्यों की संख्या राष्ट्रीय उत्पादन की तुलना में अधिक है तो जनसंख्या सम्बन्धी अनेक समस्यायें उत्पन्न हो जाती है इसको हम अति जनसंख्या के नाम से सम्बोधित करते हैं। अति जनसंख्या के कारण एक देश के सामने प्रमुख रूप से निम्नलिखित समस्यायें उत्पन्न होती है-

1. बढ़ती हुई जनसंख्या के कारण देश में खाद्यानों की मांग बढ जाती है और सामान्यतया खाद्यान्नों की पूर्ति इसकी मांग की तुलना में कम रह जाती है।
2. बढ़ती जनसंख्या के कारण राष्ट्रीय उत्पादन के एक बड़े भाग का उपयोग उपभोग कार्यो के लिये कर लिया जाता है। और निवेश कार्यो के लिये बहुत कम उत्पादन उपलब्ध हो पाता है। इससे पूंजी निर्माण की गति धीमी पड़ जाती है।
3. अधिक जनसंख्या अल्पविकसित देशो के लिये भुगतान संतुलन को भी प्रतिकूल बना देती है क्योंकि खाद्यान्नों की पर्याप्त मात्रा में पूर्ति न होने के कारण इसका विदेशों से आयात करना पड़ता है और इसके लिये विकासात्मक आयात का त्याग करना पड़ता है।
4. अति जनसंख्या के कारण बेरोजगारी की समस्या उत्पन्न हो जाती है ओर इसके आर्थिक और सामाजिक परिणाम बहुत दुष्कर होते है।
5. बढ़ती हुयी जनसंख्या की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिये देश को सामाजिक सेवाओं आदि पर बहुत अधिक व्यय करना पड़ता है। इस प्रकार अर्थव्यवस्था के संसाधनों को भौतिक पूंजी के स्थान पर मानवीय उपभोग की ओर स्थानान्तरण करना होता है।

सर्वाधिक महत्व और चिंता की बात यह है कि भारत की जनसंख्या निरन्तर बढ़ती जा रही है, ऊंची जन्म दर (1991 में 30.55 प्रति हजार) तथा तेज गति से गिरती हुयी मृत्यु दर (1991 में 10.2 प्रतिहजार) में कमी के कारण जनसंख्या में अत्याधिक वृद्धि हुई है। जनसंख्या में तीव्र वृद्धि के कारण योजनाओं में निर्धारित आर्थिक सामाजिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक और शैक्षिक उद्देश्यों की प्राप्ति में कठिनाइयां उपस्थित हुयी है। जनसंख्या में वृद्धि के कारण जीवन की गुणात्मक श्रेष्ठता और उन्नत बनाने के सभी प्रयास असफल सिद्ध हुये है भारत जैसे विकासशील देश में जहां पूंजी का

अभाव है और मानवीय संसाधनों की बहुलता है, वहां जनसंख्या परिसम्पत्ति होने के बजाय दायित्व बन गयी है। बढ़ती हुयी जनसंख्या का देश की प्रगति पर निम्न प्रभाव परिलक्षित हो रहे हैं।

1. बढ़ती हुयी जनसंख्या के कारण प्रति व्यक्ति आय के स्तर एवं रहन सहन के स्तर में सुधार सम्भव नहीं होता है। इसके कारण कृषि उत्पादन एवं औद्योगिक उत्पादन में होने वाली वृद्धि का वास्तविक लाभ लोगों को नही मिल पाता है।
2. जनसंख्या की मात्रा में वृद्धि होने के कारण भूमि पर जनसंख्या का भार निरन्तर बढ़ रहा है । सन् 1911 में प्रतिव्यक्ति कृषि योग्य भूमि की उपलब्धता 1.1 एकड़ थी लेकिन अतिरिक्त भूमि के उपयोग के बावजूद भी 1990 में प्रति व्यक्ति भूमि की उपलब्धता घटकर 0.25 एकड़ रह गयी है।
3. जनसंख्या की वृद्धि का उपभोग के स्तर पर प्रत्यक्ष प्रभाव पड़ा क्यों कि कार्य करने वाले हाथों की तुलना में खानेवाले मुंहों की संख्या बढ़ गयी है। परिणामस्वरूप भावी आर्थिक विकास, धन एवं आय की असमानताओं में वृद्धि हुयी है।
4. जनसंख्या में वृद्धि के कारण खाद्यान्नों एवं अन्य भोज्य पदार्थो की बढ़ती हुयी मांग की समस्या उत्पन्न हुयी है। जनसंख्या में वृद्धि के अनुपात में प्रति व्यक्ति खाद्यान्नों की उपलब्धता में कोई विशेष वृद्धि नहीं हो सकी है जिससे भारत में प्रतिवर्ष लगभग 10 लाख बच्चे कुपोषण के कारण मृत्यु को प्राप्त हो जाते है। लगभग एक तिहाई लोगों को तो बक्त का भोजन उपलब्ध नही हो पाता है। यदि भविष्य में जनसंख्या में वृद्धि के साथ ही साथ खाद्यान्नों के उत्पादन में आनुपातिक वृद्धि नही हो पाती है तो देश को खाद्यान्नों की स्वल्पता , दुर्भिक्ष कुपोषण आदि समस्याओं का सामना करना पड़ेगा।
5. जनसंख्या में वृद्धि के कारण बेरोजगारी की समस्या गम्भीर रूप धारण कर लेती है । क्योंकि रोजगार के अवसर इतनी तेजी से नहीं बढ़ पाते है जितनी तेजी से जनशक्ति बढ़ती है।
6. अनियन्त्रित जनसंख्या के कारण नई सामाजिक समस्यायें भी उत्पन्न होती है गांवों में रोजगार के अवसर उपलब्ध न होने के कारण बढ़ी संख्या में लोग शहरों की ओर पलायन करते है, जिसके कारण शहरीकरण की नई समस्याओं का सामना करना पड़ता है बड़े परिवार के भार को वहन न कर सकने के कारण लोगों के मस्तिष्क में उद्वेग अशान्ति आदि उत्पन्न होने लगती है। ओर वे अनेक कुन्ठाओं से घिर जाते हैं। जनसंख्या वृद्धि का प्रभाव सार्वजनिक सेवाओं की उपलब्धि पर भी पड़ता है। अधिक जनसंख्या से देश में असमान वितरण के कारण राजनैतिक और सामाजिक उपद्रवों को बढ़ावा मिलता है। जिन लोगों को

रोजगार प्राप्त नहीं हो पाता है। वे गैर सामाजिक गतिविधियों में उलझ जाते है, इन लोगों की क्रियाओं से सभ्य समाज के लिये असुरक्षा और संकट की स्थिति उत्पन्न हो जाती है।

7. बढ़ती जनसंख्या का प्रभाव बढ़ती फसलों के प्रतिरूप पर भी पड़ता है। प्रत्येक कृषक ऐसी फसलों को प्राथमिकता देता है। जिसमें लागत कम तथा जोखिम की मात्रा भी कम हो। यह सर्वविदित है कि अच्छी उपज वाली फसलों की लागत अधिक तथा जोखिम भी अधिक होता है। मोटे अनाज जैसे ज्वार, बाजरा, मक्का आदि की फसलों में जोखिम कम होता है। कृषक कम जोखिम वाली फसलों का उत्पादन करने को बाध्य हो जाता है क्योंकि ऐसा करने से उसे कम से कम जीवन निर्वाह के साधन तो मिल जाता है।

8. खेती की एक जोत पर निर्भर परिवार के सदस्यों की संख्या का एक प्रभाव यह भी पड़ता है कि किसान अपनी कृषि उपज के एक बढ़े भाग को स्वः उपभोग के लिये अपने पास रखने के लिये बाध्य हो जाता है, एक अनुमान के अनुसार खाद्यान्न के कुल उत्पादन का 60 प्रतिशत से 70 प्रतिशत भाग किसान द्वारा स्वः उपभोग, बीज पशुओं के चारे के वास्ते रख लिया जाता है। परिणामस्वरूप उस बिक्री योग्य कृषि उत्पादन के अतिरेक की मात्रा कम हो जाती है।

पर्याप्त खाद्य पदार्थ जीवन की प्राथमिक आवश्यकता है। खाद्य समस्या से आशय क्षेत्रीय आवश्यकताओं के सन्दर्भ में खाद्यान्न की कमी से है। यह कमी खाद्यान की मात्रात्मक न्यूनता के रूप में हो सकती है। या सामान्य पोषण स्तर तक खाद्य पदार्थ उपलब्ध न हो सकने के रूप में हो सकती है। खाद्यानों की मात्रात्मक कमी का भी दबाव अर्थव्यवस्था पर लगातार बना हुआ है। पूर्ती पर मांग का आधिक्य बने रहने के कारण लोगों की न्यूनतम आवश्यक कैलोरी के लिये भी खाद्यान्न नहीं उपलब्ध हो सके है। खाद्य और कृषि संगठन के अनुमान के अनुसार "सामान्य रूप में प्रतिव्यक्ति दैनिक खाद्यान्न उपलब्धि 440 ग्राम होना चाहिये।" खाद्य समस्या के गुणात्मक पक्ष का सम्बन्ध भारतीयों के भोजन में पोषक तत्वों की कमी से है। प्रोटीन, विटामिन, खनिज, वसा आदि संतुलित भोजन के आवश्यक घटक है परन्तु अधिकांश लोगों के भोजन में किसी न किसी तत्व की कमी बनी रहती है। इस कुपोषण और अल्प पोषण के कारण उनकी कार्य क्षमता घटती है और वे कुसमय बीमारियों के शिकार होने लगते है। पोषण सलाहाकार समिति ने 1958 में यह अनुमान लगाया था कि 20-30 आयुवर्ग के एक स्वस्थ पुरूष के लिये 2780 कैलोरी और इस आयु वर्ग की स्वस्थ महिला के लिये

2080 कैलोरी प्रदान करने वाले भोजन की आवश्यकता है। औसत आधार पर समस्त जनसंख्या के लिये प्रतिदिन 2250-3000 कैलोरी और 62 ग्राम प्रोटीन की आवश्यकता होती है। खाद्य एवं कृषि संगठन (एफ. ए. ओ.) ने भी पुरूष और सभी के लिये क्रमशः 2600 और 1900 कैलारी का आहार आवश्यक माना है। प्रोटीन, विटामिन, खनिज आदि पोषक तत्व शारीरिक तन्तुओं को स्वस्थ बनाये रखने के लिये आवश्यक है।" अब हम उक्त दोनों दृष्टियों से अध्ययन क्षेत्र में खाध उत्पादन तथा जनसंख्या संतुलन का विश्लेषण करेंगे।

परिणात्मक पहलू:

किसी क्षेत्र में खाद्यान्नों की मांग को प्रभावित करने वाले तत्व उस क्षेत्र की जनसंख्या तथा क्षेत्रवासियों द्वारा प्रतिव्यक्ति उपभोग की मात्रा होते है। क्षेत्र में खाद्यान्नों की पूर्ति खाद्यान्नों का उत्पादन एवं उसके समुचित विवरण की मात्रा पर निर्भर करती है। अध्ययन क्षेत्र में खाद्यान्नों के उत्पादन तथा प्रति व्यक्ति खाद्यान्न उपलब्धता को सारणी क्रमांक 5.1 में दर्शाया जा रहा है।

सारणी क्रमांक 5.1 अध्ययन क्षेत्र में खाद्यान्न उत्पादन तथा प्रतिव्यक्ति उपभोग की मात्रा ।

फसलें	क्षेत्रफल (हेक्टेअर में)	कुल उत्पादन क्विंटल	औसत उत्पादन क्विंटल	प्रतिशत	प्रतिव्यक्ति अपभोग की मात्रा (किलोग्राम)
1. धान	68,578	13,77,712	20.09	21.58	64.84
2. गेहूँ	1,38,543	35,44,611	25.58	55.52	166.83
3. जौ	15,013	2,89,434	19.28	4.53	13.62
4. ज्वार	4,936	50,051	10.14	0.78	2.36
5. बाजरा	53,691	8,17,154	15.22	12.80	38.46
6. मक्का	22,602	3,05,013	13.50	4.78	14.36
कुल धान्य	3,03,363	63,83,975	21.04	100.00	300.47

सारणी 5.1 अध्ययन क्षेत्र में प्रति ,व्यक्ति खाद्यान्न उपभोग की मात्रा का चित्र प्रस्तुत कर रही है। कुल उत्पादन की द्रष्टि से देखें तो ज्ञात होता है कि अध्ययन क्षेत्र में गेहूँ और धान दोनों की प्रधानता है और ये धान्य कुल धान्य उत्पादन का 77 प्रतिशत से अधिक उत्पादन दे रहे हैं जिसमें गेहूँ 55.52 प्रतिशत भागेदारी करके प्रथम स्थान पर है। औसत उत्पादन की दृष्टि से भी गेहूँ की प्रति हेक्टेअर उत्पादकता 25.58 क्विंटल सर्वाधिक है, यह प्रतिव्यक्ति की उपलब्धता के आधार पर धान दूसरे स्थान पर है जिसकी प्रति व्यक्ति मात्रा 64.84 किलोग्राम है। उत्पादन औसत उत्पादन, प्रति व्यक्ति उत्पादन की दृष्टि से यह चौथे स्थान पर है, परन्तु प्रतिव्यक्ति मात्रात्मक उपलब्धता 38.46 किलोग्राम है। सम्पूर्ण अध्ययन क्षेत्र में प्रति व्यक्ति खाद्यान्न उपलब्धता 300.47 किलोग्राम है। विभिन्न फसलों के क्षेत्रफल, कुल उत्पादन, औसत उत्पादन तथा प्रति व्यक्ति उपलब्धता की दृष्टि से देखे तो गेहूँ, धान तथा बाजरा ही प्रतिनिधित्व करते प्रतीत हो रहे है, यह तथ्य इस बात की ओर संकेत करता है कि अध्ययन क्षेत्र में हरितक्रान्ति के परिणामस्वरूप ही उक्त फसलों की प्रधानता है।

अन्न उपलब्धता के अतिरिक्त कार्यशील जनसंख्या के लिए दालों की उपलब्घता भी अनिवार्य है क्योकि दालों मे प्रोटीन की मात्रा अधिक होने के कारण भारतीय भोजन मे इनकी प्रमुखता होती है और अधिकांश कार्यशील जनशक्ति दालों से प्रोटीन की अधिकांश मात्रा प्राप्त करती है। अध्ययन क्षेत्र मे पायी जाने वाली दालों मे अरहर, उर्द, मूंग, चना तथा मटर प्रमुख रूप से पायी जाती है। दालों का विस्तृत विवरण सारणी क्रमांक 5.2 में दर्शाया जा रहा है।

सारणी 5.2: अध्ययन क्षेत्र में दालों का वितरण।

दलहनी फसलें	क्षेत्रफल (हेक्टेअर)	कुल उत्पादन (क्विंटल)	औसत उत्पादन (क्विंटल)	प्रतिशत	प्रतिव्यक्ति उपलब्धता (किलोग्राम)
1. उर्द/मूंग	8,253	33,780	4.09	4.48	1.59
2. चना	25,093	3,13,231	12.48	41.50	14.78
3. मटर	15,146	2,49,913	16.50	33.11	11.76

4. अरहर	12,021	1,57,142	13.07	20.81	7.40
5. अन्य	105	751	7.15	0.10	0.03
कुल दलहन	60,618	7,54,817	4.58	100.00	35.53

सारणी क्रमांक 5.2 अध्ययन क्षेत्र में दलहन के वितरण का चित्र प्रस्तुत कर रही है। इन दलहनी फसलों में प्रमुख रूप से, अरहर, उर्द/मूंग तथा यदाकदा चने को दालों के रूप में सेवन लगभग 9 किलोग्राम प्रति व्यक्ति दालों की उपलब्धता है, यदि 10 प्रतिशत चने की दाल सेवन को भी सम्मिलित कर लिया जाय तो जनपद में प्रतिव्यक्ति दालों की मात्रा लगभग 10.5 किलोग्राम उपलब्ध है। विभिन्न दलहनी फसलों की भागेदारी की दृष्टि से देखे तो चना, मटर दोनो सम्पूर्ण उत्पादन का लगभग 75 प्रतिशत हिस्सा लोगों को उपलब्ध करा रहे है, जबकि अरहर मात्र 20.81 प्रतिशत हिस्सेदारी कर रही है जो प्रमुख रूप से दालों के रूप में सेवन की जाती है। सम्पूर्ण दलहनी फसलों की प्रतिव्यक्ति कुल उपलब्धता मात्रा 35.53 किलोग्राम प्रतिवर्ष है और यदि प्रमुख रूप से सेवन की जाने वाली अरहर मात्र 7.40 किलोग्राम प्रति व्यक्ति उपलब्ध है। अन्य दलहनी फसलों में मसूर ही प्रमुख है जिसने जनपद में अभी घुसपैठ ही बनाई है। औसत उत्पादन की दृष्टि से मटर का औसत उत्पादन 16.50 क्विंटल प्रति हेक्टेअर सर्वाधिक है और इस दृष्टि से यह फसल प्रथम स्थान पर है। उर्द/मूंग का औसत उत्पादन 4.091 क्विंटल प्रति हेक्टेअर न्यूनतम स्थिति दर्शा रही है। इस प्रकार समस्त खाद्यानों की दृष्टि से देखें तो अध्ययन क्षेत्र में प्रतिव्यक्ति खाद्यान्न की मात्रात्मक उपलब्धता केवल 336 किलोग्राम है।

3. *प्रति व्यक्ति खाद्यान्न उपलब्धता:*

विकासखण्ड स्तर पर खाद्यान्न की उपलब्धता को जानने के लिये शोधार्थी ने समस्त विकासखण्डों एक गाँव दैव निर्दशन आधार चुना। चुने हुये गावों का व्यक्तिगत सम्पर्क करके गहन सर्वेक्षण किया गया। जिसमें प्रश्नावलियों तथा अनुसूचियों को माध्यम बना कृषि सम्बन्धी जानकारियों प्राप्त की गयी। सर्वेक्षण के आधार पर विभिन्न फसलों की प्रत्येक गाँव की औसत उपज ज्ञात हो गयी है और इस औसत उपज को विकासखण्ड की

विभिन्न फसलों की औसत उपज का आधार मानकर विकासखण्ड स्तर पर प्रति व्यकित खाद्यान्न उपलब्धता की गई है। विकासखण्ड स्तर पर जो परिणाम प्राप्त हुये उन्हें सारणी क्रमांक 5.3 में दर्शाया गया है सारणी क्रमांक 5.3 विकासखण्ड स्तर पर खाद्यान्न उत्पादन तथा प्रति व्यक्ति खाद्यान्न उत्पादन तथा प्रतिदिन खाद्यान्नों की मात्रात्मक उपलब्धता दर्शा रही है। विकासखण्ड स्तर पर अन्न उत्पादन तथा दलहन उत्पादन की गणना की गयी है। अन्न में धान, गेहूँ, जौ, ज्वार, बाजरा तथा मक्का का उत्पादन सम्मिलित है जबकि दलहनी फसलों में चना, मटर, अरहर, तथा उर्द/मूंग प्रमुख फसलों के उत्पादन की गणना की गयी है। औसत उत्पादन की दृष्टि से विभिन्न विकासखण्डों में बहुत असमानता है इसी कारण प्रति व्यक्ति अन्न और दलहन के उत्पादन में अत्याधिक अन्तर देखने को मिलता है, परन्तु यह तथ्य भी प्रकाश में आया है कि जिन विकासखण्डों में अन्न उत्पादन अधिक होता है वहां पर दलहनी फसलों का कम उत्पादन होता है और जहां पर अन्न का कुल उत्पादन कम है वहां दलहनी फसलों का उत्पादन अधिक किया जाता है।

विकासखण्ड स्तर पर प्रति व्यक्ति अन्न उत्पादन की दृष्टि से देखें तो ताखा विकासखण्ड 527.47 किलोग्राम प्रति व्यक्ति उत्पादन करके प्रथम स्थान पर है। इस विकासखण्ड की भूमि चिकनी होने के कारण धान तथा गेहूँ की प्रमुखता है और इस विकासखण्ड के कुल उत्पादन के 90 प्रतिशत से भी अधिक की हिस्सेदारी इन्ही दोनों फसलों की ही अन्न उत्पादन की दृष्टि से बढ़पुरा विकासखण्ड मात्र 208.40 किलोग्राम प्रति व्यक्ति अन्न उत्पादन करके अपने निम्न स्तर पर संकेत कर रहा है। अपनी ऊंची नीची भूमि के कारण यहॉ गेहूँ तथा बाजरा का उत्पादन लगभग समान स्तर पर हो रहा है। जिनका कुल अन्न उत्पादन में लगभग 82 प्रतिशत में योगदान है। बढ़पुरा विकासखण्ड की मिलती जुलती भौगौलिक स्थिति वाला विकासखण्ड चकरनगर प्रति व्यक्ति 236.76 किलोग्राम अन्न उत्पादित करके बढ़पुरा से कुछ अच्छी स्थिति दर्शा रहा है। इस विकासखण्ड में बाजरा, गेहूँ तथा जौ प्रमुख फसले उगाई जाती है और नकदी फसलों का कुल अन्न उत्पादन में लगभग 99.6 प्रतिशत का योगदान है जिसमें बाजरा 52.24 प्रतिशत, गेहूँ 25.78 प्रतिशत तथा जौ की 21.53 प्रतिशत हिस्सेदारी है। अन्न उत्पादन

सारणी क्रमांकः 5.3- विकासखण्ड स्तर पर प्रति व्यक्ति खाद्यान्न उपलब्धता

विकास खण्ड	अन्न कुल उत्पादन (क्विंटल)	अन्न प्रति व्यक्ति (किलोग्राम)	अन्न प्रतिदिन (ग्राम)	दलहन कुल उत्पादन (क्विंटल)	दलहन प्रति व्यक्ति (किलोग्राम)	दलहन प्रतिदिन (ग्राम)	खाद्यान्न प्रति व्यक्ति (किलोग्राम)	खाद्यान्न प्रतिदिन (ग्राम)
१. जसवन्तनगर	५३०७६४	३११.७१	८५४	८८८३२	५२.१७	१४३	३६३.८८	९९७
२. बढ़पुरा	२२८५८०	२०८.४०	५७१	५०५१५	४६.०६	१२६	२५४.४६	६८७
३. बसरेहर	७९८४७३	४३०.९९	११८१	३४३५३	१८.५२	५१	४४९.५१	१२३२
४. भरथना	५००७६६	४३९.७५	१२०५	३२४३१	२८.४८	७८	४६८.२३	१२८३
५. ताखा	५४२९९२	५२७.४६	१४४५	१७४७८	१६.९८	४७	५४४.४७	१४९२
६. महेवा	४९८२४५	२७६.२१	७५७	९१३०६	५३.८६	१४८	३३०.९२	९०५
७. चकरनगर	१६४०५६	२३६.७६	६४६	५८०४६	८३.७७	२३०	३२०.५३	८७६
८. अछल्दा	४४५७३८	३६४.१८	९९८	३४५११	२८.२०	७७	३९२.३८	१०७५
९. विधूना	५५६३६८	४५०.६०	१२३५	२९०९२	२३.५६	६५	४७४.१६	१३००
१०. एरवाकटरा	४२४४९३	४४३.५४	१२१५	२४२५६	२५.३४	६९	४६८.८८	१२८४
११. सहार	५०९५९४	४०५.४८	११११	४१०२१	३२.६४	८९	४३८.१२	१२००
१२. औरैया	४३९०८३	२७९.५१	७६६	१०८५३०	६९.०९	१८९	३४८.६०	९५५
१३. अजीतमल	३०६६१०	२६१.०६	७१५	७९७४४	६७.९०	१८६	३२८.९६	९०१
१४. भाग्यनगर	४१८९४०	३२६.४६	८९५	४४१९९	३४.४५	९४	३६०.९२	९८९
ग्रामीण औसत	६३३४७०२	३५३.७१	९६९	७३४३१४	४१.००	११२	३९४.७१	१०८१

की दृष्टि से विधूना विकासखण्ड 450.60 किलोग्राम प्रति व्यक्ति अन्न का उत्पादन करके वरीयता क्रम में द्वितीय स्थान पर है। इस विकासखण्ड में धान और गेहूँ प्रमुख रूप से उत्पन्न किये जाते है । जिनका कुल अन्न उत्पादन में लगभग 88 प्रतिशत योगदान है । इससे मिलते जुलते स्तर को प्रदर्शित करने वाले विकासखण्ड को 400 कि. ग्रा. से 450 कि. ग्रा. प्रति व्यक्ति के मध्य अन्न उत्पादन के स्तर को प्राप्त कर रहें है। उनमें से एरवाकटरा 443.54 कि.ग्रा. , भरथना 439.75, बसरेहर 430.99 तथा एक समान स्थिति में है, इन सभी विकासखण्डों में धान तथा गेहूँ के उत्पादन की प्रधानता है। 350 कि.ग्रा. से 400 कि. ग्रा. के मध्य अन्न उत्पादन करने वाला अकेला विकासखण्ड अछल्दा है जो 364.18 कि.गा. प्रति व्यक्ति अन्न उत्पादित कर रहा है। 300 कि. ग्रा. से 350 कि.ग्रा. प्रति व्यक्ति अन्न उत्पादन स्तर को प्राप्त करने वाले विकासखण्डों में भाग्यनगर 326.49 कि.ग्रा. था, जसवन्तनगर 311.71 कि.ग्रा. है। जिनमें से भाग्यनगर में गेहूँ, धान, बाजरा एवं जसवन्तनगर विकासखण्ड में गेहूँ, बाजरा तथा धान प्रमुख अन्न उत्पादक है, इस विकासखण्ड में मक्का भी चौथे स्थान की फसल है।

दलहन के उत्पादन तथा प्रति व्यक्ति उपलब्धता के दृष्टिकोण देखें तो सभी विकासखण्डों में चना, मटर, अरहर तथा उर्द/मूंग की ही प्रमुखता है, परन्तु दालों में प्रमुख रूप से अरहर तथा उर्द/मूंग को ही पसंद किया जाता है। कहीं-कहीं चने की दाल का भी यदाकदा प्रयोग किया जाता है। विकासखण्ड स्तर पर दलहन के उत्पादन की दृष्ठि से देखें तो अन्न उत्पादन की दृष्टि से द्वितीय निम्नतम स्तर को प्रदार्शित करने वाले विकासखण्ड चकरनगर की स्थिति सर्वोच्च है जो 83.77 कि.ग्रा. प्रति व्यक्ति दलहन का उत्पादन करके वरीयता क्रम में प्रथम स्थान पर स्थिति है। जिसमें चना तथा अरहर दोनो मिलाकर 98 प्रतिशत अधिक की भागेदारी कर रही है। वरीयता क्रम में द्वितीय स्थान पर औरैया विकासखण्ड है जो 69.09 कि.ग्रा. प्रति व्यक्ति दलहन का उत्पादन कर रहा है। जिसमें चना को 43.37 प्रतिशत, मटर 33.55 प्रतिशत तथा अरहर 22.53 प्रतिशत हिस्सेदारी कर रही है। अजीतमल विकासखण्ड 67.90 कि.ग्रा. प्रति व्यक्ति दलहन उत्पादित करके वरीयता क्रम में तीसरा स्थान दर्ज कर रहा है। इस विकासखण्ड में मटर तथा चना ही प्रमुख दलहनी फसलें हैं जो कुल दलंहन उत्पादन में लगभग 82

प्रतिशत का योगदान कर रही है। इसमें में भी मटर का योगदान 54 प्रतिशत से अधिक है दलहनी फसलों की दृष्टि से ताखा विकासखण्ड सबसे दयनीय स्थिति को दर्शा रहा है यह विकासखण्ड 16.98 कि.ग्रा प्रति व्यक्ति दलहन का उत्पादन करके वरीयता क्रम में अन्तिम स्थान पर है जबकि अन्न उत्पादन में यह प्रथम स्थान पर है। इस विकासखण्ड से मिलती जुलती स्थिति बसरेहर विकासखण्ड प्रदर्शित कर रहा है। जो 18.52 कि.ग्रा. प्रति व्यक्ति उत्पादित करके द्वितीय निम्न स्तर को प्राप्त कर रहा है। इन दोनों विकासखण्डों में चना तथा मटर दलहनों का ही प्रभुत्व है। 20 से 30 कि.ग्रा. प्रति व्यक्ति दलहन उत्पादन स्तर को प्राप्त करने वाले विकासखण्ड अछल्दा 28.20, एरवाकटरा 25.34 तथा विधूना 23.56 कि.ग्रा. है। जबकि 30 से 40 कि.ग्रा. के मध्य उत्पादन स्तर भाग्यनगर 34.45 तथा सहार विकासखण्ड 32.64 कि.ग्रा. प्राप्त कर रहे है। 40 से 50 कि.ग्रा. प्रति व्यक्ति उत्पादित करने वाले विकासखण्डों में बढ़पुरा विकासखण्ड 46.06 कि.ग्रा. का उत्पादन करके इस वर्ग में अकेला है, जबकि 50 से 60 कि.ग्रा. के मध्य महेवा 53.86 कि.ग्रा. तथा जसवन्तनगर 52.17 कि. ग्रा. उत्पादन कर रहे है। कुल खाद्यान्नों के औसत (प्रति व्यक्ति) की दृष्टि से 500 कि.ग्रा. प्रति व्यक्ति से अधिक उत्पन्न करने वाला एक मात्र विकासखण्ड ताखा है जो 544 कि.ग्रा. से अधिक प्रति व्यक्ति खाद्यान्न उत्पन्न कर रहा है, जबकि इस दृष्टि से बढ़पुरा विकासखण्ड 254.46 कि.ग्रा. प्रति व्यक्ति खाद्यान्न उत्पादित करके वरीयता क्रम में अंतिम स्थान पर है। शेष विकासखण्ड इन दोनों विकासखण्डों के मध्य में स्थिति है। सारणी से यह तथ्य भी स्पष्ट हो रहा है। कि जो विकासखण्ड अन्न उत्पादन में अग्रणी है वे दालों के उत्पादन में पिछड़ रहे हैं और जो विकासखण्ड अन्न के उत्पादन में पिछड़ रहा है, वे दालों के उत्पादन में अग्रणी हैं अर्थात अन्न की विकासखण्ड स्तर पर प्रतिव्यक्ति उपलब्धता तथा दालों की प्रतिव्यक्ति उपलब्धता में विपरीत सह-सम्बन्ध है।

गुणात्मक पहलू:

अध्ययन क्षेत्र में अधिकांश पोषक तत्व खाद्यान्न से प्राप्त किये जाते है। यह अनुमान है कि कुल प्राप्त कैलोरी में से दो तिहाई भाग खाद्यान्नों से मिलता है तथा साथ ही साथ अपेक्षित स्तर का नहीं होता है। खाद्य और

कृषि संगठन के एक अध्ययन के अनुसार वे देश जहाँ के आहार में खाद्यान्न, जड़दार सब्जियों और चीनी की बहुलता हो वहाँ पोषण सम्बन्धी स्पष्ट असन्तुलन पाया जाता है। भारतीय आहार में इन तत्वों का अंश तिहाई से अधिक है। भारत में मध्यमवर्गीय परिवारों को छोड़कर शेष लोग संतुलित आहार नहीं पाते हैं जिसके कारण वे कुपोषण के शिकार हैं। विश्व बैंक की एक रिपोर्ट (1992) के अनुसार "प्रति व्यक्ति औसतन अपने भोज्य से 1965 में प्रतिदिन 2021 कैलोरी ऊर्जा प्राप्त करता था जो 25 वर्षो बाद 1989 में बढ़कर 2229 कैलोरी हो गयी जो जीवित रहने के लिये आवश्यक ऊर्जा (2250 कैलोरी) से 21 कैलोरी कम है। पौष्टिक, और संतुलित आहार न मिलने के कारण गर्भवती महिलायें जिन बच्चों को जन्म देती है उनमें से लगभग 30 प्रतिशत बच्चे सामान्य वजन से कम होते है बच्चों को कई तरह की कुपोषणजन्य बीमारियाँ होती है तथा शिशु मृत्युदर बहुत अधिक है और जीवन प्रत्याशा अन्य देशों की तुलना में कम है।

पोषण स्तर के अध्ययन के लिये प्रति व्यक्ति खाद्यान्न उत्पादन तथा उपभोग के लिये प्रति व्यक्ति शुद्ध खाद्यान्न उपलब्धता दोनों भिन्न पहलू हैं जहां प्रतिव्यक्ति खाद्यान्न उत्पादन कृषि क्षेत्र के उत्पादन स्तर का सूचक है, वहीं प्रतिव्यक्ति शुद्ध खाद्यान्न उपलब्धता पोषण स्तर का प्रतीक है। यहाँ यह बात ध्यान रखने की है कि संतुलित आहार में केवल खाद्यान्नों की मात्रा का ही योगदान नही होता है बल्कि खाद्यान्नों से प्राप्त होने वाली कैलोरिक ऊर्जा पर निर्भर करता है जैसा कि ऊपर बताया गया है कि अध्ययन क्षेत्र में लोग अपनी अधिकांश कैलोरिक ऊर्जा खाद्यान्नों से ही प्राप्त करते हैं क्योंकि लोगों के आहार में खाद्यान्नों का ही प्रमुख योगदान पाया जाता है। विकासखण्ड स्तर पर विभिन्न खाद्यान्नों से प्राप्त होने वाली कैलोरिक ऊर्जा तथा प्रतिव्यक्ति कैलोरिक उपलब्धता दर्शाने के पूर्व हमें यहाँ इस बात का उल्लेख करना भी समीचीन प्रतीत होता है कि कुल उत्पादन में से खाने योग्य खाद्यान्न की गणना विभिन्न अर्थशास्त्रियों ने की है। सिंह जसवीर (1974) ने कुल उत्पादन में से 16.80 प्रतिशत, तिवारी पी.डी. [1] (1988 ने 15 प्रतिशत सिंह एस पी.[2] ने 24 प्रतिशत मात्रा घटाकर शुद्ध उत्पादन उपभोग के लिये प्राप्त किया है। यहाँ पर विभिन्न खाद्यान्नों से उपयोग के लिये शुद्ध उत्पादन प्राप्त करने के लिये सिंह एस. पी. के आधार को मानते हुये विकासखण्ड स्तर पर खाद्यान्नों से प्रति व्यक्ति कैलौरिक ऊर्जा की गणना

कर रहें है। सिंह एस. पी. ने विकासखण्ड अमेठी का सर्वेक्षण करके प्रति व्यक्ति वास्तविक खाद्यान्नों की उपलब्धता की गणना की । उनके अनुसार विभिन्न खाद्यान्नों में खाने योग्य मात्रा निम्न प्रकार की गणना की जाती है।

सारणी क्रमांक 5.4 विभिन्न खाद्यान्नों से खाने योग्य भाग।

खाद्यान	बीज, पशु आहार तथा भण्डारण क्षय (प्रतिशत)	खाने योग्य अनुपात	छीजन(क्षय)
1. धान	10	60	40
2. गेहूँ	10	95	05
3. जौ	10	90	10
4. मोटे अनाज (ज्वार, बाजरा मक्का अदि)	10	90	10
5. अरहर	10	65	35
6. उर्द/मूंग	10	70	30
7. चना	10	65	35
8. मटर	10	70	30

सारणी क्रमांक 5.4 विभिन्न खाद्यान्नों से प्राप्त होने वाले शुद्ध उत्पादन का विवरण प्रस्तुत कर रही है। डॉ. सिंह का मत है कि कुल उत्पादन में से प्रत्येक खाद्यान्न में से 10 प्रतिशत हिस्सा बीज तथा भण्डारण में होने वाले छीजन से घटाने के उपरान्त शेष उत्पादन में से खाने योग्य हिस्से की गणना की जानी चाहिये। इस गणना के आधार पर विभिन्न खाद्यान्नों की शुद्ध उपलब्धता विकासखण्ड स्तर पर सारणी क्रमांक 5.5 में प्रस्तुत की गयी है।

अध्ययन क्षेत्र में विकासखण्ड वार खाद्यान्न उपलब्धता सारणी क्रमांक 5.5 में दर्शायी गयी है। प्रति व्यक्ति अन्न उपलब्धता के दृष्टिकोण से ताखा विकासखण्ड 392. 98 किलोग्राम प्रति व्यक्ति अन्न उपलब्ध कराकर वरीयता क्रम में प्रथम स्थान पर है इस विकासखण्ड के अन्नोत्पादन में धान और गेहूँ की प्रधानता है। एरवाकटरा विकासखण्ड 348.20 कि. ग्रा. प्रति व्यक्ति अन्न का उत्पादन करके द्वितीय स्थान पर है। तीसरा स्थान प्राप्त करने वाला विकासखण्ड विधूना है। जहां पर 343.61 कि.गा. प्रतिव्यक्ति की दर से अन्नोत्पादन किया जा रहा है।

वास्तविक मात्रा उपभोग के लिये विकासखण्ड बढ़पुरा मात्र 169.25 कि.ग्रा. प्रति व्यक्ति अन्न उपलब्ध कराकर वरीयता क्रम में अन्तिम स्थान पर है जबकि चकरनगर की भौगोलिक स्थिति बढ़पुरा के लगभग समान होते हुये भी कुछ अच्छी स्थिति में है और यह विकासखण्ड 194.48 कि.ग्रा. प्रति व्यक्ति अन्न उपलब्ध करा रहा है। 200 से 300 कि.ग्रा. अन्न उपलब्ध कराने वाले विकासखण्डों में अजीतमल 212.57 कि.ग्रा., औरैया 224.91, महेवा 223.31 कि. ग्रा., जसवन्तनगर 247.41 कि.ग्रा. भाग्यनगर 257.92 कि.ग्रा. तथा अछल्दा विकासखण्ड 280.25 कि.ग्रा. प्रतिव्यक्ति अन्न उपलब्ध करा रहा है। सहार विकासखण्ड 305.28 कि.ग्रा. प्रतिव्यक्ति के स्तर को पहुँच रहा है।

दलहन का वास्तविक उपलब्ध मात्रा के दृष्टिकोण से चकरनगर विकास खण्ड सर्वोत्तम स्थिति में है और यह 49.06 कि.ग्रा. प्रति व्यक्ति दालों का वास्तविक उपभोग कर रहा है। जबकि दूसरे स्थान पर अजीतमल विकासखण्ड की औसत उपलब्धता है और यह 41.59 कि.ग्रा. प्रति व्यक्ति दालों को उपभोग के लिये प्रस्तुत कर रहा है। महेवा विकासखण्ड 32.94 कि.ग्रा. तथा सहार विकासखण्ड 32.85 कि.ग्रा. प्रति व्यक्ति दालों का उपभोग करके लगभग एक समान स्थिति में हैं। इन्ही से मिलता जुलता प्रदर्शन औरैया विकासखण्ड का है जो कि 30.64 प्रति व्यक्ति की दर से दालों का उपभोग कर रहा है ताखा विकासखण्ड जो अन्न के उपभोग में प्रथम स्थान पर है वह दालों के उपभोग में अन्तिम स्थान पर स्थित है और यह अपने यहाँ मात्र 10.11 कि.ग्रा. प्रति व्यक्ति दालों का उपभोग कर रहा है। कमोबेश यही प्रदर्शन बसरेहर विकासखण्ड कर रहा है जहाँ इससे थोड़ा अधिक अर्थात 11.15 कि.ग्रा. प्रतिव्यक्ति की दर से दालों का उपभोग हो रहा है। कुल खाद्यान्न की प्रति व्यक्ति उपलब्धता देखी जाये तो ताखा विकासखण्ड प्रथम स्थान पर है जबकि बढ़पुरा विकासखण्ड अन्तिम स्थान पर है।

कैलोरिक उपलब्धता के आधार पर भूमि भार वाहन क्षमता:

सामान्य रूप से कृषि भूमि पर जैसे-जैसे मनुष्य का भार बढ़ता जाता है, प्रतिव्यक्ति उत्पादन कम होता जाता है। प्रतिव्यक्ति उत्पादन न गिरने के लिये यह आवश्यक है कि प्रति इकाई क्षेत्र में अधिक पूंजी का विनियोग करके उत्पादन बढ़ाया जाये। इस प्रकार किसी भी क्षेत्र के कृषि विकास तथा

सारणी क्रमांकः 5.5– अध्ययन क्षेत्र में विकासखण्ड स्तर पर उपभोग योग्य मात्रा

विकास खण्ड	अन्न			दलहन			खाद्यान्न	
	उपभोग योग्य (क्विंटल)	प्रति व्यक्ति (किलोग्राम)	प्रतिदिन (ग्राम)	उपभोग योग्य (क्विंटल)	प्रति व्यक्ति (किलोग्राम)	प्रतिदिन (ग्राम)	उपभोग योग्य (किलोग्राम)	प्रतिदिन (ग्राम)
१. जसवन्तनगर	४२१२७६	२४७.४१	६७८	४५३१५	२६.६१	७३	२७४.०२	७५१
२. बढ़पुरा	१८५६३८	१६६.२५	४६४	२६७२०	२७.१०	७४	१९६.३५	५३८
३. बसरेहर	६०१६२१	३२४.७४	८६०	२०६५८	११.१५	३१	३३५.८६	६२१
४. भरथना	३८२६८०	३३६.३२	६२१	१६६१२	१७.२२	४७	३५३.५४	६६८
५. ताखा	४०४५२३	३६२.६८	१०७७	१०४०६	१०.११	२८	४०३.०६	११०५
६. महेवा	३७८५५३	२२३.३१	६१२	५५८३४	३२.६४	६०	२५६.२५	७०२
७. चकरनगर	१३४७५६	१६४.४८	५३३	३३६६३	४६.०६	१३४	२४३.५४	६६७
८. अछल्दा	३४३०१०	२८०.२५	७६८	२०६३५	१७.१०	४७	२६७.३५	८१५
६. विधूना	४२४२७०	३४३.६१	६४१	१७२५४	१३.८७	३८	३५७.५८	६७६
१०. एरवाकटरा	३२३२४०	३४८.२०	६५४	१४८२३	१५.४६	४२	३६३.६६	६६६
११. सहार	३८३६६६	३०५.२८	८३६	४१२६०	३२.८५	६०	३३८.१३	६२६
१२. औरैया	३५३३१७	२२४.६१	६१६	४७६५७	३०.६४	८४	२५५.५५	७००
१३. अजीतमल	२४६६५६	२१२.५७	५८२	४८८४१	४१.५६	११४	२५४.१६	६६६
१४. भाग्यनगर	३३०६५७	२५७.६२	७०७	२६४८३	२०.६४	५७	२७८.५६	७६४
सम्पूर्ण औसत	४६२७४६६	२७५.१३	७५४	४४१८२१	२४.६७	६८	२६६.८०	८२२

नियोजन में जनसंख्या तथा पोषण क्षमता के पारस्परिक सम्बन्ध का अपना एक विशेष महत्व है। क्षेत्र की जनसंख्या पोषण क्षमता के पारस्परिक सम्बन्ध का अपना एक विशेष महत्व है। क्षेत्र की जनसंख्या पोषण क्षमता से अधिक हो जाने पर जनसंख्या की समस्या उत्पन्न हो जाती है। किसी क्षेत्र में निवास करने वाली जनसंख्या के पोषण स्तर को एक सामान्य स्तर पर बनाये रखने के लिये उस क्षेत्र में प्रतिव्यक्ति खाद्यान्न उत्पादन की आवश्यक मात्रा तो आवश्यक होती है, साथ यह भी देखना होता है कि उस क्षेत्र की कृषि भूमि की वास्तविक भार वहन क्षमता कितनी है अर्थात जो भी कृषि उपज प्राप्त हो रही है वह कितने व्यक्तियों का पोषण करने में सक्षम है। इसके लिये हमें यह देखना होता है कि क्षेत्र में उत्पन्न होने वाली कृषि उपज से कितनी कैलोरिक ऊर्जा प्राप्त होती है यह कैलोरिक उपलब्धता ही उस क्षेत्र के कृषि क्षेत्र की पोषण क्षमता होती है।

भूमि भार वहन क्षमता की गणना के लिये डॉ. जसवीर सिंह[3] (1974) में एक सरल माडल का प्रतिपादन किया जिसमें प्रति इकाई कृषि क्षेत्र के कुल उत्पादन के आधार पर कैलोरिक ऊर्जा में परिवर्तित किया और इसी कैलोरिक उपलब्धता को उस क्षेत्र की भूमि भार वहन क्षमता का नाम दिया। यहाँ पर हम डॉ. सिंह के माड़ल के आधार पर अध्ययन क्षेत्र की भूमि भार वहन क्षमता का विश्लेषण कर रहे हैं।

सारणी क्रमांक 5.6 अध्ययन क्षेत्र में जनपदीय स्तर पर विभिन्न फसलों के उत्पादन से प्राप्त प्रतिवर्ग किलोमीटर उपलब्धता को दर्शा रही है। जनपदीय स्तर पर प्रमुख रूप से तेरह फसलें उगायी जाती हे जिसमें गेहूँ की प्रधानता है, धान का दूसरा स्थान है । मोटें अनाजों में बाजरा तथा मक्का का महत्वपूर्ण स्थान है। दलहनी फसलों में चना, अरहर तथा मटर का ही प्रभुत्व है, उर्द/मूंग का भी उत्पादन किया जाता है। जड़दार फसलों में आलू तथा व्यापारिक फसलों में गन्ना उगाया जाता है। इन तेरह प्रधान फसलों के द्वारा जनपद का कुल कृषि क्षेत्र का 95 प्रतिशत हिस्सा आच्छादित रहता है। शेष कृषि क्षेत्र पर अन्य फसलें जिनमें साब्जियां, तिल, रेड़ी तथा दलहनी फसलों में मसूर सोयाबीन आदि फसलें बोयी जाती है। रेशेदार फसलों में सनई, मसालेदार फसलों में प्याज, लहसुन, धनियां मिर्च तथा कुछ क्षेत्रों में कलौंजी का भी प्रचलन है, परन्तु ये फसलें नाममात्र के क्षेत्र

सारणी क्रमांकः 5.6– अध्ययन क्षेत्र जनपद इटावा की भूमि भार वहन क्षमता

खाद्य फसलें	प्रति हेक्टेअर उत्पादन (कि०ग्रा०)	कुल जोती गयी भूमि (प्रतिशत में)	सकल उत्पादन कि०ग्रा०	बीज तथा भण्डारण आदि (प्रतिशत में)	कुल शुद्ध उत्पादन (कि०ग्रा०)	खाने योग्य भाग (प्रतिशत में)	खाने योग्य शुद्ध मात्रा (कि०ग्रा०)	प्रति कि.ग्रा. (कैलोरी)	कुल कैलोरिक उपलब्धता
१. धान	२००६	१६.१४	३२४२५.२६	१०	२९१८२.७३	६०	१७५०९.६४	३४५०	६०४०८२५८
२. गेहूं	२५५८	३२.५८	८३३३९.६४	१०	७५००५.६८	९५	७१२५५.४०	३४६०	२४६५४३६८४
३. जौ	१९२८	३.५३	६८०५.८४	१०	६१२५.२६	९०	५५१२.७३	३३६०	१८५२२७७३
४. ज्वार	१०१४	१.१६	११७६.२४	१०	१०५८.६२	९०	९५२.७६	३४९०	३३२५१३२
५. बाजरा	१५२२	१२.६३	१९२२२.८६	१०	१७३००.५७	९०	१५५७०.५१	३६१०	५६२०९५४१
६. मक्का	१३५०	५.३१	७१६८.५०	१०	६४५१.६५	९०	५८०६.४६	३४२०	१९८५८१९६
७. उर्द/मूंग	४३६	१.७३	७५४.२८	१०	६७८.८५	७०	४७५.२०	३४८०	१६५३६९६
८. चना	१२४८	५.९०	७३६३.२०	१०	६६२६.८८	६५	४३०७.४७	३७२०	१६०२३७८८
९. अरहर	१३०७	२.८३	३६९८.८१	१०	३३२८.९३	९५	२१६३.८०	३३५०	७२४८७३०
१०. मटर	१६५०	३.५६	५८७४.००	१०	५२८६.६०	७०	३७००.६२	३१५०	११६५६९५३
११. लाही	१२४७	६.३७	७९४३.३९	२	७७८४.५२	३६	२८०२.४३	९०००	२५२२१८७०
१२. आलू	१६१०४	२.२३	४२६०१.६२	२५	३१९५१.४४	-	३१९५१.४४	९७०	३०९९२८९७
१३. गन्ना	३२८४५	१.०३	३३८३०.३५	१०	३०४४७.३२	१२	३६५३.६८	३८३०	१३९९३५

$$\text{प्रतिवर्ग किलोमीटर कृषि क्षेत्र में कैलोरिक उपलब्धता} = \frac{\text{कुल कैलोरिक उपलब्धता}}{\text{सकल जोत का प्रतिशत}} \times १००$$

$$= \frac{५११६५९११२}{९५} \times १०० = ५३८५८८५३९.३$$

में ही बोयी जाती है। इस प्रकार 95 प्रतिशत क्षेत्र में उगाई जाने वाली फसलें के कुल उत्पादन से खाद्य योग्य मात्रा की गणना करके कुल कैलोरिक उपलब्धता की गणना की गयी है।

जनपदीय स्तर पर ही विभिन्न आयु वर्ग की औसत वार्षिक कैलोरिक आवश्यक्ता की गणना भारतीय चिकित्सा अनुसंधान परिषद 1988 द्वारा संस्तुत मात्रा के आधार पर की गई है। जिसमें सारणी क्रमांक 5.7 में दिखाया गया है।

सारणी क्रमांक 5.7: विभिन्न आयु वर्ग के लोगों की औसत वार्षिक कैलोरिक आवश्यकता।

आयुवर्ग	कुल जनसंख्या का प्रतिशत			प्रतिदिन संस्तुत मात्रा कैलोरी	कुल मात्रा
	बच्चे	पुरुष	स्त्री	(अदि सी.एम.आर. 1968)	(कैलोरी)
1 से कम	4.12	–	–	700	2,884
1 वर्ष से 3 वर्ष	8.16	–	–	1,200	9,792
3 वर्ष से 6 वर्ष	8.13	–	–	1,500	12,195
6 वर्ष से 9 वर्ष	7.59	–	–	1,800	13,662
9 वर्ष से 12 वर्ष	7.84	–	–	2,100	16,464
12 वर्ष से 15 वर्ष	–	4.74	–	2,500	11,850
12 वर्ष से 15 वर्ष	–	–	3.38	2,200	7,436
15 वर्ष से 18 वर्ष	–	4.44	–	3,000	13,320
15 वर्ष से 18 वर्ष	–	–	3.68	2,200	8,096
18 वर्ष से अधिक	–	25.24	–	2,800	70,672
18 वर्ष से अधिक	–	–	18.56	2,200	40,832
गर्भवती महिलायें	–	–	4.12	2,500	10,300
	35.84	34.42	29.74		2,17,503

दूध पिलाने वाली माताओं की संस्तुत मात्रा।

सारणी 5.7 में प्रस्तुत सांख्यकीय की गणना के अनुसार अध्ययन क्षेत्र में 100 व्यक्तियों की प्रतिदिन कुल 217503 कैलोरी ऊर्जा की आवश्यकता होती है। इस प्रकार एक वर्ष (165.25 दिवस) में प्रतिव्यक्ति आवश्यक कैलोरी की मात्रा 794430 कैलोरी होगी इस आधार पर अध्ययन क्षेत्र में जनपदीय स्तर पर गणना करने पर –

प्रति वर्ग कि.मी. कृषि क्षेत्र में कैलोरिक उपलब्धता अनुकूलतम भूमि वहन

$$\text{क्षमता} = \frac{\text{प्रति व्यक्ति वार्षिक कैलोरिक आवश्यकता}}{\text{प्रति वर्ग कि. मी. कृषि क्षेत्र में कैलोरिक उपलब्धता}}$$

प्रति वर्ग कि. मी. कृषि क्षेत्र में कैलोरिक उपलब्धता = 538588539 कैलोरी

प्रति व्यक्ति वार्षिक कैलोरिक आवश्यकता = 794430

5

$$\text{अनुकूलतम भूमि भार वहन क्षमता} = \frac{538588539}{794430} = 677.96$$

अथवा 678 व्यक्ति

विकासखण्ड स्तर पर अनुकूलतम भूमि भार वहन क्षमता :

अध्ययन क्षेत्र में विकासखण्ड स्तर पर भूमि अनुकूलतम भार वहन क्षमता की गणना की गयी है, जिसमें यह देखा गया है कि प्रत्येक विकासखण्ड में इस दृष्टि से पर्याप्त अन्तर मिलता है। विकासखण्ड स्तर पर अनुकूलतम भूमि भार वहन क्षमता को सारणी क्रमांक 5.8 में दर्शाया गया है।

सारणी क्रमांक 5.8 विकास खण्ड स्तर पर अनुकूलतम भूमि भार वहन क्षमता

विकास खण्ड	अनुकूलतम-भूमि भार वहन क्षमता	श्रेणीयन	कार्यक घनत्व	अन्तर
1. जसवन्तनगर	589	10	407	182
2. बढ़पुरा	601	08	513	88
3. बसरेहर	699	02	403	296
4. भरथना	726	01	389	337
5. ताखा	578	11	366	212
6. महेवा	559	12	464	95
7. चकरनगर	517	14	409	108
8. अछल्दा	657	07	429	228

9. विधूना	669	06	399	270
10. एरवाकटरा	676	04	309	367
11. सहार	674	05	414	260
12. औरैया	565	13	411	154
13. अजीतमल	600	09	473	127
14. भाग्यनगर	678	03	469	214
सम्पूर्ण	678		499	179

स्रोतः- सर्वेक्षण की सांख्यकीय के आधार पर।

विकासखण्ड स्तर पर अनुकूलतम भूमि भार वहन क्षमता सारणी क्रमांक 5.8 में प्रस्तुत की गयी है। सारणी से ज्ञात होता है सर्वधिक भूमि भार वहन क्षमता भरथना की है जहाँ 726 व्यक्तियों के लिये आवश्यक कैलोरिक ऊर्जा खाद्यान्नों से प्राप्त हो रही है और यह विकासखण्ड अभी 337 अतिरिक्त व्यक्तियों को खाद्यान्न उपलब्ध कराकर उनका आवश्यक पोषण करने में सक्षम है। इस दृष्टि से बसरेहर विकासखण्ड दूसरे स्थान पर स्थित है और यह अपने यहाँ उपलब्ध कृषि उत्पादन से 699 व्यक्तियों को आवश्यक ऊर्जा उपलब्ध कराने में सक्षम है जबकि इस विकासखण्ड का कायिक घनत्व 403 है, अतः 269 अतिरिक्त व्यक्तियों को पोषण प्रदान कर सकता है। तीसरा स्थान भाग्यनगर विकासखण्ड प्राप्त कर रहा है जिसकी भूमि वहन क्षमता 683 व्यक्ति प्रतिवर्ग किलोमीटर है, यह विकासखण्ड 214 अतिरिक्त व्यक्तियों के लिये आवश्यक खाद्य सामग्री उपलब्ध कराने में सक्षम है। चकरनगर विकासखण्ड न्यूनतम भूमि वहन क्षमता को प्रदर्शित कर रहा है, यह अपने यहाँ उपलब्ध खाद्यान्नों द्वारा केवल 517 व्यक्तियों के भरण पोषण की क्षमता रखता है। जबकि इस क्षेत्र का कायिक घनत्व 409 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर है और यह अभी भी 108 व्यक्तियों की उदरपूर्ति करने में सक्षम है। द्वितीय न्यूनतम भूमि वहन क्षमता 565 व्यक्ति औरैया विकासखण्ड प्रदर्शित कर रहा है परन्तु जब कायिक घनत्व से तुलना करते हैं तो यह विकासखण्ड 154 अतिरिक्त व्यक्तियों की

उदरपूर्ति करने में सक्षम है। अनुकूलतम भूमि वहन क्षमता की दृष्टि से देखें तो वरीयता क्रम में चौथे स्थान पर एरवाकटरा 676 व्यक्ति, पाँचवें स्थान पर सहार 674 व्यक्ति, छटवें स्थान पर विधूना 669 व्यक्ति तथा सातवें स्थान पर अछल्दा 657 व्यक्तियों को पोषण क्षमता रखकर लगभग एक सी स्थिति का प्रदर्शन कर रहे हैं। बढ़पुरा विकासखण्ड 601 व्यक्ति तथा अजीतमल 600 व्यक्तियों की पोषण क्षमता रखकर एक सी स्थिति में है।

कायिक घनत्व से यदि तुलना करें तो एरवाकटरा विकासखण्ड प्रथम स्थान पर स्थित है जो भूमि वहन क्षमता के आधार पर 676 व्यक्तियों के भरण पोषण में सक्षम है परन्तु 309 व्यक्ति ही इस विकासखण्ड में प्रति वर्ग कि. मी. निवास कर रहे हैं इस द्रृष्टि से यह विकासखण्ड 367 अतिरिक्त व्यक्तियों को उपलब्ध कैलोरिक ऊर्जा के आधार पर भोजन उपलब्ध करा सकता है। कायिक घनत्व के आधार पर बढ़पुरा विकासखण्ड को न्यूनतम अन्तर दृष्टिगोचर हो रहा है, अर्थात यह अपनी उत्पादन क्षमता के आधार पर मात्र 88 अतिरिक्त व्यक्तियों को ही खाद्य सामग्री उपलब्ध करा सकता है। इस दृष्टि से यदि देखा जाय तो यही विकासखण्ड सर्वाधिक जनाधार वाला है और अब मात्र यहाँ 88 व्यक्ति ही यहां समायोजित हो सकते हैं। इसके उपरान्त महेवा विकासखण्ड की स्थिति स्पष्ट हो रही है और यह क्षेत्र केवल 95 अतिरिक्त व्यक्तियों को ही भोजन की दृष्टि से समायोजित कर सकता है। 100 व्यक्तियों से अधिक परन्तु 200 व्यक्तियों से अधिक अतिरिक्त समायोजित कर सकने वाले विकासखण्डों में चकरनगर 108, अजीतमल 127, औरैया 154, तथा जसवन्तनगर 182 व्यक्ति है। 200 से 300 अतिरिक्त व्यक्तियों के भरण पोषण में सक्षम विकासखण्डों में ताखा 212, भाग्यनगर 214, अछल्दा 228, सहार 260, विधूना 270 तथा बसरेहर 296 व्यक्ति है। अन्य विकासखण्ड 300 से अधि ाक अतिरिक्त व्यक्तियों को अभी खाद्य सामग्री उपलब्ध करा सकते हैं।

उपर्युक्त विश्लेषण से यह स्पष्ट हो रहा है कि चाहे खाद्यान्न उपलब्धता की दृष्टि से देखें अथवा चाहे अनुकूलतम भूमि उपयोग क्षमता की दृष्टि से देखें तो अध्ययन क्षेत्र के किसी भी विकासखण्ड में दोनों ही दृष्ठियों से प्रति व्यक्ति आवश्यक खाद्यान्नों से प्राप्त औसत कैलोरिक ऊर्जा पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध है, परन्तु भूमि का असमान वितरण भोजन खाद्यान्नों की

प्रमुखता, भोजन में आवश्यक तत्वों के ज्ञान का अभाव, अशिक्षा तथा संतुलित भोजन में विभिन्न खाद्य वस्तुओं की आवश्यक मात्रा के समायोजन का सामान्य जन को ज्ञान न होना कुपोषण ही समस्या को जन्म देते हैं। अध्ययन क्षेत्र भी इन समस्याओं से मुक्त नहीं हैं। इसलिये खाद्यान्नों की आवश्यक मात्रा पर्याप्त होने के बाद भी अध्ययन क्षेत्र कुपोषण से उत्पन्न होने वाली बीमारियों का शिकार है।

सारणी क्रमांक 5.9 भूमि भार वहन क्षमता की श्रेणी

भूमि भार वहन क्षमता	भार वहन क्षमता की श्रेणी	विकासखण्डों की संख्या	विकासखण्ड का नाम
500 से 550	निम्नतम	1	चकरनगर
551 से 600	निम्न	5	महेवा, औरैया, ताखा, जसवन्तनगर, अजीतमल
601 से 650	मध्यम	1	बढ़पुरा
651 से 700	उच्च	6	अछल्दा, विधूना, सहार, एरवाकटरा, भाग्यनगर, बसरेहर
701 से 750	उच्चतम	1	भरथना

तालिका 5.9 से स्पष्ट है कि सर्वोच्च भूमि भार वहन क्षमता के स्तर पर केवल एक विकासखण्ड भरथना है, जबकि उच्च स्तर को प्राप्त करने वाले विकासखण्डों की संख्या 6 है। 5 विकासखण्ड जिनमें महेवा, औरैया, ताखा, जसवन्तनगर तथा अजीतमल है। स्पष्ट है कि अधिकांश विकासखण्ड निम्न और उच्च स्तर को प्राप्त कर रहे है। अति निम्न स्तर पर चकरनगर, मध्यम स्तर पर बढ़पुरा तथा सर्वोच्च स्तर पर भरथना स्थिति है।

सन्दर्भ ग्रन्थ

1. तिवारी पी0 डी0 "पेटर्न ऑफ एग्रीकल्चर प्रोडक्शन, अबेबिलटी एण्ड न्यूट्रीशन इन मध्य प्रदेश" यू0 बी0 बी0 पी0, वाल्यूम 23, नम्बर 2.
2. सिंह एस0 पी0 (1987) "पावर्टी फूड एण्ड न्यूट्रीशन इन इण्डिया" पबलिस्ड इन 1991, चुग पब्लिकेशन, इलाहाबाद।
3. सिंह जसवीर (1976) "एन एग्रीकल्चरल ज्योग्राफी ऑफ हरियाणा" कुरुक्षेत्र पी0 पी0 254 एण्ड 313-320.

अध्याय - षष्ठम्

अध्याय-षष्टम्
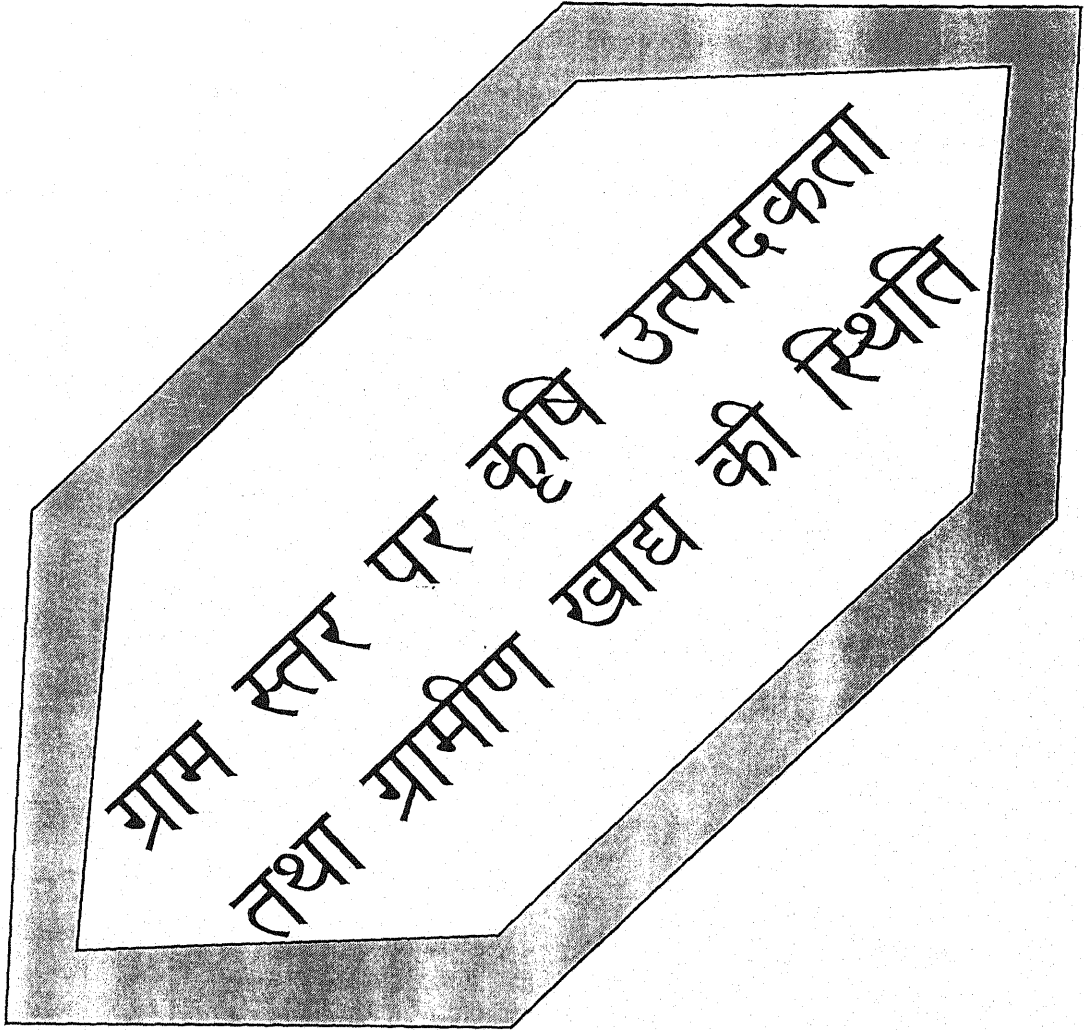
ग्राम्य स्तर पर कृषि उत्पादकता तथा ग्रामीण खाद्य की स्थिति

प्रतिचयित ग्रामों का कृषि प्रारूप एवं पोषण स्तरः

किसी देश अथवा प्रदेश के फसलों के प्रतिरूप में परिवर्तन की सम्भावना के विषय में दो मत हैं। कुछ विद्वानों का मत है कि फसलों के प्रतिरूप में परिवर्तन नहीं किया जा सकता जबकि दूसरे विद्वान यह मानते हैं कि सुविचारित नीति के सहारे इसे बदला जा सकता है। प्रो0 बसु के0 डी0 ने यह मत व्यक्त किया कि परम्पराबद्ध तथा ज्ञान के अत्यन्त निम्न स्तर वाले देश के किसान प्रयोग करने को उद्यत नहीं होते हैं। वे प्रत्येक बात को विरक्त और भाग्यवाद की भावना से स्वीकार करते हैं। उनके लिये कृषि वाणिज्य व्यापार की वस्तु न होकर जीवन की एक प्रणाली है। एक ऐसे कृषि प्रधान समाज में जिसके सदस्य परम्पराबद्ध और अशिक्षित हैं, फसल में परिवर्तन की अधिक सम्भावना नहीं रहती। अब इस मत को सही नहीं समझा जाता है, जैसा कि पंजाब में प्रतिरूप परिवर्तन से यह स्पष्ट हो गया है। अब यह बात अधिकतर विद्वानों द्वारा स्वीकार कर ली गई है कि भारत जैसे देश में भी फसल प्रतिरूप बदला जा सकता है और इसे बदलना चाहिये। फसलों के प्रतिरूप को निर्धारित करने वाले बहुत से कारक होते हैं। भौतिक, तकनीकी, आर्थिक, सामाजिक, प्रशासनिक और यहां तक की राजनैतिक भी। इनमें आर्थिक तत्वों का महत्व सबसे अधिक है।

1. पछायगांवः

विकासखण्ड बढ़पुरा के अन्तर्गत ग्राम पछायगांव भौगोलिक दृष्टि से 27014' उत्तरी तथा 79012' पूर्व में इटावा से वाह्य मार्ग पर जनपद मुख्यालय से दक्षिण पश्चिम में लगभग 25 किलोमीटर दूर स्थित है। इस ग्राम के उत्तर में लगभग 11 किलोमीटर की दूरी पर यमुना नदी एवं लगभग 3 किलोमीटर की दूरी पर चम्बल नदी बहती है। चम्बल नदी के निकट स्थित होने के कारण यहां ऊँची-नीची भूमि पायी जाती है। ग्राम के पश्चिम एवं दक्षिण पश्चिम में निकट ही चम्बल का बीहड़ प्रदेश स्थित है। यहां की भूमि उपजाऊ है। सिंचाई के साधनों की पर्याप्त व्यवस्था न होने

के कारण कृषि में मोटे अनाज विशेषकर बाजरा एवं दलहनी फसलें तथा रबी की फसल में गेहूं, लाही तथा चना की कृषि का विशेष महत्व है। जिन स्थान पर नलकूप द्वारा सिंचाई के साधनों की व्यवस्था है, वहां पर गेहूं मुख्य रूप से उगाया जाता है। ग्राम के दक्षिण एवं दक्षिण पश्चिम में वर्षा पर आधारित कृषि की जाती है जबकि उत्तर में नलकूप की सिंचाई द्वारा गेहूं, लाही आदि फसलें उगाई जाती हैं।

शस्य भूमि उपयोगः

ग्राम पछायगांव में वर्ष की दो ही प्रमुख फसलें खरीफ तथा रबी की फसलें ही उगाई जाती हैं। जायद की फसलें अधिकांश चम्बल के किनारे जिसे क्षेत्रीय भाषा में कछार कहा जाता है, में उगाई जाती हैं। जिन कृषकों के पास अपने निजी सिंचाई के साधन सुलभ हैं, वे ही आधुनिक कृषि तकनीकी का अत्यन्त सीमित प्रयोग कर पा रहे हैं। ग्राम के शस्य भूमि उपयोग को सारणी क्रमांक 6.1 में दर्शाया जा रहा है।

सारणी क्रमांक 6.1: पछायगांव ग्राम की शस्य भूमि उपयोग

मद	क्षेत्रफल (हेक्टेअर)	प्रतिशत
1. प्रतिवेदित क्षेत्रफल	384	-
2. शुद्ध बोया गया क्षेत्रफल	272	70.83
3. एक से अधिक बार बोया गया क्षेत्रफल	74	27.21
4. सकल बोया गया क्षेत्र	346	127.21
5. शुद्ध सिंचित क्षेत्र	103	37.87
6. सकल सिंचित क्षेत्र	120	34.68
7. रबी का क्षेत्र	192	55.48
8. खरीफ का क्षेत्र	150	43.35
9. जायद का क्षेत्र	4	1.17

सारणी 6.1 पछायगांव के शस्य भूमि उपयोग को दर्शा रही है। सिंचाई की सुविधाओं के अभाव के कारण एक से अधिक बार बोई गई फसलों का प्रतिशत भी केवल 27.21 प्रतिशत है। जिससे स्पष्ट होता है कि यदि सिंचाई की सुविधायें और अधिक उपलब्ध हों तो कृषि भूमि का और अधिक अच्छा उपयोग किया जा सकता है। इस ग्राम में कृषि के लिए कुल उपलब्ध भूमि में से मात्र 37.87 प्रतिशत भूमि को ही सिंचन सुविधायें उपलब्ध हैं। यदि फसलवार विचार करें तो 34.68 प्रतिशत फसलों को ही सिंचाई की सुविधायें प्राप्त हैं। सकल बोए गए क्षेत्र में से मात्र 43.35 प्रतिशत भूमि पर खरीफ की फसलें उगाई जा रही हैं। जिसमें बाजरा फसल की प्रधानता है, जबकि 55.48 प्रतिशत क्षेत्रफल रबी की फसलें उगाई जा रही हैं। जायद का क्षेत्र 1.17 प्रतिशत है। जायद मौसम में सब्जियों, खीरा, ककड़ी, खरबूजा, तरबूज की प्रधानता है। जो कि अधिकांश चम्बल नदी की घाटी में उगाई जाती हैं।

सारणी क्रमांक 6.2ः विभिन्न फसलों के अन्तर्गत क्षेत्र का वितरण.

फसल का नाम	क्षेत्रफल(हे0)	प्रतिशत (सकल बोए गए क्षेत्र से)	प्रतिशत
खरीफ की फसलें	150	43.35	
1. धान	12	43.35	8.00
2. ज्वार	08	2.31	5.33
3. बाजरा	97	--	64.67
4. मक्का	08	2.31	5.33
5. अरहर	20	28.03	13.33
6. अन्य	05	1.45	3.33
रबी की फसलें	192	55.48	

1. गेहूं	57	16.47	29.69
2. जौ	27	7.80	14.06
3. चना	40	11.56	20.83
4. मटर	02	0.58	1.04
5. लाही	47	13.58	24.48
6. आलू	09	2.60	4.69
7. गन्ना	06	1.73	3.12
8. अन्य	04	1.16	2.08
जायद की फसलें	4	1.17	
योग		100	

तालिका क्रमांक 6.2 विभिन्न फसलों के अन्तर्गत बोए जानेवाले क्षेत्रफल का विश्लेषण प्रस्तुत कर रही है। ग्राम पछायगांव में खरीफ फसल का क्षेत्रफल कुल 43.35 प्रतिशत है और रबी फसल का क्षेत्रफल 55.48 प्रतिशत है। जायद फसलों का क्षेत्र अल्पल्य 1.17 प्रतिशत ही है। यदि सम्पूर्ण वर्ष के फसल वितरण को देखें तो वर्षभर में बाजरा, गेहूं, लाही केवल तीन फसलें ही लगभग 55 प्रतिशत पर हिस्सेदारी कर रही हैं। जिसका अर्थ है कि इन तीनों फसलों का पछायगांव ग्राम में प्रभुत्व है, जिसमें बाजरा की फसल अकेले लगभग 28 प्रतिशत की हिस्सेदारी कर रही है। चना की फसल लगभग 11 प्रतिशत क्षेत्र पर उगाई जाती है तथा गेहूं लगभग 16 प्रतिशत उगाया जाता है।

खरीफ के मौसम में इस ग्राम में पांच फसलें ही प्रमुख रूप से उगाई जाती हैं। जिसमें बाजरा फसल 64 प्रतिशत से अधिक क्षेत्र पर उगाई जाती है। इससे यह स्पष्ट होता है कि पछायगांव ग्राम की भूमि ढालू है जो कि पानी को एक स्थान पर इकट्ठा नहीं होने देती है, जिसके कारण बाजरा फसल के उत्पादन के लिए परिस्थितियां अनुकूल हैं, क्योंकि जून से अक्टूबर तक अधिक वर्षा होने के कारण तथा वर्षा का पानी भूमि के ढालू होने के कारण खेतों में एकत्रित भी नहीं हो पाता, जिसके कारण बाजरे की फसल

सारणी क्रमांकः 6.3- भूमि पर जनसंख्या का भार (हेक्टेअर में)

कुल प्रतिवेदित क्षेत्र	कृषि के लिए उपलब्ध क्षेत्र	एक से अधिकबार बोया गया क्षेत्र	सकल बोया गया क्षेत्र	शुद्ध सिंचित क्षेत्र	सकल सिंचित क्षेत्र	रबी का क्षेत्र	खरीफ का क्षेत्र	जायद का क्षेत्र
प्रति व्यक्ति ०.२०३६	०.१४४२	०.०३६२	०.१८३४	०.०५४६	०.०६३६	०.१०१८	०.०७६५	०.००२१

अधिक बोई जाती है। क्योंकि धान के लिए चिकनी मिट्टी जो कि पानी को अधिक धारण करने की क्षमता रखती है, में ही सफलतापूर्वक उगाई जाती है। अरहर भी एक महत्वपूर्ण फसल के रूप में अपना एक स्थान रखती है, परन्तु अब देशी अरहर के स्थान पर शीघ्र पकने वाली अरहर बोई जाती है। जिसके कटने के बाद गेहूं, जौ तथा चना की फसल सफलतापूर्वक प्राप्त की जाती है। रबी मौसम की फसलों में यद्यपि गेहूं का महत्व अन्य क्षेत्रों की भांति इस ग्राम में नहीं है परन्तु गेहूं फिर भी अन्य फसलों की अपेक्षा प्रथम स्थान पर है, परन्तु जिन कृषकों के पास निजी सिंचाई के साधन हैं वे तो उन्नति किस्म का गेहूं बोकर अधिक उपज प्राप्त कर पाते हैं, अन्य कृषक अपनी खाद्यान्न आवश्यकता के लिए तथा जानवरों के लिए चारे की व्यवस्था हेतु देशी अरहर को ही अधिक प्राथमिकता देते हैं क्योंकि उन्नति किस्म का गेहूं बोनी जाति का होने के कारण चारे का कम अनुपात रहता है। चारे की आवश्यकता को पूरा करने के लिए कुछ कृषकों द्वारा जौ की कृषि को भी प्राथमिकता दी जाती है। यह फसल कम पानी तथा कम उर्वरक पाकर भी उपज अच्छी देती है। कम लागत पर अच्छी उपज के कारण यह फसल 14.06 प्रतिशत क्षेत्र पर उगाई जाती है। इस ग्राम में तिलहन का एक महत्वपूर्ण स्थान है। तिलहन उत्पादन से कृषकों की न केवल तेल की आवश्यकता ही पूरी होती है अपितु इस ग्राम के लिए यह फसल नकदी भी प्रदान करती है। लाही के उत्पादन में भी कम लागत आती है परन्तु प्रतिफल अच्छा आता है। इस कारण इस फसल का इस ग्राम के लिए द्वितीय महत्वपूर्ण स्थान है।

चने की फसल 20.83 प्रतिशत क्षेत्र में अपनी उपस्थिति दर्शा रही है, यह फसल सामान्यतः बाजरे की फसल लेने के बाद खाली हुए खेतों में सफलतापूर्वक उगाई जाती है। यदि इस फसल को प्राकृतिक अथवा कृत्रिम एक पानी फसल में फूल आने से पहले प्राप्त हो जाता है तो यह फसल भी कृषकों को अच्छी उपज देती है और नकदी फसल का स्थान ले लेती है। इस मौसम में आलू की फसल स्वंय उपभोग के लिए की जाती है जो वर्ष भर कृषकों को सब्जी के काम आता है। गन्ने की फसल भी अधिकांश स्वंय के लिए उगाई जाती है, गन्ने से गुड़ बनाकर उपभोग किया जाता है। जायद की फसलों में कोई फसल अधिक महत्व की नहीं उगाई जाती है।

जायद फसलों के कुछ उत्पादन को यहां से लगभग 11 किलोमीटर दूर स्थित जनपद मुख्यालय भी भेजा जाता है। जहां पर इन फसलों की कीमत अधिक प्राप्त हो जाती है। परन्तु जनपद मुख्यालय तक उत्पादन ले जाने में कृषकों को अनेक कठिनाइयों का समाना करना पड़ता है जिसमें अधिक परिवहन व्यय मण्डी में अनेक अनाधिकृत कटौतियां तथा कम तौल आदि प्रमुख हैं, इसलिए कृषकों द्वारा स्थानीय बिक्री ही उपयुक्त लगती है, केवल बचे हुए माल को ही मण्डी भेजा जाता है।

भूमि पर जनसंख्या का भार:

सारणी क्रमांक 6.3 पछायगांव ग्राम में जनसंख्या के भार को चित्रित कर रही है। इस ग्राम में कृषि के लिये प्रतिव्यक्ति उपलब्ध भूमि 0.1442 हेक्टेअर है जबकि प्रति व्यक्ति उपलब्ध इस कृषि भूमि को खरीफ फसलों के लिए मात्र 0.0795 हेक्टेअर उपयोग में लाई जा रही है जबकि रबी फसलों के लिए यह मात्रा थोड़ा बढ़कर 0.1018 हेक्टेअर हो जाती है और जायद फसलों के लिए मात्र 0.0021 हेक्टेअर प्रति व्यक्ति उपयोग में लाई जा रही है। एक से अधिक बार बोया गया क्षेत्र अत्यन्त निम्न 0.0392 हेक्टेअर जो इस तथ्य को स्पष्ट कर रहा है कि इस ग्राम में बहुफसलीय क्षेत्र अत्यन्त निम्न है। तीनों फसलों रबी, खरीफ और जायद में पछायगांव ग्राम की जनसंख्या के जीवनयापन के लिए प्रति व्यक्ति 0.1834 हेक्टेअर भूमि उपलब्ध है।

पछायगांव ग्राम की जनसंख्या की व्यवसायिक संरचना के आधार पर कृषि भूमि पर पड़ने वाले भार के महत्व को जाना जा सकता है। व्यवसायिक संरचना के आधार पर इस ग्राम में 82 प्रतिशत जनसंख्या आधारभूत रूप से कृषि कार्यो में संलग्न है और अपने समस्त दायित्व कृषि उपज से ही पूरी करती है, जबकि 14 प्रतिशत से अधिक जनसंख्या द्वितीय स्तर की ग्रामीण जनसंख्या है जो कृषि कार्यो के अतिरिक्त कुछ अन्य व्यवसायिक कार्य सम्पन्न कर लेती है। मात्र 28 लोग इस प्रकार के हैं जो ग्राम से बाहर रहकर अपने जीवनयापन के साधन जुटाते हैं। इनमें से आठ व्यक्ति अकेले बाहर रहते हैं तथा 11 लोग सपरिवार अन्य स्थानों पर रहकर नौकरी पेशा में लगे हुए हैं।

विभिन्न फसलों का प्रति हेक्टेअर औसत उत्पादन:

पछायगांव ग्राम का प्रति हेक्टेअर औसत उत्पादन सारणी क्रमांक 6.4 में दर्शाया जा रहा है।

सारणी क्रमांक 6.4: विभिन्न फसलों का औसत उत्पादन प्रति हेक्टेअर (किलोग्राम)

फसल		उत्पादन	जनपद का उत्पादन	जनपदीय स्तर ये अधिक / कम (प्रतिशत में)
1.	धान	1912	1925	-0.68
2.	ज्वार	1053	1013	3.99
3.	बाजरा	1520	1504	1.58
4.	मक्का	1235	1324	-6.22
5.	गेहूं	2284	2495	-8.46
6.	जौ	1994	1899	5.002
7.	अरहर	1398	1285	8.79
8.	चना	1128	1255	-10.12
9.	मटर	1502	1612	-6.82
10.	उर्द/मूंग	425	412	3.16
11.	लाही	1342	1222	9.82
12.	आलू	20311	18640	8.96
13.	गन्ना	32592	33652	-3.15

सारणी क्रमांक 6.4 ग्राम पछायगांव में उत्पादित होनेवाली प्रमुख फसलों के औसत उत्पादन का चित्रण कर रही है। जिनमें ग्राम की विभिन्न फसलों में जनपदीय स्तर से ज्वार 3.99 प्रतिशत, बाजरा 1.58 प्रतिशत, जौ 5.002 प्रतिशत, अरहर 0.79 प्रतिशत, उर्द/मूंग 3.16 प्रतिशत, लाही 9.82 प्रतिशत, तथा आलू 8.96 प्रतिशत अधिक उत्पादन हो रहा है।

सारिणी क्रमांक 6.5: विभिन्न खाद्य पदार्थों की प्रति व्यक्ति प्रतिदिन उपलब्ध मात्रा तथा उससे प्राप्त पोषक तत्व (ग्राम पछायगांव)

खाद्य पदार्थ	मात्रा ग्राम	ऊर्जा कैलोरी	प्रोटीन ग्राम	वसा ग्राम	खनिज ग्राम	फाइबर ग्राम	कार्बोहाइड्रेट्स ग्राम	कैल्सियम मि0ग्रा0	फास्फोरस मि0ग्रा0	लौह मि0ग्रा0	कैरोटिन म्यू ग्रा0	थियामिन मि0ग्रा0	राइबोफ्लेविन मि0ग्रा0	नियासिन मि0ग्रा0	विटामिन सी
1. चावल	22.26	76.8	1.67	0.22	0.20	0.13	17.07	2.23	42.29	0.71	0.45	0.05	0.04	0.87	0
2. ज्वार	8.47	29.56	0.88	0.16	0.14	0.14	6.15	2.12	18.80	0.49	3.98	0.03	0.01	0.26	0
3. बाजरा	190.38	687.27	22.08	9.52	4.38	2.28	128.51	79.96	563.52	9.52	251.30	0.63	0.48	4.38	0
4. मक्का	15.27	53.14	1.69	0.55	0.23	0.41	10.11	1.53	53.14	0.31	13.74	0.06	0.02	0.27	0
5. गेहूं	182.64	631.93	21.55	2.74	2.74	2.19	130.04	74.88	558.88	8.95	116.89	0.82	0.31	10.05	0
6. जौ	52.22	175.46	6.01	0.68	0.63	2.04	36.35	13.58	112.27	1.57	5.22	0.25	0.10	2.82	0
7. अरहर	21.46	71.89	4.79	0.36	0.75	0.32	12.36	15.67	65.24	1.24	28.33	0.10	0.04	0.62	0
8. चना	39.32	146.27	8.18	2.20	1.06	0.47	23.95	50.72	130.15	3.58	50.72	0.15	0.07	1.02	0
9. मटर	2.48	7.81	0.49	0.03	0.05	0.11	1.40	1.86	7.39	0.13	0.97	0.01	0	0.08	0
10. उर्द/मूंग	1.09	3.79	0.24	0.01	0.03	0.06	0.62	3.13	3.39	0.09	0.77	0	0	0.02	0.01
11. लाही/सरसों	25.55	229.95	0	25.55	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0
12. आलू	171.26	166.12	2.74	0.17	1.03	0.69	38.70	17.13	68.50	1.20	41.10	0.17	0.02	2.06	29.11
13. गुड़/गन्ना	32.57	124.74	0.13	0.03	0.20	0	30.94	26.06	13.03	3.71	54.72	0.01	0.01	0.16	0
योग	764.97	2404.73	70.45	42.22	11.44	8.84	436.20	288.87	1636.60	31.50	568.19	2.28	1.10	22.61	29.12

इसके विपरीत धान 0.68 प्रतिशत, मक्का 6.22 प्रतिशत, चना 10.12 प्रतिशत, मटर 6.82 प्रतिशत तथा गन्ना का 3.15 प्रतिशत कम उत्पादन हो रहा है। सारणी इस तथ्य को भी स्पष्ट कर रही है कि जिन फसलों को अधिक सुविधाओं की आवश्यकता है, उनका उत्पादन जनपदीय स्तर की तुलना में कम हो रहा है और उन फसलों का जिनको सिंचाई की कम आवश्यकता होती है, उनका उत्पादन जनपद के औसत उत्पादन से अधिक हो रहा है। आलू का उत्पादन छोटे पैमाने पर होने के कारण औसत उत्पादन अधिक है।

सारणी 6.5 प्रतिव्यक्ति प्रतिदिन खाद्यान्न उपलब्धता तथा उनसे प्राप्त होनवाले पोषक तत्वों का विवरण दे रही है। जिसके अनुसार पछायगांव ग्राम में प्रतिदिन प्रतिव्यक्ति अन्न की मात्रा 471.51 ग्राम है। जबकि दालों की मात्रा मात्र 64.35 ग्राम अन्य शब्दों में यदि कृषि उत्पादन को ही लोगों के भोजन का आधार माना जाये तो अन्नों की भागेदारी 61.66 प्रतिशत तथा 8.41 प्रतिशत है। तेल, आलू तथा गुड़ की भागेदारी 29.99 प्रतिशत है। प्रतिव्यक्ति खाद्य पदार्थों की औसत उपलब्धता के आधार पर प्रत्येक गांव का आहार संतुलन पत्रक तैयार किया गया है जिसके अनुसार इस ग्राम में खरीफ के खाद्यान्नों से प्राप्त होनेवाली प्रति व्यक्ति ऊर्जा की मात्रा 35.24 प्रतिशत है तथा रबी के खाद्यान्नों में यह मात्रा 39.98 प्रतिशत है। अन्य फसलों लाही, आलू, गन्ने की भागेदारी 21.66 प्रतिशत है। खाद्यान्नों मे अन्न का हिस्सा 65.91 प्रतिशत तथा दालों का हिस्सा 9.55 प्रतिशत हुआ। अन्नोत्पादन की दृष्टि से बाजरा 43.36 प्रतिशत खाद्यान्न आवश्यकता को पूरा करने में सबसे महत्वपूर्ण फसल है। जबकि गेहूं की भागेदारी 39.87 प्रतिशत है और यह द्वितीय महत्वपूर्ण फसल है। ये दोनों फसलें लोगों की लगभग 83.23 प्रतिशत आवश्यकता को पूर्ण करती है। दालों में चना सबसे महत्वपूर्ण फसल है।

2. ग्राम बादरीपूठ

बसरेहर विकासखण्ड के अर्न्तगत ग्राम बादरीपूठ इटावा, फर्रुखाबाद मार्ग पर सड़क से लगभग 1 किलोमीटर पश्चिम में स्थित है। यहां से विकासखण्ड कार्यालय मात्र 1 किलोमीटर की दूरी पर है। यह गांव सड़क से खरंजा द्वारा जुड़ा हुआ है। यहाँ की भूमि समतल उपजाऊ एवं कृषि कार्य के लिये बहुत ही उपयुक्त है वर्षा अधिकतर ग्रीष्मकाल में जुलाई अगस्त तथा सितम्बर के महीने में होती है रबी की फसल को सिंचाई की आवश्यकता पड़ती है। जिसे गांव के निकट निकलने वाले बम्बा निजी नलकूप अदि से पूरा कर लिया जाता है। खरीफ की फसल में मक्का, बाजरा तथा धान यहां की प्रमुख फसले है जबकि रबी की फसल में गेहूँ, लाही तथा आलू की फसल का विशेष महत्व है। यहां की कृषि में आधुनिक तकनीकि का काफी प्रयोग होता है। उत्तम प्रकार के बीजों, रासायनिक खादों, कीटनाशक दवाओं का प्रयोग पर्याप्त मात्रा में होता है। गांव के निकट ही बसरेहर का कस्बा स्थित है जहां से दैनिक उपयोग की वस्तुयें आसानी से प्राप्त हो जाती है। इटावा शहर से मात्र 10 किलोमीटर दूर स्थित होने के कारण यहां की कृषि में जायाद की फसलों में तरबूज, खरबूजा एवं साग सब्जी की फसलों का भी प्रचलन है जिससें यहां के किसानों को पर्याप्त मात्रा में आर्थिक सहयोग प्राप्त होता है।

शस्य भूमि उपयोगः

ग्राम बादरीपूठ में भी खरीफ तथा रबी मौसम की फसलों की ही प्रधानता है। जायद की फसलें भी सीमित मात्रा में उगाई जाती है। इस ग्राम में शस्य भूमि उपयोग को सारणी क्रमांक 6.6 में दर्शाया गया है।

सारणी 6.6 बादरीपूठ ग्राम का शस्य भूमि उपयोग

	क्षेत्रफल (हेक्टेअर)	प्रतिशत
1. प्रतिवेदित क्षेत्र	405	-
2. शुद्ध बोया गया क्षेत्र	325	80.24
3. एक से अधिक बार बोया गया क्षेत्र	213	65.53
4. सकल बोया गया क्षेत्र	538	165.53
5. शुद्ध सिंचित क्षेत्र	312	96.00

6. सकल सिंचित क्षेत्र	476	88.48
7. रबी का क्षेत्र	278	51.67
8. खरीफ का क्षेत्र	247	45.91
9. जायद का क्षेत्र	13	2.42

सारणी 6.6 बादरीपूठ ग्राम में शस्य भूमि उपयोग का चित्र प्रस्तुत कर रही है। जिसके कुल प्रतिवेदित क्षेत्रफल के 80.24 प्रतिशत क्षेत्र पर विभिन्न कृषि फसलें उगाई जाती है। इस कृषि क्षेत्र के 65.53 क्षेत्र पर एक या एक से अधिक बार फसलोत्पादन किया जा रहा है। शुद्ध बोये गये क्षेत्र के 96.00 प्रतिशत क्षेत्र की सिचाई की सुविधायें प्राप्त है। परन्तु फिर भी केवल 65.53 प्रतिशत क्षेत्र पर एक से अधिक फसलें उगाई जाती है जिसका अर्थ है लगभग 30 प्रतिशत कृषि क्षेत्र को दो फसली नहीं बनाया जा सका है। जबकि इस क्षेत्र को सिचाई की सुविधायें प्राप्त है जिसका मूल कारण है नहरों में अनियमित जल की आपूर्ति । साथ ही राजकीय नलकूप विद्युत चलित होने के कारण विद्युत की अनियमित आपूर्ति भी इस भूमि को दो फसली बनाने में बाधा उत्पन्न करती है। यदि विद्युत आपूर्ति नियमित हो तो इस भूमि के एक बड़े भाग से दो या दो से अधिक फसलें प्राप्त की जा सकती है। शुद्ध बोये गये क्षेत्र में से लगभग 84 प्रतिशत क्षेत्र पर रबी की विभिन्न फसलें उगाई जाती है जबकि खरीफ की फसलें लगभग 75 प्रतिशत क्षेत्र पर बोई जाती है। यदि कुल क्षेत्र पर विचार करे तो 51.67 प्रतिशत क्षेत्रफल पर रबी की फसलें 45.91 प्रतिशत क्षेत्र पर खरीफ की फसलें तथा जायद की फसलें 2.42 प्रतिशत क्षेत्र पर उगाई जाती है।

तालिका 6.7 ग्राम बादरीपूठ के फसल विवरण को दर्शा रही है। जिसमें लगभग 71 प्रतिशत कुल फसल क्षेत्र पर धान तथा गेहूँ का विभिन्न फसलों के अन्तर्गत क्षेत्रफल का वितरण का वर्चस्व दिखाई पड़ रहा है।

तालिका क्रमांक 6.7: फसल वितरण

फसल	क्षेत्रफल (हेक्टेअर)	प्रतिशत	प्रतिशत
अ. खरीफ की फसलें	247	45.91	
1. धान	159	29.55	63.37
2. ज्वार	04	0.74	1.62
3. वाजरा	26	4.83	10.53
4. मक्का	36	6.69	14.57
5. अरहर	14	2.60	5.67
6.अन्य	08	1.49	3.24
ब. रबी की फसलें	278	51.67	
1. गेहूँ	214	39.78	76.98
2. जौ	12	2.23	4.32
3. चना	12	2.23	4.32
4. मटर	04	0.74	1.44
5. लाही	09	1.67	3.24
6. आलू	22	4.09	7.91
7. गना	02	0.37	0.72
अन्य	03	0.56	1.07
स. जायद की फसलें	103	2.41	
योग		100	

खरीफ मौसम में बोई जाने वाली विभिन्न फसलों में धान अकेले 63.37 प्रतिशत क्षेत्र आधिपत्य स्थापित किये हुये है, मक्का 14.57 प्रतिशत क्षेत्र पर स्थापित होने के कारण द्वितीय स्थान पर है। तृतीय स्थान पर बाजरे का है जो 10.53 प्रतिशत क्षेत्र पर उगाई जाती है। सकल कृषि क्षेत्र की दृष्टि से मक्का 6.69 प्रतिशत तथा बाजरा 4.83 प्रतिशत क्षेत्र

पर अपनी उपस्थिति दर्शा रही है। खरीफ की फसल में धान का वर्चस्व इसलिये है एक तो इस ग्राम की मिट्टी चिकनी तथा मटियार दोमट है, दूसरे सिंचाई के साधनों के कारण यदि मानसून की बारिश धोखा दे जाये तो कृत्रिम सिचाई के द्वारा धान की फसल सरलता से प्राप्त की जा सकें । धान काटने के बाद इस भूमि पर गेहूँ का उत्पादन किया जा सकता है और यही कारण है कि रबी की फसल में गेहूँ का क्षेत्रफल तीन चौथाई से भी अधिक हो जाता है। यद्यपि जौ कम लागत पर उत्पन्न किया जा सकता है, परन्तु जौ का उत्पादन जानवरों के रातिब के लिये किया जाता है इसी प्रकार चना की भी वही स्थित है। जो ग्राम में जौ के उत्पादन की है। रबी के मौसम में गेहूँ 76.98 प्रतिशत क्षेत्र में उगाये जाने के कारण प्रथम स्थान पर है जबकि आलू मात्र 7.91 प्रतिशत क्षेत्र पर उगाया जाता है परन्तु कम भागेदारी होते हुये भी यह फसल द्वितीय स्थान पर है। तीसरे स्थान पर जौ तथा चना जो समान क्षेत्रफल में उगाई जा रही है।

जायद की फसलों में गर्मी की सब्जियाँ, खरबूजा, तरबूज, उर्द/मूंग प्रमुख फसलें है। गर्मी की सब्जियों में काशीफल, लौकी, भिण्डी, करेला, तोरई आदि प्रमुख सब्जियां है जो 13 हेक्टेअर क्षेत्रफल पर उगाई जाती है। सब्जियों के क्षेत्र में आशातीत वृद्धि हुई है जो नगरीय प्रभाव, आर्थिक महत्व, परिवहन तथा सिंचाई की सुविधाओं से सम्बन्धित है। यह ग्राम खरबूजे की खेती में अपना विशेष स्थान रखता है।

भूमि पर जनसंख्या का भारः

ग्राम बादरीपूठ में जनसंख्या के विवरण को सारणी क्रमांक 6.8 में दर्शाया गया है। जिसमें विभिन्न प्रकार के कृषि भूमि को को प्रति व्यक्ति उपलब्धता का विवरण दिया जा रहा है।

सारणी 6.8 में ग्राम बादरीपूठ में कृषि भूमि पर पड़ने वाले जनसंख्या के भार को दर्शा रही है। जिससे यह स्पष्ट हो रहा है कि ग्राम में प्रति व्यक्ति 0.1522 हेक्टेअर क्षेत्र कुल भूमि उपलब्ध है। जिससे कृषि फसलों के लिये प्रति व्यक्ति 0.1221 हेक्टेअर क्षेत्रफल उपलब्ध है। कृषि फसलों के लिये प्रति व्यक्ति उपलब्ध क्षेत्र पर रबी, खरीफ तथा जायद की फसलें बोई जाती है। इन तीनों मौसमों में विभिन्न फसलों के लिये उपयोग की

सारणी क्रमांकः 6.8- भूमि पर जनसंख्या का भार (हेक्टेअर में)

	कुल प्रतिवेदित क्षेत्र	कृषि के लिए उपलब्ध क्षेत्र	एक से अधिकबार बोया गया क्षेत्र	सकल बोया गया क्षेत्र	शुद्ध सिंचित क्षेत्र	सकल सिंचित क्षेत्र	रबी का क्षेत्र	खरीफ का क्षेत्र	जायद का क्षेत्र
प्रति व्यक्ति	०.१५२२	०.१२२१	०.०८००	०.२०२२	०.११७२	०.१७८६	०.१०४५	०.०६२८	०.००४०

जाने वाली भूमि प्रति व्यक्ति 0.2022 हेक्टेअर है जिसमें 0.0928 हेक्टेअर भूमि पर खरीफ की फसलें तथा 0.1045 हेक्टेअर भूमि पर रबी की फसलें तथा मात्र 0.0049 हेक्टेअर भूमि पर जायद की फसले उगाई जाती है। सिंचित क्षेत्रफल की दृष्टि से देखें तो प्रतिव्यक्ति 0.1789 हेक्टेअर क्षेत्र में 0.1172 हेक्टेअर क्षेत्र को सिंचन सुविधायें प्राप्त है परन्तु फिर भी खरीफ की फसलों के लिये प्रतिव्यक्ति 0.0928 हेक्टेअर क्षेत्र पर ही विभिन्न फसलें उगाई जाती है जबकि सिंचन सुविधाओं को देखते हुये 0.1789 हेक्टेअर क्षेत्रफल खरीफ की फसलों के अन्तरगत प्रयोग में लाया जा सकता है इसी प्रकार रबी की फसलों के लिये भी इतना ही क्षेत्रफल उपयोग किया जा सकता है जिसमें खाद्यान्न फसलें उगाकर पोषण स्तर को बढ़ाया जा सकता है या व्यवसायिक क्षेत्रफल में वृद्धि करके आर्थिक स्तर को और ऊंचा उठाया जा सकता है।

ग्राम बादरीपूठ की कुल जनसंख्या 2661 है जिसमें 78 प्रतिशत से अधिक जनसंख्या प्राथमिक रूप से कृषि पर ही आश्रित है तथा 18 प्रतिशत जनसंख्या कृषि तथा उसके सहायक उद्योग धन्धे में संलग्न होकर अपने जीवनयापन के लिये अतिरिक्त आय प्राप्त कर लेते है और 4 प्रतिशत से भी कम लोग गाँव से बाहर रहकर नौकरी करते हैं इनमें से 2 प्रतिशत से भी अधिक लोग एक हजार रूपये से कम मासिक वेतन पर नौकरी करते है। तथा मात्र 20 लोग ही एक हजार रूपये से अधिक मासिक वेतन प्राप्त करते है। गाँव की लगभग सभी जनशक्ति कृषि पर ही आश्रित है।

विभिन्न फसलों का औसत उत्पादन :

बादरीपूठ ग्राम में उत्पन्न होने वाली फसलों के औसत उत्पादन को सारणी 6.9 में प्रस्तुत किया जा रहा है।

सारणी 6.9 बादरीपूठ ग्राम की कृषि फसलों की औसत उत्पादन व्यक्त कर रही है। जिसमें यह ग्राम जनपदीय स्तर से बाजरा के उत्पादन में 1.30 प्रतिशत, मक्का 0.21 प्रतिशत गेहूं, में 3.58 प्रतिशत मटर में 5.00 प्रतिशत, उर्द/मूंग के उत्पादन में 13.28 प्रतिशत तथा आलू के उत्पादन में 0.27 प्रतिशत बढ़त प्राप्त किये हुये हैं। जबकि धान के उत्पादन में 4.44 प्रतिशत, ज्वार 7.66 प्रतिशत, जौ 1.54 प्रतिशत अरहर में

0.30 प्रतिशत चना 2.47 प्रतिशत लाही 11.01 प्रतिशत तथा गन्ना में 2.44 प्रतिशत पिछड़ रहा है। इस प्रकार यह गाँव अन्नोत्पादन में बाजरा, मक्का तथा गेहूँ के उत्पादन में जनपदीय स्तर से श्रेष्ठ है जबकि धान, बाजरा तथा जौ के उत्पादन में उस स्तर से नीचे है दलहन के उत्पादन में उर्द/मूंग में 13.28 प्रतिशत तथा मटर के उत्पादन में अधिक उत्पादन प्राप्त कर रहा है जबकि अरहर में 0.30 प्रतिशत तथा चने के उत्पादन में 2.47 प्रतिशत पिछड़ रहा है। तिलहन तथा गन्ने के उत्पादन में क्रमशः 11.01 प्रतिशत तथा 2.44 प्रतिशत पीछे है। जबकि आलू के उत्पादन में मात्र 0.27 प्रतिशत श्रेष्ठता प्राप्त किये हुये है।

सारणी क्रमांक 6.9: विभिन्न फसलों का औसत उत्पादन
(प्रति हेक्टेअर किलोग्राम में)

फसल	उत्पादन	जनपद का उत्पादन	जनपदीय स्तर से अधिक/ कम प्रतिशत में
1. चना	1892	1980	-4.44
2. ज्वार	953	1032	-7.66
3. बाजरा	1554	1534	1.30
4. मक्का	1385	1382	0.21
5. गेहूँ	2602	2512	3.58
6. जौ	1886	1915	-1.54
7. अरहर	1342	1346	0.30
8. चना	1262	1294	-2.47
9. मटर	1743	1660	5.00
10. उर्द/मूंग	546	482	13.28
11. लाही	1116	1254	-11.01
12. आलू	18753	18702	0.27
13. गन्ना	32855	33708	-2.44

विभिन्न फसलों से प्राप्त उत्पादन से ग्राम के लोगों को प्रतिव्यक्ति कितने-कितने पोषक तत्व प्राप्त है, की गणना सारणी 6.10 में दर्शायी गयी है। ग्राम बादरीपूठ में विभिन्न खाद्यान्न फसलों से प्रतिव्यक्ति 1158.8 ग्राम खाद्य सामग्री उपलब्ध है जो औसत से अधिक है इसमें खरीफ की फसलों से 287.85 प्रतिशत ग्राम, रबी की फसलों से 867.71 ग्राम तथा शेष अन्य फसलों से खाद्य पदार्थ प्राप्त होते है। पोषक तत्वों में ग्रामीणजनों

सारिणी क्रमांक 6.10: विभिन्न खाद्य पदार्थों की प्रति व्यक्ति प्रतिदिन उपलब्ध मात्रा तथा उससे प्राप्त पोषक तत्व (ग्राम बादरीपूठ)

खाद्य पदार्थ	मात्रा ग्राम	ऊर्जा कैलोरी	प्रोटीन ग्राम	वसा ग्राम	खनिज ग्राम	फाइबर ग्राम	कार्बोहाइड्रेट्स ग्राम	कैल्सियम मि0ग्रा0	फास्फोरस मि0ग्रा0	लौह मि0ग्रा0	कैरोटिन म्यू ग्रा0	थियामिन मि0ग्रा0	राइबोफ्लेविन मि0ग्रा0	नियासिन मि0ग्रा0	विटामिन सी
1. चावल	181.44	625.97	13.61	1.81	1.63	1.09	139.16	18.14	344.74	5.81	3.63	0.38	0.29	7.08	0
2. ज्वार	6.74	23.52	0.70	0.13	0.11	0.11	4.89	1.69	14.96	0.39	3.17	0.02	0.01	0.21	0
3. बाजरा	42.57	153.68	4.94	2.13	0.98	0.51	28.73	17.88	126.01	2.13	56.19	0.14	0.11	0.98	0
4. मक्का	41.48	144.35	4.60	1.49	0.62	1.12	27.46	4.15	144.35	0.83	37.33	0.17	0.04	0.75	0
5. गेहूं	507.64	1756.43	59.90	7.61	7.61	6.09	361.44	208.13	1553.38	24.87	324.89	2.28	0.86	27.92	0
6. जौ	17.22	57.86	1.98	0.22	0.21	0.67	11.99	4.48	37.02	0.52	1.72	0.08	0.03	0.93	0
7. अरहर	15.62	52.33	3.48	0.27	0.55	0.23	9.00	11.4	47.48	0.91	20.62	0.07	0.03	0.45	0
8. चना	11.54	42.93	2.40	0.65	0.31	0.14	7.03	14.89	38.20	1.05	14.89	0.04	0.02	0.30	0
9. मटर	7.26	22.87	1.43	0.08	0.16	0.33	4.10	5.45	21.63	0.37	2.83	0.03	0.01	0.25	0
10. उर्द/मूंग	3.28	11.41	0.72	0.02	0.10	0.17	1.88	9.41	10.20	0.28	2.33	0.01	0.01	0.05	0.03
11. लाही/सरसों	8.95	80.55	0	8.95	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0
12. आलू	302.66	293.58	4.84	0.30	1.82	1.21	68.40	30.27	121.06	2.12	72.64	0.03	0.03	3.63	51.45
13. गुड़/गन्ना	12.44	47.65	0.05	0.01	0.07	0	11.82	9.95	4.98	1.42	20.90	0	0	0.06	0
योग	1158.80	3313.13	98.65	23.67	14.17	11.67	675.90	335.84	2464.01	40.70	561.14	3.52	1.44	42.61	51.48

को 999.85 कैलोरी ऊर्जा खरीफ के खाद्यानों से प्राप्त हो रही है। जबकि 2301.9 कैलोरी ऊर्जा रबी फसलों से प्राप्त हो रही है। अन्न और दलहन को यदि अलग-अलग करके देखें तो अन्न से अधिक तथा दलहन से अत्यन्त निम्न ऊर्जा प्राप्त हो रही है। प्रतिव्यक्ति अन्न उपलब्धता की दृष्टि से गेहूँ और चावल की उपलब्धता 689.09 ग्राम है। आलू की प्रतिव्यक्ति उपलब्धता 25 प्रतिशत से भी अधिक है इन तीनो खाद्य पदार्थों की हिस्सेदारी 85 प्रतिशत से भी अधिक हो जाती है। स्वाभविक है कि ग्रामीणों के भोजन में इन तीनो खाद्य पदार्थों की अधिकता रहती है।

3. ग्राम - नन्दगंवा:

नन्दगंवा चकरनगर विकासखण्ड का एक अति महत्वपूर्ण गांव है। यह गांव बकेवर-चगरनगर सड़क मार्ग से 4 किलोमीटर पशिचम में स्थित है। यहां से चकरनगर विकासखण्ड लगभग 14 किलोमीटर की दूरी पर स्थित है। यमुना के किनारे स्थित होने के कारण गांव की भूमि अत्यन्त ऊँची-नीची पायी जाती है। ग्राम के पूर्व एवं दक्षिण में एक बड़ा नाला स्थित है जो वर्षाकाल में क्षेत्र का पानी यमुना नदी में डालता है। शेष समय यह नाला सूखा हुआ रहता है यहां सिंचाई के साधनों की पर्याप्त व्यवस्था नही है। यमुना के निकट स्थित कछारी मिट्टी में शुष्क कृषि होती है। गांव के उत्तर में गांव से लगभग 1 किलोमीटर उत्तर-पूर्व में उच्च एवं समतल भूमि स्थित है, जहां सरकारी नलकूपों द्वारा सिंचाई की व्यवस्था है। समतल और ऊपरी भागों में सिंचाई द्वारा रबी की फसलों का उत्पादन किया जाता है जबकि बीहड़ वाले क्षेत्र में मोटे अनाज उगाये जाते हैं। कछारी भूमि पर रबी की फसल का विशेष महत्व है। गांव से लगभग 8 किलोमीटर उत्तर में लखना कस्बा स्थित है जहां से कृषि से सम्बन्धित एवं घरेलू आवश्यक सामग्री खरीदने की सुविधा है।

शस्य भूमि उपयोग:

नन्दगंवा ग्राम में भी वर्ष में खरीफ, रबी तथा जायद फसलों में परम्परागत फसलें ही अधिकांश बोयी जाती है, जो ग्रामीण जनसंख्या की दैनिक आवश्यकता को पूरा करती है। इस ग्राम के शस्य भूमि उपयोग को सारणी क्रमांक 6.11 में दर्शाया जा रहा है।

सारणी क्रमांक 6.11: नन्दगंवा ग्राम की शस्य भूमि उपयोग

मद	क्षेत्रफल (हेक्टेअर)	प्रतिशत
1. प्रतिवेदित क्षेत्रफल	512	-
2. शुद्ध बोया गया क्षेत्रफल	330	64.45
3. एक से अधिक बार बोया गया क्षेत्रफल	179	52.12
4. सकल बोया गया क्षेत्र	502	152.12
5. शुद्ध सिंचित क्षेत्र	296	89.70
6. सकल सिंचित क्षेत्र	448	89.24

7. रबी का क्षेत्र	302	60.15
8. खरीफ का क्षेत्र	195	38.84
9. जायद का क्षेत्र	5	1.19

सारणी 6.11 ग्राम नन्दगंवा की भूमि उपयोग को दर्शा रही है। इस ग्राम की कुल प्रतिवेदित भूमि 512 हेक्टेअर है जिसमें 64.45 प्रतिशत भूमि पर विभिन्न फसलें उगाई जाती हैं। इस दृष्टि से 24 प्रतिशत से भी अधिक भूमि का उपयोग नहीं हो रहा है इस अप्रयुक्त भूमि का एक हिस्सा तालाबों, नहरों तथा निर्माण कार्यो में प्रयुक्त होने के कारण कृषि के लिए अप्रयुक्त है शेष लगभग 12 प्रतिशत भूमि जो ऊसर तथा बंजर के रूप में पड़ी हुई है उसे कृषि फसलों के लिए थोड़ा प्रयोग करने के बाद प्रयोग किया जा सकता है। ग्राम की 330 हेक्टेअर कृषि भूमि में से 89.70 प्रतिशत भूमि को सिंचाई की सुविधायें प्राप्त हैं, परन्तु दो या दो से अधिक फसलों वाली भूमि केवल 52.12 प्रतिशत ही है। वर्ष में विभिन्न फसलों के अन्तर्गत इस ग्राम में कुल 502 हेक्टेअर भूमि प्रयोग की जाती है जिसमें खरीफ फसलों के अन्तर्गत केवल 38.84 प्रतिशत, रबी फसलों के अन्तर्गत 60.15 प्रतिशत जबकि जायद फसलों के अन्तर्गत मात्र 1.19 प्रतिशत भूमि ही प्रयुक्त की जा रही है। यदि शुद्ध बोए गए क्षेत्र पर विचार करें तो गांव में कुल कृषि के लिए उपलब्ध 330 हेक्टेअर क्षेत्रफल में से खरीफ फसलों के अन्तर्गत लगभग 58 प्रतिशत क्षेत्र प्रयोग हो रहा है जिसका अर्थ है कि लगभग 42 प्रतिशत क्षेत्र अप्रयुक्त है।

सारणी 6.12 ग्राम नन्दगंवा में उगाई जानेवाली विभिन्न फसलों के क्षेत्रफल का विवरण दे रही है। वर्ष में बोई जानेवाली समस्त फसलों में गेहूं सर्वाधिक महत्वपूर्ण फसल है जो अकेले 45.42 प्रतिशत क्षेत्र पर बोई जा रही है। धान की फसल द्वितीय महत्वपूर्ण फसल है और यह 24.10 प्रतिशत क्षेत्रफल पर बोई जा रही है। यदि इन दोनों फसलों को एक साथ कर दिया जाये तो वर्ष भर ये दोनों फसलें लगभग 69 प्रतिशत क्षेत्र पर अपना आधिपत्य किए हुए हैं। सिंचाई की सुविधायें तथा तथा भूमि का मटियार दोमट होना इन फसलों को महत्वपूर्ण बनाये हुये है।

सारणी क्रमांक 6.12: विभिन्न फसलों के अन्तर्गत क्षेत्र का वितरण.

फसल का नाम	क्षेत्रफल (हे0)	प्रतिशत (सकल बोए गए क्षेत्र से)	प्रतिशत
खरीफ की फसलें	195	38.84	
1. धान	121	24.10	62.05
2. ज्वार	5	0.99	2.56
3. बाजरा	35	6.97	17.95
4. मक्का	28	5.58	14.36
5. अरहर	2	0.40	1.03
6. अन्य	4	0.80	2.05
रबी की फसलें	302	60.15	
1. गेहूं	228	45.42	75.50
2. जौ	15	2.98	4.97
3. चना	15	2.98	4.97
4. मटर	11	2.19	3.64
5. लाही	16	3.19	5.30
6. आलू	10	1.99	3.31
7. गन्ना	2	0.40	0.66
8. अन्य	5	0.99	1.66
जायद की फसलें	5	1.19	
योग		100.18 या 100	

यदि फसलवार क्षेत्रीय विवरण की दृष्टि से देखें तो खरीफ की फसल में उगाई जानेवाली फसलों में धान, बाजरा, मक्का तथा ज्वार प्रमुख फसलें हैं। जिसमें धान 62.05 प्रतिशत क्षेत्र पर उगाया जाता है तथा बाजरा और मक्का क्रमशः 17.95 प्रतिशत तथा 14.36 प्रतिशत हिस्सेदारी कर रही हैं।

इसी प्रकार रबी मौसम में गेहूं 75.50 प्रतिशत पर अपना आधिपत्य स्थापित किए हुए है। जौ, चना दोनों लगभग समान क्षेत्र घेरे हुए हैं जबकि तिलहनी फसल लाही इन दोनों फसलों से कुछ अधिक 5.30 प्रतिशत क्षेत्रफल पर बोई जा रही है। इस ग्राम में परम्परागत खाद्यान्न फसलों के उगाए जाने का कारण यह है कि यह फसलें बोनी जाति की होने के कारण अन्न की तो अच्छी उपज देती है परन्तु वर्ष भर चारे की व्यवस्था करने में ये फसलें पूर्णतया सफल नहीं हैं, और यही कारण है कि रबी में गेहूं की फसल तीन चौथाई से भी अधिक क्षेत्रफल पर उगाई जाती है जिससे अन्न एवं चावल दोनों की आवश्यकता की पूर्ति होती है।

जनसंख्या का भार:

ग्राम नन्दगंवा की जनसंख्या का प्रमुख व्यवसाय कृषि है जो कि न केवल खाद्यान्न आवश्यकताओं को ही पूरा करती है बल्कि वर्ष भर की अन्य आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए आय भी प्रदान करती है। इस ग्राम में 437 परिवार निवास करते है जिनकी कुल जनसंख्या 2612 है। अतः कृषि के लिए उपलब्ध क्षेत्र पर जनसंख्या के भार को सारणी 6.13 में दर्शाया जा रहा है।

तालिका 6.13 ग्राम नदगवा में प्रति व्यक्ति विभिन्न प्रकार की कृषि भूमि की उपलब्धता का विवरण दे रही है। इस ग्राम में प्रतिव्यक्ति शुद्ध बोया गया क्षेत्र 0.1263 हेक्टेअर है जिसमें से 0.0747 हेक्टेअर क्षेत्रफल पर खरीफ की फसलें बोई जाती हैं और रबी की फसलों के लिए 0.1156 हेक्टेअर क्षेत्रफल उपयोग में लाया जा रहा है। जायद की फसलें जिसमें तरबूजा, खरबूजा तथा सब्जियां प्रमुख फसलें हैं, केवल 0.0019 हेक्टेअर क्षेत्रफल उपयोग में लाया जा रहा है। 0.1263 हेक्टेअर क्षेत्र में 0.0685 हेक्टेअर क्षेत्रफल दुफसली या बहुफसली क्षेत्र है। प्रति व्यक्ति शुद्ध कृषि क्षेत्र 0.1263 में से 0.1133 हेक्टेअर क्षेत्रफल को सिंचन सुविधायें प्राप्त हैं, परन्तु फिर भी सकल बोए गए क्षेत्र में उतनी वृद्धि देखने को नहीं मिलती है। जिस अनुपात में भूमि को सिंचाई की सुविधायें प्राप्त हैं क्योंकि सकल कृषि क्षेत्र प्रति व्यक्ति 0.1192 हेक्टेअर ही है। इस कमी का मूल कारण यह है कि ग्राम की कृषि भूमि की निम्न उत्पादकता के कारण कुछ भूमि वार्षिक फसलों के लिए परती छोड़ दी जाती है, जैसे तिलहनी फसल लाही

सारणी क्रमांकः 6.13- भूमि पर जनसंख्या का भार (हेक्टेअर में)

कुल प्रतिवेदित क्षेत्र	कृषि के लिए उपलब्ध क्षेत्र	एक से अधिकबार बोया गया क्षेत्र	सकल बोया गया क्षेत्र	शुद्ध सिंचित क्षेत्र	सकल सिंचित क्षेत्र	रबी का क्षेत्र	खरीफ का क्षेत्र	जायद का क्षेत्र
प्रति व्यक्ति ०.१९६०	०.१२६३	०.०६८५	०.१९२२	०.११३३	०.१७१५	०.११५६	०.०७४७	०.००१९

के लिए, खरीफ की फसलों से इस फसल के लिए परती भूमि छोड़ दी जाती है, यही स्थिति गन्ने की फसल की भी होती है।

जनसंख्या के दबाव को ग्राम की जनसंख्या की व्यवसायिक संरचना के आधार पर मालूम किया जा सकता है । इस दृष्टि से यदि देखें तो इस ग्राम की कुल जनसंख्या का लगभग 85 प्रतिशत जनसंख्या प्राथमिक रूप से कृषि पर निर्भर है और 13 प्रतिशत से अधिक जनशक्ति कृषि के सहायक व्यवसायों में संलग्न रहने के कारण द्वितीयक रूप से कृषि भूमि पर निर्भर है। दो प्रतिशत से भी कम जनसंख्या ग्राम से बाहर नौकरी अथवा व्यवसाय में संलग्न है। इस प्रकार लगभग सम्पूर्ण जनसंख्या कमोबेश कृषि भूमि से ही अपने जीवनयापन के साधन प्राप्त कर रही है।

विभिन्न फसलों की औसत उत्पादकता:

ग्राम नन्दगंवा में उत्पन्न होने वाली विभिन्न फसलों के औसत उत्पादन को सारणी 6.14 में प्रस्तुत किया जा रहा है। जिसमें ग्रामीण जनसंख्या को अन्न उत्पादन कराने वाली फसलों में से ज्वार, गेहूं तथा जौ की औसत उत्पादकता जनपदीय औसत उत्पादन से अधिक है और ये फसलें क्रमशः 3.64 प्रतिशत, 1.37 प्रतिशत तथा 3.39 प्रतिशत अधिक उतपादन प्राप्त कर रही हैं जबकि धान 2.58 प्रतिशत, बाजरा 4.63 प्रतिशत तथा मक्का 7.51 प्रतिशत कम उत्पादन प्रदान कर रही हैं। दलहनी फसलों में उर्द/मूंग को छोड़कर अन्य फसलें अरहर 0.30 प्रतिशत तथा चना 16.15 प्रतिशत तथा मटर 3.9 प्रतिशत अधिक उत्पादन देकर दालों की आवश्यकताओं को पूरा कर रही हैं। लाही का उत्पादन 8.46 प्रतिशत कम तथा आलू और गन्ना क्रमशः 1.58 और 5.78 प्रतिशत अधिक उत्पादन दे रहे हैं। पछायगांव ग्राम का प्रति हेक्टेअर औसत उत्पादन सारणी क्रमांक 6.14 में दर्शाया जा रहा है।

सारणी क्रमांक 6.14: विभिन्न फसलों का औसत उत्पादन प्रति हेक्टेअर (किलोग्राम)

	फसल	उत्पादन	जनपद का उत्पादन	जनपदीय स्तर से अधिक/कम (प्रतिशत में)
1.	धान	1896	1945	−2.58
2.	ज्वार	1025	989	+3.64
3.	बाजरा	1420	1489	−4.63
4.	मक्का	1255	1357	−7.51
5.	गेहूं	2520	2486	+1.37
6.	जौ	1954	1890	+3.39
7.	अरहर	1325	1321	+0.30
8.	चना	1467	1263	+16.15
9.	मटर	1695	1630	+3.99
10.	उर्द/मूंग	425	465	−8.60
11.	लाही	1125	1229	−8.46
12.	आलू	18964	18668	+1.58
13.	गन्ना	35629	33679	+5.78

विभिन्न फसलों से प्राप्त होने वाले कुल उत्पादन तथा उस उत्पादन पर निर्भर रहने वाली जनसंख्या के आधार पर ग्राम का आहार संतुलन पत्रक तैयार किया गया है। जिसमें प्रतिव्यक्ति प्रतिदिन खाद्य पदार्थों की उपलब्धता तथा उनसे प्राप्त होने वाले पोषक तत्वों की गणना की गई है जिसे सारणी क्रमांक 6.15 में प्रस्तुत किया जा रहा है। आहार संतुलन पत्रक के आधार पर की गई गणना के अनुसार ग्राम की कुल जनसंख्या का भरण पोषण कृषि फसलों पर ही निर्भर है और वे अपनी समस्त ऊर्जा का 23.61 प्रतिशत हिस्सा खरीफ मौसम में प्राप्त हाने वाली खाद्यान्नों से प्राप्त करते हैं। जबकि रबी के मौसम में उत्पन्न होने वाली विभिन्न फसलों से प्राप्त होने वाले खाद्यान्नों से 62.55 प्रतिशत ऊर्जा प्राप्त करते हैं। जिसमें लाही तथा आलू सम्मिलित नहीं हैं। इससे यह तथ्य भी स्पष्ट होता

सारिणी क्रमांक 6.15: विभिन्न खाद्य पदार्थों की प्रति व्यक्ति प्रतिदिन उपलब्ध मात्रा तथा उससे प्राप्त पोषक तत्व (ग्राम नन्दगंवा)

खाद्य पदार्थ	मात्रा ग्राम	ऊर्जा कैलोरी	प्रोटीन ग्राम	वसा ग्राम	खनिज ग्राम	फाइबर ग्राम	कार्बोहाइड्रेट्स ग्राम	कैल्सियम मि0ग्रा0	फास्फोरस मि0ग्रा0	लौह मि0ग्रा0	कैरोटिन म्यू ग्रा0	थियामिन मि0ग्रा0	राइबोफ्लेविन मि0ग्रा0	नियासिन मि0ग्रा0	विटामिन सी
1. चावल	201.24	694.28	15.09	2.01	1.81	1.21	154.35	20.12	382.36	6.44	4.02	0.42	0.32	7.85	0
2. ज्वार	7.32	25.55	0.76	0.14	0.12	0.12	5.31	1.83	16.25	0.42	3.44	0.03	0.01	0.23	0
3. बाजरा	41.55	150.00	4.82	2.08	0.96	0.50	28.05	17.45	122.99	2.08	54.85	0.14	0.10	0.96	0
4. मक्का	32.32	112.47	3.59	1.16	0.48	0.87	21.40	3.23	112.47	0.65	29.09	0.14	0.03	0.58	0
5. गेहूं	582.84	2016.63	68.78	8.74	8.74	6.99	414.98	238.96	1783.49	28.56	373.02	2.62	0.99	32.06	0
6. जौ	28.42	95.49	3.27	0.37	0.34	1.11	19.78	7.39	61.10	0.85	2.84	0.13	0.06	1.53	0
7. अरहर	2.02	6.77	0.45	0.03	0.07	0.03	1.16	1.47	6.14	0.12	2.67	0.01	0	0.06	0
8. चना	15.41	57.33	3.21	0.86	0.42	0.18	9.38	19.88	51.01	1.40	19.88	0.06	0.03	0.40	0
9. मटर	18.22	57.39	3.59	0.20	0.40	0.82	10.29	13.67	54.30	0.93	7.11	0.09	0.03	0.62	0
10. उर्द/मूंग	1.02	3.55	0.22	0.01	0.03	0.05	0.58	2.93	3.17	0.09	0.72	0	0	0.02	0.01
11. लाही/सरसों	10.25	92.25	0	10.25	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0
12. आलू	210.32	204.01	3.37	0.21	1.26	0.84	47.53	21.03	84.13	1.47	50.48	0.21	0.02	2.52	35.75
13. गुड़/गन्ना	11.66	44.66	0.05	0.01	0.07	0	11.08	9.33	4.66	1.33	19.59	0	0	0.06	0
योग	1162.59	3560.38	107.20	26.07	14.70	12.72	723.89	357.29	2682.07	44.34	567.71	3.85	1.59	46.89	35.76

है कि नन्दगंवा ग्राम के भरण पोषण के लिए रबी मौसम में उगाई जानेवाली खाद्यान्न फसलों का महत्व अधिक है। रबी फसलों में गेहूं सर्वाधिक महत्व की फसल है जो 65.17 से भी अधिक उर्जा की आपूर्ति करता है। इस ग्राम में विभिन्न खाद्यान्नों से प्राप्त होने वाली प्रतिव्यक्ति प्रतिदिन उर्जा 3560.38 कैलोरी है जो कि औसत आवश्यकता से कहीं अधिक है। जिसमें से गेहूं तथा चावल दोनों मिलकर 2710 कैलोरी से भी अधिक ऊर्जा की आपूर्ति करते है। दालों का हिस्सा मात्र 3.51 प्रतिशत अत्यन्त न्यून है। लाही, आलू तथा गन्ने की फसलों से 9.58 प्रतिशत ऊर्जा की आपूर्ति होती है।

4. नसीदीपुरः

भरथना विकासखण्ड के अन्तर्गत ग्राम नसीदीपुर ग्राम बकेवर भरथना सड़क मार्ग पर स्थित हर्राजपुर से पूर्व में लगभग दो किलोमीटर की दूरी पर स्थित है। यह गांव भरथना विकासखण्ड से लगभग 12 किलोमीटर दक्षिण में स्थित है। गांव से उत्तर में 6 किलोमीटर की दूरी पर सेंगर नदी बहती है। चम्बल तथा सेंगर नदी के दोआब के मध्य स्थित यह एक समतल और उपजाऊ क्षेत्र है। यहां सिंचाई की पर्याप्त व्यवस्था है। अधिकतर सिंचाई नहर, राजकीय नलकूप और निजी नलकूपों द्वारा होती है। गांव के निकट जनता कालेज बकेवर स्थित होने के कारण यहां के कृषक आधुनिकीकरण की ओर अग्रसर हैं परन्तु जोतों का आकर छोटा होने के कारण अभी तक सीमित मात्रा में ही आधुनिक तकनीक का प्रयोग कर सके हैं। जिनमें ट्रैक्टर, थ्रेसर, उन्नत किस्म के बीज, रासायनिक उर्वरक तथा कीटनाशक दवाइयों का प्रयोग तथा सिंचाई के साधनों में निजी पम्पिंग सेट के प्रयोग का प्रचलन है। यहां परम्परागत कृषि का अधिक प्रचलन है तथा व्यवसायिक फसलों का नितान्त अभाव है। नकदी फसलों के लिए तिलहनी फसलें, गन्ना एवं सब्जियां मुख्य रूप से उगाई जाती हैं।

शस्य भूमि उपयोगः

ग्राम नसीर्दीपुर में वर्ष के तीनों मौसमों में परम्परागत फसलें उगाई जाती हैं। इस ग्राम के शस्य भूमि उपयोग को सारणी क्रमांक 6.16 में दर्शाया जा रहा है।

सारणी क्रमांक 6.16: नसीदीपुर ग्राम की शस्य भूमि उपयोग

मद	क्षेत्रफल (हेक्टेअर)	प्रतिशत
1. प्रतिवेदित क्षेत्रफल	618	–
2. शुद्ध बोया गया क्षेत्रफल	412	66.67
3. एक से अधिक बार बोया गया क्षेत्रफल	272	66.02
4. सकल बोया गया क्षेत्र	684	116.02
5. शुद्ध सिंचित क्षेत्र	324	78.64
6. सकल सिंचित क्षेत्र	426	62.28

7. रबी का क्षेत्र	386	56.43
8. खरीफ का क्षेत्र	283	41.40
9. जायद का क्षेत्र	15	2.20

सारणी 6.16 नसीदीपुर ग्राम के शस्य भूमि उपयोग को दर्शा रही है। ग्राम नसीदीपुर का कुल प्रतिवेदित क्षेत्र 618 हेक्टेअर है जिसके 66.67 प्रतिशत भूमि पर विभिन्न फसलें उगाई जाती हैं, जो कुल भूमि की लगभग एक तिहाई है, जो कुल भूमि का एक बड़ा हिस्सा है। इस ग्राम में कृषि के लिए 412 हेक्टेअर भूमि उपलब्ध है जिसके 60.02 प्रतिशत क्षेत्र पर दो या दो से अधिक फसलें उगाई जाती हैं। कृषि के लिए उपलब्ध भूमि का 78.64 प्रतिशत सिंचित क्षेत्र है, परन्तु वर्ष भर में 684 हेक्टेअर क्षेत्रफल पर विभिन्न फसलें बोई जाती हैं जिसमें 62.28 प्रतिशत क्षेत्रफल पर सिंचाई की सुविधायें प्राप्त हैं। वर्ष भर के लिए उपलब्ध कृषि भूमि में 56.43 प्रतिशत क्षेत्र पर रबी की फसलें, 41.40 क्षेत्रफल पर खरीफ की फसलें तथा 2.20 क्षेत्रफल पर जायद की फसलें उगाई जाती हैं। जायद की फसलों में इस ग्राम में उर्द/मूंग तथा गर्मियों की सब्जियों का प्रमुख स्थान है।

सारणी क्रमांक 6.17 ग्राम नसीदीपुर में वर्ष भर में विभिन्न फसलों के अन्तर्गत क्षेत्रफल के वितरण को दर्शा रही है जिसमें कुल कृषि क्षेत्र 684 हेक्टेअर में 41.40 प्रतिशत क्षेत्र पर खरीफ की फसलें, 56.43 प्रतिशत क्षेत्र पर रबी की फसलें उगाई जाती हैं। जायद की फसलें मात्र 2.20 प्रतिशत क्षेत्रफल पर ही उगाई जाती है। खरीफ मौसम में बाजरा फसल सर्वाधिक महत्वपूर्ण है जो 49.47 प्रतिशत क्षेत्रफल पर आधिपत्य जमाये हुए है। धान तथा मक्का लगभग समान महत्व की फसलें हैं जो क्रमशः 14.49 प्रतिशत तथा 13.07 प्रतिशत क्षेत्र पर बोई जा रही हैं। इसी प्रकार ज्वार तथा अरहर की फसलें भी कमोबेश एक जैसी स्थिति का प्रदर्शन कर रही हैं।

सारणी क्रमांक 6.17: विभिन्न फसलों के अन्तर्गत क्षेत्र का वितरण.

फसल का नाम	क्षेत्रफल(हे0)	प्रतिशत (सकल बोए गए क्षेत्र से)	प्रतिशत
खरीफ की फसलें	283	41.40	
1. धान	41	5.99	14.49
2. ज्वार	22	3.22	7.77
3. बाजरा	140	20.47	49.47
4. मक्का	37	5.41	13.07
5. अरहर	21	3.07	7.42
6. अन्य	22	3.22	7.77
रबी की फसलें	386	56.43	
1. गेहूं	189	27.63	48.96
2. जौ	36	5.26	10.11
3. चना	33	4.82	8.55
4. मटर	53	7.75	13.73
5. लाही	47	6.87	12.18
6. आलू	17	2.49	4.40
7. गन्ना	7	1.02	1.81
8. अन्य	4	0.58	1.04
जायद की फसलें	15	2.20	
योग		100.03	लगभग 100.00

रबी मौसम की फसलों में गेहूं 48.96 प्रतिशत क्षेत्रफल अधिकृत करके अपने महत्व को स्पष्ट कर रही है। मटर 13.73 प्रतिशत क्षेत्रफल पर बोया जा रहा है। इस ग्राम में लाही 47 हेक्टेअर पर बोई गई जिसका अर्थ है कि तिलहनी फसलों के लिए यहां अनुकूल परिस्थितियां है। दलहनी फसलों में मटर के बाद चना का स्थान है। गन्ना की फसल कोई बहुत ही

अच्छा प्रदशन नहीं कर रही है और मात्र 1.81 प्रतिशत क्षेत्रफल पर ही अपनी उपस्थिति दर्ज करा रही है। जायद की फसलों में उर्द/मूंग का इस ग्राम में विशेष महत्व है। जायद फसलों के अतिरिक्त खरीफ मौसम में भी उर्द/मूंग इस गांव में बोई जाती है।

भूमि पर जनसंख्या का भार:

ग्राम नसीदीपुर में कुल 508 परिवार निवास करते हैं जिनकी कुल जनसंख्या 3265 है। गांव की अधिकांश जनसंख्या मूलतः कृषक है और कृषि व्यवस्था से ही अपने भरण पोषण के साधन जुटाते हैं। गांव के थोड़े लोग कृषि के सहायक धन्धों अथवा लघु स्तर के व्यवसाय में लगे हुए है, कुछ लोग गांव से बाहर रहकर निजी/सरकारी सेवाओं में लगे हुए हैं। गांव की जनसंख्या मूलतः कृषक होने के कारण लगभग पूर्णरूप से कृषि पर आधारित है। कृषि भूमि पर जनसंख्या के भार को सारणी 6.18 में प्रस्तुत किया जा रहा है।

नसीदीपुर ग्राम में प्रति व्यक्ति कुल प्रतिवेदित क्षेत्र 0.1893 हेक्टेअर है जिसमें मात्र 0.1262 हेक्टेअर क्षेत्र पर कृषि फसलें उगाई जाती हैं जिसका अर्थ है कि 0.0631 हेक्टेअर क्षेत्र या तो कृषि के लिए अनुपयुक्त है या कृषि के लिए अप्रयुक्त है जबकि प्रतिव्यक्ति कृषि भूमि उपयोग की दृष्टि से खरीफ मौसम में इससे थोड़ा ही अधिक क्षेत्रफल प्रयोग में लाया जा रहा है। प्रतिव्यक्ति 0.1262 हेक्टेअर भूमि कृषि के लिए उपलब्ध होने के बावजूद भी 0.0867 हेक्टेअर खरीफ मौसम की फसलों के लिए प्रयुक्त हो रहा है जबकि प्रति व्यक्ति शुद्ध सिंचित क्षेत्रफल 0.0992 हेक्टेअर है। स्पष्ट है कि नसीदीपुर ग्राम में उपलब्ध कृषि भूमि का पूरी क्षमता से उपयोग नहीं किया जा रहा है। सिंचन सुविधाओं पर विचार करें तो इस ग्राम में नहर तथा निजी नलकूप/पम्पिंग सेट्स सिंचाई का कार्य करते हैं और प्रति व्यक्ति 0.1262 हेक्टेअर में से 0.0992 हेक्टेअर क्षेत्रफल को सिंचन सुविधायें उपलब्ध हैं जो सिंचाई की दृष्टि से सामान्य से अच्छी स्थिति कही जा सकती है, परन्तु सिंचन सुविधाओं के होते हुए भी कृषि भूमि का उतनी कुशलता से प्रयोग नहीं हो पा रहा है जितना की होना चाहिये।

व्यवसायिक संरचना की दृष्टि से देखा जाये तो गांव की 87 प्रतिशत

सारणी क्रमांकः 6.18- भूमि पर जनसंख्या का भार (हेक्टेअर में)

	कुल प्रतिवेदित क्षेत्र	कृषि के लिए उपलब्ध क्षेत्र	एक से अधिकबार बोया गया क्षेत्र	सकल बोया गया क्षेत्र	शुद्ध सिंचित क्षेत्र	सकल सिंचित क्षेत्र	रबी का क्षेत्र	खरीफ का क्षेत्र	जायद का क्षेत्र
प्रति व्यक्ति	०.१८६३	०.१२६२	०.०८३३	०.२०६५	०.०६६२	०.१३०५	०.११८२	०.०८६७	०.००४६

जनसंख्या प्राथमिक रूप से कृषि उत्पादन पर ही आश्रित है जबकि लगभग 12 प्रतिशत जनसंख्या कृषि के अतिरिक्त अन्य व्यवसाय में संलग्न होने के कारण द्वितीयक रूप से कृषि पर आश्रित है। मात्र 1 प्रतिशत से कुछ कम जनसंख्या गांव से बाहर रहकर निजी/सरकारी सेवाओं से अपने लिए आर्थिक संसाधन जुटाते हैं इनमें से भी अधिकांश लोग अपने जीवन स्तर को ऊँचा उठाने में सफल हुए हैं, परन्तु खाद्यान्न आवश्यकता की पूर्ति के लिए गांव पर ही आश्रित हैं। कुल मिलाकर सम्पूर्ण जनसंख्या अपनी उदरपूर्ति के लिए गांव पर ही आश्रित है।

विभिन्न फसलों की औसत उत्पादकता:

ग्राम नसीदीपुर में वर्ष भर में उगाई जानेवाली प्रमुख फसलों की औसत उत्पादकता को सारणी 6.19 में प्रस्तुत किया जा रहा है।

सारणी क्रमांक 6.19: विभिन्न फसलों का औसत उत्पादन प्रति हेक्टेअर (किलोग्राम)

	फसल	उत्पादन	जनपद का उत्पादन	जनपदीय स्तर ये अधिक / कम(प्रतिशत में)
1.	धान	2215	1982	11.76
2.	ज्वार	1035	1036	-0.09
3.	बाजरा	1557	1534	1.5
4.	मक्का	1592	1389	14.61
5.	गेहूं	2538	2515	0.91
6.	जौ	1914	1917	-0.16
7.	अरहर	1306	1335	-2.17
8.	चना	1255	1294	-3.01
9.	मटर	1667	1659	0.48
10.	उर्द/मूंग	642	485	32.37
11.	लाही	1114	1256	-11.31
12.	आलू	19012	18696	1.69
13.	गन्ना	35284	33712	4.66

सारणी 6.19 में विभिन्न फसलों की औसत उत्पादकता की दृष्टि से सर्वाधिक सफल उर्द/मूंग की फसल है जिसकी औसत उत्पादकता जनपदीय स्तर से 32.37 प्रतिशत अधिक है। इसके उपरान्त मक्का की फसल 14.61 प्रतिशत अधिक उत्पादन का प्रदर्शन कर रही है। धान की फसल भी 11.76 प्रतिशत अधिक उत्पादन का प्रदर्शन करके एक अच्छी फसल की श्रेणी में रखी जा सकती है। जनपदीय स्तर से अधिक उत्पादन देनेवाली अन्य फसलों में बाजरा 1.5 प्रतिशत, गेहूं 0.91 प्रतिशत, मटर 0.48 प्रतिशत, आलू 1.69 प्रतिशत तथा गन्ने की फसल 4.66 प्रतिशत अधिक उत्पादन दे रही है। जनपदीय स्तर से कम उत्पादन देनेवाली फसलों में लाही 11.31 प्रतिशत, चना 3.01 प्रतिशत, अरहर 2.17 प्रतिशत, जौ 0.16 प्रतिशत कम उत्पादन दे रही है।

विभिन्न फसलों से प्राप्त होने वाले कुल उत्पादन में ग्राम की कुल जनसंख्या का भाग देकर प्रतिव्यक्ति प्रतिदिन खाद्य पदार्थों की औसत उपलब्धता की गणना की गई है और इस आधार पर ग्राम नसीदीपुर का आहार संतुलन पत्रक तैयार किया गया है जिसमें विभिन्न खाद्य पदार्थों की औसत उपलब्धता तथा उससे प्राप्त होनेवाले पोषक तत्वों की गणना की गई है। इस गणना को सारणी क्रमांक 6.20 में प्रस्तुत किया जा रहा है।

ग्राम नसीदीपुर के आहार संतुलन पत्र के अनुसार इस ग्राम में प्रति व्यक्ति खाद्य पदार्थों की प्रतिदिन 970.71 ग्राम मात्रा उपलब्ध है। जिसमें 672.57 ग्राम अन्न तथा 68.24 ग्राम दालें और शेष पदार्थ लाही, आलू तथा गन्ने की फसलों से प्राप्त होते हैं। खरीफ फसलों के उत्पादन से 386.75 ग्राम, 457.16 ग्राम रबी फसलों से खाद्य पदार्थ प्राप्त होते हैं इन खाद्य पदार्थों से ग्रामीण समुदाय को प्राप्त होनेवाली ऊर्जा पर विचार करें तो प्रतिव्यक्ति प्रतिदिन 2938.93 कैलोरी प्राप्त हो रही है जो कि औसत आवश्यकता से अधिक है। खरीफ की फसलों से 33.87 प्रतिशत तथा रबी से 53.49 प्रतिशत ऊर्जा प्राप्त हो रही है। यदि खाद्यान्न तथा दालों को पृथक-पृथक कर दिया जाये तो खाद्यान्नों से 79.66 प्रतिशत तथा दालों से 8.43 प्रतिशत ऊर्जा प्राप्त हो रही है। लगभग 12.01 प्रतिशत ऊर्जा लाही, आलू तथा गन्ने की फसलों से प्राप्त होती है। प्रोटीन की दृष्टि से विचार करें तो इस ग्राम में दालों का उपयोग बहुत कम है। जबकि

सारिणी क्रमांक 6.20: विभिन्न खाद्य पदार्थों की प्रति व्यक्ति प्रतिदिन उपलब्ध मात्रा तथा उससे प्राप्त पोषक तत्व (ग्राम नसीदीपुर)

खाद्य पदार्थ	मात्रा ग्राम	ऊर्जा कैलोरी	प्रोटीन ग्राम	वसा ग्राम	खनिज ग्राम	फाइबर ग्राम	कार्बोहाइड्रेट्स ग्राम	कैल्सियम मि0ग्रा0	फास्फोरस मि0ग्रा0	लौह मि0ग्रा0	कैरोटिन म्यू ग्रा0	थियामिन मि0ग्रा0	राइबोंफ्लेविन मि0ग्रा0	नियासिन मि0ग्रा0	विटामिन सी
1. चावल	138.55	478.00	10.39	1.39	1.25	0.83	106.27	13.86	263.25	4.43	2.77	0.29	022	5.40	0
2. ज्वार	1.06	3.70	0.11	0.02	0.02	0.02	0.77	0.27	2.35	0.06	0.50	0	0	0.03	0
3. बाजरा	102.51	370.06	11.89	5.13	2.36	1.23	69.19	43.05	303.43	5.13	135.31	0.34	0.26	2.36	0
4. मक्का	20.38	70.92	2.26	0.73	0.31	0.55	13.49	2.04	70.92	0.41	18.34	0.09	0.02	0.37	0
5. गेहूं	387.68	1341.37	45.75	5.82	5.82	4.65	276.03	158.95	1186.30	19.00	248.12	1.74	0.66	21.32	0
6. जौ	22.98	77.21	2.64	0.30	0.28	0.90	15.99	5.97	49.41	0.69	2.30	0.11	0.05	1.24	0
7. अरहर	21.74	72.83	4.85	0.37	0.76	0.33	12.52	15.87	66.09	1.26	28.70	0.10	0.04	0.63	0
8. चना	12.35	45.94	2.57	0.69	0.33	0.15	7.52	15.93	40.88	1.12	15.93	0.05	0.02	0.32	0
9. मटर	34.15	107.57	6.73	0.38	0.75	1.54	19.29	25.61	101.77	1.74	13.32	0.16	0.06	1.16	0
10. उर्द/मूंग	6.18	21.51	1.36	0.03	0.20	0.33	3.53	17.74	19.22	0.52	4.39	0.03	0.01	0.09	0.06
11. लाही/सरसों	12.13	109.17	0	12.13	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0
12. आलू	198.42	192.47	3.17	0.20	1.19	0.79	44.84	19.84	79.37	1.39	46.62	0.20	0.02	2.38	33.73
13. गुड़/गन्ना	12.58	48.13	0.05	0.01	0.08	0	11.95	10.06	5.03	1.43	21.13	0	0.01	0.06	0
योग	970.71	2938.93	91.77	27.20	13.35	11.32	581.39	329.19	2188.02	37.18	538.43	3.11	1.37	35.36	33.79

ग्रामीण भोजन में अधिकांश मात्रा दालों से प्राप्त होती है , जबकि कुल प्रोटीन की मात्रा में से आधे से भी कम प्रोटीन गेहूं की फसल से प्राप्त हो रही है। इसके बाद बाजरा का स्थान आता है, परन्तु बाजरा का सेवन अब निर्धनों की खाद्य सामग्री में शामिल रहता है जबकि मध्यम तथा उच्च वर्ग के लोग बाजरे का सेवन करना अपनी शान के खिलाफ समझते हैं।

5. ग्राम पशुआ:

विकासखण्ड विधूना का ग्राम पशुआ अछल्दा विधूना मार्ग पर सड़क से लगभग 1 किलोमीटर पश्चिम में विकासखण्ड विधूना से दक्षिण में लगभग 4 किलोमीटर की दूरी पर स्थित है। गांव के दक्षिण से होकर अहिनइया नदी निकली है। यह एक छोटी नदी है। पशुआ ग्राम की भूमि उपजाऊ है। अधिकतर कृषि सिंचाई द्वारा की जाती है। सिंचाई का प्रमुख साधन निजी नलकूप है। खरीफ की फसल में धान तथा बाजरा की फसल का विशेष महत्व है जबकि रबी की फसल में गेहूं तथा लाही का विशेष स्थान है। विधूना कस्बा निकट ही स्थित होने के कारण अपनी आवश्यकता की वस्तुओं को क्रय करने की सुविधा है। गांव के लोगों का प्रधान व्यवसाय कृषि है। कस्बा के निकट स्थित होने के कारण गाय-भैंस आदि भी पर्याप्त मात्रा में पाये जाते हैं।

शस्य भूमि उपयोग:

पशुआ ग्राम में वर्ष भर खरीफ, रबी तथा जायद तीनों मौसमों में विभिन्न फसलें उगाई जाती हैं परन्तु इनमें खरीफ तथा रबी प्रमुख हैं, जायद मौसम में अत्यन्त कम भूमि पर फसलें उगाई जाती हैं। इस ग्राम में शस्य भूमि उपयोग को सारणी 6.21 में प्रस्तुत किया जा रहा है।

सारणी 6.21: पशुआ ग्राम का शस्य भूमि उपयोग

	क्षेत्रफल (हेक्टेअर)	प्रतिशत
1. प्रतिवेदित क्षेत्र	360	–
2. शुद्ध बोया गया क्षेत्र	264	73.33
3. एक से अधिक बार बोया गया क्षेत्र	142	53.78
4. सकल बोया गया क्षेत्र	406	153.79
5. शुद्ध सिंचित क्षेत्र	222	84.10
6. सकल सिंचित क्षेत्र	300	73.89
7. रबी का क्षेत्र	235	57.88
8. खरीफ का क्षेत्र	168	41.40
9. जायद का क्षेत्र	3	0.80

सारणी क्रमांक 6.21 ग्राम पशुआ के शस्य भूमि उपयोग का चित्रण कर रही है जिसमें इस गांव के कुल प्रतिवेदित क्षेत्र 360 हेक्टेअर में 73.33 प्रतिशत भूमि पर विभिन्न फसलें उगाई जाती हैं शेष 26.67 प्रतिशत क्षेत्रफल या तो परती है या कृषि के लिए अनुपयुक्त है। शुद्ध बोए गए क्षेत्रफल 264 हेक्टेअर क्षेत्र में से 84.01 प्रतिशत कृषि भूमि को सिंचाई की सुविधायें प्राप्त हैं जिससे 53.78 प्रतिशत क्षेत्र पर दो या दो से अधिक फसलें उगाई जा रही हैं अतः कुल फसल क्षेत्र 406 हेक्टेअर में 57.88 प्रतिशत भूमि पर रबी की फसलें, 41.40 प्रतिशत क्षेत्रफल पर खरीफ की फसलें तथा 0.08 प्रतिशत क्षेत्र पर जायद की फसलें उगाई जाती हैं। जायद की फसलों में खरबूजा, तरबूजा तथा सब्जियों को प्रमुख स्थान प्राप्त है। कुछ कृषक अत्यन्त छोटे पैमाने पर उर्द/मूंग की फसल भी इस मौसम में बोते हैं। वैसे उर्द/मूंग की फसल खरीफ में उगाई जाती है। इस ग्राम में तीनों मौसमों में खाद्यान्न फसलों का ही महत्वपूर्ण स्थान है। नकदी फसलें अत्यन्त सीमित क्षेत्र में उगाई जाती हैं। नकदी फसलों में केवल लाही का क्षेत्रफल ही कुछ अधिक है, आलू तथा गन्ना का क्षेत्र अत्यन्त सीमित है।

विभिन्न फसलों का क्षेत्रफल वितरण:

ग्राम पशुआ में वर्ष में रबी, खरीफ तथा जायद तीनों कृषि मौसमों में विभिन्न फसलें उगाई जाती हैं। खरीफ में धान, ज्वार, बाजरा, मक्का तथा अरहर महत्वपूर्ण फसलें हैं। इनमें से धान सर्वाधिक क्षेत्रफल पर उगाया जाता है जबकि रबी की फसलों में गेहू, जौ, चना, मटर, लाही तथा आलू प्रमुख हैं। जायद में खरबूजा, तरबूज तथा सब्जियां प्रमुख हैं। सारणी 6.22 में विभिन्न फसलों का क्षेत्रफल दर्शाया जा रहा है।

सारणी 6.22: विभिन्न फसलों के अनतर्गत क्षेत्रफल का वितरण

फसल	क्षेत्रफल(हेक्टेअर)	प्रतिशत	प्रतिशत
अ. खरीफ की फसलें	168	41.40	
1. धान	90	22.17	53.57
2. ज्वार	06	1.47	3.57

3. बाजरा	12	2.96	7.14
4. मक्का	50	12.32	29.76
5. अरहर	07	1.72	4.16
6.अन्य	03	0.74	1.7
ब. रबी की फसलें	235	57.88	
1. गेहूँ	173	42.61	73.62
2. जौ	09	2.22	3.83
3. चना	23	5.67	9.79
4. मटर	05	1.23	2.12
5. लाही	28	6.90	11.91
6. आलू	09	2.22	3.82
7. गन्ना	04	0.99	1.70
8. अन्य	04	0.99	1.70
स. जायद की फसलें	03	0.80	
कुल प्रतिशत		100.08	या 100

सारणी 6.22 ग्राम पशुआ में उगाई जानेवाली विभिन्न फसलों में क्षेत्रफल वितरण का चित्र प्रस्तुत कर रही है जिसके अनुसार इस ग्राम में सकल बोए गए क्षेत्रफल में 57.88 प्रतिशत भूमि पर रबी की फसलें, 41.40 प्रतिशत भूमि पर खरीफ की फसलें तथा 0.8 प्रतिशत क्षेत्र पर जायद की फसलें उगाई जा रही हैं। वर्षभर में उगाई जानेवाली फसलों में अकेले गेहूं की फसल 42.61 प्रतिशत क्षेत्र एकाधिकार की स्थिति का प्रदर्शन कर रही हैं जबकि द्वितीय महत्वपूर्ण फसल धान की है जो 22.17 प्रतिशत क्षेत्र पर उगाई जाती है। मक्का भी 12.32 प्रतिशत क्षेत्र पर अधिकृत होकर अपने महत्व को दर्शा रही है। वाणिज्यिक फसलों में लाही 6.90 प्रतिशत क्षेत्र पर उगाई जा रही है। अन्य फसलें केवल अपनी उपस्थिति ही दर्ज करा पा रही हैं। रबी तथा खरीफ मौसम के दृष्टिकोण से

विचार करें तो 83 प्रतिशत से अधिक क्षेत्रफल पर धान तथा मक्का खरीफ कृषि मौसम में अपना महत्व दर्शा रही हैं। शेष 17 प्रतिशत से भी कम क्षेत्रफल पर ज्वार, बाजरा, अरहर तथा अन्य फसलें उगाई जा रही हैं। अन्य फसलों में उर्द/मूंग की फसलें इस मौसम में महत्वपूर्ण हैं। रबी कृषि मौसम में 73.62 प्रतिशत क्षेत्र पर अकेले गेहूं की फसल काबिज है और यह फसल रबी मौसम में तीन चौथाई से भी कुछ कम क्षेत्रफल पर उगाई जा रही है। इसलिए इस ग्राम में गेहूं का अपना अलग महत्व है। वाणिज्य फसलों में लाही, आलू तथा गन्ना तीनों फसलें मिलाकर 17 प्रतिशत क्षेत्रफल पर बोई जाती हैं। जिसमें लाही अकेले 11.91 प्रतिशत क्षेत्रफल पर बोई जाती है जबकि गन्ना 1.70 प्रतिशत क्षेत्र को घेरकर केवल अपनी उपस्थिति ही दर्शा पा रही है। सारणी से स्पष्ट है कि खाद्यान्न फसलों में गेहूं तथा धान के साथ-साथ मक्का की फसल भी महत्वपूर्ण है जबकि नकदी फसलों में लाही का इस गांव के लिए विशेष महत्व है, दलहनी फसलों में केवल चना ही महत्वपूर्ण लगता है, अन्य दलहनी फसलें विशेष महत्वपूर्ण नहीं हैं।

भूमि पर जनसंख्या का भार:

ग्राम पशुआ में 362 परिवारों में 2127 लोग कृषि भूमि से प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूप से जुड़े हुए है। अधिकांश जनसंख्या कृषि पर आश्रित होने के कारण कृषि भूमि ही उनकी दैनिक आवश्यकता की आपूर्ति के लिए साधन जुटाती है। इस ग्राम की कृषि भूमि पर जनसंख्या के भार को सारणी 6.23 में दिया जा रहा है।

सारणी 6.23 ग्राम पशुआ की कृषि भूमि पर पडने वाले जनसंख्या के भार का विवरण प्रस्तुत कर रही है। जहां पर प्रति व्यक्ति कुल प्रतिवेदित क्षेत्र 0.1693 हेक्टेअर उपलब्ध है जिसमें से 0.1241 हेक्टेअर क्षेत्र पर कृषि कार्य सम्पन्न किया जा रहा है। इस कृषि भूमि 0.0668 हेक्टेअर क्षेत्रफल पर दो या दो से अधिक फसलें उगाई जा रही हैं। शुद्ध कृषि क्षेत्र 0.1241 हेक्टेअर में से 0.1044 हेक्टेअर क्षेत्र को सिंचन सुविधायें प्राप्त हैं, परन्तु फर भी 0.0791 हेक्टेअर क्षेत्र पर खरीफ की विभिन्न फसलें उगाई जा रही हैं इस दृष्टि से रबी का क्षेत्रफल अधिक है क्योंकि इस कृषि मौसम में 0.1105 हेक्टेअर क्षेत्रफल को उपयोग किया जा रहा है। जायद

सारणी क्रमांकः 6.23- भूमि पर जनसंख्या का भार (हैक्टेअर में)

	कुल प्रतिवेदित क्षेत्र	कृषि के लिए उपलब्ध क्षेत्र	एक से अधिकबार बोया गया क्षेत्र	सकल बोया गया क्षेत्र	शुद्ध सिंचित क्षेत्र	सकल सिंचित क्षेत्र	रबी का क्षेत्र	खरीफ का क्षेत्र	जायद का क्षेत्र
प्रति व्यक्ति	०.१६६३	०.१२४१	०.०६६८	०.१६०६	०.१०४४	०.१४१०	०.११०५	०.०७६१	०.००४१

फसलों के अन्तर्गत 0.0041 हेक्टेअर क्षेत्रफल ही उपयोग में लाया जा रहा है जिसका कारण यह है कि सिंचाई के साधनों में अधिकांश डीजल चालित नलकूप/पम्पिंग सेट्स होने के कारण इन फसलों की उत्पादन लागत अधिक हो जाती है। तेज गर्मी, लू के कारण इन फसलों को अत्याधिक पानी की आवश्यकता होती है। सरकारी नहर इस मौसम में न तो उचित मात्रा में और न उचित समय पर पानी उपलब्ध करा पाती है जिसके कारण इस मौसम में कम क्षेत्र पर कृषि कार्य सम्पन्न हो पाता है।

विभिन्न फसलों की औसत उत्पादकता:

इस ग्राम में उगाई जानेवाली विभिन्न फसलों का औसत उत्पादन तथा इस उत्पादन की जनपदीय औसत से तुलना सारणी 6.24 में प्रस्तुत की जा रही है। सारणी के अनुसार इस ग्राम की अधिकांश फसलों का औसत उत्पादन जनपदीय स्तर की तुलना में श्रेष्ठ है। ज्वार, मक्का, उर्द/मूंग ही ऐसी फसलें हैं जो जनपदीय स्तर की तुलना में निम्न उत्पादकता का प्रदर्शन कर रही हैं जबकि क्षेत्रफल की दृष्टि से यह फसल नगण्य हैं।

सारणी क्रमांक 6.24: विभिन्न फसलों का औसत उत्पादन
(प्रति हेक्टेअर किलोग्राम में)

फसल	उत्पादन	जनपद का उत्पादन	जनपदीय स्तर से अधिक/कम प्रतिशत में
1. धान	1964	1959	+0.26
2. ज्वार	962	1012	-4.96
3. बाजरा	1595	1512	+5.49
4. मक्का	1354	1365	-0.81
5. गेहूँ	2464	2494	-1.20
6. जौ	2068	1892	+9.30
7. अरहर	1655	1314	+25.95
8. चना	1452	1270	+14.33
9. मटर	1763	1642	+7.37

10. उर्द/मूंग	418	458	-8.73
11. लाही	1362	1236	+10.19
12. आलू	19143	18672	+2.52
13. गन्ना	38078	33682	+13.05

मुख्य फसल गेहूं की औसत उत्पादकता में 1.20 प्रतिशत की कमी अवश्य इस ग्राम के लिए चिन्ता की बात है क्योंकि इस फसल का इस गांव पर एकाधिकार है और खाद्यान्नों में यह फसल सर्वाधिक मात्रा की आपूर्ति करती है। ग्रामीण जन समुदाय के भोजन में प्रोटीन एक महत्वपूर्ण पोषक तत्व की आवश्यकता होती है जिसकी सर्वाधिक आपूर्ति दलहनी फसलें करती हैं। इस गांव के लिए सर्वाधिक सन्तोषजनक तथ्य यह है कि सभी दलहनी फसलों की औसत उत्पादकता जनपदीय स्तर से अधिक है, इनमें से अरहर की औसत उत्पादकता सर्वाधिक 25.95 प्रतिशत है। यह एक प्रसन्नता की बात हैं इसी प्रकार चना, मटर भी क्रमशः 14.33 प्रतिशत और 7.37 प्रतिशत अधिक उत्पादन करके श्रेष्ठ प्रदर्शन कर रही हैं, परन्तु इनका क्षेत्रफल अत्यन्त कम होने के कारण बहुत अच्छे परिणाम देने की स्थिति में यह फसले नहीं हैं। इसलिए इनके क्षेत्रफल में वृद्धि करके सुखद परिणाम प्राप्त किए जा सकते हैं। उत्पादन की दृष्टि से वाणिज्यिक फसलों का प्रदर्शन दलहनी फसलों से अधिक पीछे नहीं है। इनमें से लाही की औसत उत्पादकता 10. 19 प्रतिशत अधिक होने से इस गांव के लिए यह फसल अधिक उपयोगी है क्योंकि यह न केवल तेल की आवश्यकता को पूरा करती है बल्कि कृषकों को नकद धन भी उपलब्ध कराती है। साथ ही लागत कम होने के कारण लाभदायक भी है। यद्यपि नकदी फसलों में गन्ना का उत्पादन सर्वाधिक अच्छा प्रदर्शन कर रहा है परन्तु क्षेत्रफल में अत्यन्त कम होने के कारण इसका अधिक लाभ कृषकों को नहीं प्राप्त हो पाता है। हां आलू को वर्ष भर सब्जी के रूप में प्रयोग किया जाता है, इस फसल की अधिक उत्पादकता सन्तोष की बात है।

प्रति व्यक्ति खाद्य पदार्थों की प्राप्ति तथा कुल उत्पादन के आधार पर इस ग्राम का एक आहार संतुलन पत्रक तैयार किया गया है। जिसमें खाद्यान्न की उपलब्ध मात्रा तथा उससे प्राप्त पोषक तत्वों का आंकलन किया

सारिणी क्रमांक 6.25: विभिन्न खाद्य पदार्थों की प्रति व्यक्ति प्रतिदिन उपलब्ध मात्रा तथा उससे प्राप्त पोषक तत्व (ग्राम पशुआ)

खाद्य पदार्थ	मात्रा ग्राम	ऊर्जा कैलोरी	प्रोटीन ग्राम	वसा ग्राम	खनिज ग्राम	फाइबर ग्राम	कार्बोहाइड्रेट्स ग्राम	कैल्सियम मि0ग्रा0	फास्फोरस मि0ग्रा0	लौह मि0ग्रा0	कैरोटिन म्यू ग्रा0	थियामिन मि0ग्रा0	राइबोफ्लेविन मि0ग्रा0	नियासिन मि0ग्रा0	विटामिन सी
1. चावल	269.63	930.22	20.22	2.70	2.43	1.62	206.81	26.96	512.30	8.63	5.39	0.57	0.43	10.52	0
2. ज्वार	11.72	40.90	1.22	0.22	0.19	0.19	8.51	2.93	26.02	0.68	5.51	0.04	0.02	0.36	0
3. बाजरा	31.74	114.58	3.68	1.59	0.73	0.38	21.42	13.33	93.95	1.59	41.90	0.10	0.08	0.73	0
4. मक्का	89.24	310.56	9.91	3.21	1.34	2.41	59.08	8.92	310.56	1.78	80.32	0.37	0.09	1.61	0
5. गेहूं	498.96	1726.40	58.88	7.48	7.48	5.99	355.26	204.57	1526.82	24.45	319.33	2.25	0.85	27.44	0
6. जौ	32.75	110.04	3.77	0.43	0.39	1.28	22.79	8.52	70.41	0.98	3.28	0.15	0.07	1.77	0
7. अरहर	8.80	29.48	1.96	0.15	0.31	0.13	5.07	6.42	26.75	0.51	11.62	0.04	0.02	0.26	0
8. चना	32.78	121.94	6.82	1.84	0.89	0.39	19.96	42.29	108.50	2.98	42.29	0.12	0.06	0.85	0
9. मटर	7.88	24.82	1.55	0.09	0.17	0.35	4.45	5.91	23.48	0.40	3.07	0.04	0.01	0.27	0
10. उर्द/मूंग	0.99	3.45	0.22	0	0.03	0.05	0.57	2.84	3.08	0.08	0.70	0	0	0.01	0.01
11. लाही/सरसों	18.46	166.14	0	18.46	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0
12. आलू	191.92	186.16	3.07	0.19	1.15	0.77	43.37	19.19	76.77	1.34	46.06	0.19	0.02	2.30	32.63
13. गुड़/गन्ना	16.43	62.93	0.07	0.02	0.1	0	15.61	13.14	6.57	1.87	27.60	0	0.01	0.08	0
योग	1211.30	3827.62	111.40	36.38	15.21	13.56	762.90	355.02	2785.21	45.29	587.07	3.87	1.66	46.20	32.64

गया है जिसे सारणी क्रमांक 6.25 में प्रस्तुत किया जा रहा है।

सारणी क्रमांक 6.25 ग्राम पशुआ में वर्ष भर में उत्पन्न की जानेवाली विभिन्न फसलों से प्राप्त होनेवाले उत्पादन की प्रति व्यक्ति मात्रात्मक तथा गुणात्मक उपलब्धता का चित्रण कर रही है। सारणी से ज्ञात होता है कि अन्न की मात्रात्मक उपलब्धि 934.04 ग्राम प्रति व्यक्ति है, जबकि दलहन फसलों के उत्पादन की 50.45 ग्राम तथा 226.81 ग्राम नकदी फसलों से प्राप्त उत्पादन से होती है। प्रति व्यक्ति मात्रात्मक उपलबधता 1211.30 है जो कि मानक स्तर से बहुत अधिक है। यदि कृषि मौसम की फसलों पर विचार करें तो 411.13 ग्राम तथा रबी की फसलों का 572.37 ग्राम हिस्सा है और शेष वाणिज्यिक फसलें उपलबध करा रही हैं। विभिन्न खाद्य पदार्थों से प्राप्त होनवाली कुल ऊर्जा 3827.62 कैलोरी हैं जो मानक स्तर से बहुत अधिक हैं, इनमें से 3232.7 कैलोरी अन्न से तथा 176.24 कैलोरी ऊर्जा दालों से प्राप्त हो रही है। इस ग्राम में कृषि फसलों के उत्पादन में परम्परागत अन्न की फसलों को अधिक महत्व दिया जा रहा है जबकि मोटे अनाजों तथा दालों की भागेदारी सामान्य से कम है। अतः इनके क्षेत्रफल में वृद्धि की महती आवश्यकता है।

6. ग्राम मधवापुरः

सहार विकासखण्ड के अन्तर्गत ग्राम मधवापुर कंचौसी से लहरापुर सड़क मार्ग पर कंचौसी रेलवे स्टेशन से लगभग 4 किलोमीटर उत्तर में स्थित है। विकासखण्ड कार्यालय यहाँ से लगभग 17 किलोमीटर उत्तर में स्थित है। गांव के उत्तर में अरिन्द नदी गाँव की उत्तर सीमा निर्धारित करती है। यहाँ के निवासियों का प्रधान व्यवसाय कृषि है। कृषि में खरीफ तथा रबी की फसलों का विशेष महत्व है। गाँव में नदी के किनारे की भूमि को छोड़कर अधिकतर भूमि पर सिंचाई द्वारा कृषि की जाती है। सिचाई का प्रमुख साधन निजी नलकूप है। गाँव के दक्षिण की भूमि समतल एवं उपजाऊ है, जहाँ की कृषि में सीमित आधुनिक कृषि तकनीक का प्रयोग होता है। ट्रैक्टर , थ्रेसर नये उन्नतशील बीज,रासायनिक खादों का प्रयोग एवं सिचाई के लिए पम्पिग सेट का अधिक प्रयोग होता है। गाँव के उत्तर एवं पूर्व में ऊंची नीची भूमि पायी जाती है। जहाँ अधिक मोटे अनाज उगाये जाते है। जो कि पूर्णतया मानसूनी वर्षा पर निर्भर है।

सारणी क्रमांक 6.26: ग्राम मधवापुर की शस्य भूमि उपयोग

मद	क्षेत्रफल (हेक्टेअर)	प्रतिशत
1. प्रतिवेदित क्षेत्रफल	348	-
2. शुद्ध बोया गया क्षेत्रफल	282	81.03
3. एक से अधिक बार बोया गया क्षेत्रफल	125	44.33
4. सकल बोया गया क्षेत्र	407	144.33
5. शुद्ध सिंचित क्षेत्र	162	57.45
6. सकल सिंचित क्षेत्र	226	55.53
7. रबी का क्षेत्र	241	59.21
8. खरीफ का क्षेत्र	158	38.82
9. जायद का क्षेत्र	8	1.97

सारणी 6.26 ग्राम मधवापुर के शस्य भूमि उपयोग का विवरण

प्रस्तुत कर रही है। जिसमें इस गांव के लिए उपलब्ध प्रतिवेदित क्षेत्र 348 हेक्टेअर में से 81.03 प्रतिशत क्षेत्रफल को विभिन्न कृषि फसलों को उगाने के लिए उपयोग में लाया जा रहा है। सिचाई के विभिन्न साधनों द्वारा 57.45 प्रतिशत क्षेत्र को सिचाई सुविधायें प्राप्त है। कुल कृषि भूमि 282 हेक्टेअर भूमि का आधे से अधिक क्षेत्रफल दो या दो से अधिक फसलों को उगाने हेतु प्रयोग किया जा रहा है। जिस कारण इस गाँव का सकल बोया गया क्षेत्र 407 हेक्टेअर अर्थात 144.33 प्रतिशत हो जाता है। इस सकल बोए गए क्षेत्र में से 59.21 प्रतिशत क्षेत्र पर रबी की फसलें बोई जा रही हैं। 38.82 प्रतिशत क्षेत्र पर खरीफ की फसलें उगाई जाती हैं तथा 1.97 प्रतिशत क्षेत्रों पर जायद की फसलें अधिकृत हैं। जायद की फसलों में सब्जियां, खरबूज, तरबूज, ककड़ी तथा उर्द/मूंग महत्वपूर्ण फसलें हैं।

सारणी क्रमांक 6.27 ग्राम मधवापुर में उगाई जानेवाली फसलों के क्षेत्रफलीय वितरण का दृश्य प्रस्तुत कर रही है। जिसमें विभिन्न फसलों के अन्तर्गत खरीफ मौसम बाजरा तथा रबी की फसल की गेहूं लगभग समान महत्व प्रदर्शित कर रही है। खरीफ मौसम के दृष्टिकोण से बाजरा की फसल 58.23 प्रतिशत क्षेत्र पर अधिकृत होकर आधे से अधिक क्षेत्रों पर उगाई जा रही है। द्वितीय महत्वपूर्ण फसल धान है जो 16.46 प्रतिशत क्षेत्रों पर बोई जा रही है। तृतीय महत्वपूर्ण दलहनी फसल अरहर है जो 9.49 प्रतिशत क्षेत्र पर आच्छादित है। अन्य फसलों में खरीफ मौसम की सब्जियां महत्वपूर्ण स्थान रखती हैं। सब्जियों में लौकी, तरोई, भिण्डी तथा टिण्डा महत्वपूर्ण क्षेत्र पर उगाई जाती हैं। इस मौसम में उर्द/मूंग फसल भी इस ग्राम के लिए महत्वपूर्ण फसल है। रबी मौसम में गेहूं सर्वाधिक महत्वपूर्ण फसल है जो 41.08 प्रतिशत क्षेत्रफल पर उगाई जा रही है।

सारणी क्रमांक 6.27: विभिन्न फसलों के अन्तर्गत क्षेत्र का वितरण.

फसल का नाम	क्षेत्रफल(हे0)	प्रतिशत (सकल बोए गए क्षेत्र से)	प्रतिशत
खरीफ की फसलें	158	38.82	

1. धान	26	6.39	16.46
2. ज्वार	04	0.98	2.53
3. बाजरा	92	22.7	58.23
4. मक्का	10	2.46	6.33
5. अरहर	15	3.69	9.49
6. अन्य	10	2.46	6.33
रबी की फसलें	241	59.21	
1. गेहूं	99	24.32	41.08
2. जौ	21	5.16	8.71
3. चना	33	8.11	13.69
4. मटर	23	5.65	9.54
5. लाही	48	11.79	19.91
6. आलू	02	0.49	0.83
7. गन्ना	04	0.98	1.66
8. अन्य	11	2.70	4.56
जायद की फसलें	8	1.97	
योग		100	

इस मौसम में द्वितीय महत्वपूर्ण फसल लाही/सरसों हैं जो 19.91 प्रतिशत क्षेत्रफल पर अपना अधिकर किए हुए है। दलहनी फसलों में चना 13.69 प्रतिशत क्षेत्र पर सर्वाधिक महत्व प्रदर्शित कर रहा है। अन्य फसलों में भी इस मौसम में सब्जी का महत्वपूर्ण स्थान है जिसमें बैंगन, टमाटर, गोभी, मटर तथा मिर्च का महत्वपूर्ण स्थान है। यह आश्चर्यजनक तथ्य है कि इस सीजन में आलू का क्षेत्र अत्यन्त सीमित है और यह फसल केवल दो हेक्टेअर पर उगाई जाती है।

भूमि पर जनसंख्या का भारः

ग्राम मधवापुर में 449 परिवारों में कुल 2686 जनसंख्या निवास करती है जो मूलतः कृषि तथा कृषि के सहायक कार्यों पर आधारित है। प्रति व्यक्ति विभिन्न प्रकार की भूमि उपलब्धता के आधार पर जनसंख्या के भार की गणना सारणी 6.28में प्रस्तुत की गयी है।

सारणी क्रमांक 6.28 ग्राम मधवापुर की भूमि पर पड़ने वाले भार का विवरण प्रस्तुत कर रही है। जिसके अनुसार इस ग्राम की प्रति व्यक्ति उपलब्ध 0.1296 हेक्टेअर भूमि में से 0.1050 हेक्टेअर भूमि का उपयोग विभिन्न कृषि फसलों के लिए किया जा रहा है यह हिस्सा इस तथ्य की ओर संकेत करता है कि इस ग्राम में विस्तृत खेती पर अधिक ध्यान दिया जा रहा है परन्तु सिंचाई के साधनों के आधार पर कृषि को अधिक गहराई से प्रयोग करने की प्रवृत्ति नहीं दिखाई पड़ रही है। क्योंकि दो या दो से अधिक फसलों का प्रति व्यक्ति केवल 0.0465 हेक्टेअर है जो एक सामान्य स्तर का है। साथ ही प्रति व्यक्ति 0.1050 हेक्टेअर क्षेत्र कृषि फसलों के लिए उपलब्ध होने के बावजूद भी खरीफ की फसलों के लिए मात्र 0.0588 हेक्टेअर क्षेत्रफल का उपयोग दर्शा रहा है कि कृषि का अच्छा उपयोग अभी तक नहीं हो पाया है। रबी की फसलों के अन्तर्गत 0.0897 हेक्टेअर प्रति व्यक्ति भूमि का उपयोग अवश्य कुशल भूमि उपयोग की ओर संकेत करता है। जायद की फसलों के अन्तर्गत 0.0030 हेक्टेअर क्षेत्र का उपयोग अन्य गांवों की अपेक्षा अधिक क्षेत्रफल दर्शा रहा है, परन्तु इतना अधिक नहीं कि जिसका लाभ कृषकों को हो सके।

व्यवसायिक संरचना के आधार पर देखा जाये तो इस ग्राम की 85 प्रतिशत से अधिक जनसंख्या पूर्णतया कृषि उत्पादन पर आधारित है और 13 प्रतिशत से अधिक जनसंख्या कृषि के सहायक कार्यों में संलग्न होने के कारण द्वितीयक रूप से कृषि पर आश्रित है। जनसंख्या का एक नगण्य भाग गावं के बाहर रहकर नौकरी या व्यवसायिक कार्यों में संलग्न है। जो अपनी खाद्यान्न आपूर्ति गांव से ही करते हैं। इस प्रकार गांव की लगभग सम्पूर्ण जनसंख्या कृषि पर निर्भर है।

सारणी क्रमांकः 6.28- भूमि पर जनसंख्या का भार (हेक्टेअर में)

	कुल प्रतिवेदित क्षेत्र	कृषि के लिए उपलब्ध क्षेत्र	एक से अधिकबार बोया गया क्षेत्र	सकल बोया गया क्षेत्र	शुद्ध सिंचित क्षेत्र	सकल सिंचित क्षेत्र	रबी का क्षेत्र	खरीफ का क्षेत्र	जायद का क्षेत्र
प्रति व्यक्ति	०.१२६६	०.१०५०	०.०४६५	०.१५१५	०.०६०३	०.०८४१	०.०८६७	०.०५८८	०.००३०

विभिन्न फसलों की औसत उत्पादकता:

ग्राम मधवापुर में उत्पन्न की जानेवाली विभिन्न फसलों तथा जनपद की फसलों से प्राप्त औसत उत्पादन का तुलनात्मक विवरण सारणी 6.29 में दर्शाया जा रहा है।

सारणी क्रमांक 6.29: विभिन्न फसलों का औसत उत्पादन प्रति हेक्टेअर (किलोग्राम)

	फसल	उत्पादन	जनपद का उत्पादन	जनपदीय स्तर से अधिक/ कम (प्रतिशत में)
1.	धान	1902	1950	-2.46
2.	ज्वार	1019	1006	+1.29
3.	बाजरा	1548	1508	+2.65
4.	मक्का	1392	1361	+2.28
5.	गेहूं	2516	2492	+0.96
6.	जौ	1855	1891	-1.90
7.	अरहर	1264	1306	-3.22
8.	चना	1350	1271	+6.22
9.	मटर	1735	1642	+5.66
10.	उर्द/मूंग	495	460	+7.61
11.	लाही	1120	1232	-9.09
12.	आलू	20642	18672	+10.55
13.	गन्ना	34738	33682	+3.14

जिसके अनुसार मधवापुर ग्राम में उत्पादित की जानेवाली विभिन्न फसलों का औसत उत्पादन जनपदीय स्तर से अधिक अच्छीस्थिति को प्रदर्शित कर रहा है। यह ग्राम केवल धान के उत्पादन में 2.46 प्रतिशत, जौ 1.90 प्रतिशत, अरहर 3.22 प्रतिशत तथा लाही/सरसों 9.09 प्रतिशत उत्पादन में पिछड़ रहा है। जबकि अन्न उत्पादित करने वाली अन्य फसलों में ज्वार 1.29 प्रतिशत, बाजरा 2.65 प्रतिशत, मक्का 2.28 प्रतिशत, गेहूं में 0.92 प्रतिशत अधिक श्रेष्ठता में प्राप्त किए हुए हैं। दलहनी फसलों में केवल अरहर का उत्पादन जनपदीय औसत उत्पादन से पिछड़ रहा है, अन्य

सारिणी क्रमांक 6.30: विभिन्न खाद्य पदार्थों की प्रति व्यक्ति प्रतिदिन उपलब्ध मात्रा तथा उससे प्राप्त पोषक तत्व (ग्राम-मधवापुर)

खाद्य पदार्थ	मात्रा ग्राम	ऊर्जा कैलोरी	प्रोटीन ग्राम	वसा ग्राम	खनिज ग्राम	फाइबर ग्राम	कार्बोहाइड्रेट्स ग्राम	कैल्सियम मि0ग्रा0	फास्फोरस मि0ग्रा0	लौह मि0ग्रा0	कैरोटिन म्यू ग्रा0	थियामिन मि0ग्रा0	राइबोफ्लेविन मि0ग्रा0	नियासिन मि0ग्रा0	विटामिन सी
1. चावल	183.38	632.66	13.75	1.83	1.65	1.1	140.65	18.34	348.42	5.87	3.67	0.39	0.29	7.15	0
2. ज्वार	14.16	49.42	1.47	0.27	0.23	0.23	10.28	3.54	31.44	0.82	6.66	0.05	0.02	0.44	0
3. बाजरा	107.38	387.64	12.46	5.37	2.47	1.29	72.48	45.1	317.84	5.37	141.74	0.35	0.27	2.47	0
4. मक्का	9.98	34.73	1.11	0.36	0.15	0.27	6.61	1	34.73	0.2	8.98	0.04	0.01	0.18	0
5. गेहूं	317.46	1098.41	37.46	4.76	4.76	3.81	226.03	130.16	971.43	15.56	203.17	1.43	0.54	17.46	0
6. जौ	43.36	145.69	4.99	0.56	0.52	1.69	30.18	11.27	93.22	1.3	4.34	0.2	0.09	2.34	0
7. अरहर	18.67	62.54	4.16	0.32	0.65	0.28	10.75	13.63	56.76	1.08	24.64	0.08	0.04	0.54	0
8. चना	34.31	127.63	7.14	1.92	0.93	0.41	20.89	44.26	113.57	3.12	44.26	0.13	0.06	0.89	0
9. मटर	34.98	110.19	6.89	0.38	0.77	1.57	19.76	26.24	104.24	1.78	13.64	0.16	0.07	1.19	0
10. उर्द/मूंग	2.83	9.85	0.62	0.01	0.09	0.15	1.62	8.12	8.8	0.24	2.01	0.01	0.01	0.04	0.03
11. लाही/सरसों	28.62	257.58	0	28.62	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0
12. आलू	45.43	44.07	0.73	0.05	0.27	0.18	10.27	4.54	18.17	0.32	10.9	0.05	0	0.55	7.72
13. गुड़/गन्ना	26.63	101.99	0.11	0.03	0.16	0	25.3	21.3	10.65	3.04	44.74	0.01	0.01	0.13	0
योग	867.19	3062.4	90.89	44.48	12.65	10.98	574.82	327.5	2109.27	38.7	508.75	2.9	1.41	33.38	7.75

फसलें चना 6.22 प्रतिशत, मटर 5.66 प्रतिशत, उर्द/मूंग 7.61 प्रतिशत उत्पादन अधिक है। वाणिज्यिक दृष्टि से लाही का उत्पादन पिछड़ रहा है जो एक चिन्ता का विषय है क्योंकि क्षेत्रफल की दृष्टि से यही एक फसल इस ग्राम की महत्वपूर्ण फसल है। अन्य फसलें आलू तथा गन्ना यद्यपि बढ़त दे रही हैं परन्तु क्षेत्रफल में अत्यन्त सीमित होने के कारण कृषकों को लाभ नहीं दे पा रही हैं। अतः तिलहनी फसलों के औसत उत्पादन को बढ़ाने का प्रयास किया जाना चाहियें, क्योंकि यह फसल न केवल तेल के उपयोग की आपूर्ति करती है बल्कि नकद धन भी एकत्रित कराती है।

ग्राम में उत्पन्न होनवाली विभिन्न फसलों के उत्पादन तथा गांव की कुल जनसंख्या के आधार पर गांव का 'आहार संतुलन पत्रक' तैयार किया गया है जिसमें विभिन्न खाद्य पदार्थो की प्रति व्यक्ति उपलब्धता तथा उनसे प्राप्त होनेवाले पोषक तत्वों की गणना सारणी क्रमांक 6.30 में प्रस्तुत किया गया है।

सारणी क्रमांक 6.30 ग्राम मधवापुर के खाद्य संतुलन को प्रस्तुत कर रही है जिसके अनुसार इस ग्राम की ग्रामीण जनसंख्या को प्रति व्यक्ति 867.19 ग्राम खाद्य पदार्थ उपलब्ध हैं जो आवश्यक मानक स्तर के आसपास है। इस मात्रात्मक उपलब्धता में 675.72 ग्राम खाद्य अन्न उत्पादित फसलों से प्राप्त हो रहा है जबकि 90.79 ग्राम दलहनी फसलों से तथा शेष 100.68 ग्राम वाणिज्यिक फसलों आलू, लाही/सरसों तथा गन्ना से प्राप्त हो रही है। विभिन्न खाद्य पदार्थो से प्राप्त होनेवाले पोषक तत्वों में ऊर्जा उपलब्धि की दर से देखें तो प्रति व्यक्ति ऊर्जा की उपलब्धता 3062.4 कैलोरी ऊर्जा प्रतिदिन प्राप्त हो रहा है जिसमें 2348. 55 कैलोरी ऊर्जा अन्न उत्पादित खाद्य से प्राप्त हो रही है। यह कुल उपलब्ध ऊर्जा का लगभग 76 प्रतिशत है। दलहन से 310.20 कैलोरी ऊर्जा प्राप्त हो रही है। वाणिज्यिक फसलों से 403.64 कैलोरी ऊर्जा उपलब्ध है। यदि प्रोटीन की दृष्टि से देखें तो कुल 90.89 ग्राम प्रोटीन में से 67 प्रतिशत से अधिक की भागेदारी गेहूं तथा बाजरा के उत्पादन से उपलब्ध हो रही है।

7. ग्राम करवाउतू:

करवाउतू गांव इटावा जनपद के औरैया तहसील और औरैया विकासखण्ड क्षेत्र में औरैया कस्बे से 3 किलोमीटर उत्तर पूर्व दिशा में स्थित है। यह गांव यमुना तथा सेंगर नदी के बीच में स्थित होने के कारण एक बहुत ही उपजाऊ एवं समतल क्षेत्र है। यह जनपद का बहुत ही महत्वपूर्ण कृषि क्षेत्र है, इसमें दो पुरवा स्थित हैं, जिसमें एक बड़ा है जो गांव के दक्षिण में स्थित है। औरैया तहसील के निकट स्थित होने के कारण इस गांव की कृषि पर आधुनिक तकनीकी पर काफी प्रभाव पड़ा है। लेकिन जनसंख्या अधिक होने के कारण जोतों का आकार छोटा है। इस कारण कृषि में अभी तक आधुनिक तकनीक का प्रयोग सीमित मात्रा में हो सका है। गांव में कृषि के अन्तर्गत ट्रैक्टर्स, थ्रेसर, उन्नत किस्म के बीजों का प्रयोग, रासायनिक उवर्रकों और कीटनाशकों का प्रयोग गांव के लोगों की जागरूकता का प्रमुख उदाहरण है। गांव में सिंचाई मुख्य रूप से नहर द्वारा होती है। जहां पर नहर का पानी नहीं नहुंच पाता है वहां पर निजी नलकूपों की व्यवस्था है। यहां पर परम्परागत फसलों का अधिक प्रचलन है। व्यवसायिक फसलों का महत्व भी धीरे-धीरे बढ़ रहा हैं गन्ना तथा सब्जियों की फसलों को विशेष महत्व दिया जा रहा है। इस गांव का भविष्य अधिक उज्जवल है।

शस्य भूमि उपयोग:

जनसंख्या तथा कृषि क्षेत्रफल दोनों ही दृष्टियों से यह गांव सर्वेक्षित सभी गांवों से बड़ा है। इस ग्राम में शस्य भूमि उपयोग को सारणी 6.31 में प्रस्तुत किया जा रहा है।

सारणी 6.31 करवाउतू ग्राम का शस्य भूमि उपयोग

	क्षेत्रफल (हेक्टेअर)	प्रतिशत
1. प्रतिवेदित क्षेत्र	632	-
2. शुद्ध बोया गया क्षेत्र	499	78.96
3. एक से अधिक बार बोया गया क्षेत्र	229	45.89
4. सकल बोया गया क्षेत्र	728	145.89
5. शुद्ध सिंचित क्षेत्र	386	77.35

6. सकल सिंचित क्षेत्र	536	73.63
7. रबी का क्षेत्र	427	58.65
8. खरीफ का क्षेत्र	292	40.11
9. जायद का क्षेत्र	10	1.37

सारणी क्रमांक 6.31 ग्राम करवाउतू के शस्य भूमि उपयोग का विवरण प्रस्तुत कर रही है जिसमें इस गांव के लिए उपलब्ध कुल प्रतिवेदित क्षेत्र के 78.96 प्रतिशत क्षेत्रफल पर विभिन्न फसलें उगाई जाती हैं। नहरों से सिंचित होने के कारण कुल कृषि भूमि का 77.35 प्रतिशत क्षेत्रफल सिंचित है। नहरों के अतिरिकत डीजल चालित निजी नलकूप अथवा पम्पिंग सेट्स भी इस गांव की भूमि को सिंचाई सुविधा उपलब्ध कराते हैं। जिसके कारण सकल बोए गए क्षेत्र में 45.89 प्रतिशत की वृद्धि हो जाती है और सकल बोया गया क्षेत्रफल 728 हेक्टेअर हो जाता है। इस सकल बोए गए क्षेत्र के 58.65 प्रतिशत भूमि पर रबी मौसम की फसलें, 40.11 प्रतिशत क्षेत्र पर खरीफ मौसम की फसलें तथा जायद मौसम में 1.37 प्रतिशत क्षेत्र आच्छादित रहता है। शुद्ध बोए गए क्षेत्र के 45.89 प्रतिशत भूमि पर दो या दो से अधिक फसलें उगाई जाती हैं। जायद मौसम में यहां ककड़ी, खरबूजा, तरबूज तथा सब्जियों का प्रमुख स्थान है।

विभिन्न फसलों के अन्तर्गत क्षेत्रफल वितरण:

सारणी 6.32 ग्राम करवाउतू में वर्ष में उगाई जानेवाली विभिन्न फसलों के अन्तर्गत क्षेत्रफल वितरण को दर्शा रही है।

सारणी 6.32: विभिन्न फसलों के अन्तर्गत क्षेत्रफल का वितरण

फसल	क्षेत्रफल (हेक्टेअर)	प्रतिशत	प्रतिशत
अ. खरीफ की फसलें	292	40.11	
1. धान	62	8.52	21.23
2. ज्वार	18	2.47	6.16
3. बाजरा	138	18.96	47.26

4. मक्का	25	3.43	8.56
5. अरहर	31	4.26	10.62
6. अन्य	18	2.47	6.16
ब. रबी की फसलें	427	58.65	
1. गेहूँ	202	27.75	47.31
2. जौ	24	3.30	5.62
3. चना	45	6.18	10.54
4. मटर	93	12.77	21.78
5. लाही	42	5.77	9.84
6. आलू	07	0.96	1.64
7. गन्ना	07	0.96	1.64
8. अन्य	17	2.34	3.98
स. जायद की फसलें	10	1.37	
कुल प्रतिशत		100.13 या 100	

सारणी 6.32 ग्राम करवाउतू में उगाई जानेवाली विभिन्न फसलों में क्षेत्रफल वितरण के अनुसार इस ग्राम में गेहूं, बाजरा, मटर फसलें महत्वपूर्ण हैं और ये क्रमशः 27.75 प्रतिशत, 18.96 प्रतिशत तथा 12.77 प्रतिशत क्षेत्र पर अधिकृत हैं। ये तीनों फसलें 59 प्रतिशत से अधिक क्षेत्रफल पर अपना आधिपत्य स्थापित किए हुए हैं। इनमें से गेहूं तथा बाजरा खाद्यान्न फसलें हैं तथा मटर दलहनी फसल है। खरीफ मौसम में खाद्यान्न फसलों में धान 8.52 प्रतिशत क्षेत्रफल अधिकृत करके अपने महत्व को दर्शा रही है। क्षेत्रफल की दृष्टि से खरीफ मौसम के सम्पूर्ण क्षेत्रफल के 47.26 प्रतिशत क्षेत्रफल पर बाजरा की फसल उगाई जाती है जबकि इस मौसम में धान की फसल 21.23 प्रतिशत क्षेत्र पर भागेदारी कर रही है। इन दोनों फसलों द्वारा 68 प्रतिशत से अधिक हिस्सा अधिकृत किया जाता है। मक्का तथा अरहर लगभग समान स्तर का प्रदर्शन कर रही है। रबी मौसम में बोई जानेवाली फसलों में गेहूं का स्थान सर्वोपरि है और यह फसल 47.31

प्रतिशत क्षेत्रफल पर उगाई जाती है। मटर इस मौसम में दूसरा स्थान रखती है जो 27.78 प्रतिशत क्षेत्र पर अधिकार किए हुए है। इस मौसम में चना तथा लाही/सरसों की फसलें लगभग समान स्तर को प्रदर्शित कर रही हैं। इसके अतिरिक्त जौ 5.62 प्रतिशत क्षेत्रफल पर अधिकार करके कुछ कम महत्व को दर्शा रही हैं शेष फसलें अपने अस्तित्व के लिए संघर्ष सा करती प्रतीत हो रही हैं। जायद की फसलों में ककड़ी, खरबूजा, तरबूज तथा सब्जियों का स्थान प्रमुख है। उर्द/मूंग की फसल भी इस ग्राम के लिए महत्वपूर्ण है।

भूमि पर जनसंख्या का भार:

ग्राम करवाउतू की कुल कृषि भूमि 331 परिवारों में रहने वाले 1948 व्यक्तियों की आहार आवश्यकता को पूरा करती है। इस गांव की लगभग पूरी जनसंख्या कृषि पर निर्भर है। इस ग्राम की भूमि पर जनसंख्या का भार का विवरण सारणी क्रमांक 6.33 में प्रस्तुत किया जा रहा है।

सारणी 6.33 में ग्राम करवाउतू की भूमि पर जनसंख्या के भार को व्यक्त कर रही है। जिसके अनुसार कुल प्रतिवेदित क्षेत्रफल 0.3244 हेक्टेअर में से 0.2562 हेक्टेअर भूमि पर विभिन्न फसलें उगाई जाती हैं। शुद्ध बोए गए क्षेत्रफल 0.2562 हेक्टेअर भूमि में से 0.1176 हेक्टेअर क्षेत्रफल पर दो या दो से अधिक फसलें उगाई जाती हैं जिसके कारण वर्ष भर में प्रतिव्यक्ति 0.3737 हेक्टेअर क्षेत्र विभिन्न फसलों को उगाने के लिए उपलब्ध हो जाती है। इस सकल बोये गये क्षेत्र में से 0.2752 हेक्टेअर क्षेत्रफल को सिंचन सुविधायें उपलब्ध है। कुल कृषि योग्य भूमि में 0.2192 हेक्टेअर क्षेत्रफल पर रबी की फसलें आच्छादित हैं जबकि खरीफ मौसम में 0.1499 हेक्टेअर क्षेत्रफल पर कृषि फसलें उगाई जाती हैं। जायद की फसलों के लिए मात्र 0.0051 हेक्टेअर क्षेत्रफल उपयोग में लाया जा रहा है।

व्यवसायिक संरचना के आधार पर पड़ने वाले भार की दृष्टि से विचार करें तो ग्राम करवाउतू की 80 प्रतिशत से अधिक जनसंख्या मूलतः कृषि तथा कृषि उपज पर आश्रित है जबकि 15 प्रतिशत से कम जनसंख्या कृषि के सहायक कार्यो में संलग्न रहकर कृषि पर आशिक अथवा पूर्ण रूप से निर्भर करती है। 5 प्रतिशत से भी कम जनसंख्या गाँव से वाहर रहकर सरकारी/निजी नौकरी अथवा अन्य व्यवसायिक कार्यो में संलग्न है।

सारणी क्रमांकः 6.33- भूमि पर जनसंख्या का भार (हेक्टेअर में)

	कुल प्रतिवेदित क्षेत्र	कृषि के लिए उपलब्ध क्षेत्र	एक से अधिकबार बोया गया क्षेत्र	सकल बोया गया क्षेत्र	शुद्ध सिंचित क्षेत्र	सकल सिंचित क्षेत्र	रबी का क्षेत्र	खरीफ का क्षेत्र	जायद का क्षेत्र
प्रति व्यक्ति	०.३२४४	०.२५६२	०.११७६	०.३७३७	०.१६८२	०.२७५२	०.२१६२	०.१४६६	०.००५१

अतः गाँव की लगभग सम्पूर्ण जनसंख्या आंशिक अथवा पूर्णरूप से कृषि पर ही निर्भर है।

विभिन्न फसलों का औसत उत्पादनः

ग्राम करवाउतू की विभिन्न फसलों का तथा जनपद की विभिन्न फसलों का तथा जनपद की विभिन्न फसलों के औसत उत्पादन का तुलनात्मक विवेचन सारणी 6.34 में प्रस्तुत किया गया है। सारणी से ज्ञात होता है की ग्राम में अन्नोत्पादन वाली फसलों में केवल बाजरा की औसत उत्पादकता जनपदीय स्तर से 0.86 प्रतिशत कम है। अन्य सभी अन्नोत्पादन वाली फसलों गेहूँ की सर्वाधिक 6.50 प्रतिशत, धान की 4.51 प्रतिशत, मक्का 3.44 प्रतिशत, ज्वार की 0.89 प्रतिशत तथा जौ की औसत उत्पादकता 1.16 प्रतिशत जनपद की तुलना में अधिक है। परन्तु दलहनी फसलों में केवल चना औसत उत्पादन में 13.31 प्रतिशत बढ़त लिए हुए है, जबकि अरहर 3.68 प्रतिशत, मटर 10.68 प्रतिशत तथा उर्द/मूंग 4.65 प्रतिशत पिछड़ रही है। वाणिज्यिक फसलों में लाही/सरसों तथा आलू के औसत उत्पादन में क्रमशः 11.75 प्रतिशत, 9.15 प्रतिशत की वृद्धि कृषकों के लिए सन्तोषजनक बात है, जबकि गन्ना का उत्पादन 11.27 प्रतिशत पिछड़ना निराशाजनक स्थिति पैदा करता है।

सारणी क्रमांक 6.34: विभिन्न फसलों का औसत उत्पादन
(प्रति हेक्टेअर किलोग्राम में)

फसल	उत्पादन	जनपद का उत्पादन	जनपदीय स्तर से अधिक/कम प्रतिशत में
1. धान	2041	1953	+4.51
2. ज्वार	1017	1008	+0.89
3. बाजरा	1500	1513	-0.86
4. मक्का	1412	1365	+3.44
5. गेहूँ	2654	2492	+6.50
6. जौ	1913	1891	+1.16

7. अरहर	1258	1306	−3.68
8. चना	1430	1262	+13.31
9. मटर	1455	1629	−10.68
10. उर्द/मूंग	431	452	−4.65
11. लाही	1370	1226	+11.75
12. आलू	20376	18667	+9.15
13. गन्ना	29884	33678	−11.27

ग्राम के कुल उत्पादन तथा जनसंख्या के आधार पर एक आहार संतुलन पत्रक तैयार किया गया है जिनमें ग्राम की कुल जनसंख्या की प्रति व्यक्ति प्रतिदिन खाद्य पदार्थों की औसत उत्पादकता तथा उस मात्रा से उपलब्ध पोषक तत्वों की गणना की गई हैं। जिसे सारणी 6.35 में प्रस्तुत किया जा रहा है।

सारणी 6.35 ग्राम करवाउतू की ग्रामीण जनसंख्या को कुल उपलब्ध खाद्य पदार्थों में से प्राप्त पोषक तत्वों का विवरण प्रस्तुत कर रही है। जिसके अनुसार इस ग्राम को कुल कृषि उत्पादन से प्रति व्यक्ति 890.4 ग्राम खाद्य पदार्थ उपलब्ध हैं, इनमें से 630.17 ग्राम अन्न, 131.09 ग्राम दालें तथा 129.14 ग्राम अन्य फसलों लाही/सरसों, आलू तथा गन्ना की भागेदारी है। दलहन तथा वाणिज्यिक फसलें लगभग समान दृश्य प्रदर्शित कर रही हैं। विभिन्न खाद्य पदार्थों से प्राप्त होनेवाली ऊर्जा तथा प्रोटीन के दृष्टिकोण से देखें तो ऊर्जा उपलब्धता में यह गांव प्रतिव्यक्ति 2915.8 कैलोरी तथा प्रोटीन की उपलब्धता 96.03 ग्राम के स्तर को प्राप्त कर रहा है, जबकि ऊर्जा उपलब्धता में 2194.4 कैलोरी अन्न से, 437.47 कैलोरी दलहनी फसलों से तथा शेष 283.93 कैलोरी ऊर्जा अन्य वाणिज्यिक फसलों से उपलब्ध है। इसी प्रकार प्रोटीन उपलबधता में 74 प्रतिशत से अधिक प्रोटीन अन्न की फसलों से, 26 प्रतिशत से अधिक दलहनी फसलों से तथा शेष अन्य वाणिज्यिक फसलों से प्रोटीन उपलब्ध है।

सारिणी क्रमांक 6.35 विभिन्न खाद्य पदार्थों की प्रति व्यक्ति प्रतिदिन उपलब्ध मात्रा तथा उससें प्राप्त पोषक तत्व (ग्राम कखावत्)

खाद्य पदार्थ	मात्रा ग्राम	ऊर्जा कैलोरी	प्रोटीन ग्राम	वसा ग्राम	खनिज ग्राम	फाइबर ग्राम	कार्बोहाइड्रेट्स ग्राम	कैल्सियम मि0ग्रा0	फास्फोरस मि0ग्रा0	लौह मि0ग्रा0	कैरोटिन म्यू ग्रा0	थियामिन मि0ग्रा0	राइबोफ्लेविन मि0ग्रा0	नियासिन मि0ग्रा0	विटामिन सी
1. चावल	148.15	511.12	11.11	1.48	1.33	0.89	113.63	14.82	281.49	4.74	2.96	0.31	0.24	5.78	0
2. ज्वार	4.39	15.32	0.46	0.08	0.07	0.07	3.19	1.1	9.75	0.25	2.06	0.02	0.01	0.14	0
3. बाजरा	122.13	440.89	14.17	6.11	2.81	1.47	82.44	51.29	361.5	6.11	161.21	0.4	0.31	2.81	0
4. मक्का	14.72	51.23	1.63	0.53	0.22	0.4	9.74	1.47	51.23	0.29	13.25	0.06	0.01	0.26	0
5. गेहूं	308.19	1066.34	36.37	4.62	4.62	3.7	219.43	126.36	943.06	15.1	197.24	1.39	0.52	16.95	0
6. जौ	32.59	109.5	3.75	0.42	0.39	1.27	22.68	8.47	70.07	0.98	3.26	0.15	0.07	1.76	0
7. अरहर	17.46	58.49	3.89	0.3	0.61	0.26	10.06	12.75	53.08	1.01	23.05	0.08	0.03	0.51	0
8. चना	29.28	108.92	6.09	1.64	0.79	0.35	17.83	37.77	96.92	2.66	37.77	0.11	0.05	0.76	0
9. मटर	71.15	224.12	14.02	0.78	1.57	3.2	40.2	53.36	212.03	3.63	27.75	0.33	0.14	2.42	0
10. उर्द/मूंग	13.2	45.94	2.9	0.07	0.42	0.7	7.55	37.88	41.05	1.11	9.37	0.06	0.03	0.2	0.13
11. लाही/सरसों	13.59	122.31	0	13.59	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0
12. आलू	98.23	95.28	1.57	0.1	0.59	0.39	22.2	9.82	39.29	0.69	23.58	0.1	0.01	1.18	16.7
13. गुड़/गन्ना	17.32	66.34	0.07	0.02	0.1	0	16.45	13.86	6.93	1.97	29.1	0	0.01	0.09	0
योग	890.4	2915.8	96.03	29.74	13.52	12.7	565.4	368.95	2166.4	38.54	530.6	3.01	1.43	32.86	16.83

8. ग्राम वैसुन्धरा:

बाबरपुर दिबियापुर सड़क मार्ग पर स्थित वैसुन्धरा भाग्यनगर विकासखण्ड का एक महत्वपूर्ण गांव है। दिबियापुर रेलवे स्टेशन से यह ग्राम 6 किलोमीटर दक्षिण में स्थित है। दिबियापुर निकट स्थित होने के कारण गांव का विकास कार्य तेजी से हुआ है। एन0 टी0 पी0 सी0 एवं गेल की स्थापना के बाद इसका प्रभाव दिबियापुर के साथ-साथ निकटवर्ती गांवों पर भी पड़ा है। आज गांव का विकास काफी तेजी से हो रहा है। गांव की भूमि समतल है। परन्तु अधिक उपजाऊ न होने के कारण यहां की कृषि का स्वरूप धीरे-धीरे बदलने लगा है। जहां पर भूमि समतल और उपजाऊ है वहां गहरी खेती की जाती है। ग्राम की कृषि पर आधुनिकीकरण का काफी प्रभाव है। ग्राम की कृषि में ट्रैक्टर, थ्रेसर, रासायनिक खादों का प्रयोग एवं उत्तम बीजों का प्रयोग काफी मात्रा में होता है। गांव में मुख्य रूप से निर्वाहक कृषि का अधिक महत्व है, परन्तु धीरे-धीरे व्यवसायिक कृषि का भी विकास हो रहा है। यह गांव अब धीरे-धीरे व्यवसायिकता की ओर अग्रसर हो रहा है। अधिकतर लोग व्यवसायिक कार्य में लगे हुए है।

शस्य भूमि उपयोग:

ग्राम वैसुन्धरा में उपलब्ध भूमि का विभिन्न उद्देश्यों हेतु प्रयोग में किस प्रकार लाया जा रहा है, का विवरण सारणी 6.36 में प्रस्तुत किया जा रहा है।

सारणी 6.36 ग्राम वैसुन्धरा का शस्य भूमि उपयोग

मद	क्षेत्रफल (हेक्टेअर)	प्रतिशत
1. कुल प्रतिवेदित क्षेत्र	339	-
2. शुद्ध बोया गया क्षेत्र	271	79.94
3. एक से अधिक बार बोया गया क्षेत्र	117	43.17
4. सकल बोया गया क्षेत्र	388	143.17
5. शुद्ध सिंचित क्षेत्र	185	68.27
6. सकल सिंचित क्षेत्र	256	65.98
7. रबी का क्षेत्र	238	61.34
8. खरीफ का क्षेत्र	147	37.89
9. जायद का क्षेत्र	003	0.77

सारणी क्रमांक 6.36 ग्राम वैसुन्धरा के शस्य भूमि उपयोग का विवरण प्रस्तुत कर रही है। जिसके अनुसार इस गाँव का कुल प्रतिवेदित क्षेत्रफल 339 हेक्टेअर में से 79.94 प्रतिशत भूमि विभिन्न फसलों को उगाने हेतु काम में लायी जा रही है। इस उपलब्ध कृषि क्षेत्र के 68.27 प्रतिशत भाग को सिचाई की सुविधायें उपलब्ध है परन्तु शुद्ध बोये गये क्षेत्रफल का 43.17 प्रतिशत क्षेत्र ही दो या दो से अधिक फसलें उगाने के उपयोग में लाया जा रहा है।

सारणी क्रमांक 6.37: विभिन्न फसलों के अन्तर्गत वितरण

फसल	क्षेत्रफल(हेक्टेअर)	प्रतिशत	प्रतिशत
अ. खरीफ	147	37.89	
1. धान	56	14.43	38.10
2. ज्वार	11	2.84	7.48
3. बाजरा	47	12.11	31.97
4. मक्का	13	3.35	8.84
5. अरहर	12	3.09	8.16
6. अन्य	8	2.06	5.44
ब. रबी	238	61.34	
1. गेहूँ	137	35.31	57.56
2. जौ	18	4.64	7.56
3. चना	24	6.19	10.09
4. मटर	11	2.84	4.62
5. लाही/सरसों	37	9.54	15.55
6. आलू	2	0.52	0.84
7. गन्ना	2	0.52	0.84
8. अन्य	7	1.80	2.94
स. जायद	3	0.77	
योग		100	

जिससे इस गाँव की फसल गहनता सूचकांक 143.17 सदृश्य हो रहा है। सकल बोये गये क्षेत्रफल 388 हेक्टेअर के 147 हेक्टेअर अर्थात 37.89 प्रतिशत कृषि क्षेत्र को खरीफ की फसलों के लिये उपयोग में लाया जा रहा है, जबकि रबी फसलों के अन्तर्गत 238 हेक्टेअर अथवा 61.34 प्रतिशत क्षेत्र उपयोग में लाया जा रहा है। जायद फसलों में अन्य गावों की तरह इस गाँव में भी तरबूज, खरबूजा, शब्जियां तथा उर्द/मूंग की प्रमुखता देखी गयी। उर्द/मूंग फसलें खरीफ की फसलों के साथ भी उगायी जाती है।

विभिन्न फसलों के अन्तर्गत क्षेत्रफल वितरण:

ग्राम वैसुन्धरा में उगायी जाने वाली फसलों के अन्तर्गत क्षेत्रफल के वितरण का विवरण सारणी 6.37 प्रस्तुत कर रही हैं जिसमें खरीफ मौसम में उगाई जाने वाली फसलों में धान तथा बाजरा सर्वाधिक महत्वपूर्ण फसलें है और ये दोंनो फसलें क्रमशः 38.10 प्रतिशत तथा 31.97 प्रतिशत अर्थात कुल 70.07 प्रतिशत क्षेत्र पर उगाई जाती है। शेष लगभग 30 प्रतिशत क्षेत्रफल पर ज्वार, बाजरा, मक्का, अरहर तथा खरीफ की अन्य फसलें उर्द/मूंग तथा शब्जियाँ उगाई जाती है। रबी कृषि मौसम में गेहूँ 57.56 प्रतिशत क्षेत्रफल पर अधिकार करके अपने सर्वाधिक महत्व को प्रदर्शित कर रहा है। जबकि द्वितीय महत्वपूर्ण वाणिज्यिक फसल लाही/सरसों है जो 15.55 प्रतिशत क्षेत्र पर अपना प्रभुत्व स्थापित किये हुये है। चना तीसरे महत्व की फसल है जो कि 10.08 प्रतिशत क्षेत्र पर आच्छादित है। जौ की फसल 7.56 प्रतिशत क्षेत्र पर स्थापित है। गन्ना तथा आलू की फसलें समान स्तर को प्रदर्शित कर रही है। जायद के मौसम में खरबूजा, तरबूज, सब्जियां तथा उर्द/मूंग प्रमुख फसलें है। जो सकल बोये गये क्षेत्र के 0.77 प्रतिशत क्षेत्र पर उगाई जा रही है।

भूमि पर जनसंख्या का भार:

ग्राम वैसुन्धरा में निवास करने वाले परिवारों में रहने वाले 2547 लोगों का मूल आधार कृषि है और लगभग सम्पूर्ण ग्राम वासी कृषि भूमि से ही जीवकोपार्जन के साधन जुटाते है। इस गाँव की भूमि पर जनसंख्या भार के विवरण सारणी 6.38 में प्रस्तुत किया जा रहा है।

सारणी क्रमांकः 6.38- भूमि पर जनसंख्या का भार (हेक्टेअर में)

	कुल प्रतिवेदित क्षेत्र	कृषि के लिए उपलब्ध क्षेत्र	एक से अधिकबार बोया गया क्षेत्र	सकल बोया गया क्षेत्र	शुद्ध सिंचित क्षेत्र	सकल सिंचित क्षेत्र	रबी का क्षेत्र	खरीफ का क्षेत्र	जायद का क्षेत्र
प्रति व्यक्ति	०.१३३१	०.१०६४	०.०४५६	०.१५२३	०.०७२६	०.१००५	०.०६३४	०.०५७७	०.००१२

ग्राम वैसुन्धरा की भूमि पर पड़ने वाले जनसंख्या के भार को सारणी 6.38 में प्रस्तुत किया जा रहा है। जिसमें इस गाँव में प्रतिव्यक्ति कुल उपलब्ध भूमि 0.1331 हेक्टेअर है जिसमें से 0.1064 हेक्टेअर पर विभिन्न फसलें बोई जाती है। इस कृषि भूमि में से 0.726 हेक्टेअर क्षेत्र को सिचाई की सुविधा प्राप्त है इस कारण 0.0459 हेक्टेअर क्षेत्रफल पर दो या दो से अधिक फसलें उगाई जाती है।

प्रति व्यक्ति उपलब्ध कृषि क्षेत्र 0.1064 हेक्टेअर में से 0.0577 हेक्टेअर क्षेत्र पर खरीफ मौसम की फसलें उगाई जाती है जबकि 0.0934 हेक्टेअर क्षेत्रफल पर रबी मौसम की विभिन्न फसलें बोई जाती है। जायद फसलों के लिये मात्र 0.0012 हैक्टेअर क्षेत्रफल उपयोग में लाया जा रहा है।

व्यवसायिक संरचना के आधार पर यदि इस गांव को देखें तो 85 प्रतिशत से अधिक जनसंख्या प्राथमिक रूप से कृषि पर निर्भर है जबकि लगभग 12 प्रतिशत जनसंख्या कृषि के सहायक कार्यो में संलग्न है। यह जनसंख्या कृषि भूमि पर निर्भर है। 3 प्रतिशत से भी कम जनसंख्या बाहर रहकर सरकारी/निजी सेवाओं तथा व्यवसाय आदि से जीवनयापन के साधन जुटाते हैं, परन्तु ये लोग भी आंशिक अथवा पूर्णरूप से खाद्य पदार्थों के लिए कृषि उपज पर निर्भर हैं।

विभिन्न फसलों की औसत उत्पादकता:

ग्राम वैसुन्धरा के कृषकों द्वारा उत्पादित विभिन्न फसलों की औसत उत्पादकता तथा जनपदीय औसत उत्पादकता का तुलनात्मक विवरण सारणी 6.39 में प्रस्तुत किया जा रहा है।

सारणी 6.39 ग्राम वैसुन्धरा में उत्पादित की जाने वाली विभिन्न फसलों की औसत उत्पादकता तथा जनपदीय औसत उत्पादकता का तुलनात्मक विवेचन प्रस्तुत करती है जिसके अनुसार इस ग्राम में अन्न उत्पादित करने वाली फसलों में धान 4.67 प्रतिशत, बाजरा 3.26 प्रतिशत, गेहूँ 5.15 प्रतिशत जनपदीय स्तर से अधिक उत्पादन दे रही है जबकि इसी वर्ग की अन्य फसलें ज्वार 0.80 प्रतिशत, मक्का 1.92 प्रतिशत तथा जौ 2.18 प्रतिशत जनपदीय स्तर से कम उत्पादन करके पिछड़ रही है, परन्तु क्षेत्रफल की दृष्टि से पिछड़ने वाली फसलों का क्षेत्रफल अधिक उत्पादन करने वाली

फसलों से कम है अतः अन्न उत्पादन करने वाली फसलों का कृषकों को लाभ मिल रहा है। इसी प्रकार दलहनी फसलों में छोटे पैमाने पर उत्पादित की जाने वाली फसल उर्द/मूंग का औसत उत्पादन जनपदीय स्तर से 18.14 प्रतिशत अधिक है, परन्तु तुलनात्मक रूप से उस फसल से अधिक क्षेत्रफल वाली अन्य दलहनी फसलों में अरहर 1.07 प्रतिशत, चना 18.94 प्रतिशत तथा मटर 2.39 प्रतिशत कम उत्पादन करके पिछड़ रही है। वाणिज्यिक फसलों में अधिक क्षेत्रफल वाली लाही/सरसों का औसत उत्पादन जनपदीय स्तर से 0.98 प्रतिशत कम है जबकि आलू तथा गन्ना लगभग एक समान क्षेत्रफल वाली फसलें है। जिसमें आलू का 1.65 प्रतिशत अधिक और गन्नें का 1.53 प्रतिशत कम उत्पादन स्तर को बता रहे हैं।

सारणी क्रमांक 6.39: विभिन्न फसलों का औसत उत्पादन

(प्रति हेक्टेअर किलोग्राम में)

फसल	उत्पादन	जनपद का उत्पादन	जनपदीय स्तर से अधिक/कम प्रतिशत में
1. चना	2040	1949	+4.67
2. ज्वार	996	1004	-0.80
3. बाजरा	1551	1502	+3.26
4. मक्का	1330	1356	-1.92
5. गेहूँ	2613	2485	+5.15
6. जौ	1844	1885	-2.18
7. अरहर	1291	1305	-1.07
8. चना	1023	1262	-18.94
9. मटर	1590	1629	-2.39
10. उर्द/मूंग	534	452	+18.14
11. लाही	1214	1226	-0.98
12. आलू	18975	18667	+1.65
13. गन्ना	33163	33678	-1.53

गाँव के कुल उत्पादन तथा गाँव में रहने वाली कुल जनसंख्या के आधार पर गाँव का एक आहार संतुलन पत्रक तैयार किया गया हैं। जिसमें विभिन्न फसलों द्वारा प्राप्त कुल उत्पादन को प्रतिव्यक्ति मात्रात्मक उपलब्धता तथा उनसे प्राप्त होने वाले पोषक तत्वों की गंणना की गई है जिसे सारणी 6.40 में प्रस्तुत किया गया है।

सारणी 6.40 ग्राम वैसुन्धरा के कुल कृषि उत्पादन द्वारा प्रतिव्यक्ति खाद्यान्न उपलब्धता का चित्र प्रस्तुत कर रही है। जिसके अनुसार इस ग्राम की प्रतिव्यक्ति 753.68 ग्राम खाद्य पदार्थ उपलब्ध है जो मानक स्तर से अधिक है। इस मात्रा में 635.56 ग्राम अन्न की 45.81 ग्राम दलहन की तथा 72.31 ग्राम वाणिज्यिक फसलों की भगेदारी है। इस गाँव में अन्न की भागेदारी 84 प्रतिशत से अधिक है और दालों की हिस्सेदारी केवल 6.08 प्रतिशत है। इस ग्राम की जनसंख्या के लिये विभिन्न मौसम में प्राप्त होने वाली कृषि उत्पादन से प्रति व्यक्ति 2633.79 कैलौरी ऊर्जा उपलब्ध है। इस उपलब्ध ऊर्जा में 2207 कैलौरी ऊर्जा अन्न से 156.84 कैलोरी ऊर्जा दलहनी फसलों से प्राप्त हो रही है। शेष योगदान वाणिज्यिक फसलों का है। ऊर्जा में भी आधे से अधिक योगदान गेहूँ की फसल का है। प्रोटीन पर विचार करें इस गाँव में प्रत्येक व्यक्ति को 80.36 ग्राम प्रोटीन उपलब्ध है। जिसमें गेहूँ 45.64 ग्राम प्रोटीन उपलब्ध कराकर योगदान में आधे से अधिक की हिस्सेदारी कर रहा है। कुल मिलाकर यह कहा जा सकता है कि ग्रामीण भोजन में अन्न की मात्रा आधे से अधिक रहती है, दलहन तथा अन्य पदार्थो का योगदान अत्यन्त कम रहता है।

सारिणी क्रमांक 6.40: विभिन्न खाद्य पदार्थों की प्रति व्यक्ति प्रतिदिन उपलब्ध मात्रा तथा उससे प्राप्त पोषक तत्व (ग्राम वैसुन्धरा)

खाद्य पदार्थ	मात्रा ग्राम	ऊर्जा कैलोरी	प्रोटीन ग्राम	वसा ग्राम	खनिज ग्राम	फाइबर ग्राम	कार्बोहाइड्रेट्स ग्राम	कैल्सियम मि0ग्रा0	फास्फोरस मि0ग्रा0	लौह मि0ग्रा0	कैरोटिन म्यू ग्रा0	थियामिन मि0ग्रा0	राइबोफ्लेविन मि0ग्रा0	नियासिन मि0ग्रा0	विटामिन सी
1. चावल	101.13	348.9	7.58	1.01	0.91	0.61	77.57	10.11	192.15	3.24	2.02	0.21	0.16	3.94	0
2. ज्वार	21.54	75.17	2.24	0.41	0.34	0.34	15.64	5.39	47.82	1.25	10.12	0.08	0.03	0.67	0
3. बाजरा	74.81	270.06	8.68	3.74	1.72	0.9	50.5	31.42	221.44	3.74	98.75	0.25	0.19	1.72	0
4. मक्का	18.76	65.28	2.08	0.68	0.28	0.51	12.42	1.88	65.28	0.38	16.88	0.08	0.02	0.34	0
5. गेहूं	386.81	1338.36	45.64	5.8	5.8	4.64	275.41	158.59	1183.64	18.95	247.56	1.74	0.66	21.27	0
6. जौ	32.51	109.23	3.74	0.42	0.39	1.27	22.63	8.45	69.9	0.98	3.25	0.15	0.07	1.76	0
7. अरहर	17.35	58.12	3.87	0.29	0.61	0.26	9.99	12.67	52.74	1.01	22.9	0.08	0.03	0.5	0
8. चना	14.98	55.73	3.12	0.84	0.4	0.18	9.12	19.32	49.58	1.36	19.32	0.06	0.03	0.39	0
9. मटर	11.87	37.39	2.34	0.13	0.26	0.53	6.71	8.9	35.37	0.61	4.63	0.06	0.02	0.4	0
10. उर्द/मूंग	1.61	5.6	0.35	0.01	0.05	0.09	0.92	4.62	5.01	0.14	1.14	0.01	0	0.02	0.02
11. लाही/सरसों	22.54	202.86	0	22.54	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0	0
12. आलू	43.19	41.89	0.69	0.04	0.26	0.17	9.76	4.32	17.28	0.3	10.37	0.04	0	0.52	7.34
13. गुड़/गन्ना	6.58	25.2	0.03	0.01	0.04	0	6.25	5.26	2.63	0.75	11.05	0	0	0.03	0
योग	753.68	2633.79	80.36	35.92	11.06	9.5	496.92	270.03	1942.84	32.71	447.99	2.76	1.21	31.56	7.36

अध्याय - सप्तम्

अध्याय-सप्तम

भोजन में पोषण तत्व तथा पोषण सम्बन्धी रोग

1. भोजन की रासायनिक रचनाः

प्रत्येक जीवधारी को अपने जैविक कार्यों को पूरा करने के लिए ऊर्जा की आवश्यकता होती है। हमको भी अपने जैविक कार्य जैसे – वृद्धि एवं विकास आदि के लिए ऊर्जा की आवश्यकता होती है। यह ऊर्जा हमको कहां से मिलती है ? जैविक कार्यों को पूरा करने में भी ऊर्जा का व्यय होता है। इस ऊर्जा की क्षतिपूर्ति कैसे होती है ?

जिस प्रकार रेल के इन्जन को चलाने के लिए ऊर्जा ईंधन से प्राप्त होती है उसी प्रकार हमको ऊर्जा भोजन से प्राप्त होती है। हमारे शरीर में भोजन पहुंचने पर ईंधन का कार्य करता है। भोजन पचने के पश्चात पचा भोजन विसरण द्वारा रुधिर में पहुंचता है, रुधिर आवश्यकतानुसार इस पचे भोजन को शरीर के विभिन्न भागों को, अंग और ऊतकों तथा ऊतकों की कोशिकाओं को पहुंचा देता है जहां पर इसका दहन होकर शरीर को अपने कार्यों को पूरा करने के लिए ऊर्जा प्राप्त होती है। यह ऊर्जा शरीर का ताप स्थिर रखने में सहायक होती है। इसके साथ ही हमारे शरीर में बराबर टूट-फूट होती रहती है। भोजन शरीर में पुराने ऊतकों की जगह पर नये ऊतकों का निर्माण तथा टूट-फूट की मरम्मत में भी सहायता करते हैं। परन्तु भोजन से पेट भर लेना ही पर्याप्त नहीं है बल्कि भोजन ऐसा होना आवश्यक है जिसमें भोजन के विभिन्न अवयव प्रोटीन, श्वेतसार (स्टार्च), खनिज लवण, जल एवं विटामिन आदि यथेष्ठ मात्रा में उपलब्ध हों। इन विभिन्न प्रकार के पौष्टिक पदार्थों का ज्ञान जनसाधारण को नहीं होता, विशेषकर भारत में। भारतवासियों के स्वास्थ्य का स्तर अत्याधिक निम्न होने का यही प्रमुख कारण है। अज्ञानता के कारण हमारे असंख्य भारतवासी दाल-रोटी में ही अपने को संतुष्ट कर लेते हैं और अज्ञानतावश अपना पोषक आहार पाने में असमर्थ होने के कारण रोग के शिकार हो जाते हैं।

शरीर को ऊर्जा प्रदान करने वाले पदार्थ:

1. कार्बोहाइड्रेट्स:

शक्तिवर्धक पदार्थों में कार्बोहाइड्रेट्स का स्थान प्रमुख है। कार्बोहाइड्रेट्स, कार्बन, ऑक्सीजन एवं हाइड्रोजन के यौगिक होते हैं। इनकी रासायनिक रचना की विशेषता यह है कि इनमें हाइड्रोजन के परमाणु की संख्या ऑक्सीजन के परमाणुओं की अपेक्षा प्रायः दुगनी होती है। कार्बोहाइड्रेट्स दो प्रकार के होते हैं-(प्रथम) स्टार्च देने वाले तथा (द्वितीय) शर्करा देने वाले । इनमें स्टार्च जल में अघुलनशील होते है तथा शर्करा जल में घुलनशील होते है।

स्टार्च देने वाले पॉलीसैकैराइड्स होते हैं। यह गेहूं, चावल, चना, जौ तथा विभिन्न दालों में पाए जाते हैं। इसके अतिरिक्त विभिन्न सब्जियों जैसे आलू, शकरकन्दी, अरवी में स्टार्च की अधिकता रहती है। पकने के बाद यह शरीर के लिए नितान्त आवश्यक और उपयोगी हो जाते है।

शर्करा देनेवाले मोनो तथा डाईसेकेराइड्स हैं। यह मुख्य रूप से चीनी, गुड़, मीठे फल जैसे केला, अंगूर, अनन्नास, आम , चुकन्दर, शरबत, मुरब्बे, मिठाइयों सभी में शर्करा उपलब्ध होती है। गन्ने में सुक्रोज, अंगूर में ग्लूकोज, अन्य फलों में फ्रक्टोज, दूध में लेक्टोज के रूप में शर्करा रक्त में तुरन्त मिल जाती है। सैलूलोज नामक कार्बोहाइड्रेट फलों तथा तरकारियों से प्राप्त होता है।

कार्बोहाइड्रेट अन्य खाद्य पदार्थों की अपेक्षा अधिक सुगमता से पचता है। यह साधारण खाद्य पदार्थों में भी प्रचुर मात्रा में प्राप्त हो जाता है। परन्तु इसके अधिक सेवन करने से नाना प्रकार के रोग जैसे कब्ज, अतिसार, मधुमेह आदि रोग हो जाते है।

कार्बोहाइड्रेड की कमी से रोग:

शरीर को पर्याप्त मात्रा में आवश्यक ऊर्जा प्राप्त नहीं होती, शरीर में थकावट और कमजोरी महसूस होने लगती है, शरीर में स्फूर्ति का स्थान आलस्य ले लेता है तथा शरीर के विकास पर प्रभाव पड़ता है।

वसा:

वसा भी ऊर्जा का प्रमुख साधन है। नाइट्रोजन तत्व वसा में नहीं

होता है। वसा की प्राप्ति भी दो प्रकार की होती है। एक 'वनस्पति वसा' पौधों से तथा दूसरी पशुओं से । तिल का तेल, सरसों का तेल, नारियल का तेल, मूंगफली का तेल आदि वनस्पति वसा हैं जो खाने के प्रयोग में आते हैं। तेल व चर्बी वस्तुतः रासायनिक दृष्टि से एक ही है। पशुओं से प्राप्त वसा में मछली का तेल, पशुओं की चर्बी, अण्डे की जर्दी, दूध, घी, मक्खन आदि आते हैं। वनस्पति वसा असंतृप्त एवं तरल रूप में होती है तथा इसमें विटामिन कम मात्रा में पाये जाते हैं।

कार्बोहाइड्रेड के समान वसा भी कार्बन, हाइड्रोजन तथा ऑक्सीजन का यौगिक है। परन्तु इसमें कार्बन की मात्रा काफी अधिक होती है और ऑक्सीजन की मात्रा अपेक्षाकृत बहुत ही कम होती है। जिसके फलस्वरूप इसको ऑक्सीकृत होने के लिए अधिक ऑक्सीजन की आवश्यकता होती है। परिणामस्वरूप यह कार्बोहाइड्रेट्स की अपेक्षा अधिक ऊर्जा उत्पन्न करती है।

वसा की कमी से रोगः

वसा की कमी से विकास में कमी आने लगती है, प्रजनन शक्ति कम हो जाती है, त्वचा पर स्थान-स्थान पर छोटे-छोटे उभार उठ आते हैं। इस रोग को फ्राइनोडर्मा कहते हैं। विटामिन 'बी' या 'काड' लिवर आयल इस रोग में दिया जाता है।

वसा की अधिकता से शरीर मोटा होकर बेडौल हो जाता है, गुर्दे अपना कार्य ठीक प्रकार से नहीं कर पाते, जिससे शरीर में यूरिया और यूरिक अम्ल जैसे हानिकारक पदार्थों की वृद्धि होने से शरीर के रोगों के आक्रमण के लिए अनुकूल हो जाती है, शरीर में कोलस्ट्राल की मात्रा बढ़ जाने से रुधिर वाहनियां संकुचित हो जाती है और रुधिर दाब का रोग होने की सम्भावना बढ़ जाती है।

प्रोटीन्सः

शरीर निर्माण में प्रोटीन का महत्वपूर्ण योगदान है। यह कोशिका निर्माण का प्रमुख पदार्थ है।

प्रोटीन का रासायनिक संगठन अत्यन्त जटिल है। यह कार्बन, ऑक्सीजन, हाइड्रोजन, नाइट्रोजन, गंधक, फास्फोरस आदि 18 तत्वों, जिन्हें

एमीनो एसिड कहते है, का सम्मिश्रण है। प्रोटीन सबसे महत्वपूर्ण और आवश्यक यौगिक है। कुछ को छोड़कर अधिकांश प्रोटीन घुलनशील यौगिक होते हैं। इनका प्रमुख घटक नाइट्रोजन तत्व है। प्रोटीन प्राप्ति के साधन निम्न दो प्रकार के हो सकते हैं।

1. जन्तु प्रोटीनः- यह उत्तम, उपयोगी तथा लाभप्रद होती है। दूध, अण्डा, मांस, मछली, पनीर हमें जन्तुओं से ही प्राप्त होते हैं। यह 'ए' वर्ग की प्रोटीन होती है।

2. वनस्पति प्रोटीनः- गेहूं, चना, जौ, चावल, अरहर, मटर, सेम, हरे पत्ते वाले शाक आदि वनस्पति प्रोटीन के साधन हैं। वनस्पति प्रोटीन इसी कारण 'बी' वर्ग की कहलाती है क्योंकि यह देर से पचती हैं।

प्रोटीन की कमी से होने वाले रोगः

शरीरिक विकास और वृद्धि अवरुद्ध हो जाती है, शरीर में होनेवाली जैविक क्रियायें ठीक प्रकार से अपना कार्य नहीं कर पाती हैं, यकृत के बढ़ने और उसमें सूजन आने का खतरा पैदा हो जाता है, शारीरिक शक्ति शनैः-शनैः क्षीण होने लगती है, सिर के बाल भूरे पड़ जाते है और गंजेपन का रोग हो जाता है जिससे बाल झड़ना शुरू हो जाता है और तवचा पर चकत्ते पड़ने लगते हैं।

यद्यपि प्रोटीन विकास और उसकी समुचित वृद्धि के लिए परम आवश्यक है परन्तु इसका अधिक मात्रा में सेवन मनुष्य की पाचनशक्ति पर प्रभाव डालता है जिससे अनेक पाचन सम्बन्धी रोग होने की सम्भावना बढ़ जाती है तथा अधिक ऊर्जा उत्पन्न होने तथा श्रम करने से यकृत, गुर्दे आदि असमय में ही कमजोर पड़ जाते हैं और अपच आदि रोग हो जाते हैं।

खनिज लवणः

शारीरिक अंगों का सुचारु रूप से संचालन तथा स्वास्थ्य के लिए खनिज लवणों का विशेष महत्व है। ये फास्फोरस, लोहा, कैल्सियम, सोडियम, पौटेशियम, आयोडीन, क्लोरीन व मैग्नीशियम आदि हैं। संक्षेप में इन विभिन्न लवणों का विवरण निम्न प्रकार है।

1. फास्फोरसः

यह अस्थियों एवं दांतों के निर्माण हेतु सहायक है। स्नायु संस्थान को

स्वस्थ रखने हेतु इसका विशेष महत्व है। यह रक्त को भी शुद्ध करता है। शारीरिक क्रियाओं को करने हेतु जो शक्ति कम होती है उसमें भी फास्फोरस भाग लेता है। इसकी प्राप्ति हमें मांस, कलेजी, अण्डे, मछली, दूध, दही, पनीर और सेब आदि से होती है। इसके अतिरिक्त बादाम, मेवा, पालक, आलू, भुट्टा, गोभी, मूली, करमकल्ला, गाजर आदि में भी फास्फोरस की मात्रा रहती है। शरीर में जितने भी खनिज पदार्थ होते हैं उनका 1/4 भाग फास्फोरस होता है।

2. लोहा:

लोहा रक्त की लाल रुधिर कणिकाओं के लिए आवश्यक है। इससे लाल रक्त कणों (हीमोग्लोबिन) का निर्माण होता है। समस्त शरीर में 1/10 औंस लोहा होता है। लोहे की कमी से रक्त अल्पतता का रोग हो जाता है। लोहा यकृत, मांस, अण्डे की जर्दी आदि में अधिकता से पाया जाता है। इसके अतिरिक्त यह दाल, अंजीर, अंगूर, पालक, मैथी, सलाद, पोदीना, टमाटर आदि में भी पाया जाता है।

कैल्सियम:

यह शरीर का अत्यन्त महत्वपूर्ण तत्व है। यह अस्थियों और दांतों के निर्माण में भाग लेता है और उनको स्वस्थ रखता है। कैल्सियम हृदय पेशियों में भी होता है और मांसपेशियों में भी। इसकी कमी से पेशियां कमजोर पड़ जाती है और हृदय गति भी असंतुलित हो जाती है। इसकी कमी से अस्थियां भी क्षीण होने लगती हैं। कैल्सियम तन्त्रिकातन्त्र और शरीर की सभी कोशिकाओं के लिए भी परम आवश्यक है।

कैल्सियम की कमी से होने वाले रोग:

कैल्सियम की कमी से अस्थियां कमजोर पड़ जाती हैं, दांत गिरने लगते हैं। कैल्सियम की कमी से चर्मरोग होने की सम्भावना रहती है तथा बच्चों में सूखा रोग हो जाता है।

आयोडीन:

यद्यपि आयोडीन की मात्रा शरीर में कम होती है तथापि यह शरीर के लिए आवश्यक है। यह गर्दन की थायराइड ग्रन्थि में थाइरोक्सिन के रूप

में विशेष रूप से पाया जाता है।

आयोडीन साग, सब्जी, समुद्र की मछलियों तथा मछली के तेल में पाया जाता है। इसके साथ ही साथ यह समुद्री जल से भी प्राप्त होता है।

इसकी कमी से मनुष्य में घेंघा रोग हो जाता है जिसमें गर्दन की ग्रन्थि फूलकर गांठ या ट्यूमर का रूप ले लेती है। आयोडीन की कमी से थायराइड ग्रन्थि के कार्य पर बुरा प्रभाव पड़ता है।

सोडियम:

सोडियम हमको साधारण नमक के रूप में प्राप्त होता है। वह लवण जो भोजन के साथ ग्रहण किया जाता है, सोडियम क्लोराइड कहलाता है। यह सोडियम तथा क्लोरीन से मिलकर बनता है। यह समुद्र या खारी झील के पानी से बनता है। लवण हमें पालक, मैंथी, फूलगोभी, मांस, प्याज, शलजम, किशमिश आदि से उपलब्ध होता है।

इसकी कमी से भूख कम लगती है तथा मोतियाबिन्द और बहरेपन का रोग होने की सम्भावना बढ़ जाती है। इसकी कमी से टांगों और पेट की पेशियों में ऐंठन होने लगती है और तनाव पैदा हो जाता है तथा शरीर में अम्लता बढ़ जाती है।

मैग्नीशियम:

यह लोहे के साथ मिलकर शरीर को सहायता पहुंचाता है। इससे शरीर की की वृद्धि होती है। यह गेहूं की भूसी, चावल के कणों में पाया जाता है।

पोटेशियम:

इसकी उपलब्धि अनेक प्रकार के खाद्य पदार्थों द्वारा हो जाती है अतः शरीर में इसकी मात्रा कम ही आ पाती है। तन्त्रिकाओं पर इसका प्रभाव पड़ता है।

तांबा:

यह लोहे के साथ रक्त बनाने में सहायक होता है। तांबे के बर्तन में पानी भरकर पीना स्वास्थ्य के लिए लाभकारी होता है। अनाजों द्वारा पर्याप्त मात्रा में इसकी उपलब्धि हो जाती है।

इसकी कमी से शरीर में शिथिलता आती है, इसकी कमी पाचन क्रिया को मन्द करती तथा श्वास लेने में कष्ट पैदा करती है।

गन्धक:

यह भोजन के साथ शरीर को मिल जाता है। यह शरीर में ऊतकों बालों तथा नाखूनों की वृद्धि हेतु सहायक है। यह प्रोटीनयुक्त पदार्थों दूध व अण्डों में पाया जाता है।

विटामिन्स:

प्रत्येक व्यक्ति चाहता है कि वह स्वस्थ रहे। संतुलित भोजन खाकर ही स्वस्थ रह सकता है। वैज्ञानिकों ने पता लगाया है कि प्रोटीन्स, कार्बोहाइड्रेट्स, वसा, जल और लवण स्वस्थ शरीर के लिये अति आवश्यक तो है परन्तु हमारा शरीर भोजन के इन महत्वपूर्ण पदार्थों को पूर्ण रूप से उस समय तक अपने उपयोग में नही ला सकता है जब तक कि हमारे भोजन में रासायनिक कार्बनिक पदार्थ विटामिन्स न हो। यह आवश्यक विटामिन्स हमको साधारण हरी शाक-सब्जियों ताजे पके फलों, दूध, मांस, मछली, अण्डें, अंकुरित अनाज, नीबू, संतरे, टमाटर आदि से प्राप्त होते है।

विटामिन्स बी या बी कॉम्पलेक्स :

विटामिन बी में ग्यारह विटामिन आते हैं। अतः इस समूह के विटामिन्स को बी कॉम्पलैक्स के नाम से भी सम्बोधित किया जाता है।

विटामिन बी1 :

विटामिन बी1 को थियामीन हाइड्रोक्लोराइड भी कहते है। यह सफेद और क्रिस्टलीय होता है और जल में घुलनशील है। इसमें खमीर जैसी विशिष्ट गन्ध होती है और इसका स्वाद नमकीन होता है।

यह मुख्य रूप से मटर, शुष्क खमीर, अण्डे के पीतक, यकृत, हृदय, सुअर के मांस, वृक्क, दूध और अनाजों में पाया जाता है। आंतों में पाए जानेवाले कुछ अति सूक्ष्मदर्शी जीव भी इसका स्वतन्त्रतापूर्वक निर्माण कर सकते हैं।

इसकी कमी से बेरी-बेरी रोग हो जाता है, भूख कम लगने लगती

है, घुटने काम करना बन्द कर देते हैं और मांसपेशियां भी काम करना बन्द कर देती है। पिण्डलियों में विघटन होना शुरू हो जाता है तथा स्नायु तन्त्र कमजोर हो जाता है।

विटामिन बी 2 :

विटामिन बी2 को रिबोफ्लेविन भी कहते है। यह प्रकृति में दूध और पत्तेदार सब्जियों और फलों में बहुतायत से पाया जाता है। इसकी प्राप्ति के प्रमुख स्रोत दूध, पत्तेदार सब्जियां, फल, अण्डा, मछली, मांस, जिगर और वृक्क हैं।

विटामिन बी 2 की कमी से होंठ सूज जाते हैं। उनपर पपड़ी पड़ने लगती है, जिह्वा सूज जाती है, कानों, मुंह, होठों की श्लेष्मा का रंग श्वेत पड़ने लगता है। नेत्र लाल, शुष्क तथा नेत्रों में अनेक अन्य प्रकार के रोग हो जाते हैं।

विटामिन बी 3 :

विटामिन बी 3 या पेण्टोथिनिक अम्ल अपनी शुद्ध अवस्था में गाढ़ा और हल्के पीले रंग का तेल सदृश्य होता है।

यह विटामिन विशेष रूप से यकृत और वृक्कों में पाया जाता है। इसके अतिरिक्त यह हृदय, मस्तिष्क, जीभ, खमीर, अण्डे की पीतक, गन्ने के शीरे और अनाजों की भूसी में भी प्रमुखता से पाया जाता है।

विटामिन बी 3 की कमी से पैरों में जलन होती है, शरीर में थकान रहती है, हृदय में रुधिर परिवहन सुचारु रूप से नहीं होता, जठरान्त्र रोग हो जाते हैं।

विटामिन बी 6 :

विटामिन बी6 सफेद क्रिस्टलीय पदार्थ है और अलग-अलग पदार्थों से मिलकर बना है। यह कार्बोहाइड्रेट्स, प्रोटीन और वसा के उपापचय में प्रमुख रूप से भाग लेता है।

यह मटर तथा मटर के कुछ पौधों में, खमीर, मांस, मछली, अण्डे के पीतक तथा दूध में प्रचुर मात्रा में पाया जाता है।

विटामिन बी6 की कमी से पैलाग्रा रोग के लक्षण प्रकट होने लगते है, अत्यन्त घबराहट महसूस होती है, अनिद्रा का रोग हो जाता है तथा शरीर में चिड़चिड़ापन आ जाता है।

विटामिन बी12 :

विटामिन बी 12 लाल रंग का क्रिस्टलीय विटामिन है। गाय का मांस, अण्डों और यकृत में पाया जाता है।

विटामिन बी 12 की कमी से घातक एनीमिया रोग हो जाता है, रुधिर निर्माण में बाधा उत्पन्न हो जाती है, जिह्वा सूज जाती है, मेरुरज्जु से सम्बन्धित अनेक स्नायु रोग हो जाते हैं।

विटामिन सीः

इसे एस्कार्बिक अम्ल कहते है। यह हमें संतरा, नीबू, टमाटर, अंगूर, अनन्नास, आंवला, हरे शाकों तथा अंकुरित दालों में यथेष्ठ मात्रा में मिल जाता है। यह रक्त को शुद्ध रखता है तथा अस्थियों व दांतों के निर्माण में और वृद्धि में सहायक होता है।

इसकी कमी से स्कर्वी नामक रोग हो जाता है। इस रोग में रक्त वाहिनियां दुर्बल हो जाती हैं, मसूड़ें फूल जाते हैं, मष्तिष्क कमजोर हो जाता है एवं शरीर में आलस्य तथा थकावट का अनुभव होने लगता है।

विटामिन एः

इसको वृद्धि विटामिन भी कहते हैं। यह विटामिन पीले रंग का गाढ़े तेल जैसा होता है। यह प्रचुर मात्रा में मक्खन, दूध, टमाटर, पालक, गाजर आदि तथा मछली के तेल, अण्डे के पीतक आदि में मिलता है।

इसकी कमी से रतौंधी रोग हो जाता है, इसकी कमी से आहार नाल, श्वसन नली और कॉर्निया के उपकला में महत्वपूर्ण परिवर्तन हो जाते हैं जिनसे इनके कार्य पर प्रभाव पड़ता है, त्वचा सूखी और खुरदरी पड़ जाती है, नेत्रों के कार्निया में सफेद धब्बे पड़ जाते हैं।

विटामिन डीः

इस विटामिन को कैल्सीफेरॉल भी कहते हैं। यह रंगहीन, गंधहीन और

क्रिस्टलीय होता है। रासायनिक रूप से यह स्टेराइल से जुड़ा है अतः कुछ लोग इसको स्टेराइड भी कहते हैं।

सूर्य की किरणों में शरीर का खुला भाग स्वंय इसका निर्माण कर लेता है। विटामिन डी सामान्य ताजे फलों, सब्जियों, दूध, मक्खन, अण्डे, मछली के तेल और यकृत में प्रचुर मात्रा में मिलता है।

विटामिन डी की कमी से कैल्सियम और फास्फोरस का सही मात्रा में उपापचय नहीं हो पता। यह दोनों पदार्थ अस्थियों को स्वस्थ और सुडौल बनाने के लिए परम आवश्यक हैं। इनकी कमी से अस्थियां दुर्बल होकर मुड़ जाती है। इस रोग को रिकेट्स या रेकाइटिस कहते हैं।

विटामिन ई:

इस विटामिन को टोकोफेरॉल भी कहते हैं। यह मुख्य रूप से अनाजों, बिनौले और धान की भूसी के तेल, अण्डे के पीतक, मांस, हरी सब्जियों, धी और सरसों के तेल आदि में विशेष रूप से पाया जाता है।

विटामिन ई की कमी से नारियों में वंध्यता तथा पुरूषों में नपुंसकता का कारण होता है। इसकी कमी से शुक्राणु कम और दुर्बल हो जाते हैं जिससे गर्भ नहीं ठहरता। इसकी कमी पेशियों में एक विशेष प्रकार का रोग पैदा करती हैं।

विटामिन के:

यह वसा के अत्याधिक घुलनशील पीले रंग का तैलीय पदार्थ है। विटामिन के पालक, आलू, गांठगोभी, पत्तागोभी, अण्डे की जर्दी, अण्डे, मक्खन, आटा का चोकर, दूध में प्रचुर मात्रा में मिलता है।

इसकी कमी से प्रोथाम्बीन नामक प्रोटीन की रुधिर में कमी हो जाती है जिसके कारण चोट लगने पर रुधिर स्राव नहीं रुकता और रोगी की मृत्यु तक हो जाती है।

2. प्रतिचयित कृषक परिवारों में खाद्य पदार्थों के उपभोग का स्तर:

अध्ययन क्षेत्र में कृषकों के परिवार के सदस्यों द्वारा विभिन्न खाद्य

पदार्थों के उपभोग के स्तर को ज्ञात करने के लिए प्रतिचयित ग्रामों में प्रत्येक ग्रामसभा से 25 कृषक परिवारों का चयन किया गया है। इस प्रकार आठ ग्राम सभाओं में कुल 200 कृषक परिवारों की खान-पान आदतों के बारे में सूचनायें प्राप्त की गई हैं। इन सूचनाओं को ही कृषकों के आहार में ग्रहण किए जाने वाले खाद्य पदार्थो को सम्मिलित करते हुए उपभोग स्तर की गणना की गई है। इसके लिए सभी परिवारों को धर्म और जाति के आधार पर वर्गीकृत किया गया है। सामान्य वर्ग में क्षत्रिय, ब्राम्हण तथा वैश्य सम्मिलित किए गए हैं, पिछड़े वर्ग में यादव, लोधी, गड़रिया, काछी, कुम्हार, कहार, बढ़ई, लुहार, नाई, तेली आदि जातियों को सम्मिलित किया गया है। अनुसूचित जाति के अन्तर्गत चमार, धोबी, धानुक, कोरी आदि प्रमुख जातियां सम्मिलित हैं तथा मुस्लिम वर्ग में आनेवाले सभी जातियों के कृषकों को अन्तिम वर्ग में स्थान दिया गया है। इस प्रकार जाति और धर्म के आधार पर चार वर्ग बनाये गये हैं, प्रथम सामान्य वर्ग में 46 कृषक परिवार, द्वितीय पिछड़े वर्ग में 82 कृषक परिवार, तृतीय अनुसूचित जाति वर्ग में 58 कृषक परिवार तथा अन्तिम चतुर्थ मुस्लिम वर्ग में 14 कृषक परिवार सम्मिलित हैं।

विभिन्न वर्गों द्वारा खाद्य पदार्थों का मात्रात्मक उपभोग:

अध्ययन क्षेत्र का एक व्यापक सर्वेक्षण करके विभिन्न वर्गों के परिवारों द्वारा वर्ष में उपभोग किए जानेवाले विभिन्न खाद्य पदार्थों की वास्तविक मात्रा के आधार पर उनका आहार संतुलन पत्रक तैयार किया गया है जिनका विवरण क्रमशः दिया जा रहा है।

सामान्य वर्ग के परिवार के सदस्यों का उपभोग स्तर:

सामान्य वर्गों के परिवार के सदस्यों द्वारा वर्ष में उपभोग किए जानेवाले विभिन्न खाद्य पदार्थों के आधार पर आहार संतुलन पत्रक तैयार किया गया है और इसके आधार पर प्रतिव्यक्ति प्रतिदिन विभिन्न खाद्य पदार्थों के मात्रात्मक उपभोग की गणना की गई जिसे सारणी 7.1 में प्रस्तुत किया गया है।

सारणी 7.1: सामान्य वर्ग के परिवारों का प्रति व्यक्ति औसत उपभोग (ग्राम)

खाद्य पदार्थ	वर्षा ऋतु	शीत ऋतु	ग्रीष्म ऋतु	औसत	प्रतिशत
1. खाद्यान्न	397.95	484.89	523.45	468.76	52.11
2. दालें	76.56	77.45	89.95	81.32	9.02
3. जड़दार सब्जियां	95.75	115.35	105.26	105.45	11.70
4. पत्तेदार तथा अन्य हरी सब्जियां	104.11	112.32	106.79	107.74	11.91
5. तेल/घी	19.35	22.21	18.45	20.00	2.22
6. दूध तथा दूध से बने पदार्थ	52.12	45.21	28.41	41.91	4.65
7. चीनी/गुड़	15.16	13.25	14.95	14.45	1.60
8. मांसाहार	18.20	27.24	19.87	21.77	2.41
9. फल	26.84	46.25	48.12	40.40	4.37
योग	805.38	944.17	954.92	901.47	100.00

सारणी 7.1 में सामान्य वर्ग के परिवारों के सदस्यों का प्रतिदिन औसत आहार प्रस्तुत किया गया है जिसमें इस वर्ग के सदस्यों द्वारा ग्रीष्म ऋतु में 954.92 ग्राम खाद्य पदार्थों का उपभोग करके सर्वाधिक उपभोग स्तर को प्राप्त किया जा रहा है। इस मौसम में खाद्यान्न और दालों का सर्वाधिक प्रयोग किया जा रहा है। सब्जियों में इस वर्ग द्वारा अन्य वर्गों की अपेक्षा पत्तेदार तथा अन्य हरी सब्जियों के उपभोग को ऊँचा रखा गया है जबकि जड़दार सब्जियों का उपभोग अन्य वर्गों की ही भांति न्यून है। दूध तथा चिकनाई के उपभोग में यह वर्ग सर्वोपरि है। फलों का भी उपभोग 40.40 ग्राम प्रतिव्यक्ति की दर से किया जाता है। समग्र रूप से देखें तो समस्त खाद्य पदार्थों में 61.13 प्रतिशत खाद्यान्नों तथा दालों का योगदान

है जबकि सब्जियां 23.61 प्रतिशत की भागेदारी कर रही है, यह चारों खाद्य पदार्थ सम्पूर्ण भोजन में 84 प्रतिशत से अधिक का योगदान कर रहे हैं। दूध तथा फलों की भागेदारी क्रमशः 4.65 प्रतिशत तथा 4.37 प्रतिशत कर रहे हैं। परन्तु आर्थिक दृष्टि से सम्पन्न माने जाने वाले इस वर्ग द्वारा यद्यपि खाद्यान्नों की भागेदारी यद्यपि अन्य वर्गों की अपेक्षा कम है, परन्तु इस वर्ग द्वारा खाद्यान्नों को छोड़कर अन्य खाद्य पदार्थों का उपभोग मानक स्तर से अत्यन्त कम किया जा रहा है। भोजन का सही समन्वय न हो पाने के कारण विभिन्न खाद्य पदार्थों से प्राप्त होने वाले पोषक तत्वों में असंतुलन उत्पन्न हो जाता है जिससे अनेक बीमारियों के शिकार अनजाने ही लोग हो जाते हैं।

पिछड़े वर्ग के परिवार के सदस्यों का उपभोग स्तरः

इस वर्ग के अन्तर्गत वे परिवार सम्मिलित किए गए है जिनके पास कृषि भूमि कम उपलब्ध है। इन पिछड़े परिवारों के सदस्यों द्वारा वर्ष में उपभोग किए जानेवाले विभिन्न खाद्य पदार्थों के आधार पर इस वर्ग का आहार संतुलन पत्रक तैयार किया गया जिसे सारणी 7.2 में प्रस्तुत किया गया है।

सारणी 7.2ः पिछड़े वर्ग के परिवारों का प्रति व्यक्ति औसत उपभोग (ग्राम)

खाद्य पदार्थ	वर्षा ऋतु	शीत ऋतु	ग्रीष्म ऋतु	औसत	प्रतिशत
1. खाद्यान्न	547.45	562.89	595.49	568.61	57.33
2. दालें	72.75	68.28	110.34	83.79	8.45
3. जड़दार सब्जियां	70.55	150.69	120.40	113.88	11.48
4. पत्तेदार तथा अन्य हरी सब्जियां	115.50	125.84	90.20	110.51	11.14
5. तेल/घी	10.5	14.5	12.65	12.55	1.27

6. दूध तथा दूध से बने पदार्थ	28.45	33.25	23.15	28.28	2.85
7. चीनी/गुड़	12.32	15.78	14.51	14.20	1.43
8. मांसाहार	25.66	45.29	20.85	30.60	3.08
9. फल	25.63	22.57	40.25	29.48	2.07
योग	908.81	1039.09	1027.84	991.90	100.00

सारणी 7.2 पिछड़े वर्ग के परिवारों का आहार संतुलन पत्रक का विवरण प्रस्तुत कर रही है जिसमें इस वर्ग द्वारा विभिन्न खाद्य पदार्थों का सर्वाधिक मात्रात्मक उपभोग शीत ऋतु में किया जाता है इसके बाद ग्रीष्म ऋतु आती है जिसमें प्रतिव्यक्ति प्रतिदिन 1027.84 ग्राम विभिन्न खाद्य पदार्थों का उपभोग किया जाता है। न्यूनतम उपभोग 908.81 ग्राम उपभोग की मात्रा वर्षा ऋतु में रहती है। ग्रीष्म ऋतु में खाद्यान्नों तथा दालों का उपभोग बढ़ जाता है और यह क्रमशः 595.49 ग्राम तथा 110.34 ग्राम तक उपभोग किए जाते हैं जबकि दालों के उपभोग में वर्षा ऋतु दूसरे स्थान पर तथा खाद्यान्न शीत ऋतु में दूसरे स्थान पर आते हैं। जड़दार सब्जियों तथा पत्तेदार तथा अन्य हरी सब्जियों का सर्वाधिक उपभोग क्रमशः 115.35 ग्राम तथा 112.32 ग्राम शीत ऋतु में किया जाता है। दूध तथा दूध से बने पदार्थों का उपभोग इस वर्ग द्वारा शीत ऋतु में अधिक किया जाता है। परन्तु संतुलित भोजन में जितनी खाद्य पदार्थ की आवश्यक मात्रा होनी चाहिये उसकी यह लगभग 18 प्रतिशत ही है। समग्र रूप से देखें तो यह केवल भोजन में खाद्यान्नों तथा दालों का योगदान 65.78 प्रतिशत है जबकि सब्जियों का 22.62 प्रतिशत योगदान है। दूध तथा फलों की भागेदारी न्यूनाधिक एक समान ही हो रही है। इस वर्ग द्वारा खाद्यान्नों तथा दालों का योगदान 65 प्रतिशत से भी अधिक है। अन्य खाद्य पदार्थों का योगदान 35 प्रतिशत से भी कम है जो कि एक स्वस्थ व्यक्ति के लिए पोषक तत्वों के दृष्टिकोण से असंतुलन उत्पन्न करता है।

अनुसूचित जाति वर्ग के परिवार के सदस्यों का उपभोग स्तरः

इन समस्त परिवारों द्वारा वर्ष में उपभोग किए जानेवाले विभिन्न खाद्य पदार्थों के आधार पर इस वर्ग का आहार संतुलन पत्रक तैयार किया गया है। जिसमें प्रतिव्यक्ति प्रतिदिन उपभोग किए जानेवाले विभिन्न खाद्य पदार्थों के आधार पर गणना की गई है जिसे सारणी 7.3 में प्रस्तुत किया गया है।

सारणी 7.3: अनुसूचित जाति वर्ग के परिवारों का प्रति व्यक्ति औसत उपभोग (ग्राम)

खाद्य पदार्थ	वर्षा ऋतु	शीत ऋतु	ग्रीष्म ऋतु	औसत	प्रतिशत
1. खाद्यान्न	550.12	594.20	625.14	589.82	61.19
2. दालें	78.62	62.45	98.35	79.80	8.21
3. जड़दार सब्जियां	60.25	124.82	105.62	96.87	10.05
4. पत्तेदार तथा अन्य हरी सब्जियां	119.21	112.12	95.14	108.82	10.94
5. तेल/घी	11.24	14.62	10.45	12.10	1.25
6. दूध तथा दूध से बने पदार्थ	21.85	16.72	12.25	16.94	1.76
7. चीनी/गुड़	14.12	12.84	13.64	13.53	1.40
8. मांसाहार	28.92	25.24	16.95	23.70	2.46
9. फल	25.21	21.47	30.45	25.71	2.67
योग	909.54	984.48	1007.99	967.29	100.00

सारणी 7.3 में अनुसूचित जाति वर्ग के परिवार के सदस्यों द्वारा सर्वाधिक खाद्य पदार्थ का उपभोग शीत ऋतु में किया जाता है जबकि न्यूनतम मात्रा वर्षा ऋतु में रहती है। प्रतिदिन उपभोग किए जानेवाले खाद्य पदार्थों में खाद्यान्न की सर्वाधिक भागेदारी 61.19 प्रतिशत की है, जबकि दालों की 8.21 प्रतिशत तथा जड़दार तथा पत्तेदार सब्जियों का प्रतिशत क्रमशः 10.05 प्रतिशत और 10.94 प्रतिशत है। यदि इन चारों खाद्य

पदार्थों की एक साथ हिस्सेदारी देखें तो कुल उपभोग के 90.39 प्रतिशत की आपूर्ति इनसे हो रही है। दूध की मात्रा इस वर्ग में भी अत्यन्त कम उपभोग की जा रही है, न्यूनाधिक यही स्थिति चिकनाई की है। इस वर्ग के समग्र खाद्य पदार्थों पर दृष्टिपात करें तो लगता है कि यह वर्ग केवल अपने उदर की पूर्ति कर रहा है परन्तु संतुलित भोजन में जिस मात्रा में विभिन्न खाद्य पदार्थों का उपभोग किया जाना चाहिये उसका उपभोग कुछ पोषक तत्व आवश्यकतानुसार शरीर को उपलब्ध नही हो पाते है। यदि मौसम परिवर्तन के अनुसार विभिन्न खाद्य पदार्थों के उपभोग को देखें तो इस वर्ग में मांसाहार का वर्षा ऋतु में औसत से अधिक प्रचलन है, इसी प्रकार दूध की भी खपत अन्य मौसमों की अपेक्षा वर्षा ऋतु में अधिक है। फलों का उपभोग ग्रीष्म ऋतु में अधिक किया जाता है। चिकनाई का प्रयोग शीत ऋतु में बढ़ जाता है। परन्तु खाद्यान्न को छोड़कर अन्य खाद्य मानक स्तर से अत्यन्त कम है, जबकि शरीर को स्वस्थ बनाये रखने के लिये विभिन्न पोषक तत्वों का भोजन में सामन्जस्य स्थापित करना आवश्यक होता है।

सारणी 7.4 मुस्लिम परिवारों का प्रतिव्यक्ति प्रतिदिन औसत उपभोग (ग्राम)

खाद्य पदार्थ	वर्षा ऋतु	शीत ऋतु	ग्रीष्म ऋतु	औसत	प्रतिशत
1. खाद्यान	546.15	583.92	621.28	583.78	57.59
2. दालें	58.65	46.17	111.46	72.09	7.11
3. जड़दार सबिजयां	78.19	202.01	116.62	132.27	13.05
4. पत्तेदार तथा अन्य हरी सब्जियां	86.92	151.86	36.91	91.89	9.07
5. तेल/घी	28.01	20.95	25.24	24.73	2.44
6. दूध तथा दूध से बने पदार्थ	14.93	18.12	10.55	14.53	1.43
7. गुड़/चीनी	16.04	21.24	13.11	16.79	1.66
8. मांसाहार	45.61	68.16	61.26	58.34	5.76
9. फल	11.92	10.24	35.25	19.13	1.89
योग	886.42	1122.67	1031.68	1013.55	100.0

सारणी 7.4 में मुस्लिम परिवारों के सदस्यों द्वारा प्रति व्यक्ति प्रतिदिन सेवन किये जाने वाले विभिन्न खाद्य पदार्थों का विवरण तीनों मौसमों के अन्तर्गत दिया गया है। यह देखा गया है कि सामान्यतः सभी वर्गों में गर्मी के मौसम में खाद्यान्नों का उपभोग बढ़ जाता है, इसी प्रकार गर्मी के मौसम में दालों की भी खपत बढ़ जाती है, परन्तु सब्जियों का उपभोग शीत ऋतु में बढ़ता है क्योंकि शीत ऋतु में आलू, टमाटर, मटर सस्ता हो जाता है जिससे इस मौसम में सब्जियों का उपभोग अन्य मौसमों की अपेक्षा बढ़ जाता है। पत्तेदार सब्जियों में इस मौसम में चने की पत्तियों जिसे क्षेत्रीय भाषा में साग कहा जाता है इस वर्ग द्वारा अधिकांश उपभोग किया जाता है, इस मौसम में बथुआ तथा मूली भी सरलता से प्राप्त हो जाती है। इस वर्ग के सदस्यों में दूध, चीनी/ गुड़ तथा मांसाहार का प्रयोग अन्य मौसमों की अपेक्षा अधिक हो जाता है जबकि फलों का उपभोग गर्मी के मौसम में अधिक हो जाता है क्योंकि इस मौसम में आम, जामुन, खरबूजा, तरबूज, ककड़ी, खीरा आदि फसलें क्षेत्रीय स्तर पर उगाई जाती है अतः इन फसलों का उपभोग ग्रामीण समुदाय द्वारा अधिक किया जाता है। सफी के अनुसार संतरा, सेब, अंगूर आदि फलों के मंहगे होने के कारण केवल पथ्य के रूप में ही उपभोग किये जा सकते हैं। समग्र दृष्टि से यदि देखा जाये तो इस वर्ग के द्वारा विभिन्न खाद्य पदार्थों का प्रतिव्यक्ति शीत ऋतु में 1122.67 ग्राम है जो अन्य मौसमों की अपेक्षा अधिक है, द्वितीय स्तर पर गर्मी का मौसम है जिसमें विभिन्न खाद्य पदार्थों की 1031.68 ग्राम मात्रा उपभोग की जाती है। वर्षा के दिनों में उपभोग की मात्रा न्यूनतम 886.42 ग्राम रहती है। सम्पूर्ण भोजन में यदि विभिन्न खाद्य पदार्थों के आनुपातिक वितरण को देखा जाय तो खाद्यान्नों तथा दालों की भागेदारी लगभग 65 प्रतिशत की है जबकि सब्जियों का अनुपात लगभग 2 प्रतिशत देखा जा रहा है। इन दोनों खाद्य पदार्थों के अनुपात को यदि देखा जाये तो 87 प्रतिशत से अधिक भागेदारी करके मुस्लिम परिवारों के मध्य खाद्यान्न तथा सब्जियों अपने महत्व का प्रदर्शन कर रही हैं जिसका अर्थ है कि अन्य पदार्थों का उपभोग अत्यन्त न्यून मात्रा में किया जाता है जबकि स्वस्थ मनुष्य के आहार में पौष्टिक तत्वों के समन्वय के लिये अन्य खाद्य पदार्थों का भी समन्वय किया जाना चाहिये जिनमें, दूध, फलों का महत्वपूर्ण स्थान होता है, संतुलित भोजन में इन खाद्य पदार्थों की मात्रा बढ़ाई जानी चाहिए।

सारणी 7.5 विभिन्न वर्गो में प्रति व्यक्ति खाद्य पदार्थो के उपभोग में भिन्नता – (ग्राम)

खाद्य पदार्थ	सामान्य वर्ग	पिछड़ा वर्ग	अनुसूचित जाति वर्ग	मुस्लिम वर्ग
1. खाद्यान	468.76	568.61	589.82	583.78
2. दालें	81.32	83.79	79.80	72.09
3. जड़दार सबिजयां	105.45	113.88	96.87	132.27
4. पत्तेदार तथा अन्य हरी सब्जियां	107.74	110.51	108.82	91.89
5. तेल/घी	20.00	12.55	12.10	24.73
6. दूध तथा दूध से बने पदार्थ	41.91	28.28	16.94	14.53
7. गुड़/चीनी	4.45	14.20	13.53	16.79
8. मांसाहार	21.77	30.60	23.70	58.34
9. फल	40.40	29.48	25.71	19.13
योग	901.47	991.90	963.96	1013.55

सारणी 7.5 विभिन्न खाद्य पदार्थो के औसत उपयोग का चित्र प्रस्तुत कर रही है। जिसमें विभिन्न वर्गो के मध्य खाद्यान्नों के उपभोग में 468.76 ग्राम से 589.82 ग्राम तक विचलन देखने में आ रहा है। खाद्यानों का सर्वाधिक प्रयोग अनुसूचित जाति वर्ग द्वारा तथा न्यूनतम प्रयोग सामान्य वर्ग परिवारों द्वारा किया जा रहा है। दालों के उपयोग में 72.09 ग्राम से 83.79 ग्राम तक अन्तर की गणना की गयी है। जड़दार सब्जियों में आलू, घुइया/अरवी, मूली तथा प्याज का ही अधिक क्षेत्रीय प्रचलन है, 96.87 ग्राम से 132.27 ग्राम तक विचलन दिखाई पड़ रहा है, जबकि पत्तेदार तथा अन्य हरी सब्जियों में 91.89 ग्राम से 110.51 ग्राम तक का अन्तर है, इन सब्जियों में पालक, बथुआ, मूली, चने का साग, कद्दू,

लौकी, तोरई, चचेड़ा, टिण्डा का ही प्रचलन अधिक है। तेल/घी के उपभोग में 12.10 ग्राम से 24.73 ग्राम तक विचलन प्राप्त हुआ। इस खाद्य पदार्थ का उपभोग जैसे-जैसे परिवारों के जोत के आकार में वृद्धि होती जा रही है वैसे-वैसे उपभोग की मात्रा बढ़ती जा रही है। दूध का न्यूनतम उपभोग 14.53 ग्राम मुस्लिम वर्ग द्वारा तथा 41.91 ग्राम सामान्य वर्ग के परिवारों में उपभोग किया जा रहा है। चीनी/गुड़ का सर्वाधिक उपयोग 16.79 ग्राम मुस्लिम वर्ग के परिवारों द्वारा तथा न्यूनतम 13.53 ग्राम अनुसूचित जाति वर्ग द्वारा किया जा रहा है। माँसाहार तथा अण्ड़ों का उपभोग सर्वाधिक 58.34 ग्राम मुस्लिम वर्ग के द्वारा किया जाता है जबकि इस खाद्य पदार्थ का न्यूनतम उपभोग 21.77 ग्राम सामान्य वर्ग द्वारा किया जाता है। फलों के उपभोग का वितरण जोत की आकार में वृद्धि के साथ बढ़ रहा है और इनमें 19.13 ग्राम से 40.40 ग्राम तक अन्तर पाया गया है।

इस प्रकार विभिन्न वर्गों के आहार संतुलन पत्रक के आधार पर यह देखा गया है कि केवल खाद्यान्नों के उपभोग में सभी वर्ग आवश्यक मानक स्तर से अधिक उपभोग कर रहें हैं जबकि अन्य खाद्य पदार्थों का उपभोग मानक स्तर से अत्यन्त नीचा है। जिसके कारण एक स्वस्थ मनुष्य के शरीर को आवश्यक पोषक तत्वों में असन्तुलन उत्पन्न हो जाता है।

3. पोषक तत्वों के ग्रहण करने में अन्तवर्गीय भिन्नता

विभिन्न वर्गों के आहार में पोषक तत्व :

शरीर को स्वस्थ निरोग और क्रियाशील रखने के लिये भोजन की उसी प्रकार आवश्यकता है जिस प्रकार मोटर को पेट्रोल की, सतत् क्रियाशील रहने के कारण मोटर के विभिन्न पुर्जो की भाँति शरीर के अवयव भी घिसते, छीजते व नष्ट होते रहते हैं। इस क्षति की पूर्ति करना अनिवार्य है। यह क्षति पूर्ति भोजन के माध्यम से ही सम्भव होती है।

सामान्य वर्ग के परिवारों द्वारा उपभोग किये जाने वाले विभिन्न खाध पदार्थो से प्राप्त पोषक तत्व :

इन परिवारों की आर्थिक स्थिति अन्य वर्गो की तुलना में अच्छी है जिसका प्रभाव इन परिवारों की खाद्य आदतों के सन्दर्भ में देखा जा सकता है, परन्तु खाद्यान्नों के अतिरिक्त उपभोग किये जाने वाले अन्य खाद्य पदार्थो

सारणी क्रमांकः 7.6– सामान्य वर्ग के परिवारों द्वारा प्रति व्यक्ति प्रतिग्रहण किए जानेवाले विभिन्न खाद्य पदार्थों से प्राप्त पोषक तत्व

खाद्य पदार्थ	मात्रा ग्राम	ऊर्जा कैलोरी	प्रोटीन ग्राम	वसा ग्राम	खनिज ग्राम	फाइबर ग्राम	कार्बोहाइड्रेड ग्राम	कैल्सियम मिग्रा	फास्फोरस मिग्रा	लौह मिग्रा	कैरोटीन क्यूग्रा.	थियामिन मिग्रा	राइबोफ्लेविन	नियासिन मिग्रा	विटामिन एस्कार्बिक एसिड मिग्रा
१.खाद्यान्न	४६८.७६	१६४०.६६	४६.१२	१२.१८	७.३१	६.६८	३३२.०६	१२०.००	१२७६.६०	१६.५६	३१४.०६	१.६८	०.७५	१५.५६	
२.दालें	८१.३२	२७८.११	१७.२३	१.८०	२.३५	२.५४	४७.२०	११४.६६	२५२.६०	५.७७	७५.४२	०.३४	०.१५४	२.११	
३.जड़दार सब्जियां	१०५.४५	६६.२४	१.३०	०.१४	०.७४	०.६६	१५.८८	०.०६	०.०४	१.०२	६७८.०४	०.०७	०.०२	०.७१	
४.पत्तेदार तथा अन्य हरी सब्जियां	१०७.७४	३३.६३	१.६६	०.५३	१.२४	०.८६	५.२२	०.०८	०.०३	३.१२	३६६३.१६	०.०५	०.१३	०.४८	
५. तेल/घी	२०.००	१८०.००	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	
६. दूध तथा दूध से बने पदार्थ	४१.६१	४६.०३	१.८०	३.६८	–	–	२.१४	०.०६	०.५०	०.०८	–	–	०.०७	०.०४	२०.२०
७.चीनी/गुड़	१४.४५	५५.३४	०.०६	०.०१	०.०६	–	१३.७२	११.५६	५.७८	१.६५	२४.२७	०.००२	०.००५	०.०७	–
८.मांसाहार	२१.७७	४२.२३	४.०२	२.८६	–	–	–	०.०३	०.०३	०.५४	–	–	०.०६	१.४८	१.६६
९.फल	४०.४०	२२.७६	०.४६	०.०६	–	१.१३	८.४४	०.००४	०.०१	०.२३	३५२.८१	०.०२	०.१२	०.१८	
योग		२३७१.३	७५.६८	२१.२६	११.७३	१२.०३	४२४.६६	२४६.५१	१५३५.७४	३१.६८	५१०७.७६	२.१६२	१.३०६	२०.६३	२२.१६
आवश्यक मानक		२४.८४	५५.०१	३०.००	२५.८८	६.६५	५००	५००	८३०	२५.८८	३१०५	१.८८	१.७२	२१.०४	७.७६
अल्पता- अधिकता+		-११२.७	+२०.६७	-८.७१	-१४.१५	+५.०८	-७५.३४	-२३५.४८	+७०५.७४	+६.१०	+२००२.७६	+०.२८२	-०.४११	-०.४१	-१४.४०

की मात्रा अभी भी मानक स्तर से कम है। उदाहरण के लिये पत्तेदार तथा हरी सब्जियों की मात्रा 107.45 ग्राम, दूध की 41.91 ग्राम, फलों की 40.40 ग्राम, तथा तेल/घी की मात्रा 20.00 ग्राम है । यद्यपि ये मात्रायें अन्य वर्गों के परिवारों द्वारा उपभोग किये जाने वाले खाद्य पदार्थों की मात्राओं से अधिक है, परन्तु इतनी अधिक नही कि इन पदार्थो से प्राप्त होने वाले पोषक तत्व इस वर्ग के परिवारों के सदस्यों को कुपोषण जनित बीमारियों से पूर्णतया सुरक्षित बनाये रख सकें। फिर भी खाद्यान्न की भोजन में सहभागिता कम हुई है यह एक अच्छा संकेत है, इसी कारण शरीर के लिये आवश्यक खनिजों को छोड़कर अन्य पोषक तत्वों के ग्रहण करने के सम्बन्ध में यह वर्ग आधिक्य की स्थिति में है। आर्थिक तथा सामाजिक सम्पन्नता के कारण भी इस वर्ग के परिवारों के उपभोग का स्तर अन्य वर्गो की अपेक्षा बेहतर है।

सारणी 7.6 में सामान्य वर्ग के परिवारों में जिनमें ब्राहम्ण,क्षत्रिय,वैश्य, जातियों की प्रमुखता है। अधिकांश परिवार कृषि, नौकरी,व्यवसाय में संलग्न हैं। इन परिवारों द्वारा ग्रहण किए जाने वाले खाद्य पदार्थों से प्राप्त होने वाले पोषक तत्वों में कुछ तो मानक स्तर से अधिक और कुछ मानक स्तर से कम ग्रहण किये जा रहे है। मानक स्तर से कम पोषक तत्वों में से कार्बोहाइड्रेट्स जो भोजन को पचाने में महत्वपूर्ण सहयोग करता है, का उपभोग 75.34 ग्राम, कैल्शियम जो बच्चों की शारीरिक वृद्धि के समय हड्डियो के विकास तथा मजबूती के लिए आवश्यक है , का उपभोग 235.48 ग्राम, खनिज लवण विभिन्न अंगो को सुचारु रूप से कार्यरत रखने में महत्वपूर्ण सहयोग करते हैं का 14.15 ग्राम, ऊर्जा 112.7 कैलोरी। इसके अतिरिक्त राइबोफ्लेविन तथा एस्कोर्बिक एसिड की मात्रा मानक स्तर से कम ग्रहण की जा रही है। नियासिन तथा विटामिन का मानक स्तर से नीचे है। इन पोषक तत्वों के अतिरिक्त अन्य पोषक तत्वों की मात्रा मानक स्तर से अधिक ग्रहण की जा रही है। जिनमें से प्रोटीन 20.97 ग्राम फाइबर 5.08 ग्राम, फास्फोरस 705.74 मिलीग्राम, लौह 0.10 मि0ग्रा0, कैरोटीन 2002.76 म्यू ग्राम, थियामीन 0.28 मिलीग्राम प्रमुख है। परन्तु जिन पोषक तत्वों का उपभोग मानक स्तर से अधिक है। वह खाद्यान्नो की अधिक मात्रा उपभोग के कारण उपलब्ध है।

पिछडे वर्ग के परिवारों द्वारा उपभोग किये जाने वाले खाद्य पदार्थो से प्राप्त पोषक तत्वः

इस वर्ग के अन्तर्गत लोधी, काछी, यादव, कुर्मी, नाई, कुम्हार, मल्लाह आदि वर्ग आते हैं। जिनमें से अधिकांश परिवार कृषि, पशुपालन, सब्जी उत्पादन को प्रमुखता देते है, परन्तु इन जातियों में दुग्ध तथा सब्जियों का अधिक उत्पादन होने के बावजूद भी इन खाद्य पदार्थो का उपभोग उनके उत्पादन स्तर के अनुपात में नहीं होता है। दूध तथा दूध से बने पदार्थो का उपभोग उनके उत्पादन स्तर के अनुपात में नहीं होता है। दूध तथा दूध से बने पदार्थो का उपभोग प्रतिव्यक्ति 28.28 ग्राम इस बात का प्रतीक है कि यह वर्ग दूध तथा हरी सब्जियों का अतिरिक्त उत्पादन तो करता है परन्तु उनका उपभोग स्वयं न करके अतिरिक्त आय का साधन बनाये हुये हैं क्योंकि आज के भौतिक युग में प्रत्येक परिवार अधिक से अधिक आय अर्जित करके भौतिक सुख साधन एकत्रित करना चाहता है। इस वर्ग द्वारा विभिन्न खाद्य पदार्थो का उपभोग तथा उनसे प्राप्त पोषक तत्वों की सारणी 7.7 में प्रस्तुत किया जा रहा है।

पिछडे वर्ग के परिवारों द्वारा विभिन्न खाद्य पदार्थो की कुल मात्रा 991.90 ग्राम प्रतिव्यक्ति प्रतिदिन की दर से उपभोग की जा रही है। जिसमें 57.33 प्रतिशत खाद्यान्न तथा 8.45 प्रतिशत दालों का योगदान है जबकि दूध तथा दूध से बने पदार्थो का मात्र 2.85 प्रतिशत तथा हरी सब्जियों का 11.14 प्रतिशत योगदान है।

स्पष्ट है कि यह वर्ग भी आवश्यक पोषक तत्वों के लिए खाद्यान्नों तथा दालों पर ही निर्भर है। इन दो खाद्य पदार्थो पर अत्याधिक निर्भरता के कारण विभिन्न पोषक तत्वों के संतुलन के लिये अन्य पदार्थो का उपभोग अत्यन्त सीमित है जिसके कारण कुछ पोषक तत्वों की उपलब्धता मानक स्तर से अधिक तथा कुछ की मानक स्तर से कम रह जाती है। मानक स्तर से अधिक ग्रहण किये जाने वाले पोषक तत्वों में प्रोटीन 33.06 ग्राम, वसा 6.22 ग्राम, फाइबर 4.54 ग्राम, फास्फोरस 1015 मिली ग्राम, लौह 341.1मिलीग्राम, थियामीन 0.82 मिलीग्राम नियासिन 4.29 मिलीग्राम तथा कैरोटीन 2229.49 म्यूग्राम प्रमुख हैं जबकि मानक स्तर से कम प्राप्त होने वाले पोषक तत्वों में खनिज 12.43 ग्राम, कार्बोहाइड्रेट्स 4.95 ग्राम,

सारणी क्रमांकः 7.7– पिछड़े वर्ग के परिवारों द्वारा प्रति व्यक्ति प्रतिग्रहण किए जानेवाले विभिन्न खाद्य पदार्थों से प्राप्त पोषक तत्व

खाद्य पदार्थ	मात्रा ग्राम	ऊर्जा कैलोरी	प्रोटीन ग्राम	वसा ग्राम	खानिज ग्राम	फाइबर ग्राम	कार्बोहाइड्रेड ग्राम	कैल्सियम मिग्रा	फास्फोरस मिग्रा	लौह मिग्रा	कैरोटीन क्यूग्रा.	थियामिन मिग्रा	राइबोफ्लेविन	नियासिन मिग्रा	विटामिन एस्कार्बिक एसिड मिग्रा
१.खाद्यान्न	५६८.६१	१६६०.१३	५६.५६	१४.७८	८.८७	८.३०	४०२.८०	१४५.५६	१५४८.८६	२३.७६	३८०.६६	२.०५	०.६१	१८.८८	
२.दालें	८३.८६	२८६.५६	१७.७६	१.८६	२.४३	२.६१	४८.६४	११८.१४	२६०.५८	५.६५	७७.७१	०.३६	०.१६	२.१८	
३.जड़दार सब्जियां	११३.८८	७४.७७	१.४०	०.१५	०.८०	०.७२	१७.१५	०.१०	०.०५	१.१०	७३२.२५	०.०८	०.०१	०.७६	
४.पत्तेदार तथा अन्य हरी सब्जियां	११०.५१	३४.८१	२.०४	०.५५	१.२७	०.८८	५.३६	०.०८	०.०३	३.२०	३७५७.३४	०.०५	०.१४	०.४६	
५. तेल/घी	१२.५५	११२.६५	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	
६. दूध तथा दूध से बने पदार्थ	२८.२८	३३.०८	१.२२	२.४६	-	-	१.४४	०.०६	०.०४	०.०६	-	-	०.०५	०.०३	१३.८५
७.चीनी/गुड़	११.२०	५४.३६	०.०६	०.०१	०.०८	-	१३.४६	११.३६	५.६८	१.६२	२३.८७	०.००२	०.०१	०.०७	-
८.मांसाहार	३०.६०	५६.३६	५.६६	४.०७	-	-	-	०.०४	०.०४	०.७६	-	-	०.०८	२.०८	२.७५
९.फल	२६.४८	१६.६०	०.३३	०.०५	-	०.८२	६.१६	०.००२	०.०१	१.१६	२५७.३६	०.०१	०.०६	०.१३	
योग	६६१.६०	२६४४.६५	८८.०६	२३.७८	१३.४५	१३.३३	४६५.०४	२७५.३४२	१८१५.३२	३६६.१	५२२६.४६	२.५५२	१.४५	२४.६२	१६.६०
आवश्यक मानक		२७३२	५५.००	३०.००	२५.८८	६.७६	५००	५००	८००	२५.००	३०००	१.७३	१.६६	२०.३३	७.७६
अल्पता- अधिकता+		-८७.३५	+३३.०६	-६.२२	-१२.४३	+६.५४	-४.६५	-२२४.६६	+१०१५.३२	+३४१.१	+२२२६.४६	+०.८२	-०.२१	+४.२६	+८.८४

कैल्शियम 224.66 मिलीग्राम, राइबोफ्लेविन 0.21 मिलीग्राम प्रमुख है। इस वर्ग के द्वारा भी उपभोग किये जाने वाले विभिन्न खाद्य पदार्थों में खाद्यान्नो की ही प्रमुखता है और इसी खाद्य पदार्थों से विभिन्न पोषक तत्वों की अधिकांश मात्रा इस द्वारा ग्रहण की जा रही है। ऐसा लगता है कि जैसे अन्य वर्ग के लोगों की भांति इस वर्ग के लोग भी जाने अनजाने केवल पेट भरने के लिए ही भोजन करते हैं न कि भोजन ग्रहण करने का आधार विभिन्न खाद्य पदार्थों की पौष्टिक अथवा गुणात्मकता रहती है।

अनुसूचित जाति वर्ग के परिवारों के द्वारा उपभोग किये जाने वाले खाद्य पदार्थों से प्राप्त पोषक तत्व:

इस वर्ग के अर्न्तगत धोबी, धानुक, मेहतर, कोरी आदि वर्ग आते है जो अपने तथा अपने परिवारों के जीवनयापन के लिये मजदूरी कृषि तथा ग्रामीण क्रियाओं अदि पर निर्भर है। ग्रामीण समाज में आज भी ग्रामीण क्रियाये जातिगत आधार पर निर्धारित होती है यद्यपि नगरीय जीवन में तेजी से परिवर्तन होता जा रहा है। इन परिवारों की खाद्य आदतों तथा इनके द्वारा ग्रहण किये जाने वाले खाद्य पदार्थों की मात्रा एवं खाद्य पदार्थों के गुणों में एक जाति से दूसरी जाति तथा एक परिवार से दूसरे परिवार में अत्याधिक भिन्नता मिलती है। इन परिवारों का खान-पान अनेक बातों से प्रभावित होता है। इसीलिये इन परिवारों की खाद्य आदतों में अनिवार्य खाद्य वस्तुओं जैसे दूध घी, माँस, अण्ड़े तथा दूध से बने पदार्थो का अभाव रहता है।

सारणी 7.8 में अनुसूचित जाति वर्ग के परिवारों द्वारा उपयोग किये जाने वाले विभिन्न खाद्य पदार्थों तथा उनसे प्राप्त होने वाले पोषक तत्वों का चित्र प्रस्तुत कर रही है। जिसमें इस वर्ग द्वारा प्रतिव्यक्ति प्रतिदिन 967.29 ग्राम विभिन्न खाद्य पदार्थों का उपभोग किया जा रहा है। जिसमें खाद्यान्नों का योगदान 61.19 प्रतिशत है जबकि दूध तथा दूध से बने पदार्थों का योगदान मात्र 1.76 प्रतिशत है जो मानक स्तर से बहुत कम है। इस वर्ग के लिये यह एक प्रसन्नता की बात है कि ऊर्जा की मात्रा आवश्यक मानक स्तर से अधिक ग्रहण की जा रही है अन्य पोषक तत्व जो इस वर्ग के लिये आवश्यक मानक स्तर से 32.39 अधिक ग्रहण किये जा रहे है। उनमें प्रोटीन 32.39 ग्राम फाइवर 5.04 ग्राम, फास्फोरस 1040.39 मि.ग्रा., लौह 11.70 कैरोटीन 1988.92 म्यू.ग्रा., नियासिन

सारणी क्रमांकः 7.8– अनुसूचित जाति के परिवारों द्वारा प्रति व्यक्ति प्रतिग्रहण किए जाने वाले विभिन्न खाद्य पदार्थों से प्राप्त पोषक तत्व

खाद्य पदार्थ	मात्रा ग्राम	ऊर्जा कैलोरी	प्रोटीन ग्राम	वसा ग्राम	खनिज ग्राम	फाइबर ग्राम	कार्बोहाइड्रेड ग्राम	कैल्सियम मिग्रा	फास्फोरस मिग्रा	लौह मिग्रा	कैरोटीन क्यू.ग्रा.	थियामिन मिग्रा	राइबोफ्लेविन	नियासिन मिग्रा	विटामिन एस्कार्बिक एसिड मिग्रा
१.खाद्यान्न	५८६.८२	२०६४.३७	६१.८१	१५.३३	६.२०	८.६१	४१७.८३	१५०.६६	१६०६.६७	२४.६५	३६५.१८	२.१२	०.६४	१६.५८	
२.दालें	७६.८०	२७२.६२	१६.६२	१.७७	२.३१	२.४६	४६.३२	११२.५१	२४८.१८	५.६६	७४.०१	०.३४	०.१५	२.०७	
३.जड़दार सब्जियां	६६.८७	६३.६०	१.१६	०.१२	०.६	०.६१	१४.५६	०.०६	०.०४	०.६४	६२२.८७	०.०७	०.०१	०.६५	
४.पत्तेदार तथा अन्य हरी सब्जियां	१०८.८२	४२.२७	२.०१	०.५४	१.२५	०.८७	५.२८	०.०८	०.०३	३.१५	३६६६.८८	०.०५	०.१४	०.४६	
५. तेल/घी	१२.१०	१०८.६०	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	-	
६. दूध तथा दूध से बने पदार्थ	१६.६४	१६.८२	०.७३	१.४६	-	-	०.८६	०.०३	०.०२	०.०३	-	-	०.०३	०.०२	८.३०
७.चीनी/गुड़	१३.५३	५१.८२	०.०५	०.०१	०.०८	-	१२.८५	१०.८२	५.४१	१.५४	२२.७३	०.००२	०.००५	०.०६	-
८.मांसाहार	२३.७०	४५.०	४.३८	३.१५	-	-	-	०.०३	०.०३	०.५६	-	-	०.०६	१.६१	२.१३
९.फल	२५.७१	१४.४८	०.२६	०.०४	-	०.७२	५.३७	०.००२	०.००८	०.१४	२२४.२५	०.०१	०.०८	०.१२	
योग	६६७.२६	२६८४.१६	८७.३८	२२.४५	१३.५२	१३.३०	५०२.६०	२७४.५५	१८६०.३६	३६.७०	५०३८.६२	२.५६	१.४२१	२४.६०	१०.४३
आवश्यक मानक		२९४८	५५.००	३०.००	२५.८८	५.२६	५००	५००	८२०	२५.००	३०५०	१.६३	१.६८	२०.३५	७.५२
अल्पता- अधिकता+		-२६३.८४	+३२.३८	-७.५५	-१२.३६	+८.०४	+२.६०	-२२५.४५	+१०४०.३६	+११.७०	+१९८८.६२	+०.६६	-०.२६	+४.२५	+२.६१

4.25 मि.ग्रा., थियामिन 0.96 मि.ग्रा. प्रमुख है जबकि मानक स्तर से कम प्राप्त होने वाले पोषक तत्वों में वसा 7.55 ग्राम, खनिज 12.36 ग्राम कार्बोहाइड्रेट्स 2.90 ग्राम, कैल्शियम 225.45 मि.ग्रा., राइबोफ्लेविन 0.26 मिलीग्राम, विटामिन 2.91 प्रमुख है। परन्तु इस वर्ग के द्वारा भी उपभोग किए जानेवाले विभिन्न खाद्य पदार्थों में खाद्यान्नों की प्रमुखता है और इसी खाद्य पदार्थ से विभिन्न पोषक तत्वों की अधिकांश मात्रा में इस वर्ग द्वारा ग्रहण की जा रही है।

मुस्लिम वर्ग के परिवारों द्वारा उपभोग किए जानेवाले खाद्य पदार्थों से प्राप्त पोषक तत्वः

इस वर्ग के लोग अपनी भूमि पर खाद्यान्न फसलों के साथ-साथ सब्जियों को भी उगाते हैं। इसके अतिरिक्त पशुपालन तथा मुर्गीपालन भी करते हैं, परन्तु दूध तथा दूध से बने पदार्थों का उपभोग प्रति व्यक्ति 14.93 ग्राम, हरी सब्जियां 86.92 ग्राम इस बात का प्रतीक हैं कि भोज्य पदार्थों में आवश्यक दूध जैसे खाद्य पदार्थों की अति अल्प मात्रा का उपभोग करना भोजन के प्रति लोगों की उदासीनता दर्शा रही है। खान-पान में क्षेत्रीय खाद्य प्रचलन के अतिरिक्त इस वर्ग पर भी अन्य अनेक महत्वपूर्ण कारणों का प्रभाव दिखाई पड़ता है। इनमें से आय का आकार परिवार के सदस्यों की संख्या, क्षेत्रीय खाद्य पदार्थों की उपलब्धता प्रमुख है। इन मुस्लिम परिवारों के सदस्यों द्वारा ग्रहण किए जानेवाले खाद्य पदार्थ तथा उन खाद्य पदार्थों से प्राप्त होनेवाले पोषक तत्वों को सारणी 7.9 में प्रस्तुत किया जा रहा है।

सारणी 7.9 मुस्लिम परिवारों द्वारा ग्रहण किए जानेवाले खाद्य पदार्थों तथा अन्य खाद्य पदार्थों से प्राप्त होनेवाले पोषक तत्वों की मात्रा का विवरण प्रस्तुत कर रही है। सारणी से ज्ञात होता है कि इस वर्ग के भोजन में भी खाद्यान्नों की प्रमुखता है क्योंकि प्रतिदिन प्रतिव्यक्ति ग्रहण किए जाने वाले विभिन्न खाद्य पदार्थों की 1013.55 ग्राम मात्रा में 583.78 ग्राम की भागेदारी खाद्यान्नों की ही है।

स्वाभाविक है कि भोजन में खाद्यान्नों का योगदान अधिक होने के कारण विभिन्न पोषक तत्वों की कुल मात्रा में भी खाद्यान्नों की भागेदारी

सारणी क्रमांकः 7.9– मुस्लिम परिवारों द्वारा प्रति व्यक्ति ग्रहण किए जाने वाले विभिन्न खाद्य पदार्थों से प्राप्त पोषक तत्व

खाद्य पदार्थ	मात्रा ग्राम	ऊर्जा कैलोरी	प्रोटीन ग्राम	वसा ग्राम	खनिज ग्राम	फाइबर ग्राम	कार्बोहाइड्रेड ग्राम	कैल्सियम मिग्रा	फास्फोरस मिग्रा	लौह मिग्रा	कैरोटीन क्यू.ग्रा.	थियामिन मिग्रा	राइबोफ्लेविन	नियासिन मिग्रा	विटामिन	एस्कार्बिक एसिड मिग्रा
१.खाद्यान्न	५८३.७८	२०४३.२३	६१.१८	१५.१७	९.१०	८.५२	४१३.५४	१४६.४५	१५६०.२१	२४.४०	३६१.१३	२.१०	०.६३	१६.३८		
२.दालें	७२.०६	२४६.५४	१५.२८	१.६०	२.०६	२.२५	४१.८४	१०१.६५	२२४.२०	५.१२	६६.८६	०.३१	०.१४	१.८७		
३.जड़दार सब्जियां	१३२.२७	८६.८५	१.६२	०.१७	०.०६	०.८३	१६.६२	०.१२	०.०५	१.२८	८५०.४६	०.०६	०.०२	०.८६		
४.पत्तेदार तथा अन्य हरी सब्जियां	६१.८६	२८.६४	१.७०	०.४६	१.०६	०.७३	४.४६	०.०६	०.०३	२.६६	३१२४.२६	०.०४	०.११	०.४१		
५. तेल/घी	२४.७३	२२२.५७	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–	–		
६. दूध तथा दूध से बने पदार्थ	१४.५३	१७.००	०.६२	१.२८	–	–	०.७४	०.०३	०.०२	०.०३	–	–	०.०३	०.०१	७.१२	
७.चीनी/गुड़	१६.७६	६४.३०	०.०७	०.०२	०.१०	–	१५.६५	१३.४३	६.७२	१.६१	२८.२१	०.००३	०.०१	०.०८	–	
८.मांसाहार	५८.३४	११३.१८	१०.७६	७.७६	–	–	–	०.०८	०.०८	१.४६	–	–	०.१६	३.६७		
९.फल	१६.१३	१०.७७	०.२२	०.०३	–	०.५३	४.००	०.००२	०.०१	०.११	१६७.०६	०.०१	०.०६	०.०६		
योग	१०१३.५५	२८३३.३८	६१.४८	२६.४६	१२.४४	१२.८६	५००.४५	२६४.८२१	१८२१.३२		४६२८.०१	४६२८.०१	२.५३३	१.४६	२४.७०	७.१२
आवश्यक मानक		२७८८	५५.००	३०.००	२५.८८	६.५०	५००	५००	८१०	२५.२४		३०५५	१.५३	१.६६	२०.२१	७.५०
अल्पता– अधिकता+		+४५.३८	+८६.४८	–३.५१	–१३.४४	+६.३६	+०.४५	–२३५१.७८	+१०११.३२	+४६०२.७७		+१५७३.०१	+१.०२३	–०.२०	+५.४६	–०.३८

अधिक है। यह वर्ग वसा 3.51 ग्राम, खनिज 1344 ग्राम, कार्बोहाइड्रेड 0.45 ग्राम, कैल्सियम 235.18 मिली ग्राम, राइबोफ्लेविन 0.20 मिलीग्राम आवश्यक मानक स्तर से कम ग्रहण कर रहा है, जबकि ऊर्जा 45.38 कैलोरी, प्रोटीन 86.48 ग्राम, फाइबर 6.36 ग्राम, फास्फोरस 1011.32 मिलीग्राम, लौह 4602.71 मिलीग्राम, कैरोटिन 1573.01 म्यू ग्राम, थियामिन 1.02 मिलीग्राम, नियासिन 5.49 मिलीग्राम मानक स्तर से अधिक ग्रहण कर रहा है। स्पष्ट है कि इस वर्ग के लोग भी विभिन्न पोषक तत्वों के लिए खाद्यान्नों पर अत्यधिक निर्भर हैं। अन्य पदार्थों का सेवन या तो बिल्कुल नहीं या अल्प मात्रा में किया जा रहा है।

4. पोषण सम्बन्धी रोगों से प्रभावित संख्याः

इस प्रकार के अध्ययन का अन्तिम उद्देश्य अध्ययन क्षेत्र में लोगों के स्वास्थ्य के स्तर का एक चित्र प्रस्तुत करना होता है। सामान्य रूप से यह देखा गया है कि क्षेत्र में प्रचलित अधिकांश रोग अल्पपोषण तथा कुपोषण के ही देन हैं। क्षेत्रीय चिकित्सकों के अनुसार एड्स तथा कैंन्सर को छोड़कर अन्य रोग पोषण सम्बन्धी असंतुलन के कारण जनसंख्या के एक बड़े हिस्से को प्रभावित करते हैं, इस ओर ध्यान देने की अत्याधिक आवश्यकता है।

पीछे हम विभिन्न वर्गों द्वारा ग्रहण किए जाने वाले पोषक तत्वों का विश्लेषण कर चुके हैं। जिसमें विभिन्न पोषक तत्वों का आवश्यक मानक स्तर से कम या अधिक ग्रहण किया जाना, जिसके परिणामस्वरूप विभिन्न कुपोषण जनित रोगों की शिकार जनसंख्या का तुलनात्मक विश्लेषण इस अध्याय में किया जा रहा है। अध्ययन क्षेत्र में विभिन्न वर्गों द्वारा ग्रहण किया जानेवाला भोजन मात्रात्मक तथा गुणात्मक दोनों ही दृष्टियों से निम्न स्तरीय कहा जा सकता है क्योंकि भोजन में विभिन्न खाद्य पदार्थों का मात्रात्मक समायोजन केवल उदरपूर्ति की दृष्टि से तो ठीक है परन्तु संतुलित भोजन में विभिन्न खाद्य पदार्थों का समायोजन भारी असंतुलन को दर्शा रहा है। विभिन्न पोषक तत्वों की अधिकांश मात्रा विभिन्न खाद्य पदार्थों से ग्रहण की जा रही है जो मात्रात्मक दृष्टि से तो कुछ ठीक कही जा सकती है परन्तु गुणात्मक दृष्टि सं अत्यन्त निम्न स्तरीय है। सर्वेक्षण के समय विभिन्न वर्गों में प्रचलित पोषण सम्बन्धी रोगों का विवरण सारणी में दिया जा रहा है।

सारणी क्रमांकः 7.10

वर्ग	प्रभावित जनसंख्या का प्रतिशत	हाथों तथा पैरों में ऐंठन	पेट के रोग	थकान तथा शरीर में सूजन	सर्दी जुकाम मसूढ़ों में सूजन	होंठ तथा जिह्वा के रोग	बेरी-बेरी	रिकेट्स तथा आस्ट्रो मलेरिया	रतौंधी	स्कर्वी	जोड़ों में दर्द	डाइबिटीज (मधुमेह)	प्लेग्रा त्वचा फटने के रोग
सामान्य वर्ग	२६.३६	१.५२	५.०२	५.५७	६.०८	३.५४	२.०२	१.५२	१.०१	१.५२	४.५६	२.५३	-
पिछड़ा वर्ग	३५.३१	४.७१	४.०३	८.०७	४.७१	६.८६	२.३५	१.३४	२.६६	२.५२	५.५५	०.५०	४.०३
अनु० जाति वर्ग	३०.६२	४.२५	६.२४	६.०६	६.५१	३.४०	१.४१	१.५६	४.८२	१.६८	४.५३	०.६६	३.१२
मुस्लिम वर्ग	३६.१७	४.०३	५.६६	१४.०६	७.७०	४.६८	४.३५	२.३४	३.३४	३.३४	७.०३	१.६७	६.३६
औसत	३३.६२	४.८८	५.२४	८.४५	६.२५	४.६२	२.५६	१.६६	२.६२	३.१७	५.४१	१.४२	४.५०

सारणी क्रमांक से स्पष्ट है कि कुल जनसंख्या का 33.62 प्रतिशत भाग पोषण सम्बन्धी रोगो से प्रभावित है जिससे सर्वाधिक प्रभावित प्रतिशत मुस्लिम वर्ग (39.17) है। उसके बाद क्रमशः पिछडा वर्ग (35.31) प्रतिशत, अनुसचित जाति वर्ग 30.62 प्रतिशत, सामान्य वर्ग 29.39 प्रतिशत दर्शा रही है। सर्वेक्षण के दौरान यह भी देखा गया है कि महिलाओं की अपेक्षा पुरुषों तथा बच्चों के खानपान पर विशेष ध्यान दिया जाता है, साथ ही यह भी देखने को मिला है कि जिन परिवारों में यदि कोई सदस्य नौकरी अथवा अन्य सेवाओं द्वारा नगद द्रव्य अर्जित करता है उसके खानपान का अन्य सदस्यों की अपेक्षा अधिक ध्यान रखा जाता है। मुस्लिम वर्ग के परिवारों का प्रतिशत अन्य वर्गो की अपेक्षा अधिक है। जिसका कारण है इस वर्ग के परिवारों की आय का स्तर नीचा होना। सर्वेक्षण के समय अध्ययन क्षेत्र में निम्नलिखित महत्वपूर्ण रोग प्रकाश में आये।

1. हाथों तथा पैरों में ऐंठन:

हाथों, पैरों में ऐंठन मुस्लिम वर्ग के परिवारों के सदस्यों में 903 प्रतिशत, जो कि औसत 4.88 प्रतिशत से अधिक पायी गयी। पिछड़े तथा अनुसूचित जाति वर्ग के परिवारो के सदस्यों में क्रमशः 4.71प्रतिशत तथा 4.25 प्रतिशत तथा सामान्य वर्ग के परिवारों में न्यूनतम 1.52 प्रतिशत देखी गयी है। यद्यपि किसी भी रोग के लिए अनेक कारण हो सकते है परन्तु शरीर में विटामिन सी (एसकार्बिक एसिड) की कमी हाथों और पैरों में ऐंठन के लिए मुख्य रुप से उत्तरदायी है। अध्ययन क्षेत्र में एसकार्बिक एसिड मानक स्तर से कम प्राप्त किया जा रहा है।

2. पेट के रोग:

पेट के रोग का मुख्य कारण अपच होती है जो शरीर की अनेक बीमारियों का कारण बनती हैं। यद्यपि आंत सम्बन्धी गैस, एसिडिटी की शिकायत प्रत्येक वर्ग में पायी गयी परन्तु इस रोग की अधिकतम शिकायत 6.24 प्रतिशत अनुसूचित जाति वर्ग के परिवारों में पायी गयी। दूसरे स्थान पर 5.69 प्रतिशत मुस्लिम वर्ग के परिवार इस रोग से पीड़ित पाये गये। तृतीय तथा चतुर्थ स्थान पर सामान्य वर्ग तथा पिछ़ड़ा वर्ग के परिवार क्रमशः 5.02 प्रतिशत तथा 4.03 प्रतिशत इस रोग से ग्रसित देखे गये। अनुसूचित, मुस्लिम वर्ग के परिवारों में इस रोग का मूल कारण निम्न श्रेणी

के खाद्य पदार्थो का सेवन माना जा सकता है। अन्य वर्गो की स्थिति जिसमें सामान्य वर्ग तथा पिछडा वर्ग इस रोग से कुछ कम पीड़ित लगते है। सभी वर्गो को अपने सामान्य भोजन में रेशेदार खाद्य पदार्थो के अधिक उपभोग की प्रेरणा दी जानी चाहिए। जिससे इस रोग के शिकार कम से कम लोग हो सके। लोगों के भोजन में जब पोषक तत्व थियामीन की कमी हो जाती है तो अनेक कारणों सहित अपच तथा कब्ज की शिकायतें रहने लगती हैं, जो बाद में स्थायी होकर इस रोग को जन्म देती है। सर्वेक्षण के दौरान यद्यपि सभी वर्गो में थियामीन आवश्यक मानक स्तर से अधिक ग्रहण किया जा रहा है परन्तु यह अधिकांश खाद्य पदार्थो से प्राप्त होने वाला निम्न श्रेणी का होने कारण शरीर के लिये उतना लाभप्रद नहीं है जितना कि हरी सब्जियों, दूध, फल तथा अण्डे से प्राप्त होनेवाला उत्तम थियामीन शरीर के लिए लाभप्रद होता है। यही कारण है कि पर्याप्त थियामीन न मिल पाने के कारण भी लोग इस रोग का शिकार हो रहे हैं।

3. *थकान तथा शरीर में सूजन:*

अध्ययन क्षेत्र मे औसत से अधिक आवृति वाले वर्गो में मुस्लिम वर्ग 14.06 प्रतिशत जबकि औसत से कम पीड़ित वर्गो में अनुसूचित जाति वर्ग 6.09 प्रतिशत, पिछड़ा वर्ग 8.07 प्रतिशत तथा सामान्य वर्ग 5.57 प्रतिशत लोग इस रोग से पीड़ित देखे गये हैं। यह रोग ऊर्जा, वसा तथा विटामिन जिनमें थियासीन तथा नियासीन प्रमुख हैं, कि भोजन में कम मात्रा ग्रहण करनें से जन्म लेता है।

4. *सर्दी जुकाम तथा मसूड़ों में सूजन:*

ऋतु परिवर्तन तथा वातावरण में तापमान परिवर्तन के कारण सर्दी जुकाम हो जाना एक सामान्य सी बात है, परन्तु किसी व्यक्ति के लिए इस रोग का फैलाव काफी समय तक बना रहे तो सर्दी, जुकाम निसन्देह किसी घातक बीमारी की ओर संकेत करने लगता है। कभी-कभी जब खाँसी में रक्त सहित कफ आने लगता है तो यह स्कर्वी रोग के लक्षण होते हैं जो विटामिन सी (एसकार्बिक एसिड) की कमी के कारण होता है। इस रोग से सर्वाधिक पीड़ित मुस्लिम वर्ग में 7.70 पाये गये इसके बाद अनुसूचित जाति वर्ग के परिवार 6.51 प्रतिशत, सामान्य वर्ग 6.08 प्रतिशत तथा पिछड़ा वर्ग के 4.71 प्रतिशत सदस्य पाये गये।

5. होंठ तथा जिह्वा के रोगः

इस रोग का मूल कारण भोजन में राइवोफ्लेविन की अल्पता होती है, राइवोफ्लेविन (विटामिन बी2) की मुख के किनारे की त्वचा चटकने लगती है, होंठ तथा जिह्वा लाल रंग के हो जाते हैं जिनसे मुख में कष्ट के कारण भोजन करने में अत्यन्त कठिनाई का अनुभव होता है। इस पोषक तत्व की कमी से फोड़ा, फुन्सी का भी शरीर पर आक्रमण होने लगता है। सर्वेक्षण के दौरान पिछड़े वर्ग के परिवार में सर्वाधिक 6.89 प्रतिशत रोगी प्राप्त हुऐ हैं जबकि न्यूनतम अनुसूचित जाति वर्ग में 3.40 प्रतिशत रोगी प्राप्त हुए। सामान्य वर्ग तथा मुस्लिम कर्ग में क्रमशः 3.5 प्रतिशत तथा 4.68 प्रतिशत रोगी प्राप्त हुए हैं।

6. प्लेग्राः

निकोटिक एसिड़ या नियासिन प्लेग्रा रोग का नेतृत्व करता है। यह रोग त्वचा के उन भागों में सूजन, जो सूर्य के प्रकाश में खुले रहने के द्वारा पहचाना जाता है दूसरा इसका प्रमुख लक्षण अतिसार, जिह्वा में सूजन तथा अनिद्रा द्वारा प्रकट होता है। अध्ययन क्षेत्र में मक्का तथा ज्वार खाद्य पदार्थो के प्रचलन से इस रोग से लोग ग्रसित हैं, क्योकि इन दोनो खाद्य पदार्थो में नियासिन की मात्रा अधिक होती है और नियासिन की मात्रा आवश्यक्ता से अधिक ग्रहण करने से भी रोग का आक्रमण होता है। अध्ययन क्षेत्र में 6.36 प्रतिशत मुस्लिम वर्ग, 4.03 प्रतिशत पिछड़े वर्ग के सदस्य तथा 3.12 प्रतिशत, अनुसूचित जाति वर्ग के सदस्य इस रोग से ग्रसित पाये गये हैं।

7. बेरी-बेरीः

बेरी-बेरी रोग भी सभी वर्गों में एक महत्वपूर्ण रोग के रुप में पाया गया। मुस्लिम वर्ग के परिवारों में सर्वाधिक 4.35 प्रतिशत रोगी, पिछड़ा वर्ग के परिवारों में 2.35 प्रतिशत, अनुसूचित जाति वर्ग के परिवारों में 1.41 प्रतिशत तथा 2.02 प्रतिशत सदस्य सामान्य वर्ग के इस रोग से ग्रसित पाये गये। बेरी-बेरी रोग का मूल कारण थियामीन (विटामिन बी1) की भोजन में अल्पता होती है। बेरी-बेरी रोग के दो रुप देखने को मिलते हैं। प्रथम गीला बेरी-बेरी रोग, दूसरा सूखा बेरी-बेरी रोग तथा एक तीसरा

स्वरूप शिशु सम्बन्धी बेरी-बेरी देखने को मिला। भूख कम लगना, हाथ पैरों में सनसनाहट तथा चेतना शून्य हो जाना, सूखा बेरी-बेरी रोग के प्रमुख लक्षण हैं। इस रोग से मांसपेशियाँ नष्ट हो जाती हैं जिससे घूमने फिरने मे कष्ट होता है। शुष्क बेरी-बेरी के लक्षणों में हृदय का बड़ जाना, पैरों मे सूजन, हृदय को तेज गति से धड़कनाा तथा साँस तेज चलना आदि प्रमुख हैं।

8. रिकेट्स (सूखा रोग):

शरीर में विटामिन डी की कमी बच्चों में सूखा रोग तथा युवकों तथा स्तनपान करानें वाली महिलाओं को मृदुलास्थि (ओस्टोमलेशिया) रोग हो जाता है। कमर दर्द तथा रीड़ की हड्डियों में पीड़ा होना इस रोग के लक्षण होते हैं। बच्चों में सूखा रोग के प्रारम्भिक लक्षणों में कपाल के मुलायम पर गोल घेरा सा बनने लगता है बाद तें यह हड्डियों पर आक्रमण उनमे विकृति उत्पन्न कर देता है। अध्ययन क्षेत्र में मुस्लिम वर्ग के परिवारों में 2.34 प्रतिशत अनुसूचित जाति वर्ग के परिवारों में 1.56 प्रतिशत, पिछड़े वर्ग के परिवारों में 1.34 प्रतिशत तथा सामान्य वर्ग के परिवारों में 1.52 प्रतिशत सदस्य इस रोग से पीड़ित पाये गये।

9. रतौंधी :

शरीर में कैरोटिन या विटामिन ए की कमी से यह रोग हो जाता है। अँधेरे अथवा कम प्रकाश में आँखो को आगे का दृश्य देखने के लिये विटामिन ए आवश्यक होता है, इस विटामिन की कमी से नेत्रों के कॉर्निया में सफेद धब्बे पड़ जाते हैं इसके साथ ही विटामिन ए की कमी से बच्चों की शरीर की वृद्धि और विकास में रुकावट आ जाती है। विटामिन ए की कमी से आँख का लाल होना, माड़ा, कैराटोमलेशिया, तथा फालीकुलर कैरारोसिस आदि रोग भी हो जाते है। इस रोग से अध्ययन क्षेत्र में मुस्लिम वर्ग तथा अनुसूचित जाति वर्ग क्रमशः 3.34 प्रतिशत तथा 4.82 प्रतिशत ग्रसित है जो कि औसत से अधिक दिखाई पड़ रहे है। जबकि सामान्य वर्ग 1.01 प्रतिशत तथा पिछड़े वर्ग के परिवारों में 2.69 प्रतिशत सदस्य इस रोग से पीड़ित पाये गये।

10. स्कर्वी :

शरीर में विटामिन सी की कमी से स्कर्वी रोग (एक प्रकार के दूषित रुधिर का रोग) हो जाता है। अस्थियों तथा दांतों में स्कर्वी रोग हो जाता है।

विटामिन सी की कमी से अधोत्वचीय और अन्तरापेशीय रुधिर स्राव होने लगता है, भूख कम लगने लगती है और पेशियों तथा जोड़ों में दर्द होने लगता है। अध्ययन क्षेत्र की कुल जनसंख्या में सामान्य वर्ग 1.52 प्रतिशत, पिछड़ा वर्ग के परिवारों में 1.98 प्रतिशत तथा मुस्लिम वर्ग के परिवारों में 3.34 प्रतिशत, अनुसूचित जाति वर्ग के परिवारों में 1.98 प्रतिशत सदस्य इस रोग से पीड़ित पाये गये।

11. जोड़ों में दर्द:

चिकित्सकीय भाषा में इसे गठिया (ग्रन्थिवात) तथा ग्रन्थिशोध या बात रोग (हड्डियो के जोड़ो में सूजन) के नाम से जाना जाता है। यह रोग सभी वर्गों में 50 वर्ष की आयु से अधिक के व्यक्तियों में पाया जाता है। जोड़ो में दर्द सामान्य वर्ग के लोगो में 4.56 प्रतिशत, पिछड़े वर्ग के लोगों में 5.55 प्रतिशत देखने को मिला। मुस्लिम वर्ग सर्वाधिक 7.03 प्रतिशत तथा अनुसूचित जाति वर्ग न्यूनतम 4.53 प्रतिशत इस रोग से ग्रसित पाये गये।

संन्दर्भ ग्रन्थ

1. सफी एम0 (1967) "फूड प्रोडक्शन इफीसियेन्सी एण्ड न्यूट्रीशन इन इण्डिया" दि ज्योग्राफर, वाल्यूम 14, अलीगढ़।

2. सुखात्मे पी0 वी0 (1973) "ह्यूमन कैलोरीज एण्ड प्रोटीन नीड्स एण्ड हाउ दे आर सेटिस्फाइड" टुडे, लन्दन।

3. अली मुहम्मद (1978) "सिचुयेशन ऑफ फूड एण्ड न्यूट्रिशन इन रूरल इण्डिया" के0 बी0 पब्लिकेशन, न्यू दिल्ली।

4. जैदी सैयद साजिर हुसैन (1982) "रूरल इण्डिया एण्ड माल न्यूट्रिशन" कन्सेप्ट पब्लिकेशन कम्पनी, नई दिल्ली।

5. तिवारी पी0 डी0 (1965) "फूड इन्टेक सिस्टम एण्ड डिफीसियेन्सीज इन रूरल एरिया ऑफ मध्य प्रदेश" रूरल सिस्टम, वाल्यूम 3 नम्बर, 4 दिसम्बर।

6. स्वामीनाथन एम0 (1986) "हैण्डबुक ऑफ फूउ एण्ड न्यूट्रिशन" बैंगलोर प्रिटिंग एण्ड पब्लिसिंग कम्पनी, बैंगलोर।

7. सिंह एस0 पी0 (1991) "पावर्टी फूड एण्ड न्यूट्रिशन इन इण्डिया" चुग पब्लिकेशन्स, इलाहाबाद।

अध्याय - अष्ठम्

अध्याय-अष्ठम

निर्धनता दूर करने के उपाय

1. पंचवर्षीय योजनाओं एवं सरकारी स्तर पर निर्धनता को दूर करने के उपाय:

रोजगार सृजन और गरीबी उन्मूलन हमारे देश की पंचवर्षीय योजनाओं के प्रमुख लक्ष्य रहे हैं, फिर भी योजनाओं के आरम्भिक चरण में गरीबी उन्मूलन के लिये सीधे प्रयास नहीं किये गये। आरम्भिक वर्षो में गरीबी की समस्या की उपेक्षा का कारण सम्भवतः यह तर्क था कि समृद्धि का लाभ स्वतः रिसकर जनसंख्या के सभी वर्गो को प्राप्त हो जायेगा। इसे रिसाव प्रभाव (Tricle down Effect) के नाम से जाना जाता है।

चौथी योजना में निर्बल वर्ग की दशा सुधारने की बात की गई थी लेकिन कोई व्यवस्थित कार्यक्रम आरम्भ नहीं किया जा सका। पांचवी योजना के बाद ही गरीबी पर सीधा प्रहार करने वाली योजनायें शुरू की गयी। पांचवी योजना में काम के बदले अनाज कार्यक्रम व न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम चलाये गये। ये सभी योजनायें ग्रामीण क्षेत्रो के अति निर्धन लोगों के लिए थी। इन परियोजनाओं द्वारा दो प्रकार से सहायता दी जाती थी- एक तो वित्तीय तथा दूसरे लोक कार्य परियोजनाओं में अति निर्धन किसानों व मजदूरों के लिए प्रत्यक्ष रोजगार की व्यवस्था । जनता पार्टी के शासन काल में समाज के सर्वाधिक निर्धन व्यक्तियों को उत्पादक रोजगार अवसर उपलब्ध कराकर उन्हें निर्धनता के कुचक्र से बाहर निकालने के लिये अन्त्योदय कार्यक्रम वर्ष 1977-78 में प्रारम्भ किया गया। छठी व सातवीं योजनाओं में कुछ विशिष्ट गरीबी निवारण कार्यक्रमो को लागू किया है। जिनमें प्रमुख हैं- समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम (IRDP), राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम (NREP) , ग्रामीण भूमि हीन रोजगार गारन्टी कार्यक्रम (RLEGP), ग्रामीण युवा रोजगार हेतु प्रशिक्षण कार्यक्रम (TRYSEM), काम के बदले अनाज योजना, इन्दिरा गांधी आवास योजना, न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम आदि । 1989 में जवाहर रोजगार योजना (JRY) तथा उसके बाद प्रधानमंत्री रोजगार योजना, सुनिश्चित रोजगार योजना लागू किये गये। आठवीं योजना में भी ग्रामीण रोजगार और ग्रामीण गरीबी उन्मूलन की बात जोरदारी से की गयी। कुछ विशिष्ट रोजगार और गरीबी

उन्मूलन कार्यक्रम जो शुरु किये गये वे इस प्रकार हैं–

(1) ग्रामीण कारीगरों को सुधारने तथा औजारों की आपूर्ति योजना (जुलाई 1992)

(2) ग्रामीण आस्वासन योजना (2 अक्टूबर 1993)

(3) सांसदो की स्थानीय विकास योजना (23 दिसम्बर1993)

(4) जिला विकास ग्रामीण एजेन्सी (DRDA) (1993)

(5) महिला समृद्धि योजना (MSY) (2अक्टूबर 1993)

(6) राष्ट्रीय सामाजिक सहायता कार्यक्रम (1995)

(7) गंगा कल्याण योजना (1997–98)

(8) कस्तूरबा गांधी शिक्षा योजना (15 अगस्त1997)

नौवीं योजना में ग्रामीण क्षेत्रों में स्वरोजगार एवं मजदूरी रोजगार उत्पन्न करने के लिये विशेष रुप से बनाये गये गरीबी उन्मूलन कार्यक्रमों को पुनः तैयार एवं संगठित किया गया है ताकि गरीबों के लिये उनकी कारगरता एवं प्रभाव में सुधार लाया जा सके। वर्ष 1998–99 में 9345 करोड रुपये की तुलना में 1999–2000 में 9650 करोड़ रु0 का परिव्यय प्रदान किया गया है।

(1) स्वर्ण जयन्ती शहरी रोजगार योजना (1 दिसम्बर1997)

(2) अन्नपूर्णा योजना (19मार्च, 1999)

(3) भाग्यश्री बाल कल्याण पॉलसी (19 अक्टूबर 1998)

(4) राजराजेश्वरी महिला कल्याण योजना (19 अक्टूबर,1998)

(5) जवाहर ग्राम समृद्धि योजना (1 अप्रैल 1999)

विभिन्न पंचवर्षीय याजनाओं में रोजगार सृजन व गरीबी निवारण कार्यक्रम शुरु किये गये हैं उनमें से कुछ का संक्षिप्त विवरण नीचे दिये जा रहा है –

रोजगार सृजन व गरीबी निवारण के प्रमुख कार्यक्रम

1. सामुदायिक विकास कार्यक्रम (C D P):

यह कार्यक्रम 1952 में आरम्भ किया गया था । इस कार्यक्रम का उद्देश्य सर्वोन्मुखी विकास था । इस कार्यक्रम के क्रियान्वयन से गांवों में विकास हेतु चेतना की शुरुआत हुयी और कृषि में तकनीकि परिवर्तन सम्भव हो सका।

2. *सूखा आंशकित क्षेत्र कार्यक्रम* (D P A P):

यह कार्यक्रम 1973-74 में शुरु किया गया। इस कार्यक्रम का उद्देश्य इन क्षेत्रों में भूमि, जल एवं अन्य प्राकृतिक संसाधनों का सन्तुलित विकास करके पर्यावरण सन्तुलन को बहाल करना है। कार्यक्रम हेतु वित्त की व्यवस्था केन्द्र व सम्बन्धित राज्य द्वारा 50:50 के अनुपात में की जाती है। वर्तमान में यह कार्यक्रम 13 राज्यों के 155 जिलों के 947 ब्लाकों में चलाया जा रहा है तथा इसके अधीन कुल क्षेत्र 7.45 लाख हेक्टेअर है ।

(3) छोटे किसान विकास ऐजेन्सियां (**SFDA**) तथा सीमान्त कृषक एवं कृषि श्रमिक परियोजनायें (**MFAL**):

चौथी पंचवर्षीय योजना (1974-75) में कमजोर वर्ग की आर्थिक स्थिति सुधारने के लिए SFDA R तथा MFAL नामक दो योजनायें आरम्भ की गयी । सबसे पहले 46 SFDA तथा 41 MFAL विकास एजेन्सियों ने कार्य करना आरम्भ किया । इन योजनाओं में दोहरेपन की समस्या को देखते हुऐ 1978-79 में इन कार्यक्रमों को समाप्त करके एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम (IRDP) लागू किया गया।

4. *मरुभूमि विकास कार्यक्रम* (DDP):

यह कार्यक्रम 1977-78 में आरम्भ किया गया था। इस कार्यक्रम को समन्वित बंजर भूमि विकास योजना के नाम से भी जाना जाता है। इस कार्यक्रम को सर्वप्रथम राजस्थान के 11 जिलों में लागू किया था। यह कार्यक्रम अब देश के 7 राज्यों के 457423 वर्ग किमी0 क्षेत्र वाले 36 जिलों के 227 ब्लाकों में चलाया जा रहा है। यह कार्यक्रम ग्रामीण विकास संस्थान द्वारा चलाया जा रहा है। इस कार्यक्रम पर 1998-99 के दौरान 90 करोड़ रुपये का व्यय प्रस्तावित था।

5. *समन्वित ग्रामीण विकास कार्यकम*(IRDP):

ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार उपलब्ध कराने के लिए वहुत सी योजनायें कार्य कर रही थीं जैसे लघु कृषक विकास ऐजेंसी (SFDA), सीमान्त कृषक एवं कृषि श्रमिक विकास एजेंसीज (MFALDA), सूखा प्रवृत्त क्षेत्र कार्यक्रम (DPAP), कमाण्ड क्षेत्र विकास एजेंसी आदि।

इन सभी योजनाओं में दोहरापन था। अतः इन सभी योजनाओं को

मिलाकर 1978-79 में ग्रामीण विकास के लिए एक समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम प्रारम्भ किया गया। 2 अक्टूबर 1980 को इसे देश के सभी विकासखण्डों में लागू कर दिया गया।

6. *ग्रामीण युवकों को स्वरोजगार के लिए प्रशिक्षण योजना* (TRYSEM):

ग्रामीण युवको में बेरोजगारी की समस्या हल करने के उद्देश्य से यह योजना (1979) में शुरू की गयी थी। इसका उद्देश्य प्रतिवर्ष 2 लाख ग्रामीण युवकों को स्वरोजगार के लिए प्रशिक्षण देना था। इस योजना के अन्तर्गत प्रत्येक खण्ड से 40 युवकों को प्रशिक्षण के लिए चुना जाता था, लेकिन इस योजना के अर्न्तगत केवल वही युवक चुने जा सकते थे जो 3500 रु0 वार्षिक आय से कम आय वाले ग्रामीण परिवारों से थे। प्रशिक्षण के लिए चुने जाने वाले व्यक्तियों में से कम से कम एक तिहाई ग्रामीण युवतियां होनी जरुरी थी।

7. *ग्रामीण क्षेत्रों में महिला एवं बाल विकास कार्यक्रम* (DWCRA):

यह कार्यक्रम 1982 में समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम (IRDP) की उपयोजना के रूप में आरम्भ किया गया। इस कार्यक्रम का उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्रों में गरीबी की रेखा के नीचे रहने वाले परिवारों की महिलाओं के लिए स्वरोजगार उपलब्ध कराना है।

8. *खेतिहर मजदूर गारन्टी कार्यक्रम* (RLEGP):

यह कार्यक्रम 1983 में आरम्भ किया गया था ताकि भूमिहीन श्रमिको के लिए रोजगार सुविधायें पैदा की जा सकें। इस योजना के अन्तर्गत सामाजिक वानिकी (Social Foresty), इन्दिरा आवास योजना तथा 10 लाख कुओं की योजना के लिए राशि निर्धारित की जाती है। 1989-90 में इस कार्यक्रम को जवाहर योजना में मिला दिया गया।

9. *इन्दिरा आवास योजना* (IAY):

सर्वप्रथम 1985-86 मे ग्रामीण भूमिहीन रोजगार गारण्टी कार्यक्रम की एक उपयोजना के रुप में इन्दिरा आवास योजना आरम्भ हुयी

जिसे 1 अप्रैल 1989 से जवाहर रोजगार योजना के उपयोजना के रूप में जारी रखा गया। 1 जनवरी 1996 से इन्दिरा आवास योजना को जवाहर रोजगार योजना से अलग करके एक प्रथम एवं स्वतन्त्र योजना का रूप दे दिया गया।

10. *लोक कार्यक्रम एवं ग्रामीण प्रौद्योगिक विकास परिषद* (CAPART):

इसका गठन 1सितम्बर 1986 को किया गया । इसका मुख्यालय नई दिल्ली में है। इसका मुख्य उद्देश्य ग्रामीण समृद्धि के लिए परियोजनाओं के कार्यान्वयन में स्वैच्छिक कार्य को प्रोत्साहन देना और उसमें मदद करना है।

11.*दस लाख कुआं योजना* (MWS):

यह योजना 1988-89 में राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम (NREP) और ग्रामीण भूमिहीन रोजगार गारण्टी कार्यक्रम (RLEGP) की उपयोजना के रूप में आरम्भ की गई थी। अप्रेल 1989 को इस योजना का जवाहर रोजगार योजना में विलय कर दिया गया। 1995 -96 से इसे पुनः स्वतन्त्र योजना के रूप में चलाया जा रहा है।

12. *जवाहार रोजगार योजना* (JRY) :

जवाहार रोजगार योजना के पूर्व दो योजनायें राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम व ग्रामीण भूमिहीन रोजगार गारण्टी कार्यक्रम के नाम से चल रही थी, उन्हें इस योजना में मिला दिया गया। यह योजना 1 अप्रेल 1989 से प्रारम्भ की गयी ।

13. *कुटीर ज्योति कार्यक्रम* (KJK) :

हरिजन और आदिवासी परिवारों सहित गरीबी की रेखा से नीचे रहने वाले ग्रामीण परिवारों के जीवन स्तर में सुधार के लिये भारत सरकार ने 1988-89 में कुटीर ज्योति कार्यक्रम प्रारम्भ किया। इसके अन्तर्गत ग्रामीण क्षेत्रों में निर्धनता रेखा से नीचे जीवनयापन करने वाले परिवारों को एक बत्ती विद्युत कनेक्शन उपलब्ध कराने के लिये 400 रु. की सरकारी सहायता उपलब्ध कराई जाती है। मार्च 1998 तक कुल 28.69 लाख कनेक्शन जारी किये गये ।

14. नेहरू रोजगार योजना (NRY):

नेहरू रोजगार योजना जो अक्टूबर 1989 में प्रारम्भ की गयी थी तथा बाद में जिसे मार्च 1990 में पुनः तैयार किया गया था, का कार्यान्वयन शहरी विकास मन्त्रालय द्वारा किया जाता है। आठवी पंचवर्षीय योजना से इस योजना का व्यय केन्द्र तथा राज्यों में 60:40 के अनुपात में व्यय किया जाता है। इस योजना में निम्न तीन स्कीमों को सम्मिलित किया गया है।

1. शहरी सूक्ष्म उद्यम योजना
2. शहरी आवास एवं आश्रय सुधार योजना
3. शहरी सवेतन रोजगार योजना

15. ग्रामीण कारीगरों को सुधरे हुये औजारों की पूर्ति (SITRA):

यह योजना केन्द्र समर्थित योजना के रूप में 1992 में कुछ चुने हुये जिलों में लागू की गयी, जिसे वर्तमान में सम्पूर्ण देश में कार्यान्वित किया जा रहा है। इस योजना का उद्देश्य ग्रामीण कारीगरों को आधुनिक औजार उपलब्ध कराना तथा इसके माध्यम से उनके उत्पादनों की गुणवत्ता तथा उनकी आय में वृद्धि करना है।

16. प्रधानमंत्री रोजगार योजना (PMRY):

शिक्षित बेरोजगार नवयुवकों के लिये 15 अगस्त, 1993 को तत्कालीन प्रधानमंत्री ने इस योजना की घोषणा की थी। इस योजना के अन्तर्गत आठवीं योजना की अवधि में सात लाख सूक्ष्म उद्यम स्थापित करके 10 लाख से अधिक ऐसे शहरी शिक्षित नवयुवकों को रोजगार प्रदान करने का लक्ष्य था जिनकी आयु 18 से 35 के मध्य है। इस योजना के तहत एक व्यक्ति के लिये परियोजना की अधिकतम राशि 1 लाख रु. रखी गयी। परियोजना लागत का 15 प्रतिशत जो अधिकतम 7,500 रु. होगा सरकार के द्वारा अनुदान के रूप में प्रदान किये जाने का प्राविधान था। शेष लागत का वित्तीय पोषण बैंक ऋण द्वारा पूरा किया जाना था ।

17. संसदीय स्थानीय क्षेत्र विकास योजना (MPLADS):

यह योजना 1993 में प्रारम्भ की गयी थी। इस योजना के अन्तर्गत लोकसभा और राज्यसभा के सदस्यों को प्रतिवर्ष 1 करोड़ रुपये तक के कार्य हेतु सम्बन्धित जिलाधिकारियों को सिफारिश करने का अधिकार दिया गया है। इस योजना का उद्देश्य किसी योजना में शामिल न हो पाने वाली विकास योजनाओं के लिये सांसदों को धन उपलब्ध कराना है। इसके अन्तर्गत किसी भी योजना में अधिकतम 10 लाख रुपये तक धन व्यय किया जा सकता है। आरम्भ में इस योजना का कार्यान्वयन ग्रामीण विकास मंत्रालय द्वारा किया जाता था। 1994 से इसके कार्यान्वयन का भार कार्यक्रम कार्यान्वयन विभाग को सौंप दिया गया है।

18. गंगा कल्याण योजना (GKY):

1996-97 में IRDP की एक सहायक योजना के रूप में यह योजना 1 फरवरी 1997 से आरम्भ की गई, किन्तु 1 अप्रेल 1997 से इसे स्वतन्त्र योजना का दर्जा दे दिया गया। इस योजना का उद्देश्य गरीबी रेखा के नीचे रहने वाले छोटे और सीमांत किसानों को भूमिगत जल एवं भूतल जल के लिये योजनाएं शुरू करके सहायता प्रदान करना है। इस योजना का व्यय केन्द्र एवं राज्य सरकारें 80:20 में वहन करती हैं।

19. अन्नपूर्णा योजना (AY):

प्रधानमंत्री ने 19 मार्च, 1999 को 1999-2000 के बजट में घोषित अन्नपूर्णा योजना का शुभारम्भ गाजियाबाद (उ.प्र.) के सिखेड़ा ग्राम से किया। इस योजना में वृद्धावस्था पेंशन से किसी कारणवश पेंशन से वंचित वृद्ध नागरिकों को प्रतिमाह 10 Kg अनाज निःशुल्क देने का प्राविधान है।

20. प्रधानमंत्री ग्रामोदय योजना (PMGY):

केन्द्र सरकार की नई 'प्रधानमंत्री ग्रामीण योजना' के तहत ग्रामीण क्षेत्रों में निर्धनता रेखा से नीचे जीवनयापन करने वाले लोगों के लिये आवास उपलब्ध कराने का कार्यक्रम है जिसके लिये मैदानी क्षेत्रों में अधिकतम 20 हजार रूपये तक तथा पहाड़ी व दुर्गम क्षेत्रों में 22 हजार रु. तक सहायता प्रदान की जायेगी, कार्यक्रम के तहत लाभान्वितों का चयन

ग्राम सभाओं द्वारा किया जायेगा जिसमें कम से कम 60 प्रतिशत लोग अनुसूचित जाति /जनजाति के तथा मुक्त कराये गये बँधुआ श्रमिकों में से होगें। मकान का आवंटन परिवार की महिला सदस्य के नाम या फिर पति पत्नी के संयुक्त नाम में होगा। इसके लिये राज्यो को केन्द्रीय सहायता का आवंटन दो चरणों में किया जायेगा ।

उपर्युक्त कार्यक्रमों के अतिरिक्त भारत में वर्तमान में चल रहे कुछ प्रमुख ग्रामीण रोजगार उत्पादक और गरीबी उन्मूलन कार्यक्रम निम्नलिखित है।

21. स्वर्ण जयन्ती ग्राम स्वरोजगार योजना

22. जवाहर ग्राम संवृद्धि योजना

23. रोजगार आश्वासन योजना

24. राष्ट्रीय सामाजिक सहायता कार्यक्रम

2. निर्धनता को कम करने के उपाय तथा भावी व्यूह रचना :

भारत में गरीबी दूर करने के लिये निम्नलिखित सुझाव दिये जा सकते है।

1. कृषि विकास :

अ. भूमि सुधार : भारत में भूमि के वितरण में अत्याधिक विषमता पायी जाती है अतः भूमि सुधार द्वारा भूमि के पुनर्वितरण की आवश्यकता है। चकबन्दी करके कृषि जोतों में वृद्धि की जानी चाहिये ।

ब. कृषि आदानों की व्यवस्था : कृषि विकास हेतु किसानों को कृषि यन्त्र, उन्नत बीज व रासायनिक खाद आदि उचित मूल्य पर उपलब्ध कराये जायें।

स. गैर कृषि रोजगार में वृद्धि : भूमि पर जनसंख्या के भार को कम करने के लिये गैर कृषि रोजगार के अवसरों में वृद्धि की जानी चाहिये ।

द. कृषि विपणन व्यवस्था में सुधार करके अधिक नियन्त्रित मण्डियों की स्थापना की जानी चाहिये ।

य. कृषि शिक्षा व अनुसंधान की व्यवस्था कृषि के समुचित विकास हेतु की जानी चाहिये ।

र. ग्रामीण क्षेत्रों में कृषि का प्रयोग कार्यक्रमों द्वारा व्यापक रूप से प्रचारित किया जाना चाहिये।

2. सामाजिक पूंजी का विकास :

विकास की प्रारम्भिक अवस्था में प्रारम्भिक पूंजी जैसे सड़कों, सिंचाई एवं जल विद्युत प्रोजेक्ट, रेलों आदि का निर्माण करना अत्यन्त आवश्यक होता है। भारत की पंचवर्षीय योजनाओं में इन सुविधाओं के विकास और विस्तार पर काफी जोर दिया गया है। लेकिन इस क्षेत्र में अभी भी बहुत कुछ बाकी हैं अतः सरकार को इस क्षेत्र में अपने दायित्व को शीघ्रातिशीघ्र प्रभावशाली ढंग से पूरा कराना चाहिये ।

3. औधोगिक विकास :

अ. आधारभूत उधोगो की स्थापना : औधोगिक विकास के लिये आधारभूत अद्योगो की स्थापना आवश्यक है। इसकी स्थापना सार्वजनिक क्षेत्र में की जानी चाहिये तथा इनकी अधिकतम क्षमता का प्रयोग होना आवश्यक है।

ब. विवेकीकरण: भारत में संगठित उद्योगों में पुरानी मशीनों के प्रयोग के कारण उत्पादन शक्ति का ह्रास होता है। अतः विवेकीकरण द्वारा उत्पन्न लागत को कम किया जाना चाहिये ।

स. सामाजिक उपरि - पूँजी की व्यवस्था : औद्योगिक विकास में रेल, सड़क, शक्ति, उत्पादन, संचार, बन्दरगाहों आदि का महत्वपूर्ण योगदान रहता है। अतः इनमें अधिक विनियोजन करके इनकी समुचित व्यवस्था की जानी चाहिये।

द. प्रबन्ध का व्यवसायीकरण : भारत में औद्योगिक प्रबन्ध का ढ़ाँचा परम्परागत रूप से चल रहा है। अतः औद्योगिक प्रबन्ध को सुधारने हेतु व्यवसायिक प्रबन्धकों को नियुक्ति करना आवश्यक है जो आधुनिक प्रबन्ध तकनीक के विशेषज्ञ हों।

य. औद्योगिक अनुसंधान : देश में औद्योगिक अनुसंधान पर कम ध्यान दिया जाता है जिससे उपोत्पाद बेकार चले जाते हैं और पर्याप्त लाभ प्राप्त नही हो पाता है।

4. बचत तथा विनियोग की दर में वृद्धि :

भारत के आर्थिक विकास के लिये बचत एवं विनियोग की दरों में वृद्धि लाने के प्रयास किये जाने चाहिये । भारत में घरेलू बचत तथा विनियोग को बढ़ानें के लिये कई सुझाव दिये जा सकते है।

1. ब्याज की दर में वृद्धि
2. छोटी-छोटी बचतों को आकर्षित करने के लिये नई योजनाएं आरम्भ की जानी चाहिये।
3. सार्वजनिक क्षेत्र को अपने लाभ की दर बढ़ानी चाहिये।
4. प्रत्यक्ष करों की कम दर।
5. विनियोग की अधिक सुविधायें ।
6. शेयर बाजार का विकास।
7. प्रोविडेण्ट फण्ड की दर में वृद्धि।
8. जीवन बीमा विस्तार।
9. अनिवार्य जमा योजना ।

5. पूँजी उत्पाद अनुपात में वृद्धि :

भारत में आठवीं योजना में पूंजी अनुपात 4.25 है, इसे कम किया जाना चाहिये। पूंजी कार्यक्रम उत्पाद अनुपात में कमी किये जाने के फलस्वरूप कम पूंजी का विनियोग करने से भी अधिक उत्पादन किया जा सकता है।

6. वित्त व्यवस्था सम्बन्धी सुझाव:

देश के आर्थिक विकास के लिये वित्तीय पहलुओं पर ध्यान देना आवश्यक होता है। भारत जैसे अर्द्धविकसित राष्ट्र के लिये यह आवश्यक है कि पूंजी का प्रबन्ध आन्तरिक साधनों से किया जाना चाहिये । इसके लिये आन्तरिक बचतों को प्रोत्साहन दिया जाना चाहिये । करारोपण की तकनीक का उचित ढंग से प्रयोग करना चाहिये। नियति प्रोत्साहान के लिये प्रभावपूर्ण नीति अपनायी जानी चाहिये और आयातों के लिये अनुमति एक सुविचारित प्राथमिकता क्रम के अनुसार दी जानी चाहिये । यदि साधनों के विदोहन के लिये पूंजी की कमी पड़े तो वाह्य ऋण लेकर पूर्ति की जा सकती है। वाह्य ऋण अनुदानों का प्रयोग उत्पादक कार्यो में ही किया जाना चाहिये ।

7. वित्तीय स्थिरता :

देश में संगठित तथा कार्यकुशल बैकिग व्यवस्था होनी चाहिये। संगठित मुद्रा बाजार तथा पूंजी बाजार दोनों होने चाहिये। जिनके द्वारा उद्योग तथा कृषि आदि को अल्पकालीन तथा दीर्घकालीन कर्जे उचित ब्याज पर प्राप्त हो

सके । आर्थिक विकास के फलस्वरूप कीमतों में वृद्धि होती है। इसके लिये यह आवश्यक है कि कीमतों में होने वाली वृद्धि को एक सीमा तक ही रखा जायें । वास्तव में वित्तीय स्थिरता आर्थिक विकास का एक महत्वपूर्ण निर्धारक है।

8. *जनसंख्या नियन्त्रण सम्बन्धी सुझाव :*

तीव्र गति से बढ़ती हुयी जनसंख्या के कारण हम वांक्षित प्रगति नही कर पा रहे है। जनसंख्या में वृद्धि रात्रि में चोर के समान है जो हमारी आर्थिक विकास में प्राप्त सफलता को हमसे लूट ले जाती है। श्री एम. सी. छागला ने जनसंख्या में वृद्धि के आर्थिक विकास के रास्ते में रुकावट के तथ्य को बड़े सुन्दर ढंग से इस प्रकार व्यक्त किया है "यदि जनसंख्या को बढ़ने से न रोका गया तो हमारी प्रगति रेत पर लिखने के समान होगी जिसको जनसंख्या वृद्धि की लहरें मिटा देगी " जनसंख्या की वृद्धि को सीमित करने के लिये मूल रूप से दो बातें आवश्यक है – शिक्षा प्रसार, बड़ी उम्र में विवाह, सामाजिक सुधार, परिवार नियोजन।

9. *मानवीय पूंजी या कौशल निर्माण :*

मानवीय पूंजी से अभिप्राय है जनसंख्या के दिमागों तथा हाथों में निहित ज्ञान तथा हुनर । मानवीय पूंजी का तब निर्माण होता है जब लोगो की शिक्षा, स्वास्थ्य, प्रशिक्षण आदि की सुविधायें प्रदान करने के लिये विनियोग किया जाता है। इस विनियोग से भौतिक पूंजी में विनियोग की तुलना में अधिक प्रतिफल प्राप्त होता है।

10. *वैज्ञानिक तथा तकनीकी प्रगति :*

जापान तथा पश्चिमी जर्मनी के तीव्र आर्थिक विकास का मुख्य कारण वहां की वैज्ञानिक तथा तकनीकि उन्नति है। औधोगिक विकास तथा कृषि की उन्नति के लिये वैज्ञानिक अनुसंधान बहुत महत्वपूर्ण है। तकनीकी विकास के बिना देश का आर्थिक विकास तीव्र गति से नहीं हो सकता ।

11. *गाँवो का समन्वित विकास :*

भारत की गरीबी मिटाने के लिये गांवों में गरीबी मिटानी होगी । इसके लिये स्थानीय साधनों का उपयोग करना होगा। विज्ञान व टेक्नोलॉजी

का उपयोग करके गांवों का समग्र रूप से विकास किया जाना चाहिये। गावों कृषि, खनन, उद्योग परिवहन व सामाजिक विकास एक साथ नही किया जाना चाहिये ।

गरीबी निवारण कार्यक्रमों की सफलता के लिए सुझाव

भारत में गरीबी निवारण कार्यक्रमों की सफलता के लिये निम्नलिखित सुझाव दिये जा सकते है।

1. भारत में गरीबी निवारण कार्यक्रम के लिये आवश्यक है कि आर्थिक और सामाजिक संरचनात्मक स्तर पर सुधार के लिये प्रयास किये जायें, क्योंकि आज भी भारत की सामाजिक और आर्थिक संरचना में इतनी अधिक असमानता व्याप्त है कि गरीबी निवारण के कोई भी कार्यक्रम अधिक कारगर सिद्ध नहीं हो पा रहे है।

2. गरीबी उन्मूलन कार्यक्रम का विकास कार्यक्रमों के साथ उचित समन्वय किया जाये । इसके लिये आवश्यक है कि विकास कार्यक्रमों को स्थानीय आवश्यकताओं और उपलब्ध तकनीक के आधार पर विकेन्द्रीकृत रूप में लागू किया जायें।

3. लाभार्थी आधारित कार्यक्रम का और अधिक विस्तार किया जाना चाहिये। इस कार्यक्रमों में बैकों की भूमिका केवल साख के स्रोत के रूप में नही होनी चाहिये, अपितु इन्हे कार्यक्रमों के मूल्यांकन में भी अग्रणी भूमिका निभानी चाहिये ।

4. लाभार्थी आधारित कार्यक्रमों के विस्तार के साथ यह सुनिश्चित करना भी आवश्यक है कि योजनाओं का लाभ उपयुक्त लाभार्थी को पूर्णरूप से प्राप्त हो सके ।

5. सम्भावित लाभार्थियों के लिये व्यापक प्रशिक्षण कार्यक्रमों की व्यवस्था किये जाने की भी आवश्यकता है।

6. यदि सम्भव हो तो इन कार्यक्रमों को व्यक्ति के स्थान पर व्यक्तियों के समूह को आधार बनाकर लागू किया जाये । इस प्रकार गरीब लोगों में सहयोग की भावना भी जाग्रत होगी और बहुत सी योजनायें जो एक व्यक्ति के लिये आर्थिक दृष्टि से अनुपयुक्त थी , वे सामूहिक रूप से उपयुक्त हो सकती है।

7. गरीबी उन्मूलन कार्यक्रम की सफलता के लिये आवश्यक है कि गरीबों में विभिन्न कार्यक्रमों के प्रति जाग्रति उत्पन्न की जाय तथा शिक्षा और स्वास्थय के उपायो के माध्यम से उनकी क्षमताओं में वृद्धि की जाय ।

अध्याय - नवम्

अध्याय-नवम्

निष्कर्ष एवं सुझावः

भारत जैसे कृषि प्रधान देश के लिए कृषि का विशेष महत्व है। यह मनुष्य का अति प्रचीन व्यवसाय है। यद्यपि इसका ढंग और प्रणालियां समय-समय पर बदलती रही हैं। कृषि का उपयोग मानव के लिए खाद्य, वस्त्र तथा गृह निर्माण का साधन मात्र ही नहीं प्रदान करता अपितु यह आवासीय विकास, उद्योग और व्यापार का भी उद्बोधक है।

पृथ्वी की सतह कृषि एवं खाद्यान्न उत्पादन का प्रमुख स्थान है। जिस पर मानव का भरण पोषण निर्भर है। इसीलिए मनुष्य अनादिकाल से धरती की पूजा करता आ रहा है। वास्तव में यह मनुष्य के आर्थिक विकास की पृष्ठभूमि प्रस्तुत करती है। यह मनुष्य के सामाजिक, सांस्कृतिक एवं सर्वागींण विकास की जननी है। पृथ्वी का सम्पूर्ण धरातल कृषि योग्य नहीं है और न ही इसे कृषि योग्य बनाया जा सकता है, क्योंकि इसका एक बड़ा भाग समुद्र, जल, पर्वत, पठार, मरुभूमि, दलदल, जंगल, जलाशय आदि से आच्छादित है। कृषि के लिए तो धरातल का केवल वही भाग उपयोगी है जो किसी न किसी रुप में उपजाऊ है। मानवीय प्रयासों द्वारा कृषि अयोग्य भूमि का एक बड़ा भाग ही कृषि योग्य बनाया जा सका है, परन्तु इसका अभी भी अधिकांश भाग कृषि हेतु अनुपयुक्त ही है। इसीलिए मनुष्य को सीमित कृषि योग्य भूमि से ही अपने भरण पोषण का पर्याप्त साधन प्राप्त करना है। यही उसके अनेक उद्यमों का स्रोत भी है। इन उद्देश्यो की सफलता भूमि के समुचित उपयोग, उसकी उत्पादन क्षमता , उससे प्राप्त उपलब्धियां तथा अन्य लाभों पर निर्भर है। दूसरे शब्दो में भूमि संसाधन के यथासम्भव अधिकतम उपयोग तथा उसके नियोजन द्वारा ही मानवीय आवश्यकताओं की पूर्ति सम्भव है।

यद्यपि भूमि संसाधन में भारत एक समृद्ध देश है तथापि उन्हे विकसित करने की अब भी आवश्यकता है। इसीलिए इस देश की भूमि उपयोग की योजनाओं को अधिक महत्व देना आवश्यक हो गया है, क्योंकि कृषि भूमि अनेक देशों के आर्थिक विकास का प्रमुख आधार है। परन्तु जहां कहीं भूमि अधिक है, वहां तो इसका महत्व और भी बढ़ जाता है। भारत

ऐसा ही देश है। पर आश्चर्य तो यह है कि इसे भी खाद्य संकट का सामना करना पड़ रहा है। तीव्र गति से बढती हुई जनसंख्या , जीवन स्तर का क्रमिक उत्थान, पौधों और जैविक पदार्थों के औद्योगिक उपयोग में अप्रत्याशित वृद्धि, खाद्यान्न तथा अन्य कृषि उपजों के बीच भूमि उपयोग में उत्पन्न होनेवाली प्रतिस्पर्धा, नागरिक तथा औद्योगिक विकास में प्रगति, यातायात साधनों एवं यातायात मार्गो का विस्तार आदि कृषि भूमि का अभाव उत्पन्न करते जा रहे हैं। किन्तु तकनीक में परिवर्तन से कृषि उत्पादन की सघनता में वृद्धि भी की जा रही है। परिणामस्वरूप भूमि का अधिक नियोजन, उपयोग भी होने लगा है। जिससे जनसंख्या की निरन्तर वृद्धि होते रहने पर भी खाद्यान्न के अभाव को कुछ हद तक रोका जा सकता है। परन्तु वास्तविकता यह है कि भोजन, कपड़ा, गृह तथा ईधन आदि समस्यायें सर्वदा विद्यमान रहेगी और समय समय पर उग्र रुप धारण करती रहेगी। जनसंख्या की अनियंत्रित एवं अप्रत्याशित वृद्धि को देखते हुए कृषि साधन के विकास से इन समस्याओं का आंशिक समाधान ही सम्भव है, किन्तु उसके लिए भी हमें प्रयत्नशील रहना आवश्यक है। इन उद्द्देश्यो की पूर्ति के लिए भूमि की क्षमता, उर्वरता तथा उसके समुचित एवं समन्वित उपयोग अध्ययन अत्यन्त आवश्यक है। इन्हीं दृष्ठिकोणों से ग्रामीण निर्धनता, खाद्य समस्या एवं पोषण स्तर शोध प्रबन्ध का प्रमुख उद्देश्य कृषि प्रधान इटावा जनपद के कृषि भूमि उपयोग, कृषि उत्पादन, एवं मानव स्वास्थ्य तथा पोषण स्तर की समुचित व्याख्या करना है। जिससे जनपदवासियों के आर्थिक उन्नयन एवं समन्वित वैज्ञानिक नियोजन हेतु कुछ कार्यक्रम प्रस्तावित किये जा सके। इस शोध कार्य में शोधार्थी को निष्कर्ष रुप में निम्नलिखित तथ्य प्राप्त हुए।

1. अध्ययन क्षेत्र जनपद इटावा $26^{0}21'$, से $27^{0}1'$, उत्तरी अक्षांश तथा $78^{0}45'$, से $79^{0}45'$, पूवी देशान्तर के मध्य स्थित है। जिसका कुल प्रतिवेदित क्षेत्र 436727 हेक्टेयर है जिसमें फसलों हेतु 289691 हेक्टेयर भूमि का उपयोग किया जाता है शेष 147036 हेक्टेयर भूमि अन्य उद्देश्यों की पूर्ति हेतु उपयोग में लाई जाती है अथवा अकृष्य और परती भूमि के रुप में है।

2. गंगा तथा यमुना नदियों के मध्य स्थित यह क्षेत्र इन दोनों नदियों की जलोढ़ मिट्टी से युक्त समतल मैदानी क्षेत्र हैं, जिसका ढाल उत्तर-पश्चिम से दक्षिण-पूर्व

की ओर है। उत्तर-पश्चिम में समुद्र तल से औसत ऊँचाई 152.44 मीटर तथा दक्षिण-पूर्व में यह ऊँचाई 137.80 मीटर है। यमुना नदी के दोनों ओर सेंगर नदी,जो जनपद के लगभग मध्य में पश्चिम से पूर्व की ओर बहती है, के दोनों ओर कुछ भूमि ऊबड़-खावड़ तथा असमतल है जो कृषि कार्य की दृष्टि से अधिक उपजाऊ नहीं है।

3. अध्ययन क्षेत्र की कृषि अपरम्परागत सिंचाई के साधनों का वर्षा पर अधिक निर्भर न रहकर कृत्रिम सिचाई के साधनों से अधिकांश सुसज्जित हो गयी है। परन्तु फिर भी औसत वार्षिक वर्षा 792 मिलीमीटर होती है। यहां का तापमान उच्चतम 45.6 डिग्री से0ग्रे0 तथा न्यूनतम 4.2 डिग्री से0 ग्रे0 के मध्य रहता है। उच्चतम तापमान जून के प्रारम्भ में तथा न्यूनतम तापमान जनवरी के प्रारम्भ में पाया जाता है।

4. अध्ययन क्षेत्र में कृषि के लिए कुल उपलब्ध 289691 हेक्टेअर भूमि को कुल 2124655 जनसंख्या की उदर पूर्ति की जिम्मेदारी वहन करनी पड़ती है। जनसंख्या वृद्धि की दृष्टि से देखें तो वर्ष 1981 तथा वर्ष 1991 के मध्य 21.90 प्रतिशत की दर से बढ़ी, जिससे अब प्रति वर्ग किलोमीटर क्षेत्रफल पर 474 व्यक्ति निवास करने के लिए बाध्य हैं जबकि 1981 में जनसंख्या घनत्व 403 व्यक्ति था। कृषि घनत्व प्रति हेक्टेअर 1.05 व्यक्ति है। साक्षरता 41.00 प्रतिशत है। कृषि में लगे हुए कर्मकारों का कुल कर्मकारों से प्रतिशत 67.13है। कुल कर्मकारों में कृषकों का प्रतिशत 18.82 है।

5. अध्ययन क्षेत्र में अन्य क्षेत्रों में से जोत के आकार में अत्याधिक असमानता दिखाई पड़ती है। जहां एक ओर 68.19 प्रतिशत परिवार जिनके पास 1 हेक्टेअर या इससे कम कृषि भूमि है, मात्र 27.91 प्रतिशत कृषि क्षेत्र से अपने जीवन निर्वाह के साधन जुटाते हैं वहीं दूसरी ओर जिन परिवारों के पास 3 हेक्टेअर से अधिक कृषि भूमि है वे संख्या में तो मात्र 6.44 प्रतिशत ही हैं, परन्तु इन परिवारों के पास कुल कृषि भूमि का 30.64 प्रतिशत क्षेत्रफल अपने भरण पोषण के लिए उपलब्ध है। जिन परिवारों के पास 1 हेक्टेअर से अधिक तथा 2 हेक्टेअर से कम कृषि भूमि है ऐसे 18.67 प्रतिशत कृषक 25.66 प्रतिशत भूमि पर स्वामित्व प्राप्त किये हुए हैं। जबकि 2 हेक्टेअर से अधिक तथा 3 हेक्टेअर से कम भूस्वामित्व वाले 6.70 प्रतिशत कृषक 15.79 कृषित भूमि पर कृषि फसलें उगा रहे हैं। 5 हेक्टेअर से अधिक कृषि जोत आकार वाले 1.91 प्रतिशत परिवार

13.54 प्रतिशत भूमि पर अपना आधिपत्य स्थापित किए हुए है। स्पष्ट है कि अधिकांश लगभग 87 प्रतिशत कृषक 2 हेक्टेअर से कम कृषि भूमि रखने वाले कृषक हैं और इन परिवारों के पास कुल कृषि क्षेत्र का लगभग 53 प्रतिशत क्षेत्रफल कृषि कार्य हेतु उपलब्ध है।

6. अध्ययन क्षेत्र मे 436727 हेक्टेअर कुल प्रतिवेदित क्षेत्रफल मे से 289691हेक्टेअर क्षेत्रफल पर (66.33 प्रतिशत) वर्ष में एक या एक से अधिक विभिन्न प्रकार की फसलें उगाई जाती हैं। वर्ष में दो या दो से अधिक बार विभिन्न फसलों के अन्तर्गत बोया जानेवाला क्षेत्रफल 135646 हेक्टेअर (46.82 प्रतिशत) है। इस प्रकार वर्ष में विभिन्न फसलों के अन्तर्गत उपयोग में लाया जाने वाला कुल कृषि क्षेत्र 425337 हेक्टेअर है। सिंचाई के साधनों में प्राकृतिक वर्षा के अतिरिक्त कृत्रिम साधनों का भी बड़े पैमाने पर उपयोग किया जाता है। जिनमें से राजकीय नहरें तथा विद्युत डीजल चलित नलकूप, पम्पिंग सेट आदि महत्वपूर्ण हैं। इन साधनों द्वारा सिंचाई की सुविधायें उपलब्ध रहने के कारण शुद्ध सिंचित क्षेत्रफल 216566 हेक्टेअर (शुद्ध बोए गए क्षेत्रफल का 74.76 प्रतिशत) है। जिसके कारण फसल गहनता सूचकांक 146.82 है। वर्ष के तीनों कृषि मौसमों में खरीफ तथा रबी फसल मौसम में खाद्यान्न दलहनी तथा तिलहनी फसलों की प्रधानता है जबकि जायद कृषि मौसम में ककड़ी, खरबूजा, तरबूज आदि महत्वपूर्ण फसलें हैं। कहीं-कहीं इस मौसम में उर्द या मूंग तथा सूरजमूखी का भी प्रचलन है। खाद्यान्न फसलों में धान, ज्वार, बाजरा, मक्का, गेहूं तथा जौ महत्वपूर्ण हैं जबकि अरहर, चना तथा मटर इस क्षेत्र की प्रमुख दलहनी फसलें हैं। कहीं-कहीं दलहनी फसलों के मसूर भी देखने को मिलती है। इसमें में राई/सरसों की प्रमुख फसल है। कहीं-कहीं तिल तथा मूंगफली भी उगाई जाती है। नकदी फसलों में गन्ना तथा आलू प्रमुख रूप में उगाये जाते हैं। इस प्रकार अध्ययन क्षेत्र में प्रचलित कृषि प्रारूप में 71.32 प्रतिशत क्षेत्रफल पर खाद्यान्न फसलें, 14.25 प्रतिशत क्षेत्र पर दलहनी फसलें, 6.48 प्रतिशत क्षेत्रफल पर तिलहनी फसलें, 3.26 प्रतिशत क्षेत्रफल पर नकदी फसलें तथा 4.69 प्रतिशत क्षेत्रफल पर जायद तथा अन्य फसलें उगाई जाती हैं।

7. अध्ययन क्षेत्र में विभिन्न फसलों का उत्पादन निम्नलिखित है-

1. खाद्यान्न (मीटर टन) 638396
2. दालें (मीटर टन) 75481

3. तिलहन (मीटर टन) 33934

4. गन्ना (मीटर टन) 143400

5. आलू (मीटर टन) 181316

8. अध्ययन क्षेत्र में प्रति व्यक्ति प्रति वर्ष उपलब्ध खाद्यान्न के औसत सकल 300.47 मात्रा किलोगाम है। दालों की उपलब्ध सकल मात्रा 35.53 किलोग्राम है। इस प्रकार प्रतिदिन प्रति व्यक्ति उपलब्ध खाद्यान्न तथा दालों की मात्रा क्रमशः 823 ग्राम तथा 97 ग्राम है। ग्रामीण क्षेत्र में विभिन्न कृषि उत्पादन से प्रति व्यक्ति प्रति वर्ष 353.71 किलोग्राम खाद्यान्न की तथा 41.00 किलोग्राम दाल की मात्रा उपलब्ध है। प्रतिव्यक्ति प्रतिदिन यह मात्रा क्रमशः 969 ग्राम तथा 112 ग्राम है। विभिन्न फसलों के कुल उत्पादन से शुद्ध खाने हेतु हिस्से की गणना करने पर खाद्यान्नों की प्रतिव्यक्ति प्रति दिन उपलब्ध शुद्ध मात्रा 754 ग्राम तथा दालों की उपलब्ध शुद्ध मात्रा 68 ग्राम है।

विकासखण्ड वार खाद्यान्नों की शुद्ध उपलब्ध मात्रा 400 ग्राम से 600 ग्राम तक प्रति व्यक्ति प्रतिदिन बढ़पुरा, चकरनगर तथा अजीतमल विकासखण्डों में रहने वाले लोगों को प्राप्त है। 600 ग्राम से 800 ग्राम तक जसवन्तनगर, महेवा, अछल्दा, औरैया, भाग्यनगर विकासखण्डों में उपलब्ध है। 800 ग्राम से 1000 ग्राम तक बसरेहर, भरथना, विधूना, एरवाकटरा तथा सहार विकासखण्ड में उपलब्ध है। सर्वोच्च खाद्यान्न उपलब्धता 1000 ग्राम से अधिक ताखा विकासखण्ड में है। इसी प्रकार दालों की शुद्ध उपलब्धता प्रतिव्यक्ति प्रतिदिन 25 ग्राम से 50 ग्राम तक बसरेहर, ताखा, भरथना,विधूना, अछल्दा तथा एरवाकटरा विकासखण्डों में उपलब्ध है। 50 ग्राम से 75 ग्राम तक भाग्यनगर, जसवन्तनगर तथा बढ़पुरा विकासखण्डों में है। 75 ग्राम से 100 ग्राम दालों की उपलब्धता औरैया तथा सहार विकासखण्डों की है। 100 ग्राम से अधिक दालों की उपलब्धता रखने वाले विकासखण्डों में अजीतमल तथा चकरनगर है। इसमें चकरनगर विकासखण्ड 134 ग्राम प्रति व्यक्ति प्रतिदिन दालों का उत्पादन करके सर्वोच्च स्थान पर है।

9. अध्ययन क्षेत्र में अनुकूलतम भूमि भार वहन की क्षमता की गणना करने पर प्रति वर्ग किलोमीटर 678 व्यक्ति प्राप्त हुई है जबकि कायिक घनत्व 499 व्यक्ति

है। इस प्रकार उत्पादन की दृष्टि से अध्ययन क्षेत्र में 179 व्यक्तियों के लिए अतिरिक्त भूमि भार वहन क्षमता विद्यमान है। दूसरे शब्दों में अध्ययन क्षेत्र में प्रति वर्ग किलोमीटर कृषि क्षेत्र में 499 व्यक्ति का भरण पोषण निर्भर है जबकि इतने ही क्षेत्र से प्राप्त कृषि उत्पादन से न्यूनतम 678 व्यक्तियों का पोषण किया जा सकता है जिसका अर्थ है कि अभी भी 179 व्यतियों के पोषण के लिए अतिरिक्त कृषि उत्पादन विद्यमान है।

सुझाव:

भारत की ग्रामीण निर्धनता, खाद्य समस्या एवं पोषण स्तर की समस्या का एक मात्र समाधान अनुकूलतम भूमि उपयोग है। अनुकूलतम भूमि उपयोग का आशय क्षेत्र विशेष के भू संसाधन के दुरुपयोग को रोकते हुए संतुलित एवं आदर्श भूमि उपयोग को क्रियान्वित करना है। भारत एक विकासशील देश है, जहां की अधिकांश जनसंख्या गांवों में निवास करती है जिसकी आय का एक बड़ा हिस्सा कृषि से प्राप्त होता है तथा जनसंख्या के एक बहुत बड़े भाग के जीवनयापन का एक मात्र साधन कृषि है। अतः इस प्रकार की अर्थव्यवस्था वाले देश में समन्वित ग्रामीण विकास के स्तर के लिए संतुलित भूमि उपयोग अति आवश्यक है। वास्तव में समुन्नत कृषि ग्रामीण विकास की आधारशिला है, जिससे न केवल ग्रामीण जनसंख्या की प्रमुख आवश्यकताओं की पूर्ति होती है बल्कि बहुमुखी आर्थिक विकास को प्रोत्साहन मिलता है। भूमि के प्रत्येक इकाई के अनुकूलतम उपयोग द्वारा भूमि की भरण पोषण क्षमता में कई गुना वृद्धि की जा सकती है। ग्रामीण विकास गति को तीव्र किया जा सकता है एवं मानव के पोषक स्तर को भी संतुलित किया जा सकता है।

अध्ययन क्षेत्र जनपद इटावा देश का एक अति पिछड़ा भू-भाग है जहां जनसंख्या का बहुत बड़ा भाग ग्रामीण क्षेत्रों में निवास करता है अतः इसके समुचित विकास हेतु उच्चतम भूमि उपयोग की क्षमता विकसित कर अधिकतम कृषि उत्पादन प्राप्त करना है। साथ ही कृषि पर जनसंख्या के भार को कम करने के लिए कृषि पर आधारित उद्योगों एवं कृषि से सम्बन्धित व्यवसायों को प्रोत्साहन देकर रोजगार के अतिरिक्त अवसरों का प्राविधान किया जाना आवश्यक है। पिछले विवरण के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि अध्ययन क्षेत्र का कृषि भूमि उपयोग "गहन जीवन

निर्वाहक भूमि उपयोग अवस्था" अथवा विकासोन्मुख कृषि तन्त्र से सम्बन्धित है।

अध्ययन क्षेत्र के पूर्ण विवरण से स्पष्ट है कि भौतिक एवं मानवीय वातावरण के विभिन्न तत्व संयुक्त रूप से किसी क्षेत्र विशेष के भूमि उपयोग को विशिष्टता एवं विविधिता प्रदान करते हैं। इनमें भौतिक कारक जहां भूमि एंव शस्य संयोजन के सामान्य निर्धारक हैं वहां स्थानीय विशिष्टताओं के साथ-साथ आर्थिक, सामाजिक एवं ऐतिहासिक कारक सामान्य प्रतिरूप में क्षेत्रीय विभिन्नता को जन्म देते हैं जिसका प्रभाव आर्थिक संसाधनों अनुरूप भू-वैन्यासिक प्रतिरूप पर पड़ता है। प्राकृतिक आपदायें जैसे-जलभराव, जल प्लावन, जलाभाव एवं नदी मार्ग परिवर्तन आदि से कृषकों को भारी क्षति उठानी पडती है और कृषक के समक्ष असहाय की स्थिति उत्पन्न हो जाती है अतः इन प्राकृतिक आपदाओं की रोकथाम ग्रामीण विकास की दिशा में एक अत्यावश्यक एवं अत्याधिक महत्वपूर्ण कदम होगा।

1.प्राकृतिक समस्याओं के निवारण हेतु सुझावः

प्राकृतिक आपदाओं में बाढ़, जलभराव तथा सूखा आदि प्रमुख हैं। जिनसे प्रतिवर्ष लाखों-करोड़ों रूपये की फसल नष्ट हो जाती है। अध्ययन क्षेत्र में बसरेहर, अछल्दा, भरथना, ताखा, अजीतमल, भाग्यनगर, सहार, विधूना विकासखण्डों में अनेक ऐसे क्षेत्र हैं जहां पानी के निकास की समुचित व्यवस्था न होने के कारण जलभराव की समस्या है। इसके साथ ही साथ अजीतमल, सहार, भाग्यनगर, विधूना तथा ताखा विकासखण्डों में जल स्तर ऊँचा होने के कारण भूमि के अन्दर का नमक काफी तेजी से ऊपर आ रहा है जिससे ऊसर भूमि का विस्तार हो रहा है। इन समस्याओं के निवारण हेतु निम्न सुझाव हैं-

1. नालों तथा नालियों को गहरा कर जल निकास की समुचित व्यवस्था करना क्योंकि अनियन्त्रित सिंचाई के कारण जल निकास, जलक्रान्ति, अनुचित वितरण एवं छीजन की समस्यायें उत्पन्न हो गई हैं। जल का उचित निकास न होने के कारण कुछ क्षेत्रों में हमेशा जल प्लावन की समस्या उत्पन्न हो जाती है अतः आवश्यक है कि जल संसाधन के कुशलतम एवं

संतुलित उपयोग के आधार पर सिंचाई नीति का निर्धारण किया जाना चाहिये।

2. भूमिगत जल श्रोतों का अनुकूलतम उपयोग किया जाना चाहिये परन्तु कई कारणों से उनका समुचित उपयोग नहीं हो पा रहा है जिनसे फसलों की गहनता में कमी, किसानों में परस्पर सहयोग का अभाव, विद्युत शक्ति, डीजल आदि की अनुपलब्धता है। अतः इस दिशा में सुधार की आवश्यकता है।

3. भू-क्षरण भी अध्ययन क्षेत्र की एक प्रमुख समस्या है अतः इसकी रोकथाम के लिए कारगर उपाय करने की महती आवश्यकता है। इन उपायों में वृक्षारोपण, जल के निकास की उचित व्यवस्था तथा पशुओं पर नियन्त्रण, मेड़बन्दी आदि है।

4. क्षेत्र के उत्तरी-पूर्वी भाग जहां पर जल स्तर काफी ऊँचा है तथा नमक ऊपर आने से भूमि के ऊसर में परिवर्तित होने की समस्या है। अतः ऐसे क्षेत्रों में नलकूपों तथा पम्पिग सेटों का सिचाई के लिए अधिकाधिक उपयोग होना चाहिये जिससे ऊँचे जल स्तर को रोका जा सके।

2. ऊसर भूमि में सुधारः

अध्ययन क्षेत्र में अनेक ऐसे भाग है जहां अनियमित सिंचाई के कारण जलस्तर ऊपर उठता जा रहा है जिससे भूमि का एक बड़ा भाग अनुउर्वर तथा ऊसर में परिवर्तित होता जा रहा है। अतः क्षेत्र में ऊसर वृद्धि को रोकना तथा ऊसर भूमि को उपयोगी बनाने हेतु जिप्सम या पायराइट आदि के प्रयोग के लिय विस्तृत कार्यँक्रम तैयार किये जाने चाहिये। ऊसर मृदा में जिंक की कमी पाई जाती है। इसे कृत्रिम साधनों द्वारा पूरा किया जा सकता है। इन क्षेत्रों में हरी खाद साथ-साथ गोबर की खाद का प्रयोग भी आवश्यक है।

3. भूमि उपयोग के वर्तमान स्वरूप में सुधारः

निसंन्देह अधिक विस्तृत खेती की सम्भावनायें बहुत ही सीमित हैं फिर भी बन्जर भूमि पर सुधार कार्यक्रम अमल में लाकर इन्हें कृषि योग्य बनाने के लिए निरन्तर प्रयास किये जाने चाहिये। क्योंकि अध्ययन क्षेत्र में इस मद में 11308 हेक्टेअर कृषि भूमि बेकार पड़ी हुई है तथा अन्य परती भूमि

के अन्तर्गत 17460 हेक्टेअर भूमि पर कृषि का उत्पादन नही किया जा रहा है। अतः लगभग 28768 हेक्टेअर भूमि को कृषि योग्य बनाने की आवश्यकता है। इसके लिए सिंचाई, गहरी जुताई, खरपतवार को हटाया जाना, रसायनों का उपयोग, जल ग्रस्तता के लिये उचित जल निकास आदि प्रमुख सुझाव है।

4. गहन कृषि का विस्तारः

यह सच है कि विस्तृत कृषि की क्षमता सीमित है किन्तु गहरी कृषि की अपार सम्भावनायें हैं जिनका उपयोग किया जाना चाहिये। कृषि की विकसित तकनीकी का मूल मन्त्र फसलों की गहनता में विस्तार। अब तक एक से अधिक बार जोती गई भूमि के अन्तर्गत क्षेत्र में अपेक्षित वृद्धि नहीं हुई। इसे गहनता से विचार करने की आवश्यकता है। सम्भवतः इसके दो प्रमुख कारण हो सकते हैं।

अ. उन्नति कृषि आदानों के पैकेज पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध नहीं हुए हैं।

ब. जब कभी ये पैकज उपलब्ध हुए भी हैं तो उनकी कीमतें बहुत ऊँची रही हैं। इसलिए हमारे प्रयास यह होने चाहिये कि उन्नत आदनों की सस्ती दरों पर पर्याप्त मात्रा में किसानों को उपलब्ध कराया जाये।

भूमि की उत्पादकता एवं उर्वरता बनाये रखने के लिए हमें निरन्तर प्रयास करने होगें तथा इस वास्ते अनेक कदम उठाने होगें। जैसे- मृदा परीक्षण, संतुलित जुताई, हरी खाद तथा गोबर की खाद का प्रयोग तथा संतुलित रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग आदि इसी प्रकार कृषि में विकसित एवं नवीन तकनीकी को अपनाना एवं फसलों के प्रतिरूप में वांक्षित परिवर्तन के माध्यम से भूमि उत्पादकता में सुधार किया जा सकता है। अतः यह आावश्यक है कि उत्पादकता बढ़ाने के लिए क्षेत्र विशेष की आवश्यकताओं के अनुकूल फसल प्रतिरूप तैयार किये जायें और उन्हें अमल में लाने के लिये सरकारी नीति में वांछनीय परिवर्तन किये जायें।

5. मुद्रादायिनी फसलों का विस्तारः

अध्ययन क्षेत्र में मुद्रादायिनी फसलों में गन्ना तथा आलू की ही फसलों का महत्वपूर्ण स्थान है। गन्ना केवल 4366 हेक्टेअर तथा आलू

9491 हेक्टेअर क्षेत्र पर ही उगाया जाता है। गन्ने की कृषि में अधिक विस्तार न होने का प्रमुख कारण क्षेत्र में चीनी मिल का न होना है। यदि क्षेत्र में चीनी मिल की स्थापना की जाये तो गन्ने के क्षेत्र में आशातीत वृद्धि हो सकती है। आलू का उत्पादन भी क्षेत्र की आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर किया जाता है। क्योंकि क्षेत्र में प्रशीतन की पर्याप्त सुविधायें उपलब्ध नहीं हैं। इसके साथ ही साथ किसानों को अन्य बहुत सी समस्याओं का समाना करना पड़ता है जिसके परिणामस्वरूप आलू की कृषि को अधिक प्रोत्साहन नहीं मिल पा रहा है। अतः आवश्यकता इस बात की है कि इन फसलों को अधिक उत्पादन के लिए क्षेत्र के किसानों को अनुकूल सुविधायें उपलब्ध कराकर प्रोत्साहित करने की आवश्यकता है।

इन फसलों के साथ-साथ मूंगफली के उत्पादन हेतु क्षेत्र में अनुकूल परिस्थितियां विद्यमान हैं। इस फसल के उत्पादन से किसानों को दो फायदे हैं। एक तो उनके बोने में खेत की उर्वरा शक्ति बढ़ जाती है साथ ही यह एक मुद्रादायिनी फसल भी है। इस फसल के उत्पादन को भी प्रोत्साहन दिया जाना चाहिये। तिलहनी फसलो में लाही/सरसों की फसल का विशेष महत्व है परन्तु तिलहनी फसलों में सूरजमूखी तथा सोयाबीन की भी उपयुक्त अनुकूल परिस्थितियां होने के कारण प्रोत्साहन देने की आवश्यकता है। परन्तु अभी तक इन फसलों को क्षेत्र में कोई विशेष महत्व नहीं मिला है। इसका प्रमुख कारण क्षेत्र में इन फसलों के विक्रय की समस्या है। इन फसलों को प्रोत्साहन देकर कृषकों की आर्थिक स्थिति को ऊँचा उठाया जा सकता है।

इसी प्रकार विभिन्न मौसमों में सब्जियों की कृषि तथा मसालों की कृषि को भी प्रोत्साहन दिया जाना चाहिये। मसालों में लहसुन के उत्पादन में एरवाकटरा तथा ताखा विकासखण्डों का विशेष योगदान है परन्तु इस फसल के उत्पादन से प्राप्त होने वाले मूल्य में काफी उतार-चढ़ाव रहने के कारण कृषकों में एक अनिश्चितता सी बनी रहती है जिससे इस फसल का क्षेत्र में विस्तार नहीं हो पा रहा है। यह स्थिति अन्य फसल के सम्बन्ध में भी है, यदि सरकारी मूल्य नीति में इन फसलों को भी सम्मिलित कर लिया जाये तो इन फसलों के मूल्य सम्बन्धी अनिश्चितता से कृषकों को छुटकारा प्राप्त हो जायेगा तथा किसानों को भी इन फसलों के उत्पादन हेतु प्रोत्साहन मिलेगा।

6. कृषि सम्बन्धी क्रियाओं को प्रोत्साहनः

ग्रामीण विकास के लिए कृषि विकास का सर्वोपरि महत्व हो सकता है परन्तु कृषि विकास से ही सामान्य ग्रामीण जीवन में सुधार एवं इसके पूर्ण उत्थान की सार्मथ्य नहीं होती है। ग्रामीण विकास हेतु हमें कृषि से सम्बन्धित अनेक क्षेत्रों में सुधार की आवश्यकता पर बल देना होगा। सम्बन्धित क्षेत्रों में प्रमुख है पशुपालन, मत्स्य उद्योग, रेशम उत्पादन, बागवानी तथा वानिकी आदि।

अ. डेरी फार्मिंग को प्रोत्साहन :

ग्रामीण अर्थव्यवस्था के विकास में दुग्ध उद्योग की महत्वपूर्ण भूमिका निभाने की क्षमता रखता है। डेरी उद्योग के माध्यम से निर्बल वर्ग की आर्थिक, सामाजिक दशा में उल्लेखनीय सुधार लाया जा सकता है। डेरी उद्योग के विकास के लिए सबसे बड़ी आवश्यकता यह है कि दूध देने वाले पशुओं की उत्पादकता को बढ़ाया जाये जिसके लिए नस्ल सुधार के साथ-साथ पशु पालन की रीतियों में भी सुधार की आवश्यकता है। दुग्ध विकास हेतु पशुओं के रख-रखाव की उचित व्यवस्था तथा उत्पादित पदार्थ के उचित विक्रय की व्यवस्था भी आवश्यक है। हरितक्रान्ति अपनाकर खाद्यान्नों के मामले में देश आत्मनिर्भर हो गया है अब श्वेतक्रान्ति लाने की भी आवश्यकता है। जिससे हम इस क्षेत्र में भी आत्मनिर्भर हो सकें एवं क्षेत्र के लोगों को पौष्टिक आहार भी उपलब्ध हो सके।

ब. मुर्गी पालनः

मूर्गी पालन एक ऐसा व्यवसाय है जिसको ग्रामीण समुदाय का निर्बल वर्ग भी आसानी से अपना सकता है। इस कार्य के लिए थोड़ी पूंजी की आवश्यकता होती है तथा इसे विभिन्न जलवायु तथा परिस्थितियों में संचालित किया जा सकता है। इससे वर्षभर कृषक को आर्थिक सहयोग प्राप्त हो सकता है। यद्यपि मुर्गीपालन में आधुनिक तकनीक का विकास हो चुका है परन्तु अभी शहरी क्षेत्रों तक ही सीमित है। अतः आवश्यकता इस बात की है कि ऐसी तकनीकी का विकास किया जाये जो ग्रामीण क्षेत्रों की परिस्थितियों के अनुकूल हो। क्षेत्र के उन ग्रामों में जो आन्तरिक भागों में स्थित हैं, जहां साधनों का निपट अभाव है, यहां तक कि ऐसे क्षेत्रों में

आसानी से पहुंचना भी सम्भव नहीं है और जहां आज भी मुर्गीपालन की प्राचीन पद्धति प्रचलित है, वहां कम से कम अच्छे नस्ल की मुर्गियां उपलब्ध करायी जाये, जिससे अण्डा उत्पादन में काफी वृद्धि होगी तथा कृषक की आर्थिक दशा में भी सुधार होगा।

स. भेड़ तथा सुअर को प्रोत्साहनः

भेड़, बकरी तथा सुअर पालन का कार्य लगभग पूरी तरह ग्रामीण समुदाय के निर्धन परिवारों द्वारा किया जाता है। सुअर पालन तो क्षेत्र में धानुक तथा मेहतर मात्र दो वर्गों के द्वारा किया जाता है। भेड़ एवं बकरी पालन पाल (गड़रिया) तथा अहीर (यादव) जाति के लोगों द्वारा किया जाता है। भेड़, बकरी तथा सुअर पालन की क्षेत्र में अनेक सम्भावनायें हैं। भेड़, बकरी तथा सुअर पालन ग्रामीण क्षेत्रों में छोटे स्तर पर परम्परागत तरीकों से किया जाता है जबकि नई तकनीकी की जानकारी देकर व्यवस्थित तरीके से इस व्यवसाय को विकसित करने की आवश्यकता है। इससे बकरी आदि पालन में क्षेत्र के निवासियों को आर्थिक उन्नति के साथ-साथ प्रोत्साहन भी मिलेगा। क्षेत्र के निवासियों को उत्तम नस्ल की बकरियों आदि को उपलब्ध कराने की आवश्यकता है।

द. मछली पालन को प्रोत्साहनः

मछली पालन मुख्यतः ग्रामीण लोगों का व्यवसाय है। मछली एक उत्तम किस्म का आहार है। अध्ययन क्षेत्र में नदियों, तालाबों आदि काफी मात्रा में पाये जाते हैं। अतः ग्रामीणों को मछली के उत्तम किस्म के बीज एवं पालन पोषण की तकनीक एवं संरक्षण का ज्ञान कराने की आवश्यकता है। अतः इस क्षेत्र की तरफ भी ग्रामीण लोगों को आवश्यक जानकारी एवं सुविधायें उपलब्ध कराकर प्रोत्साहित किया जा सकता है।

य. रेशम पालन को प्रोत्साहनः

रेशम का उत्पादन भी कृषकों के लिए आय का एक पूरक साधन है। यह व्यवसाय श्रम प्रधान होता है। अतः इस व्यवसाय में अतिरिक्त रोजगार के अवसर भी प्राप्त होते हैं। वर्तमान औद्योगिक युग में रेशम की मांग दिन प्रति दिन बढ़ती जा रही है। परिणामस्वरूप रेशम व्यवसाय के विकास की काफी सम्भावनायें हैं। अध्ययन क्षेत्र में अजीतमल विकासखण्ड में रेशम

उत्पादन का कार्य हो रहा है। जहां 10 हेक्टेअर भूमि पर शहतूत के वृक्ष लगाकर रेशम के कीड़े पाले जाते हैं जिनसे मलवारी किस्म का रेशम प्राप्त होता है। आवश्यकता इस बात की है कि इस उद्योग की पर्याप्त जानकारी देकर अन्य क्षेत्रों में भी इसका विस्तार करना है।

६. खाद्य विदोहन उद्योग को प्रोत्साहनः

कृषि एवं उससे सम्बन्धित क्षेत्रों के विकास सम्बन्धी एक प्रमुख परिकल्पना खाद्य विदोहन उद्योग है। खाद्य विदोहन उद्योग में उन क्रियाओं को सम्मिलित किया जाता है जो खाद्य पदार्थ का रूप परिवर्तित कर उन्हें लम्बे समय तक उपभोग के योग्य बनाते हैं। फसल काटने के बाद फलों एवं सब्जियों को ज्यादा समय तक सुरक्षित नहीं रखा जा सकता है जिससे इसका एक बड़ा भाग या तो नष्ट हो जाता है या फिर कृषकों को उनके उत्पादन का उचित मूल्य प्राप्त नहीं हो पाता है। परिणामस्वरूप अच्छी फसल के बाद भी कृषकों की आय में वृद्धि नहीं हो पाती है। उत्पादन की इस प्रकार की हानि से बचने के लिये आवश्यक है कि फसल कटाई के बाद की तकनीक में परिवर्तन किया जाये तथा प्रशीतन सुविधायें सरल तथा आसान शर्तों पर उपलब्ध कराई जायें और उपलब्ध उत्पाद के वैकल्पिक उपयोग की व्यवस्था की जाये। जहां तक प्रशीतन सुविधाओं का प्रश्न है तो इसमें क्रान्तिकारी परिवर्तन की सम्भावना बहुत ही कम है। अतः खाद्य विदोहन उद्योग की सहायता से फलों, सब्जियों तथा अन्य शीघ्र नष्ट होने वाले कृषि पदार्थों के उत्पादकों को राहत दी जा सकती है।

7. ग्रामीण उद्योगों को प्रोत्साहनः

ग्रामीण क्षेत्रों में बेरोजगारी की प्रकृति शहरी क्षेत्रों में पाई जानेवाली बेरोजगारी से भिन्न होती है। सामान्य दैनिक दिनचर्या से ज्ञात होता है कि कृषि में फसल को बोने के समय, काटने के समय तथा साफ करने के समय ग्रामीण क्षेत्रों में श्रमिकों की मांग बढ़ जाती है तथा इन्हें रोजगार मिल जाता है। लेकिन बाकी समय में उन्हें कम या बिल्कुल काम नहीं मिलता है। इसके अतिरिक्त ग्रामीण क्षेत्रों में प्रच्छन्न बेरोजगारी विद्यमान रहती है। अतः बेरोजगारी जैसी समस्या के समाधान हेतु ग्रामीण उद्योगों को प्रोत्साहन देना ही होगा, जिसपर विचार करना अति आवश्यक है ताकि ग्रामीण लोगों को रोजगार उपलब्ध कराया जा सके।

अ. कृषि पदार्थों का विधायन:

बड़ी संख्या में ग्रामीण लोगों को पूर्ण कालिक रोजगार के अवसर उपलब्ध कराने के लिए औद्योगिक इकाईयों की स्थापना ग्रामीण क्षेत्रों में की जानी चाहिये। इन उद्योगों में कृषकों और उनके परिवारों को सहायक आंशिक रोजगार भी प्राप्त हो सकता है। इस प्रकार उद्योगों में दूध का विधायन, तिलहनी फसलों से तेल निकालना, खण्डसारी तथा गुड़ बनाने की इकाईयां, फलों तथा सब्जियों का विधायन, सनई के सामान का निर्माण आदि विशेष रूप से उल्लेखनीय है।

ब. कृषि उत्पादों का उपयोग करने वाले उद्योग:

कृषि के गौड़ उत्पादन का निर्माण उद्योगों में कच्चे माल के रूप में प्रयोग करने के सम्बन्ध में तकनीकी के विकास की पर्याप्त सम्भावनायें उपलब्ध हैं जिनका उपयोग किया जा सकता है। इस प्रकार के उत्पादन में शीरे से एल्कोहल, धान की भूसी से गत्ता बनाना, टूटे हुए चावल से शराब बनाना, चावल की भूसी से तेल बनाना, चावल से नमकीन, बरी तथा अन्य नमकीन बनाना आदि विशेष उल्लेखनीय है। इस प्रकार के उद्योगों की स्थापना से रोजगार के नये अवसर उपलब्ध होगें।

स. ग्रामीण दस्तकारी एवं उद्योगों का विकास:

ग्रामीण दस्तकारी एवं कुटीर उद्योगों की स्थापना और विकास के लिये ग्रामीण क्षेत्रों में पर्याप्त अवसर उंपलब्ध हैं। ग्रामीण दस्तकारित की वस्तुओं के निर्माण को और अधिक प्रोत्साहन देने की आवश्यकता है। ग्रामीण उद्योगों का प्रयोग न केवल उपभोकता वस्तुओं के उत्पादन अपितु कृषि मशीनरी एवं उपकरणों के निर्माण के लिए भी किया जा सकता है। इनमें से कृषि यन्त्रों का निर्माण, चटाई दरी बनाना, डलिया टोकरी बनाना, रस्सी बनाना, सिलाई कढ़ाई, पत्तल दोना का निर्माण, अचार, मुरब्बा, पशुपालन, मुर्गी पालन, भेड़, बकरी तथा सुअर पालन, मत्स्य उद्योग, रेशम के कीड़े पालना तथा बागवानी आदि प्रमुख हैं।

8. संतुलित भोजन का ज्ञान:

संतुलित भोजन उसे कहते हैं जिसमें प्रोटीन, वसा, विटामिन और खनिज लवण उचित मात्रा तथा उचित अनुपात में हों। साधारण तथा मौलिक

तथ्य है कि जब आदमी को पेट भर खाने को मिल जाये तभी वह भोजन के गुणों पर विचार कर सकता है। भारत जैसे देश में जहां उचित पोषणयुक्त भोज्य पदार्थ पर्याप्त उपलब्ध नहीं हैं। जहां उनकी कीमत काफी अधिक हो और जहां लोगों की क्रय शक्ति काफी कम है, वहां प्रत्येक व्यक्ति संतुलित भोजन प्राप्त कर सके वह वर्तमान परिस्थितियों में लगभग असम्भव है। किन्तु अभावों के बीच भी यदि हमारे भोजन विषयक ज्ञान काम चलाऊ हो और हम यह जान सकें कि हमारे लिए कौन सा खाद्य पदार्थ कितना महत्व रखता है तो लोग बिना खर्च बढ़ाये अपने भोजन को वर्तमान रूप में कुछ अच्छा अवश्य बना सकते हैं। इसके लिए प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों पर लोगों को संतुलित भोजन के बारे में ज्ञान कराया जाना चाहिये। शरीर को पुष्ट और बलिष्ट रखने के लिए सामान्यतः व्यक्ति को नियमानुसार भोजन की मात्रा ग्रहण करनी चाहिये।

अनाज	गेहूं, चावल, बाजरा, मक्का आदि	400 ग्राम
दालें	अरहर, चना, उर्द, मूंग, मसूर आदि	100 ग्राम
चिकनाई	घी, तेल, मक्खन, पनीर आदि	60 ग्राम
पेय	दूध, दही, मट्ठा (छाछ) आदि	250 ग्राम
फल	आम, संतरा, केला, पपीता, खरबूजा,	
	तरबूज, सेब, अमरूद, खीरा, ककड़ी आदि	70 ग्राम
सब्जी	भिण्डी, परवल, टिण्डा, आलू, बैंगन, कद्दू	150 ग्राम
	लौंकी, तोरई, सिघांड़ा, चचेड़ा आदि।	
सब्जी पत्तेदार	बथुबा, मैथी, पालक, मूली, चौलाई	150 ग्राम
	रामदाना, साग आदि।	
	कुल भोजन	1180 ग्राम

भोजन की उक्त तालिका में वसा, विटामिन, लोहा, कैल्सियम, प्रोटीन आदि सभी पौष्टिक तत्वों को दृष्टि में रखकर एक सामान्य व्यक्ति के लिये जो कि हल्का कार्य करता हो, प्रस्तुत की गई है। भारी काम करने वालों को अपनी आवश्यकतानुसार अतिरिक्त मात्रा और जोड़नी चाहियें।

अ. शिशु का भोजनः

शिशु की क्रियाशीलता द्वारा व्यय हुई शक्ति की पूर्ति के लिए उनकी उचित शरीरिक वृद्धि, मानसिक विकास तथा उत्तम स्वास्थ्य बनाये रखने के लिये माता का दूध ही सर्वोत्तम आहार है। माता के दूध में आवश्यक मात्रा में चिकनाई, विटामिन, प्रोटीन, जल तथा कार्बोहाइड्रेट होते हैं जों कि शिशु के विकास के लिए आवश्यक हैं। आवश्यकता पड़ने पर शिशु को गाय का दूध देना चाहिये। गाय के दूध के अभाव में बकरी का दूध उपयुक्त होता है। बकरी के दूध में शिशु के लिए आवश्यक पोषण तत्व विद्यमान रहते हैं।

ब. वृद्धावस्था का भोजनः

शिशुओं के समान ही वृद्ध व्यक्तियों के भोजन का भी विशेष ध्यान रखना चाहिए। इसके लिए ताजी हरी सब्जियां, दूध, फलों का रस आदि देना चाहिए। इस अवस्था में मिर्च मसालेदार गरिष्ठ भोजन नहीं करना चाहिए। अतः भोजन मुलायम, पौष्टिक और ऐसा होना चाहिए जिसे खाने में श्रम कम करना पड़े किन्तु विटामिन्स, खनिज पोटीन आदि पोषण तत्व पर्याप्त मात्रा में शरीर में पहुँच जाएं।

स. गर्भवती महिला का भोजनः

सामान्य दिनों की तुलना में गर्भवती महिला को अधिक मात्रा में विटानिन डी, प्रोटीन तथा कैल्शियमयुक्त भोजन मिलना चाहिए। क्योंकि इन्ही के माध्यम से उदरस्थ भ्रूण का पोषण होता है। इन पौष्टिक पदार्थो के अभाव में महिला व शिशु दोनों क्षीण होने लगते है। अतः इस काल में महिलाओं को कम से कम 750 ग्राम दूध, 200 ग्राम फल, 1 अण्डा तथा 50 ग्राम मांस आवश्यक रुप से प्रतिदिन देना चाहिए। शकाहारी महिलाओं को मांस के स्थान पर दाल की 50 ग्राम मात्रा बढा देनी चाहिए।

द. स्तनपान कराने वाली महिलाओं का भोजनः

इस स्थित में महिला को सुगमता से पचने वाला पर्याप्त पौष्टिक तत्वों से भरपूर भोजन देना चाहिए। किन्तु शिशु के पोषण के कारण इस स्थिति मे महिला को भूख अधिक लगती है। अतः प्रोटीन कैलौरी तथा कैल्शियम युक्त भोजन की मात्रा बढ़ा देनी चाहिए।

य. युवक का भोजनः

इस अवस्था में युवक शारीरिक एवं बौद्धिक विकास करता हुआ समाज में रहकर आत्मनिर्भर बनने का प्रयास करता है अथवा विद्यालयों में अध्ययन करता हुआ अपना मानसिक विकास करता हुआ ब्रम्हचर्य जीवन व्यतीत करता है। भोजन का प्रभाव सीधा मन, इन्द्रियों एवं बुद्धि पर पड़ता है। अतः इस सम्बन्ध में विशेष सावधनी की आवश्यकता पड़ती है। युवको का भोजन सादा, पौष्टिक तथा ताजा होना चाहिए।

1. चना, उर्द, गेहूँ आदि अंकुरित अन्नों का प्रयोग स्वास्थय के लिए अच्छा होता है।
2. भोजन में नीबू का प्रयोग पाचन शक्ति में वृद्धि करता है।
3. भोजन में विटामिन सी तथा विटामिन डी पर्याप्त मात्रा में होना चाहिए।
4. खट्टे, चटपटे, मसालेदार, अचार-मुरब्बा का प्रयोग कम से कम करना चाहिए।
5. गाय अथवा बकरी का दूध प्रयोग करना चाहिए।
6. भोजन के साथ देशी घी, गुड़, खाड़ आदि मीठा पदार्थ लिया जा सकता है।
7. दोपहर के भोजन के बाद मौसम के अनुसार ताजे फलों का सेवन लाभदायक होता।

र. भोजन सम्वन्धी अन्य आवश्यक सुझाव

1. जाड़े के दिनों में अधिक भोजन करना चाहिए।
2. भोजन को धीरे-धीरे खूब चबाकर खाना चाहिए।
3. भोजन एक निश्चित समय पर ही करना चाहिए।

4. सांय कालीन भोजन सोने से एक घंटा पहले तथा कम मात्रा में करना चाहिए।

(ल) भोजन पकाने सम्बन्धी सुझावः

1. मोटा तथा चोकरयुक्त आटा खाना पकाने के कुछ समय पूर्व भली प्रकार पानी में गूंथकर रखना चाहिए जिससे वह पर्याप्त मात्रा में फूल सके।

2. रोटी चूल्हे की आग में दूर से सिंकी हुई पौष्टिक होती है।

3. रोटी पकाते समय उसमें घी लगा दिया जाये तो स्वास्थ्यवर्धक एवं गुणकारी होती है।

4. शारीरिक श्रम करनें वाले को बिना चुपड़ी रोटी खानी चाहिए।

5. कच्ची सब्जी खाना बहुत अच्छा रहता है किन्तु प्रत्येक सब्जी कच्ची नही खाई जा सकती है। टमाटर, मूली, गाजर, चुकन्दर, प्याज, शलजम आदि कच्ची सलाद के रुप में खानी चाहिए।

6. सब्जी तल कर खाने में गरिष्ठ होती है। अतः उबालकर खाने में स्वास्थ की दृष्टि से अच्छी होती है।

7. सब्जी को छौकनें में हीग, अदरक, प्याज, हरी धनियां, काली मिर्च आदि का प्रयोग लाभदायक होता है।

8. मालपुआ, पूड़ी, कचौड़ी, हलुआ आदि का सेवन भूख से कुछ कम ही करना चाहिए।

9. बाजार की विभिन्न मिठाईयां सेवन करने से स्वास्थ पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है।

10. सूप, मक्खन, उबली हुई सब्जी, पनीर, चावल को खाने का अपना एक विशेष जैव वैज्ञानिक ढंग है।

11. मांस का सेवन कभी-कभी एवं अपने स्वास्थ्य एवं जलवायु को ध्यान में रखकर अल्प मात्रा में करना चाहिए।

12. कच्चे अण्डे की जर्दी दूध में फेंटकर अथवा वैसा ही लेना अधिक गुणकारी है।

13. जिन व्यक्तियों को नेत्र से कम दिखाई पड़ता है उनके लिए अण्डे का सेवन अधिक गुणकारी है।

सन्दर्भ - ग्रन्थ

1. अमर्त्य के सेन, "पावर्टी, इनइक्वैलिटी एण्ड् अनइम्पलाइमेंट", इकोनोमिक एण्ड पोलिटिकल वीकली, वाल्यूम VIII , स्पेशल नं0 अग्स्त 1973, पृ031-33.

2. अहमद ए0 एण्ड सिद्दीकी, एम. एफ. (1967) "क्राप एसोसियेशन पैटर्न इन दि लूनीवेसिन" दि ज्योग्राफर, वाल्यूम 14, पी0 68.

3. अली मोहम्मद (1977) "फूड़ एण्ड् न्यूट्रीशन इन इण्डिया " के0 बी0 पब्लिकेशन, नई दिल्ली।

4. अली मोहम्मद (1978) "रिचुशन ऑफ एग्रीकल्चर, फूड़ एण्ड् न्यूट्रीशन इन रुरल इण्ड़िया " कन्सेप्ट पब्लिकेशन, दिल्ली।

5. अहलूवालिया एम0 एस0 (1978) "रूरल पावर्टी एण्ड एग्रीकल्चरल परफारमेन्स इन इण्डिया" दि जनरल ऑफ डेवलपमेण्ट स्टडीज नं.3, वॉल्यूम 14.

6. . अली मोहम्मद (1978) "रीजनल इन वेलेन्सिस लेवेल्स एण्ड ग्रोथ ऑफ एग्रीकल्चरल प्रोडक्टविटी" - ए केश स्टड़ी ऑफ बिहार, कन्सेप्ट पब्लिशिंग कम्पनी दिल्ली ।

7. आई0 सी0 ए0 आर0 "हैण्डबुक एग्रीकल्चर " पृष्ठ 13 .

8. इनेदी (1967) "दि चेन्जिग फेस ऑफ एग्रीकल्चर इन ईस्टर्न यूरोप", ज्योग्राफिकल रिव्यु 57 प्र0 पी0 पी0 358-72.

9. ओल्डहम आर0 ड़ी0 "दि ड़ीप बोरिंग एट लखनऊ , रिकार्ड ऑफ दि जियोलोजिकल सर्वे ऑफ इड़िण्या , वाल्यूम 23, पी0 268.

10. ओल्ड़हम आर0 डी0 (1917) "दि स्ट्रक्चर ऑफ हिमालय एण्ड गेंगेटिक प्लेन" मैमोर्स ऑफ जियोलोजीकल सर्वे ऑफ इण्डिया, वाल्यूम 13, पृ0 82.

11. ओझा ए0 एन0 — "हाउ बिग इज इडिण्यास बिग बिजनिस", दि इलस्कट्रोटिड वीकली ऑफ इड़िया -1897-1977.

12. ओझा पी0 डी0 — "ए कन्फीग्रेशन ऑफ इण्डियाज पावर्टी, ए0 जे0 कोनेस्का" चेलेंजिज इन पावर्टी इन इण्डिया।

13. क्लर्क सी0 एण्ड हैसवैल एम0 (1967) — "दि इकोनोमिक ऑफ सब्सिसटेंस एग्रीकल्चर" प्र067.

14. कूवी एच0 एम0 (1921) — "ए क्रिटीसिज्म ऑफ ओल्डहम पेपर ऑन दि स्ट्रक्चर ऑफ हिमालयाज एण्ड ऑफ दि गेंगेटिक प्लेन इलूसिएटिड बाई ज्योडेटिक आब्जर्वेशन इन इण्ड़िया", मेमोर्स ऑफ जियोग्राफिकल सर्वे ऑफ इण्डिया प्रोफेशनल पेपर न018, देहरादून प्र06.

15. केस ई0 सी0 (1996) — "कालेज ज्योग्राफी"

16. केन्डाल एम0 जी0(1939) — "ज्योग्राफिकल ड़िस्ट्रीब्यूशन ऑफ क्राप प्रोडक्टविटी इन इग्लैण्ड," जनरल ऑफ रॉयल स्टेटिस्टिक सोसाइटी 102, प्र0 21-62.

17. कृष्णान एम0 एस0 (1968) — "जियोलोजी ऑफ इण्ड़िया एण्ड वर्मा" मद्रास, पी0 5

18. कौशिक एस0 डी0 (1956) — "एनवायरमेंन्ट एण्ड ह्यूमन प्रोग्रेस" चेप्टर 5.

19. गांगुली बी0 एन0 (1938) — "ट्रेन्ड्स ऑफ एग्रीकल्चर एण्ड पॉपुलेशन इन दि गेंगेज वैली " लन्दन पी0 पी0 39-94.

20. ग्लीनी ई0 ए0 (1932) — "दि ग्रेविटी एनामोलीज इन दि स्ट्रक्चर ऑफ अर्थ क्रस्ट" मैमोर्स ऑफ ज्योग्राफिकल सर्वे ऑफ इण्डिया, प्रोफेशनल पेपर नं0 27 देहरादून पी0 22.

21. जैदी सैयद साजिद हुसैन (1982) — "रूरल इण्डिया एण्ड माल न्यूट्रीशन" कन्सेप्ट पब्लिकेशन कम्पनी, दिल्ली।

22. टी0 एन0 श्रीनिवासन एण्ड पी0 के0 वर्धन (1938) — "पावर्टी एण्ड इनकम डिस्ट्रीब्यूशन इन इण्डिया" पी0 120.

23. तिवारी पी0 डी0 — "पेटर्न ऑफ एग्रीकल्चर प्रोडक्ट्स अवेलेबिलिटी एण्ड न्यूट्रीशन इन म0प्र0"यू0बी0बी0पी0, वाल्यूम 23, नं 2.

24. तिवारी पी0 डी0 (1965) — "फूड इन्टेक सिस्टम एण्ड डिफीसियेन्सीज इन रूरल इण्डियाा ऑफ म0प्र0" रूरल सिस्टम, वाल्यूम 3, नवम्बर।

25. तिवारी पी0डी0 — "एग्रीकल्चर एण्ड लेविल ऑफ न्यूट्रीशन इन मध्यप्रदेश "यू0वी0बी0पी0, वाल्यूम 20, नम्बर 1 जून।

26. थामस (1963) — "क्राप कम्बीनेशन इन वेल्स " ज्योग्राफिकल रिव्यू वाल्यूम 44 पी0 पी0 60-67.

27. थापर आर0 एस0 (1981) — " अवर फूड्स" आत्माराम एण्ड सन्स, दिल्ली।

28. थापर एस0जी0 एण्ड देशपाण्डे (1964) — "इण्टर डिस्ट्रिक्ट्स वैरियेशन इन एग्रीकल्चर इफीसियेंशी इन महाराष्ट्र स्टेट" इण्डियन जनरल ऑफ एग्रीकल्चर इकोनोमिक्स, वाल्यूम 19, पी0पी0 242-252.

29. दत्त एवं सुन्दरम (1992) — "भारतीय अर्थव्यवस्था" एस0चांद एण्ड कम्पनी दिल्ली।

30. दयाल ई0 — "क्राप कम्बीनेशन रीजन - ए स्टडी ऑफ पंजाब प्लेन " नीदरलैण्ड जनरल ऑफ इकोनोमिक सोसल ज्योग्राफी, पी0पी0 38-59.

31. धींगरा ईश्वर (1991) — "ग्रामीण अर्थव्यवस्था" सुल्तानचन्द्र एण्ड सन्स, नई दिल्ली।

32. धींगरा ईश्वर (1991) — "ग्रामीण अर्थव्यवस्था" सुल्तानचन्द्र एण्ड सन्स, नई दिल्ली, पी0पी0 159.

33. धींगरा ईश्वर — "ग्रामीण अर्थव्यवस्था" सुल्तानचन्द्र एण्ड सन्स, नई दिल्ली, पी0पी0 85.

34. धींगरा ईश्वर — "ग्रामीण अर्थव्यवस्था" सुल्तानचन्द्र एण्ड सन्स, नई दिल्ली, पी0पी0 86.

35. धींगरा ईश्वर — "ग्रामीण बेरोजगार एवं ग्रामीण उद्योग" सुल्तानचन्द्र एण्ड सन्स, नई दिल्ली।

36. नन्दा वी0आर0 (1977) — "साइन्स एण्ड टेक्नोलोजी इन इण्डिया" विकास प0 हा0, नई दिल्ली।

37. एन0 सी0 ए0 आई0 आर0 — "चेन्जिस इन रूरल इन्कम्स इन इण्डिया।"

38. प्लानिंग कमीशन — "टास्क फोर्स आन मिनिमम नीड्स एण्ड इनफेक्टिव कन्जम्शन डिमाण्ड्स"।

39. प्लानिंग कमीशन — "पंचम पंचवर्षीय योजना" 1978-1983.

40. प्लानिंग कमीशन — "छठी पंचवर्षीय योजना"

41. प्लानिंग कमीशन — "सातवीं पंचवर्षीय योजना"

42. प्लानिंग कमीशन — "प्रथम पंचवर्षीय योजना"

43. पॉल स्ट्रीटेन — "ट्रेड स्टैटिटीज एण्ड डवलपमेन्ट", पी0पी0100.

44. वक जे0 एल0 (1967) — "लैण्ड यूटीलाइजेशन इन चाइना" वाल्यूम 1, नानकिंग विश्वविद्यालय।

45. बनर्जी बी0 (1964) — "चेन्जिंग क्राप लैण्ड इन वेस्ट बंगाल" ज्योग्राफिकल रिव्यू ऑफ इण्डिया 24(1).

46. बीवर जे0 सी0 — "क्राप कम्बीनेशन रीजन इन दि मिडिल ईस्ट" ज्योग्राफिकल रिव्यू, वाल्यूम 44 पी0पी013.

47. बर्धन पी0के0 — "ऑन दि इन्सीडेन्स ऑफ पावर्टी इन रूरल इण्डिया" इकोनोमिक एण्ड पॉलिटिकल वीकली, एनुवल फरवरी, 1973.

48. बी0एम0 दाण्डेकर एण्ड रथ — "पॉवर्टी इन इण्डिया" इकोनोमिक एण्ड पॉलिटिकल वीकली, जनवरी 1971.

49. बी0 एस0 मिन्हास — "रूरल पावर्टी, लैण्ड डिस्ट्रीब्यूशन एण्ड डेवलपमेन्ट" इण्डियन इकोनोमिक रिव्यू, अप्रैल 1970.

50. बुर्राड एस0 जी0 (1912) "आन दि ओरीजन ऑफ हिमालय माउन्टेन्स" ज्योग्राफिकल रिव्यू ऑफ इण्डिया, ज्योग्राफिकल सर्वे ऑफ इण्डिया, प्रोफेशनल पेपर, कलकत्ता, नं0 12, पी0पी0 11.

51. वाडिया डी0एन0 (1966) "जियोलोजी ऑफ इण्डिया" लन्दन ई0 एल0वी0एस0पी0 89.

52. बोहरा बी0बी0 "ए पॉलसी फार लैण्ड एण्ड वाटर" 1980 मैन स्ट्रीम, जनवरी 3, 1981.

53. भाटिया एस0एस0 (1967) "ए न्यू मीजर्स ऑफ एग्रीकल्चरल इफीसियेन्शी इन यू0पी0 इन इण्डिया", इकोनामिक ज्योग्राफी।

54. रन्धावा एस0एस0 (1974) "ग्रीन रिवोल्यूशन " विकास पब्लिसिंग हाउस, नई दिल्ली।

55. राय बी0के0 (1967) "क्राप एसोसियेशन एण्ड चेन्जिंग पैटर्न ऑफ क्राप इन दि गंगा घाघरा दोआब" एन0जी0जे0ई0 13 (4) 1994-207.

56. शर्मा एस0 सी0 (1966) "लैण्ड यूटीलाइजेशन इन सादाबाद तहसील, मथुरा, यू0पी0, इण्डिया", अप्रकाशित शोध ग्रन्थ आगरा विश्वविद्यालय, पी0पी02.

57. सफी एम0 (1972) "मेजरमेन्ट ऑफ एग्रीकल्चर प्रोडक्टविटी ऑफ ग्रेट इण्डियन प्लेस" दि जियोग्राफर वाल्यूम 19 नं0 1, पी0पी0 4-13.

58. सफी एम0 (1984) "एग्रीकल्चरल प्रोडक्टविटी एण्ड रीजनल इनबैलेन्सेज" नई दिल्ली।

59. सफी एम0 (1967) "फूड प्रोडक्शन इफीसियेन्शी एण्ड न्यूट्रीशन इन इण्डिया" दि जियोग्राफर वाल्यूम 14, अलीगढ़।

60. सिंह ए0 के0 (1987) "एग्रीकल्चरल डेवलपमेन्ट एण्ड रूरल पावर्टी" नई दिल्ली।

61. सिंह जसवीर (1971) "आप्टीमम केयरिंग कैपेसिटी ऑफ लैण्ड कैलोरिक डेन्सिटी इन्टेन्सिटी ऑफ पापुलेशन प्रेशर चेन्ज इन पंजाब", वाराणसी।

62. सिंह जसवीर (1972) "ए न्यू टेक्निक फार मीजरिंग एग्रीकल्चरल प्रोडक्टविटी इन हरियाणा, इण्डिया" दि ज्योग्राफर वाल्यूम 19, पी0पी0 14-33.

63. सिंह आर0 एल0 "इण्डिया ए रीजनल ज्योग्राफी" वाराणसी, पी0पी0 202-211.

64. सिंह एस0पी0 (1991) "पावर्टी, फूड एण्ड न्यूट्रीशन इन इण्डिया" चुग पब्लिकेशन, इलाहाबाद।

65. सिंह जसवीर (1976) "एन एग्रीकल्चर ज्योग्राफी ऑफ हरियाणा" कुरुक्षेत्र, पीपी0 254.

66. सिंह हरपाल (1965) "क्राप कम्बीनेशन रीजन इन मालवा ट्रेड ऑफ पंजाब" डंकन ज्योग्राफर, पी0पी0 21-23.

67. स्वामीनाथन एम0 (1968) "हैण्डबुक ऑफ फूड एण्ड न्यूट्रीशन" बंगलौर प्रिटिंग एण्ड पब्लिसिंग कम्पनी, बंगलौर।

68. सिन्हा बी0 एन0 "एग्रीकल्चरल इफीसियेन्सी इन इण्डिया" इन ज्योग्राफर, वाल्यूम 15, स्पेशल आई0जी0यू0 वाल्यूम।

69. सिंह सुदामा (1994) "भारतीय अर्थव्यवस्था समस्यायें एवं नीतियां" नील कमल प्रकाशन, गोरखपुर, पी0पी0 269-70.

70. स्टाम्प एल0डी0 (1940) "फर्टीलिटी, प्रोडक्टविटी एण्ड क्लासिफिकेशन ऑफ लैण्ड इन ब्रिटेन" ज्योग्राफी जनरल वाल्यूम 114 (6).

71. सुखात्मे पी0बी0 (1973) "ह्युमन कैलोरीज एण्ड प्रोटीन नीड्स एण्ड हाउ दे आर सेटिस्फाइड टूडे" लन्दन।

72. सेन्सर डायरी (1985) "स्टेटिकल डायरी" यू0पी0, पी0पी0116.

73. हटिंगटन (1956) "प्रिन्सिपल ऑफ ह्यूमन ज्योग्राफी", पी0पी0101.

74. हुसैन मजीद (1978) "ए न्यू एप्रोच टू दि एग्रीकल्चरल प्रोडक्टविटी रीजन्स ऑफ दि सतलज-गंगा प्लेन्स ऑफ इण्डिया" ज्योग्राफिकल रिव्यू ऑफ इण्डिया, वाल्यूम 30, नं0 30, पी0पी0 230-236.

75. त्रिपाठी बी0बी0 "भारतीय कृषि" किताब महल 1992, पी064.

76. रिपोर्ट "रिपोर्ट आन इण्डियाज फूड क्राइसेज एण्ड स्टेप्स टु मीट इट दि एग्रीकल्चरल प्रोडक्शन टीम स्पान्सर्ड बाई दि फूड फाउन्डेशन" दि गर्वनमेण्ट ऑफ इण्डिया 1959, पी0पी1-22.

77. रिपोर्ट "रिपोर्ट ऑफ दि सेविन्थ फाइनेन्श कमीशन" 1978.

78. रिपोर्ट "रिजर्व बैंक ऑफ इण्डिया" बुलेटिन 1983.